



महाकवि यशःकीर्ति विरचित

# चंदप्पह-चरित

(प्रपञ्च श-भाषा का महत्त्वपूर्ण चरित-काव्य)

सम्पादक

डॉ. भागवन्ध्र जैन भास्कर डी. लिट्.

अध्यक्ष, पालि-प्राकृत विभाग, नागपुर  
विश्वविद्यालय, नागपुर

वीरसेवा मन्दिर ट्रस्ट प्रकाशन

ग्रन्थमाला-सम्पादक व नियामक

डॉ० हरबारीलाल कोठिया

मानद मंत्री, वीर सेवा मन्दिर ट्रस्ट

अद्वयहृ-चरित्र (चन्द्रप्रभ-चरित्रम्)

रचयिता . महाकवि यश कीर्ति

सम्पादक

डॉ० भागचन्द्र जैन भास्कर

अध्यक्ष, पालि-प्राकृत विभाग, नागपुर विश्वविद्यालय, नागपुर

ट्रस्ट-संस्थापक

आचार्य जुगलकिशोर मुस्तार 'युगवीर'

प्रकाशक

मंत्री, वीर सेवा-मन्दिर-ट्रस्ट,

C/o प बशीधर व्याकरणाचार्य,

बीना (सागर), म. प्र

प्रथम संस्करण 1986

~~मुद्रण : बीना इन्प्रे~~

: २९ परिबर्षित

प्रतिस्ठाने २९.६९.०

व्यवस्थापक, वीर सेवा मन्दिर ट्रस्ट,

बी 32/13 बी. नरिया,

वाराणसी-5, (उ०प्र०)

मुद्रक : शीतल प्रिन्टर्स, फिल्म कालोनी, जयपुर-3

## प्रकाशकीय

1985 में 'भाग्य और पुरुषार्थ एक नया अनुचिन्तन' को प्रकाशित करते हुए उसके प्रकाशकीय में हमने लिखा था कि आगामी वर्ष के प्रकाशनो में प्रस्तुत 'भाग्य और पुरुषार्थ एक नया अनुचिन्तन' के अतिरिक्त निम्न प्रकाशन भी हैं—

- 1 सम्पत्ज्ञान-चिन्तामणि ' डॉ प पल्लाल जैन साहित्याचार्य
- 2 यापनीय सच और उसका साहित्य डॉ कुसुम पटोरिया
- 3 देवागम-हिन्दी पद्यानुवाद आचार्य विद्यासागर
- 4 चदप्पह-चरित डॉ भागचन्द्र जैन, भास्कर
- 5 पत्र-परीक्षा आ विद्यानन्द . सम्पादन—डॉ दरबारीलाल कोठिया
- 6 समन्तभद्र-ग्रन्थावली सकलन—डॉ गोकुलचन्द्र जैन

इन ग्रन्थो में प्रथम और तृतीय न. के ग्रन्थ प्रकाशित होकर पाठको के समक्ष आ गये हैं। पचम और षष्ठ नम्बर के ग्रन्थ छप तो गये हैं किन्तु उनकी प्रस्तावनाएँ सामग्री अवशेष है। मेरे बनारस में स्थिर न रहने के कारण द्वितीय सख्यक ग्रन्थ अब तक प्रेस में नहीं दिया जा सका।

आज प्रसन्नता है कि चतुर्थ सख्यक 'चदप्पह-चरित' ग्रन्थ छपकर सामने आ रहा है। इसके रचयिता महाकवि यश कीर्ति "महाकविसक्तिविरहए . . " समाप्तिपुष्पिका वाक्य, सन्धि 11, कडवक 29, पृ 168) हैं। यह अपभ्रंश भाषा का चरित-महाकाव्य ग्रन्थ है। इसमें महाकवि ने लोकप्रिय अष्टम तीर्थंकर चन्द्रप्रभ का चरित बड़े सुन्दर ढंग से गुम्फित किया है। अपभ्रंश-भाषा प्राकृत की उत्तर कालीन और हिन्दी की जन्मदात्री तत्कालीन लोक-भाषा है। इस भाषा में स्वयम्भू, पुष्पदन्त आदि जैन कवियों ने कथा-साहित्य का सृजन करके उसे अन सामान्य की प्रिय भाषा बनाया है।



इसके सुयोग्य सम्पादक डॉ० भागचन्द्र जैन, भास्कर हैं, जिन्होंने इसका सम्पादन बड़ी योग्यता, परिश्रम और लगन के साथ किया है। उन्होंने इस भाषा का वैशिष्ट्य अपनी अंग्रेजी और हिन्दी में लिखी प्रस्तावनाओं में प्रतिपादित किया है तथा पूरे ग्रन्थ का हिन्दी सार, महत्वपूर्ण शब्द-सूची आदि देकर ग्रन्थ को अनुसन्धित्सुओं एवं जन-सामान्य के योग्य बना दिया है। उन्हें इसके प्रकाशन में अनेक कठिन भेलनी पड़ी हैं। उनके लगातार बाहर रहने के कारण मुद्रण की अशुद्धियाँ भी रह गई हैं और प्रकाशन में विलंब भी हुआ है। उन्हें हम शुभाशीर्वाद के साथ धन्यवाद देते हैं। आशा है हिन्दी-प्रेमी इस कृति को समादृत करेंगे।

बीना (सागर), म० प्र०

15 अगस्त, 1986

डॉ० हरबारीलाल कोठिया

मानव मंत्री, वीर सेवा मन्दिर ट्रस्ट



## समर्पण

संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश एव हिन्दी—  
साहित्य के मर्मज्ञ मनीषि-  
विद्वान् साहित्यकार,  
'अनेकान्त' के मूर्धन्य संपादक  
स्वर्गीय पण्डित परमानन्द शास्त्री  
को सादर समर्पित

# विषय - सूची

## प्रथम संधि

विषय	पृष्ठ
भ चन्द्र प्रभु के गुणों के वर्णन की प्रतिज्ञा	1
सज्जन-दुर्जन वर्णन	1
रत्न सचय नगर का वर्णन	2
कनकप्रभ राजा एव कनकमाला का सौन्दर्य वर्णन	3
पद्मनाभ का जन्म वर्णन	3
कीचड में फसे बँल को देखकर कनकप्रभ को वैराग्य उत्पत्ति	4
ससार की भ्रसारता	4
पद्मनाभ का राज्याभिषेक और कनकप्रभ का श्रीधर मुनि के पास दीक्षा धारण ।	5

## द्वितीय सन्धि

श्रीधर मुनि के आगमन की सूचना	6
उद्यान की महिमा और श्रीधर मुनि को वहाँ बँटे देखना	6
पद्मनाभ द्वारा मुनि स्तुति	7
श्रावक के पचाणुव्रतों का उपदेश	8
सुगन्धि देश एव श्रीपुर नगर का वर्णन ।	8
श्रीवेण राजा का वर्णन	8
श्रीवेण की रानी श्रीकान्ता का सौन्दर्य वर्णन और उसकी खेद-खिन्नता का कारण पूछना	9
चारण ऋद्धि मुनियों का आगमन	10
मुनिराज द्वारा भर्मापदेश	11
राजा को पुत्रजन्म का ज्ञान और सागारधर्म का पालन	11
गुणव्रत शिक्षाव्रतों का वर्णन	11

श्रीकान्ता का गर्भाहरण	12
श्रीधर्म नामक पुत्र का जन्म	
प्रभावती के साथ विवाह फिर	
राज्याभिषेक	12

### तृतीय सन्धि

श्रीषेण को वैराग्योत्पत्ति	13
ससारी का वर्णन	14
पुत्र की शिक्षा दीक्षा	14
श्रीधर्म का राज्याभिषेक, दिग्विजय, मुक्ति	15
घातकी खण्डवर्ती अलकादेश तथा कोशला नगरी का वर्णन	16
राजा अजितसेन, रानी रजित सेना तथा पुत्र	
अजितसेन का वर्णन	17
अजितसेन का राज्याभिषेक	18
पुत्र का अपहरण तथा राजा का विलाप	19
तपोभूषण मुनि का आगमन और पुत्र के अपहरण का वृत्तान्त	20

### चतुर्थ सन्धि

अजितसेन का दिग्विजय वर्णन तथा श्रावक व्रत ग्रहण	21-28
---	-------

### पञ्चम सन्धि

अजितसेन का दिग्विजय प्रयाण	
वस तर्कतु, कामकेलि, वैराग्य तथा स्वर्गगमन वर्णन	29-35

### षष्ठ सन्धि

पद्मनाभ द्वारा गणराज को वश में करना तथा पृथ्वीपाल के दूत का आगमन	36
दूत का कथन	37
स्वर्णनाभ युवराज द्वारा उत्तर	37
पद्मनाभ का कथन	38
पुरुभूति मंत्री तथा युवराज की वार्ता	39

रात की रंगरेलियों का वर्णन	39
युद्ध वर्णन	40-41
वैराग्य वर्णन	41
चारकषाय एवं सोलहकारण भावना	42-43
अनुत्तर विमान गमन	44-45

### सप्तम सन्धि

पूर्व देश का वर्णन	46
चन्द्रपुरी नगरी, महासेन एवं लक्ष्मणा का वर्णन	47
गर्म पूर्व का वर्णन	48
स्वयं का वर्णन	49-50

### अष्टम सन्धि

सुमेरु पर्वत पर जाना, चन्द्रपुरी नगरी वापिस आना एवं जन्मकल्याणक महोत्सव का वर्णन	50-58
--	-------

### नवम सन्धि

दीक्षाकल्याण महोत्सव वर्णन	59-67
----------------------------	-------

### दशम सन्धि

केवलज्ञान कल्याण वर्णन	68-73
------------------------	-------

### एकादश सन्धि

धर्मप्रवचन एवं निर्वाणकल्याणक महोत्सव वर्णन	74-88
---	-------

## Introduction

The present Apabhraṃśa text of the Candappahacārī (CPC) critically edited for the first time is based on the material from the following Manuscripts —

MS KA (क)

It was received, with thanks, from late Pt Paramanand Shastri, the well-known scholar of Jain literature in 1974. It has folios 6, the first being written on only one side. It measures 27 C M X 12 C M, lines per page about 12, letters in each line about 50, margin right and left 3 C M, top 2 C M and bottom  $1\frac{1}{2}$  C M. Handwriting is beautiful and uniform. One particular sign with red ink spot is made in the middle of each page. The MS starts with the Grant-hasanakhyā. It has eleven Sandhis (Sargas) and all the Sandhis end with 'Iya siri Candappahacārī Mahākai Jasakitti virāṇe sandhi samatto'. From its colophon we understand that the MS was completed in Samvat 1530 (1493 A D) the 5th of the bright fortnight of Phalagun on a request made by Sidhapāla, the son of Kumvar Singh belonging to Humbadkula. The copy was made down by Brahmanvisa belonging to Gangawal Gotra. The MS indicates the following ascetic genealogy of the author — Prabhācandra—Padmanandi—Jinacandra—Bhuvanakīrti. The peculiarities of the MS are as follows —

1. It has Na in beginning but in middle the joint NNa becomes NNAU, such as Nisannu, Visannau.
2. The use of ya and i in place of i and ya respectively.
3. There is no difference between va and ba.
4. The use of ccha in place of ttha.

MS KA (क)

This MS belongs to Amara Shashtra Bhandar preserved by the Jain Vidya Sansthan, Mahaviraji, Jaipur. Folios are 117, size 26 CM X 11 C M, lines per page 9, letters per line about 40, margin

right and left 2 C.M. The colophon throws the light that the MS. was copied down in Sambat 1583 (1526 A.D.) on Wednesday, the 3rd of the bright fortnight of Āṣāḍa at Campāvati Nagari during the reign of Rāṇa Sangrām. It was written at the instance of Maṇḍalāchārya Dharmachandra, the co-disciple of Abhayachandra who has been referred to in the manuscript of Nāyakaumāracarita. It was written for a layman of the Khandelawāla family Sahagotri. The spiritual line of teachers is as follows:—Kundakundacharyāmnāya—Padmanandī—Śrūta candra—Jinacandra—Prabhācandra—Maṇḍalāchārya Dharamacandra.

The peculiarities of the MS are as follows:—

1. Nasal Na (ण) occurs instead of Na throughout
2. Ya in place of i (य)—Yasrutī
3. Hu instead of ho
4. Anusvāra tendencies
5. The portions which are left out in the Ka MS. are available here

#### MS GA (ग)

The MS Ga belongs to Amer Shashtra Bhandara, Jaipur. It has folios 120, size 25 C.M. X 12 C.M., lines per page vary from 10 to 11, letters in each line about 35, margin right and left 3 C.M., top and bottom 2 C.M., Ghatta and number of verses are written in red ink. It bears glosses on the margin. The MS begins with "Oma Namaḥ Śi dhebhyah". Its colophon indicates that the MS. was completed in Samvat 1603 (1546 A.D.) on Saturday, the 10th of the Bright fortnight of Śrāvaṇa during the reign of Rāva Śrūtāna, the son of Hada Couhānavanshi Sūryamāla. It was written for a layman of the Khandelawālānvayi Saha Vothitha. The peculiarities of the MS are as follows:—

1. It is based perhaps on the MS Kha.
2. a (ग) and i (य) are used in place of ya (Yasrutī).
3. a, ya, u and ma are used in place of va.
4. Anusvāra.
5. Glosses on the margin.

**MS GHA (ग)**

This Ms also belongs to Amer Shashtra Bhandar, Jaipur which is kept with the Jain Vidyā Sansthan, Shrimahavirajī. It bears folios 108, size 27 C M, lines per page 10, letters per line about 33, margin all 2-2 C M. It ends with the colophon which informs that the MS was completed in Samvat 1611 (1554 A D) on Thursday, the 5th of the date fortnight of Chaitra at Alhadpur in the Mallināth temple. It was copied down by a disciple of Dharmachandra belonging to Khandelavālānvayī popalyagotra. The peculiarities of the MS are as follows —

- 1 The uses of Yasrutī and ekāra
- 2 Use of vakāra
- 3 Use of Hu
- 4 Anusvāra
- 5 Glosses in the margin
- 6 Similarities with the Ms Kha

**1 PRINCIPLES OF TEXT CONSTITUTION**

The following principles in present editing work have been adopted with all considerations —

- 1, The proposed edition of the Candappahacarīu is mainly based on the MS Ka which is the oldest one. Other Mss are utilized for justifying the readings in the text and the readings are mentioned accordingly in the footnotes.
- 2 Na (न) has been changed into Na (ण) initially, medially and in a conjunct group
- 3 Va and ba have been used according to Sanskrit or vernacular usages
- 4 Ccha(च्च्) and ttha (त्थ) are included according to the meaning
- 5 Anusvāra has been sometimes ignored
- 6 U (उ) is retained.

**2 THE AUTHOR AND HIS PATRON**

The history of Jain tradition indicates that there have been a number of Āchāryas by name of Yaśahkīrti such as the author of Candappahacarīu, author of Pāṇḍavapurāṇa (Samvat 1497), disciple of Ratnakīrti (Samvat 1693), the Bhattarak of Jorahat, branch (17th C, A D), the Bha of Mathuragaccha (18th C A D.), Vijayasena's



disciple, the disciple of Vimalakīrti, disciple of Rāmakīrti and so on. Of these, the controversy exists with the first two Yaśahkīrtis who are quite independent personalities in my opinion. On the basis of literary evidence it can be said that the author of the CPC belongs to the period of Siddhapāla who may be placed around 1173 A D. Secondly, the poet has himself said as Puskaragani. He must have been, therefore, from Puṣkara area of Ajmer (Rajasthan).

The poet has remembered his predecessors like Kundakunda, Samantabhadra, Akalanka, Jināsena, Siddhasena with all honour of appreciation. The author of the present epic is silent about his biographical details. It is, therefore, difficult to fix any certain period of his existence. However, it can be decided approximately on other grounds. The oldest Ms of the CPC is available of Samv 1530. He cannot, therefore, be placed beyond this period, i.e. 1473 A D. The poet has, of course, indicated at the concluding part (Puṣpikā) that he had composed the proposed work at the instance of Siddhapāla the son of Kumarasinh belonging to Humbadakula. Siddhapāla must be connected with Cālukya king Kumārāpāla. The poet has also referred in his eulogy (Prasasti) to the name of a village Ummatagāma of Gujarat state. As we know, the last period of Kumārāpāla is V Sam 1230 (1173 A D). Therefore, Siddhapāla can easily be placed around this period.

Yaśahkīrti appears to have a great influence of Vīranandī's Candraprabhacaritam which belongs to the 11th Century A D. This point has been elaborated in detail in the Hindi Introduction to the CPC. On these grounds it can be inferred that Yaśahkīrti of the CPC should have been earlier than that of Yaśahkīrti of Paṇḍavpurāṇa. Consequently, his existence can be proved in the 13th Century A D. Śrīdhara, Madankīrti, Bhāvasena Traivedya, Āśadhara, Narendrakīrti, Arhaddāsa etc. might have been his contemporary scholars.

### 3 CONTENTS OF CANDAPPAHACARIJU

The subject matter of the CPC, is to narrate the seven Bhavas of Candraprabha, the eighth Tīrthankar of Jain tradition. It is based on the Padmapurāṇa, Harivansapurāṇa and Uttarpurāṇa in general and Candraprabhacaritam of Vīranandī in Particular. The Mahākāvya is divided into eleven Sandhis.

1. The author, to begin with, directs salutation to Chandraprabha and then Pañca Paramēṣṭhis with an oath to write an epic CPC. He then refers respectfully to a number of Āchāryas like Kunda-kunda, Samantabhadra, Akalanka, Devanandī, Jinasen and Siddhasen. He discussed traditionally the qualities and defects of a gentle man and malicious person respectively, and then started the story of the Tīrthankara.

In the second Dhātakīkhand Dwīpa, there is a country Mangalavati by name. There lived Kanakaprabha king with his queen Svarnamālā and prince Padmanābha. One day Kanakaprabha, conceived the transiency of world as soon as he happened to visualise an old bullock fallen in mud when renounced the world by coronating his son to his kingdom.

2. While Padmanābha was seated in the inner assembly, the door-keeper left an exciting news that Śrīdhara, a Jain Muni came down to the city and consequently, the garden flowered untimely. The king with a great enthusiasm visited the place, got the sermon from him and enquired about his own past births. Śrīdhara described them and said "There is a city Śrīpur by name in the west Videha. Its king Śrīsenā and queen Śrīkāntā were not happy as they had no issues. The reason was that looking to a pregnant lady, Śrīkāntā prayed that she should not have any child. This Nidāna has been put to an end and now the time is nearer when she would be begetting a nice child." The queen got accordingly pregnancy and gave birth to a son Śrīdhara by name. He was afterwards married with princess Prabhavati.

3. Śrīsenā handed over the kingdom to Śrīdhara and became Muni. Śrīdhara then proceeded to attain victory over rulers and came back to the city with a great success. He also finally renounced the world, died and became Śrīdharadeva by name in the Saudharma Svarga. Śrīdhara then took a birth to Ajitasenā, the queen of Ajitajaya and got name Ajitasena.

4. One day Ajitasena was unfortunately plundered and thrown away in Manoramā lake by Candaruci. Ajitasena somehow reached to the bank of Parusā forest and then climbed to Añjanagiri. There he had to fight with Hiranyadeva who did so just to test his courage and power. He then appeared and requested for having his cooper-

ation at any critical moment. Narrating an event occurred in previous birth he stated that you were a king of Śrīpur where a quarrel had started between Śaśi and Sūrya. Śaśi had stolen the wealth of Sūrya. You rested with a justice, managed to get return the wealth to Sūrya and declared capital punishment to Śaśi. Śaśi has been by the name of Candaruci who had thrown you in the lake and Sūrya by name of Hiraṇyadeva, myself.

Prince Ajitasena then came out of the forest and entered into the country Ariṇjaya. At the same time, its king Jayavarmā had decided to have an engagement of his daughter Śaśiprabhā with king Mahendra, but acknowledging the fact from astrologers that Mahendra had a short span of life, he relinquished the idea. Hence, the battle started between Jayavarmā and Mahendra. Ajitasena supported Jayavarmā and defeated Mahendra.

Another sub-story starts from this point. There is situated a city Ādityapur by name in south of Vijayārḍha mountain. Dharanīdhvaja was its king. One day Priyadharma Brahmacārī reached to him and said that his life would be extinguished by such a person who was married to Śaśiprabhā. Dharanīdhvaja then asked Jayavarmā to marry his daughter with him. Jayavarmā refused to do so and hence war started between them. Prince Ajitasena jumped in between. He remembered immediately Hiraṇyadeva who helped him all the while. Both together defeated Dharanīdhvaja. Consequently as a token of gratefulness, Jayavarmā arranged the marriage of his daughter Śaśiprabhā with Ajitasena. Subsequently, Ajitasena came back to his father who handed over his responsibility to him. Meanwhile, Ajitañjaya met with Svayamprabha Tirthankara who preached him the conception of Dharma and Karma.

5. After returned to Ayodhyā from a successful military operations against all the kings, Ajitasena was greatly and affectionately welcomed by the people. In morning while he was seated in the Sabhābhavan, a report reached to him that an elephant had killed a person. Having been disgusted with the event he relinquished the worldliness, accepted Jina-dīkṣā, died and took birth in the sixteenth heaven Acyuta.

6. Concluding his talk Śrīdhara Munī said that from Acyuta heaven you ushered into abdomen of Suvarṇamālā, the queen of

Kanakaprabhā and reborn as prince Padmanābha. He also said that this can be verified if after ten days an elephant comes to you leaving his own group. The incident accordingly occurred and the king captured the elephant Vanakeli. One day Prathvipāla conveyed a message to him that had he did not release the elephant within thirty days, he would have to face the battle. Padmanābha opted the second alternate. Prathvipāla was defeated, Padmanābha then gave up the worldliness, accepted Jinadīksā, passed away and took birth in Vaiṣṇava heaven.

7-8 From this Sandhi, the story of Tīrthakara Candraprabha is started. Mahāsen was a king of Candrapurī. During seventh month of pregnancy period, queen Lakṣmanā saw the sixteen dreams and begot a son Chandraprabha by name who was taken away by Devas to Sumeru for the Abhiṣeka.

9 The story moves fastly. Candraprabha was very brilliant, industrious, courageous and powerful. He was married and coronated at the appropriate time. One day an old man reached to him with a request to save his life and then became invisible. He was, as a matter of fact, Dharmaruciḍeva who instructed and diverted the mind of Candraprabha to the spiritual life. Consequently, Chandraprabha handed over his kingdom to son Varacandra and renounced the world.

10-11 The tenth Sandhi describes the way of spiritual life, penance and meditation of Candraprabha who attained finally Kevalī-hood. The eleventh Sandhi submits the detailed account of the Samavasāraṇa and Atiśayas and penance. At the last, the Tīrthakara attained Nirvāṇa from Sammedhacāla in the month of Bhādrapada. The men and Devas celebrated the Mokṣakalyāṇaka with a great zeal.

#### 4 CRITICAL REMARKS

Yāśaskīrti's CPC is mainly based on the Candraprabhacaritam of Mahākavi Vīraṇandī. Both the epics run on parallel lines with slight changes regarding the arrangement of Sandhis and Sargas. Vīraṇandī divided his work into eighteen Sargas whereas Yāśaskīrti completed his CPC in eleven Sandhis. On our critical study, we easily observe that Yāśaskīrti has arranged the story in more systematic-

tic and impressive way, though with fast movement. This point has been dealt with in detail in Hindi introduction to the CPC.

Yaśahkīrti has enriched his work with vast informations and inherited from other earlier works directly or indirectly. For poetic images, the author of the CPC appears to have immense impact of Kālidāsa, Bhavabhūti, Māgha and Śrīharsa, in addition to Somadeva and Viranandī. The religious and philosophical impact can also be observed from the works of Āchārya Kundakunda, Umāsvāmī, Samantabhadra, Siddhasena, Akalanka, Jinasena and so on.

The CPC is undoubtedly an eminent epic written in Apabhraṃsa. All the Puspikās refer to the author as Mahākavi Yaśahkīrti who has followed all the norms and objects of Māhākāvya as directed by Sanskrit Acharyas. He utilized his radiance to make the story more popular with applying all the Rasas, Alankāras and other specific characteristics. For instance, in the context of amusement of Ajitasena and others, the poet has utilized his geniusness the seasons for Śraagarāsa, the battles for Vīrarāsa and the introduction to Taṭvas for Shāntarāsa. The Karunarāsa and Vātsalyarāsa can also be seen at the time of distress and childish pranks respectively. He also appears to have a view that the inclusion of Viśmitarāsa and Adhyātmarāsa (11-28) should be made to the Rasasankyā.

Practically all the Alankāras like Yamak, Upama, Rūpak, Utpreksā, Śleṣa, Viśesokti etc. have been used in natural way in the work. The Mādhurya, Oja and Prasāda Gunas have also their due place in the epic. So far as concerned with metres, the poet has used Padhāḍīyā, Adillada, Trotaka, Tripadī, Mātrik, Dohak, Danduvak, Ghat'ā etc. according to the contexts.

The socio-cultural material is not very much used in the work. The poet, of course, followed Āchārya Kundakunda in context of Guṇavratas by mentioning Dikparamāṇa, Bhogopabhogaparamāṇa and Anarthadaṇḍa. He also paid an honour to the Kundakunda tradition by accepting the inclusion of Śamāyika, Proṣadhōpavāsa and Salikhanā and also to Somadeva by replacing Atithisamvibhāga to Dāna into Śikṣāvratas.

The Candappaharī is written in Pāṣāṇī Apabhraṃsa which has a credit to originate the Rajasthanī language/dialect. Its main peculiarities can be seen through out the entire work as follows.

- 1 A ँ) becomes U (उ —Puharu.
- 2 Initial A (अ) is retained—Acchai.
- 3 Availability of e (ए) and (ऐ) in short and long vowel
- 4 E (ए) becomes i (इ)
- 5 Anusvāra and Anunāsikata
- 6 Use of Hi, him, hum (हि, हि, हु)

This is the brief introduction to the present edition of the Candappahacariu. The detailed account can be studied through the Hindi introduction. The importance of the present work lies with the linguistic standpoint which may be useful to decide the different stages of the dialectical forms of Hindi or say Rajasthani.

The editing work was completed in 1978 on the basis of two MSS. In subsequent years two more MSS. Were utilized for deciding the readings. On its completion the question was to get it published. It is a pleasure for me to record my sense of gratitude to Professor Darwar Lal Kothia, my teacher, who has shown keen interest in getting it published from the Vir Seva Mandir Trust. He has a great zeal to enrich and publish the Jain literature. I, therefore, dedicate the present work to him as a token of honour.

A vast Apabhraṃsa literature is still waiting for publication. The scholars should come forward to edit the unpublished work and the institutions should take keen interest in it in this regard. It is a matter of pleasure that the Ministry of Education, Government of India has manifested its inclination in making available easily this literature.

I should mention here at the last that the printing of the Candappahacariu was completed in October, 1985. The English introduction was only remained. In November 1985, I have to attend the Assembly of world's Religions at New Jersey, U. S. A. and hence I could not write Introduction in time. The fault is thus on my part for which I make an apology. As soon as I went through the printed text, I found that a number of printing mistakes have been occurred there in. The main reason is that the correction made in the proofs were not inserted properly by the Press. However, I am sorry for the inconvenience caused.

New Extension Area.

Sadar, Nagpur-440001  
Dt 14-4-86

Bhagchandra Jain Bhaskar  
Head of the Department of Pali & Prakrit,  
Nagpur University, Nagpur

## प्रस्तावना

### 1. जैन चरित कव्य-परम्परा

चन्द्रपह चरित एक पौराणिक ग्रन्थ श चरित महाकाव्य है। यह पौराणिक चरित काव्य परम्परा जैन साहित्य में प्राकृत आगम ग्रन्थों से प्रारम्भ होती है। जैनाचार्यों ने शलाका महापुरुषों पर प्रारम्भिक रचनाएँ कीं। ये रचनाएँ सक्षिप्त पर सामग्री बहुल थीं। तिलोपपण्णत्ति, कल्पसूत्र आदि में जो कुछ भी चरितों का आकलन किया गया है वह महाकाव्यत्व की दृष्टि से खरा नहीं उतरता। इसलिए उसे आच्छ परम्परा का रूप माना जा सकता है। इसके बीजों को भी खोजना चाहे तो आचारारंभ, सूत्रकृतांग आदि आगम ग्रन्थों में वीर स्तुति के रूप में दृष्टव्य हैं जहाँ यथारूप की प्रस्तुति की गई है।

धीरे-धीरे कल्पनात्मक तत्त्व का विकास दृष्टा और चरित काव्यों का आकार बढ़ने लगा। चरित नायकों का आचार लेकर धार्मिक तत्त्वों को उपस्थित करना ही प्रमुख लक्ष्य था। ससार की स्थिति का यथार्थ चित्रणकर पाप-पुण्य की प्रकृति का लेखा-जोखा करना तथा भेदविज्ञान होने पर वैराग्य भावना आना और उसे दृढतर बनाये रखने के लिए कर्मफल योजना को एक अंग के रूप में स्वीकार कर लेना उस लक्ष्य की पूर्ति का साधन बना लिया गया। सामाजिक तत्त्वों तथा मूल्यों की उपेक्षा कबि कभी कर नहीं सकता। उन्हें वह अन्तर्गत कथाओं के माध्यम से प्रस्तुत करता है। पर हाँ, कहीं-कहीं लोक तत्त्वों की बहुतायत हो जाने से कथा-प्रवाह में शैथिल्य अवश्य आ जाता है।

जैन चरित काव्यों का एक अंगना ढाचा है। शास्त्रीय नियमों के अनुसार वे महाकाव्यों की श्रेणी में तो आ ही जाते हैं पर उनकी विशेषताओं को उदरस्थ कर उनपर जैन संस्कृति को आरोपितकर चरित लिखना-लिखाना जैनाचार्यों की एक अपनी विशेषता रही है। स्तुति, पूर्व कवियों का स्मरण, सज्जन-मुर्जन चर्चा, देश-नगर आदि का वर्णन, नगर के बाह्योद्घात में मुनि का पहुँचना और उनके उपदेश श्रवण के लिए राजा तथा प्रजा का जाना तथा अन्त में राजा को वर ग्रहण हो जाना ये ऐसे तत्त्व हैं जो सभी जैन चरित काव्य में मिलते हैं। इसी के साथ विद्याधर,

यक्ष, राक्षस, गन्धर्व आदि दिव्य पात्रों के माध्यम से कथा में रोचकता लाना, प्रेम, मिलन, दूतप्रेषण, युद्ध, विवाह, उपदेश, पूर्वभव, कर्मफल आदि तत्त्वों से कथा तत्त्व को विकसित करना तथा अन्त में तपस्या के माध्यम से निर्वाण प्राप्ति का चित्रण करना चरित काव्यों की अन्तिम परिणति रही है। इस दृष्टि से पौराणिकता और धार्मिकता का यहाँ सुन्दर समन्वय हुआ है।

## 2 चन्द्रप्रभ चरित पर निमित्त साहित्य

जैनाचार्यों ने इस ढाँचे पर पौराणिक आख्यानो का भरपूर उपयोग कर लयभग हर भारतीय भाषा में साहित्य सृजन किया है। इन आख्यानो का उपयोग जैन साहित्य के क्षेत्र में करीब पाँचवीं शताब्दी से प्रारम्भ हुआ। कदाचित् विमल सूरि (वि स 530) प्राकृत के प्रथम कवि थे जिन्होंने इस परम्परा का प्रवर्तन 'पद्मचरियम्' के माध्यम से किया। उत्तरकाल में रामायण और महाभारत के आख्यानो पर अनेक महाकाव्य लिखे गये।

इनके अतिरिक्त त्रैलोक्य शलाका महापुरुष-विषयक पौराणिक महाकाव्य उपलब्ध होते हैं। जिनसेन (सन् 763-843) का आदिपुराण और गुणभद्र का उत्तर पुराण (सम्राट् काल सन् 908) इस सन्दर्भ में मानक काव्य रहे हैं। श्रीचन्द्र का पुण्यगमर (वि स 1080), दामनन्दी का पुराणसार सग्रह (लगभग 12वीं शती), मुनि मल्लिकार्जुन का महापुराण (शक स 969), आशाधर का त्रिषष्टिस्मृति शास्त्र (वि स 1292), हेमचन्द्र का त्रिषष्टिशलाका महापुरुष चरित (वि स 1261-28), अमरत्रय मूरि का चतुर्विंशतिजिनेन्द्र संक्षिप्त चरित (सन् 1238 के पूर्व), पद्म सुन्दर का रायमल्लाम्बुदय (वि स, 1622), मेघ विजय उपाध्याय का लघु त्रिषष्टिशलाका पुरुषचरित (वि स 1760) आदि कुछ ऐसी संस्कृत रचनाएँ हैं जिनमें भ चन्द्रप्रभ का चरित निबद्ध किया गया है। प्राकृत में भी शीलाचार्य का अउप्यन् महापुरिस चरिय (वि स 925) और अन्नकवि (12वीं शती) का अउप्यन् महापुरिस चरिय प्रसिद्ध ग्रन्थ माने जाते हैं। इनमें चन्द्रप्रभ स्वामी का चरित अत्यन्त संक्षिप्त में उपलब्ध होता है।

कुछ स्वतन्त्र काव्य लिखे गये हैं जिनमें चन्द्रप्रभ का चरित विस्तार से आकलित हुआ है। ऐसी रचनाओं में वीर सूरि (स 1138), जिनेश्वर सूरि (स 1175) यशोदेव अपरनाम धनदेव (स 1178), हरिभद्र सूरि (12-13वीं शती), व जिनवर्धन सूरि (स 1461), द्वारा लिखित प्र.कुल चन्द्रपह चरियम् विशेष उल्लेखनीय हैं। संस्कृत प्राकृत उभय मिश्र भाषा में भी चन्द्रप्रभ पर एक काव्य मिलता है जिसे वैवेन्द्रगणि ने स 1264 में लिखा था।



चन्द्रप्रभ पर कुछ संस्कृत काव्य भी उपलब्ध हैं। प्रथम काव्य आचार्य वीर-नन्दि (11वीं शती का प्रारम्भ) कृत चन्द्रप्रभ महाकाव्य है जिसे यश कीर्ति ने अपने चन्दप्पह चरित महाकाव्य का आधार बनाया है। दूसरी रचना भ्रमर कवि (स 1045 के लगभग) कृत का उल्लेख मिलता है। तीसरी रचना देवेन्द्र सूरि (स 1260) की है जिसका उत्तर भाग नाटक शैली में लिखा गया है। चौथी रचना सर्वानन्द सूरि (स 1302) की 6141 श्लोक प्रमाण है जो अभी तक अप्रकाशित है। पंचम कृति भट्टारक शुभचन्द्रकृत (16-17वीं शती) बारह सर्गात्मक है। अन्य कवियों द्वारा लिखित उक्त काव्य के जो उल्लेख मिलते हैं उनमें पण्डिताचार्य, आचारिकगच्छ के एक सूरि, प शिवाभिराम (17वीं शती) तथा दामोदर (स 1727) के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

अपभ्रंश में चन्द्रप्रभ पर अभी तक कुल तीन कृतियाँ ज्ञात हैं। प्रथम कृति भ यश कीर्ति की है जिसकी प्रतिया आमेर शास्त्र भण्डार जयपुर, दि जैन पाटोदी मन्दिर जयपुर, सरस्वती भवन नागौर व राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान चित्तौड़-गढ़ में सुरक्षित है। इसी की एक प्रति स्व प परमानन्द जी के पास भी रखी है। दूसरी कृति कवि दामोदर की है जिसकी प्रतिया ए प सरस्वती भवन व्यावर में है। तथा तीसरी कृति कवि श्रीचन्द्र की है जिसकी प्रति कोटाड़ियों का दि जैन, मन्दिर, डूंगरपुर में रखी हुई है। ये सभी ग्रन्थ अभी तक अप्रकाशित हैं। इनमें चन्दप्पह चरित प्रथमतः संपादित होकर प्रकाश में आ रहा है।

### 3 संपादन परिचय

#### प्रति परिचय

यश कीर्ति द्वारा रचित इस "चन्दप्पह चरित" के संपादन में निम्नलिखित प्रतियों का उपयोग किया गया है—

#### 1 'क' प्रति

यह प्रति श्री स्व प परमानन्द शास्त्री, दिल्ली के सौजन्य से प्राप्त हुई थी। प्रति में कुल 67 पत्र हैं जिनमें प्रथम पत्र एक और लिखा गया है। आकार 27 से मी. × 12 से मी पंक्तियाँ प्रति पृष्ठ 12, अक्षर प्रति पंक्ति प्रायः 50, हाशिया दोनों पार्श्वों में 3 से मी., ऊपर 2 से मी और नीचे 1½ से मी। लिखावट समान और सुन्दर है। प्रति के मध्य में पाँच पंक्तियों के बीच एक विशिष्ट आकार का चिन्ह

बना हुआ है और छूटी हुई जगह में लाल स्याही से बड़ा शून्य रख दिया गया है । पत्र की दूसरी ओर दोनों ओर के हाशियों में भी लाल स्याही से इसी प्रकार बड़ा शून्य बना दिया गया है । इससे प्रति अधिक सुन्दर दिखने लगी । घंटा और पक्ष क्रमाक भी लाल स्याही से लिखा हुआ है ।

प्रति का प्रारम्भ 'नमः सर्वनाय' में होता है । कुल ग्यारह सधियाँ हैं और प्रत्येक सधि के अन्त में "इयं सिरि चन्द्रपुत्र चरिण महाकृद् जसकित्ति विरहिण" 'सधि समत्तो' लिखा है । हर सधि के अन्त में ग्रन्थ सख्या भी लिखी हुई है ।

प्रति के अन्त में प्रशस्ति इस प्रकार है—

संवत् 1530 वर्षे फाल्गुण सुदि 5 भरणि नक्षत्रे श्री मूलसधे बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे भट्टारक श्री कुदकु दाचार्यान्वये, तस्यानुक्रमेण भट्टारक श्री प्रभाचन्द्र देवान् तत्पट्टे भट्टारक श्री पद्मनन्दिदेवान्, तत्पट्टे भट्टारक श्री शुभचन्द्रदेवान्, तत्पट्टे भट्टारक श्री जिनचन्द्रदेवान्, तत्सिन्धु मुनि श्री मुवनकीर्ति देवान्, तत्सिन्धु श्री बीसा, खड्डेलवान्त्वये गगवालगोत्रे स साधू भार्या नडवी, तस्य पुत्र डंग्लू, चाचा पीपा, द्वितीयक सा आसू, तस्य भार्या दामा, तस्य पुत्र डीडा, तस्य भार्या हेमी, तृतीयक सा लाखा, भार्या गामा, तस्य पुत्र तान्हू, फलू, इदं स्वास्त्र चन्द्रप्रभ चरित्र दामा ब्रह्म बीसा योग्य कर्मक्षय निमित्त घटापित, (स्वहस्तेन दत्त । श्री चन्द्र प्रभ चंत्यालये लिखी । सा कुमरीमहा निधानालु ।

यादृश पुस्तकं दृष्ट्वा तादृशं लिखितं मया ।

यदि सुदृढमसुदृढं वा मम दोषो न दीयते ॥

भग्नं पृष्ठिकं ग्रीवा बद्धदृष्टिं अशोभुत् ।

कुप्टेन लिखितं सा च पत्रेन प्रतिपालिता ॥

तैलरक्ष जले रक्ष रक्षेति धलबधन ।

पर हस्ते न दातव्यं, एव वदति पुस्तकम् ॥ चिर जीवात्

पठितं देवा लिखितं ।

इस प्रशस्ति से निम्नलिखित जानकारी मिलती है—

1 यह प्रति स 1530 में फाल्गुन सुदी 5 भरणि नक्षत्र में चन्द्रप्रभ चंत्यालय में लिखी गई । इसके अनुसार गुरु परम्परा इस प्रकार है—

मूलसध, बलात्कारगण, सरस्वतीगच्छ, कुदकु दाचार्यान्वय—

भ प्रभाचन्द्र

|

भ पद्मनन्दि

|

म शुभचन्द्र  
 |  
 म जितचन्द्र  
 |  
 म भुवनकीर्ति

2 महाकवि ने यह ग्रन्थ हुबड़कुल भूपण कुबेरसिंह के सुपुत्र सिद्धपाल के अनुरोध पर रचा ।

3 भुवनकीर्ति के शिष्य ब्रह्म बीसा लहेलवालान्वय में गगवाल मोत्री थे । उनकी आवक शिष्य परम्परा में तालू, फलू ने इस 'चन्द्रप्रभ चरित्र' को बीसा के कर्मलय निमित्त लिखवाकर अपने हाथों से ही प्रदान किया । इस आवक परिवार का वंश इस प्रकार है—

सा सामू-भार्या नउखी  
 |  
 सा डालू  
 |  
 भासू-भार्या दामा  
 |  
 डीडा-भार्या हेमी  
 |  
 लाखाभार्या गागा

(i) लाखू

(ii) फलू

इस प्रति की निम्नलिखित विशेषताएँ स्पष्ट हैं—

1 आदि 'न' का प्रायः सुरक्षित रहना । नकार बहुला होना ।

2 मध्यवर्ती एव पदान्त असंयुक्त तथा क्वचित् संयुक्त 'न्' के स्थान पर 'ए' का प्रयोग होना, जैसे कए, विसणु, जिए आदि ।

3 मध्यवर्ती संयुक्त 'न्' के स्थान पर प्रायः 'ण्' का प्रयोग होना, जैसे एिसणिएउ, अणु, सपवणु ।

4 'इ' के स्थान पर 'य' श्रुति का तथा 'य' श्रुति के स्थान पर 'इ' का प्रयोग मिलना ।

5 'ब' के स्थान पर ब तथा 'ब' के स्थान पर 'ब' का प्रयोग करना । इसमें बकार का प्रयोग अधिक हुआ है ।

6 'व' के स्थान पर कहीं-कहीं 'म' का प्रयोग मिलता ।

7 'त्थ' के स्थान पर 'च्छ' का प्रयोग—सत्थु > सच्छु ।

## 2 'ल' प्रति

यह प्रति श्री ग्रामेर शास्त्र भण्डार, जयपुर की है । इसमें कुल 117 पत्र हैं । आकार 26 से मी × 11 से मी है । हाशिया दोनों पाश्वर्कों में तथा ऊपर नीचे 2 से मी, प्रत्येक पत्र में 9 पक्तियाँ और प्रत्येक पक्ति में प्रायः 40 अक्षर हैं, अक्षर सुन्दर और स्पष्ट हैं । लाल स्याही से घत्ता, पद्य मरुया तथा सधि समाप्ति सूचक पक्ति लिखी गई है ।

इस प्रति का प्रारम्भ 'ऊँ नमो वीतरामाय' से हुआ है । अन्तिम प्रशस्ति मधुरी है, जो इस प्रकार है—

सवतु 1583 वर्षे आषाढ भुदी बुद्धवासरे पुष्यनक्षत्रे राणा श्री सग्राम राज्ये चपावनी नगरे राव श्री रामचन्द्र प्रतापे श्री मूलसधे, नद्याम्नाये बलात्कारण सरस्वतीगच्छे श्री कुदकु दाचार्यान्येन भट्टारक श्री पद्मनदीदेवास्तपट्टे भ श्री श्रुतचन्द्रदेवास्तपट्टे भ श्री जिनचन्द्रदेवा स्तपट्टे भ प्रतापचन्द्रदेव तत्तिष्ठ्य मण्डलाचार्य श्री धर्मचन्द्र सदुपदेशात् खण्डेलवालान्वये साहगोत्रे सा काधिल' भार्या कावलदे तत्पुत्रा सा गूजर, द्वितीय मा राधौ, तृतीय मा वाच्छा, सा राधौ भार्या ग्यणदि, तत्पुत्रा चत्वार प्र सा रामदास, तत्भार्या रायबादे, द्वि सा माधू, भार्या हरिखमदे, तत्पुत्रौ द्वौ सापासा भार्या पाटमदे, द्वितीय गूजरि तत्पुत्र हरराज सा ग्रामा भार्या ग्रहकारदे, तृतीय सा दासा, तद्भार्या दाडिमदे, तत्पुत्रो प्र भीखसी, तत्भार्या बलदे, तत्पुत्रौ नानू-दाडू, द्वितीय धर्मसी, तद्भार्या धारादे, चतुर्थ सा घाटम तद्भार्या घाटमदे' तत्पुत्रौ द्वौ देवसी, तद्भार्या देवलदे ।

इस अधूरी प्रशस्ति से निम्नलिखित बातों की जानकारी मिलती है—

1, इस प्रति का लेखन सा 1583 आषाढ सुदी 3 बुधवार को पुष्य नक्षत्र में मण्डलाचार्य धर्मचन्द्र के सदुपदेश से राणा सग्राम के राज्य में चपावनी नगरी में राव रामचन्द्र के काल में संपन्न हुआ ।

2 इसके अनुसार गुरु परम्परा इस प्रकार है—

मूलसध-नद्याम्नाय-बलात्कारण-सरस्वतीगच्छ—

कुन्दकुन्दाचार्याम्नाय

भ. पद्मनन्द देव

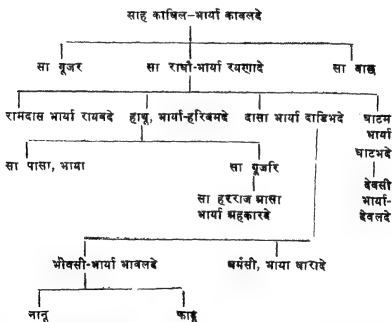
भ. अतचन्द्र देव

भ. जिनचन्द्र देव

भ. प्रभाचन्द्र देव

मण्डलाचार्य धर्मचन्द्र

मण्डलाचार्य धर्मचन्द्र के ग्रन्थों में खण्डेलवालान्वयी साहगोत्र था जिसका वंशवृक्ष इस प्रकार है—



इस प्रति की विशेषताएँ इस प्रकार हैं—

1. आद्यवर्ती 'न' सुरक्षित है पर कहीं-कहीं उसे 'ख' भी कर दिया गया है। एकार प्रवृत्ति अधिक मिलती है।

2. मध्यवर्ती समुक्त 'न' भी सुरक्षित है पर इसके भी अपवाद मिल जाते हैं।

- 3 कुल मिलाकार इसमें एकार प्रवृत्ति अधिक है।
- 4 'इ' के स्थान पर य श्रुति का प्रयोग अधिक हुआ है।
- 5 शब्दात अथवा मध्यवर्ती 'हो' के स्थान पर 'हु' का प्रयोग अधिक हुआ है।
- 6 कुछ पद्यांश जो 'क' प्रति में छूट गये हैं, यहाँ मिल जाते हैं।
- 7 'ह' के स्थान पर प्रायः 'य' तथा ब के स्थान पर व मिलता है।
- 8 अनुस्वार बहुव्यता तथा ब के स्थान पर ब का प्रयोग अधिक है। पाठान्तर में इसे हमने छोड़ दिया है।

### 'न' प्रति

यह भी आमेर शास्त्र भण्डार, जयपुर की प्रति है। इसमें कुल 120 पन्ने हैं जिनमें प्रथम और अन्तिम पत्र एक और लिखा हुआ है। आकार 25 से मी × 12 से मी पक्षिया प्रतिपृष्ठ 10-11 तथा अक्षर प्रति पक्षि लगभग 35, हाशिया दोनों पाश्वर्कों में 3-3 से मी तथा ऊपर-नीचे 2-2 से मी है। लिखावट सुन्दर और समान है। पत्ता और पद मल्ल्या में लाल स्वाही का प्रयोग हुआ है। लिखने के बाद प्रति को किसी सफेद पदार्थ से काफी सुधारा गया है। हाशियों में जहाँ कहीं कठिन शब्दों के अर्थ भी द्योतित किये गये हैं।

प्रति का प्रारम्भ "सिधि" "ऊ नम" सिद्धिभ्य" से इस प्रकार हुआ है। अन्तिम प्रशस्ति इस प्रकार है—

संवत् 1603 वर्षे शाके 1468 वषट्प्रादयो मध्ये प्रमाथिनाम सबत्सरे दक्षिणायने मासतो वर्षे गितौ महामाग्न्य आबरणमाये शुक्लपक्षे दसम्या तिथौ शनिवारे घटीपरत एका 11 दश्या तिथौ भूलनक्षत्रे घटी 39 विकुभ नामयोगे घटी 9 परत प्रीत्यनामयोगे, मध्यान्हबैलाया, वृ दावतीठाणात् हाडा चौहाणान्वये, राव श्री सूर्या-मल, तत्पुत्र राव श्री सुरीतण राज्य पवर्तते। अथ जबूदीते सरस्वतीगच्छे श्री कुद-कु दाचार्यानवये तदगच्छे तदाम्नाये श्रीतत्पट्टे भटारीग श्री पद्मनन्दी देवा तत्पटे भ श्री शुभचन्द्र देवा तत्पटे भ श्रीजिनचन्द्र देवा तत्पटे ब श्री प्रभाचन्द्र देवा तत्तिशब्ध मण्डलाचार्य श्री धर्मचन्द्र तदाम्नाये खण्डेलवालान्वये, जीवदयावृत बालणा सह श्री वोटीबाग्याती गगवालान्वये साह बोटीबा भाया डोडी तयो पुत्र प्रथम जिणदास भार्या नेमी, द्वितीय भार्या लाछी, तृतीय भार्या गुजरी द्वितीय साह मेला, भार्या ल्हौककना, तयो पुत्र प्रथम उदा द्वितीय भोज्या। गगवाल साह बोटीबा तस्य सुहे भार्या डोडी तयो पुत्र साह। जीणदास भार्या गुजरी, तयो पुत्र प्रथम नीनीमाद, भार्या

नारंगदा, द्वितीय आसय कर्मचार्य लिखाइत बहुगुजरी । इहं चंदप्रभा सम्पूर्ण  
समाप्त । बाइयो ल्हीवीछा उपदेश दातव्य । जोसी नैया । ततपुत्र जोसी लिखित ।  
ज्योसी गणेश । इह चंदप्रभा शास्त्र ॥.....

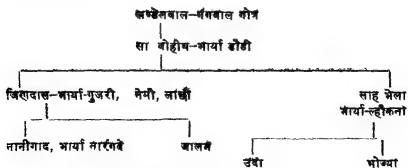
इस प्रशस्ति से निम्नलिखित जानकारी मिलती है—

1 यह प्रति सवत् 1603 मे अवणमासीय शुक्ल पक्ष की दशमी तिथि की  
मध्यान्ह बेला मे समाप्त हुई । इस समय हाहा चौहाणवशी सूर्यमल के पुत्र राव  
सुरीताण का राज्य था ।

2 इसके अनुसार गुरु परम्परा इस प्रकार है—

कन्दकुन्दाचार्य  
|  
भ पद्मनन्द देव  
|  
भ शुभचन्द्र देव  
|  
भ जिनचन्द्र देव  
|  
भ प्रभाचन्द्र देव  
|  
मण्डलाचार्य धर्मचन्द्र देव

3 मण्डलाचार्य धर्मचन्द्र के शिष्य लख्खेलबालाचर्यी साह बोहीन की वंश  
परम्परा इस प्रकार है



4 इस प्रति की निम्नलिखित विशेषताएं दृष्टव्य हैं—

1 इस प्रति का आकार 'ख' प्रति रहा होगा। विशेषता यह है कि इसे किसी विद्वान ने बाव में सुधारा है और जो सुधार हुआ है वह प्रायः ठीक है।

2 अ तथा इ के स्थान पर प्रायः य श्रुति का प्रयोग हुआ है।

3. व के स्थान पर अ, य, उ तथा म भी किया गया है।

4. शब्दों में इकार का प्रयोग अधिक हुआ है।

5 अनुस्वार बहुत है।

6 यत्र तत्र शब्दार्थ भी दिये गये हैं हाशियों में।

### ‘घ’ प्रति

यह भी आमेर शास्त्र भण्डार, जयपुर की प्रति है जो आज जैन विद्या संस्थान, महावीर जी के ग्रन्थ भण्डार में सुरक्षित है। इसमें कुल पन्ने 108 हैं जिनमें प्रथम पत्र एक ओर लिखा हुआ है। आकार 27 से मी × 11 से मी। पक्तियाँ प्रति पृष्ठ 10 तथा अक्षर प्रति पक्ति लगभग 33 हैं। हाशिया चारों पाश्वर्कों में 2-2 से मी है लिखावट सुन्दर और समान है, घत्ता और पद सफ़या लाल स्याही से अंकित हैं। इस प्रति को भी यथावश्यक किसी सफेद पदार्थ से सुधारा गया है। हाशियों में जहाँ कहीं कठिन शब्दार्थ भी लिख दिये गये हैं।

प्रति का प्रारम्भ “ॐ नमो वीतरागाय” से हुआ है। अन्तिम प्रशस्ति लिपिकार की इस प्रकार है—

ॐ नमः सर्वत् 1611 दशे चैत्र वदि 5 विसंपतिवारं स्वातिनक्षत्रे अल्हादपुर नगरे श्री मल्लिनाथ चैत्यालये श्री मूलसधे कुन्दकुन्दा ( १ ) भ्नाये बलात्कारणणे सरस्वती गच्छे श्री कुन्कुन्दाचार्यान्वये भट्टारक श्री पद्मनन्दि देवा स्तत्पट्टे भट्टारक श्री शुभचन्द्रदेवा स्तत्पट्टे भट्टारक श्री जिणचन्द्र देवा स्तत्पट्टे भट्टारक श्री प्रभाचन्द्र देवास्तत् शिष्य मण्डलाचार्य श्री धर्मचन्द्र देवास्तदाम्नाये खण्डेलवालान्वये पोपत्य गोत्रे सभाला तद्भार्या पुसिरि तत्पुत्र व्रतारि प्रथम पुत्र सानह, द्वितीय रामल तृतीय सकान्हा, चतुर्थ सजालपत्र तद्भार्या नोलादे तत्पुत्र सहेम भार्या हीरादे सरणामल भार्या रईवे, द्वितीय गुजरि तत्पुत्रे चव प्रथम पुसमसमताश्रुति अरट्टाचिचि विरदा समता भार्या व्रतिद्या तत्पुत्र तेजपाल भार्याद्विय प्रथम भवनदे द्वितीय सकतादे तत्पुत्र विरजा प्रेमराज अरट्टा भार्या अकरदे ।

यह प्रशस्ति अक्षूरी, अस्पष्ट और भाषागत गलतियों से अपूर है। फिर भी जो कुछ जानकारी मिलती है, वह इस प्रकार है—



1 यह प्रति स 1611 में बैंगवदि 5 गृहस्पतिवार को आल्हादपुर नगर वर्ती श्री मल्लिनाथ चैत्यालय मे समाप्त हुई ।

2 इसके अनुसार गुरु परम्परा इस प्रकार है—

कुन्दकुन्दाचार्य

|

पद्मनन्दि देव

|

शुभचन्द्र देव

|

जिणचन्द्र देव

|

ब्रमाचन्द्र देव

|

मण्डलाचार्य धर्मचन्द्र

3 मण्डलाचार्य धर्मचन्द्र के शिष्य लण्डेलवालाग्वरी पोपत्य गोत्री किसी विद्वान ने यह प्रतिलिपि की । ब्रह्मस्ति कदाचित् बाध मे जोड़ी गई है । भ्रष्टरी होने से लिपिकार का नाम भ्रष्टात है ।

4 इस प्रति की विशेषताएं इस प्रकार हैं—

1 प्राय यश्रुति का उपयोग हुआ है । एकार भी मिलता है ।

2 व का प्रयोग अधिक हैं ।

3 अनुस्वार बहुल है ।

4 'हु' का प्रयोग अधिक हुआ है ।

5 हांशियो मे सव्धार्य जहाँ कहीं दे दिये गये हैं ।

6 'ख' प्रति से यह प्रति अधिक मिलती है ।

**पाठ संपादन की वृद्धति**

1 प्रस्तुत ग्रन्थ का संपादन पूर्वोक्त चार प्रतियों के आधार पर किया गया है । उनमे 'क' प्रति प्राचीनतम और कदाचित् सुन्दर व शुद्धतम है । अत इसी को सामान्यतः आधार्य प्रति के रूप में स्वीकार किया गया है । जहा कहीं पाठ को निश्चित करने के लिए 'ख', 'ग' अथवा 'घ' प्रति को भी आधार्य मान लिया गया है ।

2 आदि 'न' को 'ण' कर दिया गया है ।

3. मध्यवर्ती 'न' की सुरक्षा, पर कहीं-कहीं उसके स्थान पर 'ण' की भी स्वीकृति ।

4. यथावश्यक व के स्थान पर ब तथा ब के स्थान पर व का प्रयोग ।

5. य श्रुति एव व श्रुति के प्रयोग में एकरूपता नहीं ।

6. यथास्थान 'उ' का प्रयोग सुरक्षित रखा गया है ।

7. शब्दों में विद्यमान इकार की स्वीकृति ।

8. तृतिया एव सप्तमी विभक्तियों के कारक प्रत्ययों तथा पूर्व कालिक कृदन्त शब्दों में इ तथा ए को स्वीकार किया गया है ।

9. ख तथा ग प्रति अनुस्वार बहुला हैं । क प्रति में आगत अनुस्वारों को भी स्वीकार किया है ।

#### 4 ग्रन्थकार परिचय

यश कीर्ति नाम के अनेक आचार्य हुए हैं-

- 1 चन्द्रप्पह चरित के रचयिता
- 2 पाण्डव पुराण के रचयिता (वि स 1497)
3. रत्नकीर्ति के शिष्य (वि स 1613 में स्वयंवास)
- 4 पद्मनन्द के शिष्य जोरहट शाखा के भट्टारक (17वीं शती)
- 5 पद्मनन्द के शिष्य माधुरगच्छ के भट्टारक (18वीं शती)
- 6 विजयसेन के शिष्य
- 7 विमल कीर्ति के शिष्य
- 8 रामकीर्ति के शिष्य (19वीं शती)-ईडर शाखा के भट्टारक

यश कीर्ति नाम के इन आचार्यों के बीच प्रस्तुत ग्रन्थ के रचयिता कौन है, यह प्रथम दो आचार्यों के बीच विवाद का विषय है । ग्रन्थकार ने ग्रन्थ के किसी भी भाग में न तो कोई विशेष परिचय दिया है और न ही ग्रन्थ रचना काल का उल्लेख किया है अतः उनकी स्थिति के विषय में निश्चित रूप से कहा जाना कठिन हो गया है ।

चन्द्रप्पह चरित की प्रस्तावधि उपलब्ध प्रतियों में सं 1530 की लिखी प्राचीनतम प्रति हमारे सामने है । इसलिए इतना निष्कर्ष तो निकाला ही जा सकता है कि कवि वि स 1530 के पूर्व हुए होंगे ।

कवि ने अपने एक मात्र ग्रन्थ चदप्पह चरित में आचार्य कुन्दकुन्द, समन्तभद्र प्रकलक, देवनन्दि, जिनसेन और सिद्धसेन के नाम पूर्ववर्ती आचार्यों के रूप में उल्लिखित किया है। अतः इस आधार पर उनका समय जिनसेन के बाद का होना चाहिए। पर यह कालावधि बड़ी लम्बी प्रतीत होती है।

पाण्डव पुराण के रचयिता भट्टारक यश, कीर्ति काष्ठासवीम माधुर गच्छ तथा पुष्कर भण के भट्टारक गुणकीर्ति के लघुभ्राता और पट्टचर थे, यह उनकी हरिवंश पुराण की प्रशस्ति से स्पष्ट हो जाता है। ये ग्वालियर के शासक तोमरवंशीय राजा झूगरसिंह के समकालीन हैं। महाकवि रघू ने इन्हें अपने गुरु के रूप में उल्लिखित किया है। परन्तु आश्चर्य है कि 'चदप्पह चरित' में इस प्रकार का कोई उल्लेख नहीं मिलता। अतः यह निष्कर्ष निकालना स्वाभाविक-सा लगता है कि चदप्पहचरित के रचयिता और पाण्डव पुराण के रचयिता में व्यक्तित्व भेद होना चाहिए।<sup>1</sup> दोनों ग्रन्थों की पुष्पिकाओं में भी अन्तर दिखाई देता है। पाण्डव पुराण के कर्ता ने अपने पूर्ववर्ती आचार्यों का उल्लेख भी नहीं किया। इतना ही नहीं, भाषा प्राञ्जल्य की दृष्टि से भी चदप्पह चरित और पाण्डव पुराण के कर्ताओं को पृथक्-पृथक् माना जा सकता है।

महाकवि यश कीर्ति ने अपने ग्रन्थ की रचना हुबड कुल भूषण कुमारसिंह के पुत्र सिद्धपाल के अनुरोध पर की है। यह ग्रन्थ की प्रत्येक पुष्पिका से पता चलता है।

इय सिरि चदप्पह चरित महाकवि जसकिसि विरइए महाभव्व-सिद्धपाल-सबण भूसणे सिरि चदप्पह साभिए बण गमणो एयरहमो नाम सवी परिच्छेपो सम्मत्तो।

सिद्धपाल का सम्बन्ध चालुक्यवंशीय राजा कुमारपाल से सम्भावित है। कवि ने ग्रन्थ की अन्तिम प्रशस्ति में गुर्जर देश के 'उम्मसत्ताम' का उल्लेख भी किया है। अतः कवि का समय कुमारपाल के बाद का तो निश्चित हो ही जाता है। कुमारपाल का अन्तिम समय वि. स. 1230 (ई. सन् 1173) है। पश्चिमी चालुक्यवंश का यह अन्तिम समय था। सिद्धपाल इन्हीं के वंश के रहे होंगे। प्रशस्ति का भाग यह है—

गुज्जारदेसहं उम्मसत्ताम, तहि छईडा सुध हुम दोण शामु।  
सिद्ध तो एदणु भव्वच्चु, जिणचम्म भारि जें दिणल्लु।

तद्दु ह्युप जिहउ बहुदेवमब्धु, जेँ धम्मकज्जि विवकलितु वब्धु ।  
 तद्दु लहु जायउ सिरि कुमारसिहु, कलिकाल करिदहो हएण सीहु ।  
 तहो ह्युध सजायउ सिद्धपालु, जिणपुज्जवाण-गुणगण रमालु ।  
 तहो उवरेहि इह कियउ गयु, हुउ रामु एभि किपिवि सत्थु गयु ।

जहाँ तक जन्म स्थान का प्रश्न है, कवि ने यद्यपि इसका स्पष्ट उल्लेख नहीं किया है पर पुष्कर गली होने के कारण उसे अजमेर के आसपास का होना चाहिए ।

यशःकीर्ति के 'चन्दप्पह चरित' पर वीरनन्दि के चन्द्रप्रभ चरितम् का पर्याप्त प्रभाव दिखाई देता है । वीरनन्दि का समय विक्रम का ग्यारहवीं शताब्दी का पूर्वार्ध माना जाता चाहिए । यद्यपि उन्होंने अपनी एक मात्र कृति 'चन्द्रप्रभचरितम्' में न अपने विषय में कुछ लिखा है और न ग्रन्थ रचनाकाल का ही उल्लेख किया है । आचार्य बाविराज ने अपने पार्ष्वनाथ चरित शक स 947 सन् 1025 तथा नेमि-चन्द्र सिद्धास्त चक्रवर्ती ने अपने कर्मकाण्ड में वीरनन्दि का उल्लेख किया ।

अतः इन प्रमाणों के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि 'चन्दप्पह चरित' के रचयिता यश कीर्ति पाण्डव पुराण के रचयिता यश कीर्ति के पूर्ववर्ती होंगे और उनका समय लगभग 13 वीं शताब्दी माना जा सकता है ।

### पूर्ववर्ती और समकालीन कवि

जैसा हम पहले कह चुके हैं, कवि ने अपने पूर्ववर्ती आचार्यों में आचार्य कुन्दकुन्द, समस्तभद्र, प्रकलक, देवनन्दि, जिनसेन और मिहसेन का उल्लेख किया है । ये आचार्य अत्यन्त प्रसिद्ध आचार्य हैं अतः इनके विषय में लिखने की आवश्यकता नहीं । हाँ, यहाँ यह अवश्य उल्लेखनीय है कि यशःकीर्ति ने समस्तभद्र के जीवन में घटने वाली उस घटना का उल्लेख बड़ी श्रद्धा के साथ किया है जब आठवें तीर्थंकर चन्द्रप्रभ का स्तवन करने पर शिव पिण्ड फट गई और उसमें चन्द्रप्रभ की अव्य मूर्ति प्रकट हुई ।

कवि के समकालीन आचार्यों में श्रीधर मदनकीर्ति, भावसेन त्रैवेद्य, आशाधर, मरेन्द्रकीर्ति, व अर्हदास के नामों का उल्लेख किया जा सकता है । इनमें कुछ आचार्य यश कीर्ति के कुछ पूर्ववर्ती और कुछ परवर्ती भी हो सकते हैं ।

### 5 कथावस्तु

प्रस्तुत ग्रन्थ का अभिषेय अष्टम तीर्थंकर चन्द्रप्रभ का जीवनवृत्त है । चन्द्र-

प्रभ की कथावस्तु का आधार पद्मपुराण हरिवंश पुराण और उत्तर पुराण (महा-पुराण) में उपलब्ध कथा है जिसे महाकवि ने अपनी प्रतिभा से पल्वित किया है। पद्मपुराण और हरिवंश की अपेक्षा उत्तरपुराण में कथा का विस्तार अधिक मिलता है। उत्तरपुराण के चतुःपञ्चशतम् पर्व (पृष्ठ 44 से पृष्ठ 65 तक) में चन्द्रप्रभ का जीवन चरित अंकित किया गया है। उत्तरकालीन कवियों ने अपनी रचनायें इसी ग्रन्थ पर आधारित रखी हैं।

यश कीर्ति के चदप्पह चरिउ पर वीरनन्दि के चदप्रभचरितम् का प्रभाव अधिक है। इस तथ्य को हम साराश के माध्यम से देख सकते हैं। चदप्पह चरिउ ग्यारह सधियों में विभक्त है।

### 1 प्रथम सधि

प्रारम्भ में महाकवि यश कीर्ति ने चन्द्रप्रभस्वामी को नमस्कार किया और त्रैकालिक परमेष्ठियों को प्रणामकर 'चदप्पह चरिउ' की रचना करने की प्रतिज्ञा की। इनके बाद चदप्पह चरिउ की रचना-पृष्ठभूमि को बताते हुए आचार्य कुन्दकुन्द समन्तभद्र, अकलक, देवनन्दि, जिनसेन और सिद्धसेन को पूर्वाचार्यों के नामों के रूप में उल्लिखित किया। तदनन्तर सज्जन-दुर्जन के गुण-दोषों का वर्णन करते हुए कथा का प्रारम्भ किया है।

द्वितीय बातकीलण्ड द्वीप में पूर्व विवेह में मयसावती नामक देव है। उसमें रत्नसचय (मणिसचय) नामका नगर है। इस नगर का प्रशासक कनकप्रभ नामक राजा था। और उसकी स्वरूपमाला नामकी महिषि थी। उनके पुत्र का नाम पद्मनाभ था। कनकप्रभ बड़ी दूरदर्शिता पूर्वक राज्य करता रहा। एक दिन कीचड़ में फसे बूढ़े बैल को देखकर उसे बैराग्य हो गया। फलतः उसका मन ससार की क्षयमग्न्युरता से भर गया और पद्मनाभ को राज्याभिषिक्त करके स्वयं ने श्रीधर मुनि से जिमबीक्षा ग्रहण कर ली।

### 2 द्वितीय सधि

एक दिन पद्मनाभ राजसभा में बैठा था। इतने में ही द्वारपाल ने वनवासी के आने का समाचार दिया। उसने बताया कि नगर के बाह्योद्यान में श्रीधर नामक जैन मुनि पधारहे हुए हैं। उनके प्रताप से सारा उद्यान पुष्पित हो गया है। राजा पद्मनाभ यह समाचार सुनकर प्रसन्न हो गया और सपरिहर मुनि के दर्शन करने चल पड़ा। उद्यान में पहुँचकर मुनि को भक्ति भाव से प्रणाम किया और 'शुभधर्म' का

लक्षण पूछा। मुनि ने कुछ श्रम धर्मात् श्रावक धर्म का प्रतिपादन करते हुए झारह व्रतो तथा अष्ट मूलश्रुतियों के परिपालन की आवश्यकता बताई।

इसके बाद पद्मनाभ के पूछने पर मुनि श्रीवर ने उसके भ्रवान्तर का वर्णन किया।

तृतीय द्वीप पुष्करार्च के पूर्व में स्थित मेरु (पूर्व मन्दर) के पश्चिम विदेह में शीतोदा नामक नदी के उत्तरी तट पर सुमन्धि नाम का देश है। यह देश ग्राम शोभा से विभूषित है। इस देश में श्रीपुर नामक नगर है जो परिखा तथा कामनियो से सुशोभित है। इस नगर के राजा श्रीवेण तथा रानी श्रीकान्ता का जीवन अधूरा सा लगता था।

एक दिन रानी ने छत पर से कुछ धनिकों के बालकों को गेंद खेलते हुए देखा। तब से उसके मन में पुत्र प्राप्ति की आकांक्षा जागी। यह बात उसकी सखी ने राजा को बता दी। राजा ने समझाया कि तीर्थकर सुपार्श्वनाथ के समय अनेक केवलशानी और अवधिजानी मुनि हैं। उनमें इनका कारण और उपाय पूर्वोंगे।

इतने में वनमाली ने आकाश से एक चारण ऋद्धिधारी मुनि को आते हुए देखने की बात कही। राजा ने उनके पास जाकर वन्दना की तथा पूछा कि उसका मन ससार से विरक्त क्यों नहीं हो रहा है? मुनि ने इसका कारण जानकर कहा कि पुत्र-प्राप्ति के बिना तुम्हारा मन शान्त नहीं होगा। पुत्र-प्राप्ति भी जल्दी ही होगी। अभी तक पुत्र न होने का एक कारण था।

तुम्हारी यह पत्नी श्रीकान्ता पूर्वजन्म में उसी नगर के वरिष्क देवागद तथा उनकी पत्नी श्री की सुपुत्री सुनन्दा थी। उसने अपनी तरुणावस्था में किसी गर्भालसा तरुणी को देखकर निवान बाधा कि उसे इस प्रकार का दुःख सहन न करना पड़े। उसी का यह फल है। अब जल्दी ही यह पुत्रवती होगी। राजा ने श्रावक व्रत ग्रहण किये तथा आष्टान्तिका-नन्दीश्वर पूजा की। फिर कुछ दिनों बाद रानी ने गर्भ धारण किया। बाद में पुत्र जन्म हुआ जिसका नाम श्रीधर्म (श्रीधर्म) रखा गया। पुत्र बड़ा पराक्रमी और सर्वगुण संपन्न था। तरुण होने पर राजाने उसे युवराज पद पर अभिषिक्त किया तथा उसका विवाह प्रभावती राजकुमारी से कर दिया।

### तृतीय संधि

एक दिन उल्कापात देखकर श्रीवेण को वैराग्य हो गया। संसार की व्यसराता का चिन्तन करनें हुए उसने पुत्र को सम्बोधित किया और यह समझाया

कि उसे राज्य किस प्रकार चलाना चाहिए। इस सवर्ग में राजनीति को प्रस्तुत किया गया है। राज्य संचालन में गुप्तचर प्रमुख अंग हैं। किसी को भी अकारण कष्ट मत दो। कभी विषमी न बनो, कामी न बनो। अधिक कर ग्रहण न करो। मंत्रियों से सलाह लेकर काम करो। बाद में श्रीधर ने श्रीप्रभ मुनि से जिनदीक्षा ग्रहण की और वे ससार से मुक्त हो गये।

इधर श्रीधर्म (श्रीधर्म) दिग्विजय के लिए निकला। उस समय अनुकूल वायु चल रही थी राजा की चतुरगणी सेना शत्रु राजाओं के मन को आतंकित करने वाली थी। कुछ राजा शरणाकांक्षी होकर भेंट देने आये। जिन्होंने युद्ध किया वे मृत्युमुख में पहुँचे। माहलिक और द्वीपिक राजा उनके अनुयायी हो गये। दिग्विजय कर श्रीधर्म समुद्र तट का आनन्द लेते हुए अपने नगर श्रीपुर वापिस आ गया और सासारिक भोगों में आसक्त हो गया।

एक दिन शरत्कालीन मेघ को देखकर ससार की क्षणमग्नता का आभास हो गया। फलतः उसने अपने पुत्र श्रीकान्त को राज्य भार सौंप दिया और स्वयं ने श्रीप्रभ से दिग्म्बर दीक्षा ले ली। तपश्चरण करते हुए वे सोधर्म स्वर्ग में श्रीधर नामक देव हुए।

इसके बाद श्रीधर्म से सम्बद्ध कथा का सूत्र संचालन होता है। द्वितीय द्वीप धातकीचण्ड की दक्षिण दिशा में एक इषुकार गिरि है जिसके पूर्व 'अलका' नामक देश है। सरोवरों के लिए वह देश प्रसिद्ध है। अलका देश में कौशल नाम की एक सुन्दर नगरी है जो अत्यन्त वैभवशाली है। उसका राजा अजितजय और उसकी पत्नी अजितसेना थी। उनके श्रीधर का जीव अजितसेन नामक पुत्र हुआ। अजितसेन बाल्यावस्था से ही सर्वकलाओं में निपुण था। गुणवान पुत्र को पाकर कौन प्रमत्त नहीं होता ?

एक दिन की बात है कि चण्डरश्मि नामक कुल्यात असुर, जो राजकुमार का पूर्व जन्म का बैरी था, राजसभा में आया और सारी सभा को मूर्छित कर युवराज को हर ले गया। बेतना आने पर दम्पति हृदय विदारक विलाप करते हैं। यहाँ कछा रस प्रधान वर्णन मिलता है। कुछ समय बाद तपोभूषण नामक चारण मुनि आये और उन्होंने बताया कि तुम्हारा पुत्र सकुशल वापिस आ जायगा। चिन्ता मत करो। राजा प्रसन्न होकर पूर्ववत् काम करने लगा।

### अन्तर्ध सधि

श्रीधर चण्डरश्मि असुर ने अजितसेन को अनोरम नामक सरोवर में फेंक

दिया। वह मगर-मच्छ से जूझता हुआ किनारे आ गया। पास ही 'वरुणा' नाम की गहन अटवी थी। उसमें उसने प्रवेश किया। थोड़ी ही देर बाद अंजण गिरि शिखर दिखा। उस पर वह चढ़ गया। वहाँ पहुँचते ही उसे एक आमिष पिण्ड सदृश नेत्र वाला क्रोधी पुरुष दिखाई दिया। उसने अजितसेन को ललकारा। बाद में दोनों में भीषण युद्ध हुआ। अन्त में अजितसेन ने अपने दोनों हाथों से उसे ऊपर उठाकर ज्यों ही उसे फेंका, उसने अपना दिव्य रूप प्रगट कर दिया। उसने कहा कि उसका वास्तविक नाम हिरण्य है। वह उत्तम ऋद्धि-सपन्न देव है। जिन मन्दिर के दर्शन करते हुए यहाँ क्रीडा करने के लिए चला आया। अपना रूप बदल कर तुम्हारे साहस की परीक्षा की। अब जब भी मेरी आवश्यकता प्रतीत हो, स्मरण कर लेना।

हाँ पूर्व जन्म की भी बात बताये देता हूँ। पिछले तीसरे जन्म में तुम सुगन्धि नामक देश के श्रीपुर नामक नगर के राजा थे। वहाँ नगर में दो गृहस्थ किसान थे-शशि और सूर्य। शशि ने सूर्य के घर सेध लगाकर सारा धन चुरा लिया। तुमने उसका पता लगाकर धन वापिस दिला दिया और सूर्य को फासी की सजा दे दी। वहीं शशि चण्डरुचि नामक असुर हुआ और मे ही पहले सूर्य था। चण्डरुचि ही तुम्हें हरकर सरोवर में फेंक गया। मैं तुम्हारा मित्र हूँ। इतना कहकर वह सूर्य अदृश्य हो गया।

राजकुमार बाद में बड़ी सरलता पूर्वक अटवी में बाहर आ गया। आगे उसने अरिजय नामक देश में प्रवेश किया जहाँ राजा जयवर्मा अपनी महिषी चन्द्र-मुखी जयश्री के साथ राज्य करना था। उनकी शशिप्रभा कन्या थी जिसका विवाह महेन्द्र राजा के साथ निश्चित हो गया। परन्तु निमित्त जानियो से उसकी अल्पायु का पता हो जान पर यह निश्चय छोड़ दिया गया। फलतः महेन्द्र के साथ युद्ध छिड़ गया। इधर अजितसेन उम्र वेश में पहुँच गया और सषर्ष महेन्द्र से हो गया। चतुरमणी सेना के साथ अकेले अजितसेन का युद्ध दर्शनीय था। अजितसेन ने अपनी वीरता से महेन्द्र की सेना को पराजित किया। इस प्रसंग में वीर रस का सुन्दर प्रयोग हुआ है। महेन्द्र को पराजित करने पर राजकुमार कुछ समय जयवर्मा का अतिथि रहा। बाद में शशिप्रभा का सम्बन्ध अजितसेन के साथ कर दिया गया। इस प्रसंग में विप्रलम्भ अङ्गाव रस का प्रयोग दृष्टव्य है।

इसके बाद उपकथा प्रारम्भ होती है। विजयार्ध पर्वन के दक्षिण में आदित्य-पुर (रविपुर) नगर है। वहाँ धरणीध्वज नाम का राजा राज्य करता था। वह विद्याधरो का स्वामी था। एक दिन राजसभा में उन्होंने प्रियवर्धन ब्रह्मचारी के



दर्शन किये। ब्रह्मचारी ने कहा, यद्यपि वे योगी और निर्मोही हैं पर मुनि से तुम्हारे विषय में जो वृत्तान्त सुना है उसे तुम्हें बताना चाहता हूँ।

अरिजय नामक देश में एक विपुल नामक नगर है। वहाँ का प्रशासक जय वर्मा है। उसकी मृगतयनी पुत्री शशिप्रभा का जिसके भी साथ सम्बन्ध होगा वह तुम्हारा प्राणघातक होगा। यह जानकर धरणीध्वज चिंतित हो गया। फिर भी अपने मनोभाव को गुप्त रखकर उद्धत नामक दूत को जयवर्मा के पास भेजा, यह संदेश लेकर कि या तो वह शशिप्रभा का सम्बन्ध उसके साथ कर दे अन्यथा युद्ध के लिए तैयार रहे। जयवर्मा ने युद्ध को स्वीकार कर लिया। यह बात अजितसेन को भी बता दी गई। फलतः धरणीध्वज का युद्ध जयवर्मा के साथ प्रारम्भ हो गया। इधर अजितसेन ने हिरण्य देव का स्मरण किया। स्मरण करते ही हिरण्य देव दिव्यास्त्रों से सुसज्जित रथ लेकर उपस्थित हो गया। हिरण्य ने मारथी बनाकर अजितसेन का साथ दिया अजितसेन के साथ विद्याधरो का घनघोर युद्ध हुआ। राजकुमार की प्रचण्ड शक्ति उन्हें असह्य हो गयी। उसके विविध अस्त्र-शस्त्रों ने धरणीध्वज की शक्ति को छिन्न-भिन्न कर दिया। अन्त में अमोघ शक्ति का प्रहार कर धरणीध्वज की जीवन लीला भी उसने समाप्त कर दी। जयवर्मा की विजय हो गई अजितसेन ने हिरण्य को विदाई दी। विजय यात्रा प्रारम्भ हुई और शशिप्रभा का सम्बन्ध अजितसेन के साथ हो गया। इसके बाद अजितसेन अपने माता-पिता से भेंट करने के लिए अपने नगर की ओर चल पड़ा। अजितसेन के पिता ने अपने पुत्र का आगमन सुनकर बड़े उत्सव के साथ उसका नगर प्रवेश कराया।

इसके बाद अजितसेन चक्रवर्ती को चौदह रत्न (चक्र, खड्ग, छत्र, चर्म, दण्ड काकणी, चूड़ामणी, गज, अश्व, शक्ति, पुरोहित, शिल्प, गृहपति और शशिप्रभा) तथा नव निषिया (पाण्डुक, पिङ्गल, काल, शङ्ख, पद्म, महाकाल, माणव, नैसर्ग और सर्वरत्न) प्राप्त हुई। इसके बाद अजितजय ने अजितसेन का पट्टाभिषेक किया।

इसी बीच स्वयंप्रभ नामक तीर्थंकर राजधानी में पधारे। यह जानकर अजितजय अपने पुत्र अजितसेन के साथ उनकी वन्दना करने के लिए घर से चल पड़ा। उनके पास पहुंचकर अजितजय ने प्रणाम किया और तीर्थंकर से जिज्ञासा प्रकट की कि जीव शुभाशुभ कामों से कैसे बंध जाता है और फिर उनसे कैसे मुक्त हो जाता है। उत्तर में उन्होंने कहा कि मिथ्यात्व, प्रमाद, कषाय और योग ये पांच कर्मबन्ध के कारण हैं। इन कारणों को दूर करने का उपाय सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्प्रक् चारित्र्य का सम्प्रक् परिपालन है। इस प्रसंग में जैन धर्म का अछा

वर्णन किया गया है। अजितसेन धर्म और कर्म का इतना सुन्दर विवेचन सुनकर ससार से विरक्त हो गया और राज्य भार अजितसेन को सौंप दिया। अजितसेन ने भी आवश्यक व्रत ग्रहण किये।

### पञ्चम संवि

इसके बाद अजितसेन दिग्विजय के लिए निकल पड़ा। चौदह रत्न और नव निधिया उसके साथ थीं। प्रभुशक्ति मन्त्रशक्ति और उत्साह शक्तियों से वह सनद था। पराक्रम और वात्सल्य का वह धनी था। चक्रवर्ती का सारा वैभव उसके पास था। सेना, नाट्य, निधि, रत्न, भोजन, आसन, सेज, पात्र, पुष्प और बाहुन ये सब भोग थे। स्नेहलवङ्ग और आर्यसण्ड को जीतकर वह पट्टलवङ्गाधिपति बन गया। अजितसेन का पराक्रम अप्रतिहत था।

दिग्विजय करके अजितसेन सम्राट् अयोध्या वापिस पहुँच गया। नगर को इस शुभ अवसर पर खूब सजाया गया। तरणियों की भावमगिमाये इस समय विचित्र हो रही थी। राजप्रासाद में अजितसेन का स्वागत किया गया समागत राजे-महाराजे वापिस चले गये।

इसके बाद ऋतुराज वसन्त का आगमन हुआ। युवक-युवतियों को नया वातावरण मिला। इस प्रसंग में प्रकृति वर्णन शृङ्गार रस की समरसता को उत्पन्न करता है। अन्त पुर में पहुँच कर शशिप्रभा के साथ अजितसेन का प्रेमात्म्य और उसके सदर्भ में भी इसी प्रकार का मनोहारी वर्णन दृष्टव्य है।

इस अवसर पर अजितसेन ने वन विहार यात्रा करने का निश्चय किया। पुरवासी भी उनके साथ चल पड़े। सभी ने जलाशय में स्नान किया। काम क्रीड़ा और जल क्रीड़ा का बहुत प्रच्छा वर्णन कवि ने यहाँ प्रस्तुत किया है। जल क्रीड़ा करते-करते सूर्यास्त हो गया। बाव में चन्द्रोदय भी हो गया। कमल विकसित हुए। कुमुदनी पर भीरे मडराने लगे। रात्रि का प्रहर बीत गया। रागी युवक अपनी प्रेमिकाओं के साथ एकान्त स्थान में चले गये। रत्नोत्सव बढने पर अजितसेन ने भी शशिप्रभा के साथ सपर्क किया। कवि की कल्पनाये यहाँ उल्लेखनीय बन पड़ी है।

प्रातः काल होने पर दैनिक क्रियाओं से निवृत्त होकर अजितसेन अपने 'सर्वावसर' नामक सभा भवन में पहुँचा उस समय वहाँ आये हुए गजराज को उसने देखा। यह गजराज युद्ध के अभ्यास के लिए प्रस्तुत किया गया था। संयोग की बात है, उस हाथी ने एक असहाय व्यक्ति को सूँठ से उठाकर नीचे पटक दिया। वह भर

गया। यह देखकर अजितसेन को ससार से वैराग्य हो गया। ससार की क्षणभंगुरता का इस प्रसंग में अच्छा चित्रण हुआ है।

इसी अवसर पर वनपाल से अजितसेन को पता चला कि गुणप्रभ आचार्य शिवकर नामक उद्यान में पधारे हुए हैं। अजितसेन धर्म-वर्षा के लिए उनके दर्शनार्थ उद्यान पहुँचे। विचार-वर्षा करते हुए अजितसेन ने जिनदीक्षा लेने का संकल्प प्रकट किया। गुणप्रभ ने स्वीकृति दे दी। फलतः जितशत्रु को राज्य भार सोप कर अजितसेन ने जिनदीक्षा ग्रहण कर ली। वे घोर तपश्चरण करने लगे। महाव्रतो और समितियों का निरतिचार पालन करने लगे। बारह अतुषेक्षाओं का चिन्तन, परीपहो का सहन, समुचित चारित्र्य का परिपालन करते हुए अजितसेन की शुभ श्रेयाओं में निश्चार आ गया। शुभ ध्यान करते हुए समाधिमरण पूर्वक प्राणों का त्याग किया। इसके बाद वे अच्युत नामक सोनहूँचे स्वर्ग में जाकर अच्युत स्वर्ग में छन्द्र हुआ।

### षष्ठ संधि

श्रीधर मुनि ने अपनी बात पूरी करते हुए कहा कि तुम आयु समाप्त करने पर अच्युत स्वर्ग से च्युत होकर मणिसचयपुर में कनकप्रभ की महिषि सुवर्णमाला की कुक्षि से पद्मनाभ नामक राजकुमार हुए हो। पद्मनाभ श्रीधर मुनि के वचन (भवान्तर परम्परा) सुनकर रोमाञ्चित हो गया। विश्वस्त हो जाने के लिए श्रीधर मुनि ने यह भी कहा कि आज से दस दिन बाद एक मद्योन्मत्त हाथी अपने झुण्ड को छोड़कर तुम्हारे नगर की ओर आयेगा। उसे देखकर तुम्हें विश्वास हो जायगा और सारी बातों की सचाई का आभास हो जायगा।

पद्मनाभ मुनिवर को प्रणामकर राजधानी वापिस आ गया ठीक इसवें दिन कोलाहल शुरू हो गया और बताया गया कि पद्मनाभ ने लोगों को शान्त किया और अपनी प्रतिभा, बल और बुद्धि से उसे बल में कर लिया। पुरवासी प्रसन्न हो गये। उस हाथी का नाम 'बनकेल' रखा गया।

एक दिन की बात है, राजा पद्मनाभ की सभा में राजा पृथ्वीपाल का दूत आया और उसने कहा कि वह 'बनकेल' हाथी पृथ्वीपाल को सप्रणाम वापिस कर दीजिए अन्यथा सचर्च की तैयारी कर लीजिए। युवराज स्वर्णनाभ ने दूत को उत्तर दिया और कहा कि क्षमा और नीति के कारण तुम्हें बचाया जा रहा है अन्यथा मेरे पिता पद्मनाभ पृथ्वीपाल को कभी बचाने न देते। दूत ने श्रोतित होकर पुनः अपनी बात दोहरायी। सारी सभा उसके कथन पर झुञ्च हो उठी। पर पद्मनाभ ने उसे शान्त कर दूत को बिठा किया।

इसके पश्चात् पद्मनाभ ने अपने मन्त्रिमण्डल से विचार-विमर्श किया। और कहा कि पृथ्वीपाल को मेरी राय में दण्डित किया जाना चाहिए। मन्त्री पुरुभूत ने पृथ्वीपाल के साथ साम नीति का आश्रय लेने की सलाह दी पर स्वर्णनाभ युवराज ने उसे दण्ड देने के विचार का भरपूर अनुमोदन किया। युवराज के मन्त्रव्य को सदस्यो का समर्थन मिला। तब यह निश्चय किया गया कि दूत को यह कहकर बिदा कर दिया जाय कि “भ्राज से तीसरे दिन निश्चय ही मैं आपको हाथी दूंगा, या फिर युद्ध करूंगा”।

इसके बाद पद्मनाभ भीमरथ आदि मित्र राजाओं के साथ पृथ्वीपाल से युद्ध करने के लिए उसके नगर की ओर चल पड़ा। इस प्रसंग में कवि ने सेना-प्रयाण का काव्यात्मक वर्णन प्रस्तुत किया है। सेना ने जलवाहिनी नदी पर पड़ाव डाला। विश्रामकर वह वहाँ से आगे बढ़ी।

आगे पद्मनाभ ने एक मणिकूट पर्वत देखा वह किन्नारियो का क्रीडा स्थल था। सभी दृष्टियों से वह रमणीक था। पद्मनाभ की मेना वहाँ ठहर गई। बाजार, तम्बू, भोजनालय आदि की व्यवस्था वहाँ पहले से ही हो गई थी। सभी ने यहाँ विश्राम किया।

प्रातः काल होते ही युद्ध भी भेरी बज उठी। पद्मनाभ, स्वर्णनाभ आदि सभी घोड़ा युद्ध करने चल पड़े। इधर पृथ्वीपाल भी अपनी सेना के साथ रणक्षेत्र में कूद पड़ा। दोनों ओर में घमासान युद्ध हुआ। अन्त में पद्मनाभ ने पृथ्वीपाल को अपने वज्रमुष्टि नामक अस्त्र में चूर-चूर कर डाला। यह देवकर पृथ्वीपाल की मेना भाग खड़ी हुई।

इसके बाद किसी सेवक ने पद्मनाभ के समक्ष पृथ्वीपाल का कटा हुआ सिर लाकर रख दिया। उसे देखते ही पद्मनाभ को वैराग्य उत्पन्न हो गया। वह ससार की असारता का चिन्तन करने लगा। बाद में स्वर्णनाभ को राज्य भार सौंपकर स्वयं महार में निवृत्त हो गया। श्रीघर मुनि के पास जाकर उस जिनदीक्षा ग्रहण कर ली। तेरह प्रकार के चरित्र का पालन करते हुए सोलह कारण भावनाओं का परिपालन करने लगा। दर्शन विभुष्टि, विनयमपन्नता आदि सोलह कारण भावनाएँ तोर्णकर प्राप्ति के मूल कारण हैं। अन्त में तपस्या करते हुए सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र और सम्यक्त्व की प्राप्ति की। और फिर शरीर छोड़कर वे अनुत्तर वैजयन्त स्वर्ग में चले गये। वहाँ पद्मनाभ अहमिन्द्र हुआ। उसकी आयु तीसरे सागर प्रमाण थी।

## सप्तम संधि

इसी जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में एक पूर्व देश है जो धन-धान्य से परिपूर्ण है। उस देश की राजधानी का नाम चन्द्रपुरी है। उसके राजा का नाम महासेन और महिषी का नाम लक्ष्मणा है। महासेन के विषयासक्त हो जाने से अधीनस्थ राज्य स्वतन्त्र होने लगे। यह जानकर महासेन का प्रमाद दूर हुआ और वह दिग्विजय के लिए निकल पड़ा। अपने बाहुबल से अंग, कलिङ्ग, पाञ्चाल, उड्ड, वेदि, भ्रांघ्र, द्रविड, लाट, कश्मीर आदि राज्यों को विजित कर स्वदेश वापिस आ गया। इसके बाद साम्राज्य सुख भोगते हुए लक्ष्मणा ने गर्भ धारण किया। छह माह तक उनके घर रत्नों की झलक रही। उसके उपरान्त एक दिन रात्रि के पिछले प्रहर में लक्ष्मणा ने सोलह स्वप्न देखे। महासेन ने उनके फल को स्पष्ट किया।

## अष्टम संधि

लक्ष्मणा का प्रसूति-काल जैसे-जैसे समीप आता गया, जंभाई, आलस आदि गर्भचिह्न स्पष्टतर होते गये। उसका चन्द्रपान का दोहद भी पूरा हुआ। इसके बाद पीप कृष्णा एकादशी के दिन लक्ष्मणा ने एक सुन्दर पुत्र को जन्म दिया। दिव्य पुष्पो की वर्षा हुई। कल्पवासी, ज्योतिषी, भवनवासी और व्यतर देवों की निवास भूमियों पर दुन्दुभियां बजने लगी, सिंहनाद होने लगे। सभी देव तीर्थंकर के जन्म स्थान चन्द्रपुरी चल पड़े। इसके बाद इन्द्राणी ने प्रसूतिगृह में प्रवेश किया। वहा एक सद्योत्पन्न बालक को रखकर वह जिन भगवान को उठा लाई। सौधर्म स्वर्ग के इन्द्र ने जिन बालक को हाथों में लेकर ऐरावत हाथी पर चढ़ा लिया। देवियां मंगलगान करने लगी। भेरिया बजने लगी। सुमेरु पर्वत की पाण्डुक शिला पर स्थित सिंहासन पर जिन बालक को बैठाया। सुमेरु से लेकर क्षीरसागर तक खड़ी देव पंक्ति ने बालक का अभिषेक किया। फिर चन्द्र की क्रांति के समान कान्ति संपन्न होने से बालक का नाम चन्द्रप्रभ रखा गया। सभी ने उनकी स्तुति की। बाद में उन्हें चन्द्रपुरी वापिस ले गये। और वहा उन्होंने जन्माभिषेक महोत्सव मनाया।

## नवम संधि

धीरे-धीरे जिन बालक चन्द्रप्रभ बड़ा होने लगा। उनका स्वभाव चंचल था और क्रीडाये मनोरंजक थीं। बाल्यावस्था में हाथी, घोड़ों की सवारी की। बाल्य-काल समाप्त होने पर राजा महासेन ने चन्द्रप्रभ का विवाह संस्कार किया और बाद में पट्टावधान किया। उन्होंने राज्य शासन चलाया। सभी प्रसन्न रहे। उस समय अकाल मरण नहीं हुआ और न छह ईतियों से जनपदों को कभी नहीं हुई।

एक दिन अत्यधिक बड़ा व्यक्ति लाठी के सहारे आया। कहने लगा, नाम ।

बचाइये, बचाइये। आज मृत्यु देवता नुझे उठा से जायगा। यह कहकर वह भ्रष्ट हो गया। समासदो के पूछने पर अपने अवधिज्ञान से तीर्थकर ने बताया कि वह धर्मरुचि नामक देव था। विक्रिया के बल से वह बृद्ध बन गया था। फलतः तीर्थकर का मन सासारिक भोगों से विरक्त हो गया। ससार असार है। हर प्राणी को स्वकृत कर्मों का फल भोगना पड़ता है। अतः अब मे इन कर्मों की निर्जरा करूँगा। इतने में इन्द्र अपने परिकर के साथ आया और उन्हें 'विमल' शिविका में बँठाया और 'सकलतु' बन में ले गया। वहाँ वे अपने पुत्र वरचन्द्र को राज्यभार सौंपकर तप करने लगे। पञ्च मुष्टियों से केश लु चन कर उन्हें क्षीरसमुद्र में प्रवाहित कर दिया गया। फिर सभी ने मिलकर भगवान का दीक्षाकल्याणक महोत्सव मनाया।

### दशम सधि

महाव्रतो और समितियों का पालन करते हुए मूलगुणों व उत्तरगुणों का निरतिरिचर पूर्वक आचरण किया। वे छयालीस दोष रहित भोजन करते थे। परिपहो को सहन करते थे। उपवास समाप्त होने पर राजा सोमदत्त के घर उनकी पारणा हुई। अन्तरंग-बाह्य शत्रुओं को समाप्त किया। कर्म प्रकृतियों को क्षीण करते हुए उसी सकलतु बन में पहुँचे जहाँ उन्होंने जिनदीक्षा ली थी। नागवृक्ष के नीचे आसन लगाकर वे बैठ गये। और शुक्लध्यान का अवलम्बन कर ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तराय कर्मों का विनाश कर केवलज्ञान प्राप्त कर लिया। भगवान का समवरण 8 1/2 योजन विस्तृत था। उसकी गन्धकुटी में भगवान विराजमान हुए। सभी जीव उनके समवरण में धर्मोपदेश सुनने के लिए एकत्रित होते थे।

### एकादशम सधि

इसके पश्चात्, दिव्य ध्वनि प्रारम्भ हुई। भगवान् ने जीवादिसप्त तत्त्वों का सांगोपाग विवेचन किया। जीव भव्य-अभव्य अथवा त्रस और स्थावर के भेद से दो प्रकार का है। अन्य नस्वों का भी उन्होंने इसी प्रकार विवेचन किया। वे जहाँ विहार करते थे, उसके 200 योजन तक सुभिक्ष हो जाता था। उनका शरीर छाया रहित था। तथा कवलाहार और उपसर्ग से अछूता था। उनके पलक निष्पलक थे। वे चौदह अतिशयो से सुशोभित थे। आठ प्रातिहार्यों से युक्त थे। उनका धर्म परिवार इस प्रकार था—

गणधर  
पूर्वधारी  
उपाध्याय

93  
200000  
200400

अवधिज्ञानी	8000
केतली	10000
विक्रमाष्टद्विधारी साधु	14000
मनःपर्ययज्ञानी	8000
वादी	7600
आयिकाएँ	180000
सम्यग्दृष्टि श्रावक	300000
आयिकाएँ	500000

भगवान् चन्द्रप्रभ पृथ्वी पर बिहार करते रहे। बाद में सम्भेदाचल पर्वत के शिखर पर जाकर विराजमान हो गये। वहाँ उन्होंने एक नास पर्यन्त विहार का परित्याग कर मुनि सभ के साथ प्रतिमायोग धारण किया। फिर आश्रपद कुक्का सप्तमी को शुक्ल ध्यान के द्वारा समस्त पापों का विनाश कर मुक्ति प्राप्ति की। इसके बाद देवताओं ने भगुरु चन्दन आदि से उनका अन्तिम संस्कार किया और मोक्ष कल्याणक उत्सव मना कर अपने-अपने स्थान चले गये।

### 6. पूर्ववर्ती कवियों का प्रभाव

यश कीर्ति के चन्द्रपहचरित का उपजीव्य वीरनन्दि का चन्द्रप्रभ चरित रहा है। उत्तरपुराण के कथानक से जो साम्य और वैषम्य 'चन्द्रप्रभ चरितम्' में देखा जाता है वही साम्य और वैषम्य चन्द्रपहचरित में भी उपलब्ध है।

तीनों ग्रन्थों में कथानक, भवसंख्या, आयु, नाम और वर्म परिवार संस्था समान है। जो वैषम्य है वह अन्तर्कथाओं के कुछ सवर्णों में। चन्द्रप्रभचरितम् के कथानक, नाम आदि में तो कोई भेद नहीं, भेद है उत्तर पुराणगत नामों में। इसे चन्द्रप्रभचरितम् के सपादकीय वक्तव्य में श्री पद्मलाल शास्त्री ने उल्लेख किया है। अतः भुक्ते यहाँ उसे दुहराने की आवश्यकता नहीं है।

वीरनन्दि ने अपने महाकाव्य की कथावस्तु को जिस प्रकार से विभाजित किया है उससे कहीं अधिक वैज्ञानिक दृष्टि यश कीर्ति की रही है जिसे हम इस प्रकार देख सकते हैं—

चन्द्रप्रभचरितम् (संस्कृत)

सर्ग

1 पद्मनाभ का पट्टाभिषेक

चन्द्रपहचरित (अपभ्रंश)

सर्ग

1. पद्मनाभ का पट्टाभिषेक

- 2 श्रीधर से भवान्तर पुछना और श्रीपुर नगर वापिस आना
- 3 भवान्तर कथन, पुत्र प्राप्ति न होने का कारण, पुत्र 'श्री वर्मा' का उत्पन्न होना ।
- 4 राजकुमार श्रीवर्मा के गुणों का वर्णन, विवाह, श्रीषेण का वैराग्य, श्रीप्रभ से जिनदीक्षा श्रीवर्मा की दिग्विजय यात्रा, वैराग्य, श्रीकान्त को राज्यभार, जिनदीक्षा, सौधर्म स्वर्ग में गमन ।
- 5 अलका देश का कौशल नगर, अजितसेन का हरण, तपोभूषण द्वारा सम्बोधन ।
- 6 अजितसेन का हिरण्य देव के साथ युद्ध, महेन्द्र से युद्ध, जयवर्मा में मित्रता, धरणीध्वज से युद्ध शशिप्रभा (जयवर्मा की पुत्री) के साथ परिणय, स्वपुर प्रवेश
- 7 अजितसेन का चक्रवर्ती होना, अजितजय का वैराग्य, जिनदीक्षा, अजितसेन की दिग्विजय यात्रा, स्वपुर प्रवेश, राज्योपभोग
- 8 वसन्त वर्णन, वन विहार, जल-केलि
- 9 उपवन यात्रा, जलकेलि
- 10 सायंकाल वर्णन, रात्रि-श्रीहा वर्णन, शय्यात्याग
- 2 भवान्तर, श्रीषेण की पत्नी श्रीकान्ता को 'श्रीधर्म' नामक पुत्र की प्राप्ति, उसका प्रभावती से विवाह
- 3 श्रीषेण का वैराग्य, जिनदीक्षा, श्रीवर्मा की दिग्विजय यात्रा वैराग्य, जिनदीक्षा, सौधर्म स्वर्ग में गमन ।
- 4 अजितसेन का हरण, तपोभूषण द्वारा सम्बोधन ।
- 4 अजितसेन का हिरण्य के साथ युद्ध, शशिप्रभा के साथ सबन्ध, स्वपुर प्रवेश
- अजितजय का वैराग्य, अजितसेन का पट्टाभिषेक, अजितसेन द्वारा श्रावक व्रत ग्रहण (चन्द्र-प्रभ चरितम् का 7 56 तक का विषय)
- 5 अजितसेन द्वारा अनागर धर्म का परिपालन, अच्युत स्वर्ग में गमन, (चन्द्र-प्रभ चरितम् का 11 72 तक का विषय)



- 11 अजितसेन का वैराग्य, जितशत्रु को  
राज्यभार समर्पण,  
जिनदीक्षा, अच्युत स्वर्ग गमन, वहा 6 पद्मनाभ का अच्युत स्वर्ग  
रत्नसङ्घपुर मे कनकमाला के मे गमन  
गर्म से पद्मनाभ के रूप मे उत्पत्ति,  
गजप्रवेश, वन क्रीडा
- 12 पद्मनाभ और पृथ्वीपाल के युद्ध की  
पृष्ठभूमि, मन्त्रियो के साथ चर्चा
- 13 पृथ्वीपाल से पद्मनाभ के युद्ध का  
प्रसंग, सेना प्रयाण, 'जलवाहिनी'  
नदी पर विभ्राम
- 14 सेना बर्णन, भटो क साथ सन्नाह  
विमर्श
- 15 पृथ्वीपाल के साथ युद्ध बर्णन, वैराग्य, 7 तीर्थंकर का गर्म कल्याणक  
जिनदीक्षा, अनुत्तर स्वर्ग गमन महोत्सव
- 16 चन्द्रपुरी बर्णन, महासेन राजा और 8 जन्म कल्याणक महोत्सव  
लक्ष्मण, महारानी के गर्म मे चन्द्रप्रभ 9 दीक्षा कल्याणक महोत्सव  
का प्रवेश
- 17 चन्द्रप्रभ का जन्माधिकेक, राज्यभार, 10 केवलज्ञान कल्याणक महोत्सव  
धर्मरुचि से भेट, वैराग्य, जिनदीक्षा,  
कल्याण, कैवल्यलाभ, समवशरण  
बर्णन
18. तीर्थंकर द्वारा धर्म-प्रवचन, सप्त 11 धर्म प्रवचन निर्वाण महोत्सव  
तत्त्व विवेचन, प्रतिशय बर्णन, धर्म  
परिकर, सम्मेल शिखर से मुक्ति  
प्राप्ति

सर्गों और सन्धियों की इस तुलना से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि यश - कीर्ति ने सन्धि विभाजन में अपनी मौलिकता का प्रदर्शन किया है। महाकवि ने वीरनन्दि के समान शृङ्गारिक बर्णन अधिक न करके तीर्थंकर के चरित बर्णन पर अधिक ध्यान दिया है। यही कारण है कि वीरनन्दि ने जिस बर्णन में लगभग दस सर्ग लगाये हैं वहाँ यश कीर्ति ने उसे दो सन्धियों में ही समेट लिया है। इसी प्रकार

यश कीर्ति ने हर कल्याणक के लिए पृथक्-पृथक् सन्धि का नियोजन किया है जबकि वीरनन्दि ऐसा नहीं कर सके ।

इसके बावजूब, यश कीर्ति पर वीरनन्दि का निश्चित ही बहुत अधिक प्रभाव रहा है । लगता है, वीरनन्दि के चन्द्रप्रमथरितम् को सामने रखकर यश कीर्ति ने अपने ग्रन्थ की रचना की है । प्रकृति वर्णन, युद्ध व आगारिक वर्णन के प्रसंग में तो कहीं-कहीं यश कीर्ति ने भाव और भाषा, दोनों को वीरनन्दि से ग्रहण किया है ।

हम समूचे कथा भाग की तुलना संक्षेप में इस प्रकार कर सकते हैं—

प्रथम संधि	
चन्द्रप्रमथरितम्	चन्द्रप्रमथरितम्
1	1 6
2-3 सज्जन-दुर्जन वर्णन	1 10 सज्जन-दुर्जन वर्णन कम है ।
4-6 मगलावती देश का वर्णन (कल्पनाएं समान)	1 11-21
7-8 रत्नसचयपुर का वर्णन	1 22-28
9-10 कनकप्रभ राजा तथा कनक माला का वर्णन (गर्भावस्था का वर्णन अधिक है तथा पद्मनाभ का वर्णन कम है)	1 39, 53-57
11 पद्मनाभ का वर्णन है ।	58-63 गर्भावस्था का वर्णन है ही नहीं ।
12 बेल को मरते देख कनकप्रभ को वैराग्योत्पत्ति	64-65 कनकप्रभ का वैराग्य
13-14 ससार की असारता	67-77 ससार चिन्तन
15-16 पद्मनाभ का राज्याभिषेक और कनकप्रभ का श्रीधर मुनि के पास जाकर दीक्षा लेना	78-85 एक जैसा

### द्वितीय संधि

वनपाल द्वारा श्रीधर मुनि के आगमन की सूचना । यहां मुनि- राज के गुरु की प्रशंसा बहुत कम है ।	2 1-23 सूचना, मुनिराज की गुरु वर्णन अधिक है ।
---	--

- |       |   |  |
|-------|---|--|
| 2     | उद्यान की महिमा और श्रीधर मुनि को वहाँ बंटे देलना                                   | 2 23-36 उद्यान का सुन्दर वर्णन ।                     |
| 3     | पद्मनाभ द्वारा मुनि की स्तुति   | 2 37-43 कल्पनात्मक वर्णन                             |
| 4-6   | श्रावक व्रतों का वर्णन । यहाँ साव-<br>दिकता अधिक है, दार्शनिकता कम है ।             | 2 14-110 आत्मा की अस्तित्व सिद्धि का दार्शनिक विवेचन |
| 7     | सुगन्धि देश का वर्णन  | 2 111-124 कल्पनात्मक वर्णन                           |
| 8     | उसमें श्रीपुर नगर का वर्णन  | 2 124-143 आलंकारिक वर्णन                             |
| 9     | श्रीवेणु राजा का वर्णन  | 3 1-13 श्रीवेणु का वर्णन                             |
| 10-11 | श्रीवेणु की राज्ञी श्रीकान्ता का सौन्दर्य वर्णन और उसकी खेद-<br>लिप्पता का कारण     | 3 14-26 वही  |
| 12-13 | सखि द्वारा स्पष्टीकरण और राजा द्वारा सान्त्वना                                      | 3 27-41 वही  |
| 14    | उद्यान तथा वसंत ऋतु का वर्णन तथा मुनिराज का आगमन                                    | 3 42-44  |
| 15    | श्रीकान्ता का पूर्व जन्म वृत्तान्त  | 3 45-55  |
| 16    | राजा को पुत्र-जन्म का ज्ञान और सागर धर्म का पालन । पञ्च व्रतों में कुछ विशेषता है । | 3 56-58  |
| 17    | गुण व्रत-शिक्षा व्रत  | इसने इनका वर्णन नहीं किया ।                          |
| 18    | श्रीकान्ता का गर्भाह्रण   | 3 59-68 वही  |
| 19    | श्रीधर्म नामक पुत्र का जन्म । प्रभावती के साथ उसका विवाह, फिर राज्याभिषेक           | 3 69-76 पुत्र का नाम श्रीधर्मा                       |

### चतुर्थ सखि

- |     |   |  |
|-----|---|--|
| 1   | श्रीवेणु की वैराग्योत्पत्ति                 | 4 18-32  |
| 2-4 | ससारी का वर्णन                              |  |
| 5   | पुत्र की शिक्षा बीजा । इसमें गैरीरता नहीं । | 4 33-43 राजनीतिक शिक्षा । यहाँ गैरीरता अधिक है । |
| 6-9 | श्रीधर्म का राज्याभिषेक, दिग्विजय, मुक्ति   | 4 44-78 विषय वही                                 |

- 10 घातकी खण्डबर्ती अलका देश तथा उसकी कोशल नगरी का वर्णन 5,1-22 कल्पनाएँ अच्छी हैं। कुछ का उपयोग चदप्पह चरिउ में भी हुआ है।
- 11 राजा अजितजय, रानी अजितसेना तथा पुत्र अजितसेन का वर्णन 5 23-40
- 12 अजितसेन का राज्याभिषेक 5 41-49
- 13-14 पुत्र का अपहरण और राजा का विलाप 5 56 विलाप। यहाँ मार्मिकता अधिक है
- 15-16 तपोभूषण मुनि का आगमन और पुत्र के अपहरण की कथा का निर्देशन 5 57-91 वही

#### चतुर्थ संधि

- 1-21 अजितसेन का दिग्विजय वर्णन तथा श्रावक व्रत ग्रहण 5 सर्ग छठ तथा सप्तम के 52 श्लोक तक का विषय

#### पंचम संधि

- 1-16 अजितसेन का दिग्विजय प्रयाण, बसंत ऋतु, कामकेलि, वैराग्य तथा स्वर्ग-गमन वर्णन। यहाँ भ्रातृकारिकता दृष्टव्य है। यहाँ तक का विषय वर्णन 11 73 तक समाप्त

#### षष्ठ संधि

- 1-2 पद्मनाभ द्वारा गजराज को वश में किया जाना, तथा पृथ्वीपाल के दूत का आगमन 11 74-92
- 3 दूत का कथन 12 2-25
- 4 स्वर्णनाभ युवराज का उत्तर, यहाँ व्यावहारिकता कम है। 12 26-54
- 5 पद्मनाभ का कथन 12 55-58

- 6-8 पुरुभूति और युवराज के तर्क । पृथ्वीवास से बुद्ध के सदर्म में भवभूति का नाम नहीं । कथा प्रवाह अधिक है । 11 67-111 यहा नीति का वर्णन दृष्टव्य है । तेरहवां सर्ग समाप्त ।
- 10-11 रात की रंगरेलियों का वर्णन चौदहवां सर्ग समाप्त । यहा यह वर्णन नहीं है ।
- 12-14 युद्ध वर्णन  
15 बंरास्य वर्णन
- 18-25 क्रोध, मान, माया, लोभ तथा सोलह कारण भावना यह वर्णन चन्द्रप्रभ में नहीं । यहा चन्द्रहवां सर्ग समाप्त ।
- 26 अनुत्तर बिमान वसन

#### सप्तम सर्ग

- 1-2 पूर्व देश का वर्णन 16 1-10
- 3-4 चन्द्रपुरी नगरी का वर्णन
- 5-6 महासेन का वर्णन यहा दिग्विजय का वर्णन नहीं है ।
- 7-8 लक्ष्मणा का वर्णन
- 9-10 गर्म पूर्व का वर्णन । यहा सुर-लोक के आनन्द का वर्णन अधिक है ।
- 11-17 सोलहवां सर्ग समाप्त

#### अष्टम सर्ग

- 1-24 सुमेरु पर्वत पर आना तथा चन्द्र-पुरी नगरी में अभिषेक कर वापिस आना, जन्म कल्याणक महोत्सव 17 1-44 पर समाप्त

#### नवम सर्ग

- 1-07 दीक्षा कल्याणक महोत्सव इसका वर्णन नाम मात्र है,

### वसन्ती सधि

1-17 केवल ज्ञान कल्याणक महोत्सव सत्रहवाँ सर्ग समाप्त

### ग्यारहवीं सधि

1-29 धर्म प्रवचन तथा निर्वाण अठारहवाँ सर्ग समाप्त  
महोत्सव

इस तुलनात्मक अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि यश कीर्ति ने कथा प्रवाह को द्रुतगति से बढ़ाया पर समयानुसार उसका निर्वाह भी अपनी प्रतिभा और क्षमता के आधार पर किया। जहाँ आवश्यक हुआ वहाँ उन्होंने वीरनन्दि से भी अधिक विषय वस्तु का वर्णन किया है। इसमें कभी-कभी बड़ी सुन्दर कल्पनाएँ भी दिखाई दे जाती हैं। वसन्त वर्णन, सौन्दर्य वर्णन जैसे प्रसंगों पर यश कीर्ति ने अपनी प्रतिभा का अच्छा प्रदर्शन किया है।

वीरनन्दि के अतिरिक्त महाकवि यश कीर्ति पर कुन्दकुन्दाचार्य, उमास्वामी, पूज्यपाद, प्रकलक, जिनसेन आदि जैनाचार्यों का तथा कालिदास, भारवि, माघ आदि जैनतर कवियों का भी प्रभाव दिखाई देता है। पुर प्रवेश तथा सेना-प्रयाण वर्णन में काम कीड़ा का प्रसंग कालिदास, माघ आदि महाकवियों की वर्णन-परम्परा का स्मरण करा देता है। यहाँ इतना अवश्य दृष्टव्य है कि यश कीर्ति ने अपनी प्रतिभा समय और शक्ति को आङ्गारिक वर्णन में न लगाकर सभी रसों का समान रूप से प्रयोग किया है। जैन धर्म का विवेचन करते समय भी उन्होंने जैन दर्शन की गम्भीरता को प्रकट न कर सीधा-साधा वर्णन किया है। उदाहरणार्थ वीरनन्दि ने द्वितीय सर्ग में आत्मा और परमात्मा का दार्शनिक विवेचन किया पर यश कीर्ति ने उसके स्थान पर आर्यक व्रतों को प्रस्तुत किया है। ऐसे प्रसंगों में भाषा भी बोझिल नहीं हुई है।

## 7 चम्पूहचरित का महाकाव्यत्व

काव्य कवि की अस्तव्यस्तता का निष्पन्न है। वह अनुभूति के खरल में घिसकर शब्दों के माध्यम से रसात्मकता के साथ अभिव्यक्त होता है। यह अभिव्यक्ति चाहे गद्य में हो या पद्य में, सत्रंश कवि का जीवन दर्शन तथा दृष्टि उसमें प्रतिबिम्बित होती रहती है। पद्य विधा में यह प्रतिबिम्बन महाकाव्य, खण्डकाव्य तथा मुक्तक काव्य के रूप में होती है। महाकाव्य को ही प्रबन्ध काव्य कहा जाता है जिसमें

पुराण और चरित, दोनों प्रकार की धाराएँ मिलती हैं इनमें अन्तर यह है कि प्रबंध में अलौकिकता, आवान्तर कथानको तथा पौराणिक कवियों को जो विस्तार दिया जाता है वह चरित काव्यों में नहीं मिलती। चरित काव्यों में तो सक्षिप्त शैली का उपयोग अधिक होता है। कवियों की संख्या भी अपेक्षाकृत कम रहा करती है। लोक तत्त्वों का विशेष उपयोग भी इसमें किया जाता है। धार्मिक, साम्प्रदायिक तथा उपदेशात्मक दृष्टिकोण इन कथा काव्यों की भूमिका में मुख्य रहता है।

कवि इन काव्यों में धार्मिक, सामाजिक और ऐतिहासिक तत्त्वों का आलेखन करता है। साथ ही काव्यात्मक कवियों का भी परिपालन करता चलता है। जहाँ देश नगर, हाट के वर्णन में कवि आत्मविभोर हो जाता है वही स्वयंवर और काम-केल, मे वह रसाक्त हृदय को उडेल देता है। युद्ध के वर्णन में सम्भावित-असंभावित तत्त्वों को दर किनारे रखकर नायक की वीरता की चरमोत्कर्षता को कवि अपने काव्य में पहुँचा देता है। पारिवारिक जीवन में मान्य सामाजिक उत्सवों को भी वह पर्याप्त स्थान देता चलता है। इन सारे प्रसंगों में भाँटो-नवी रस यथा-स्थान प्रवाहित होते हुए दिखाई देते रहते हैं। पारम्परिक और नये उपमानों के साथ रूपक, उपमा, उपमेषा आदि अलंकारों का प्रयोग भी साथ-साथ चलता रहता है।

यश कीर्ति का चदम्पहचरित इन सारी दृष्टियों से एक रसात्मक सुन्दर काव्य सिद्ध होता है। कवि की दृष्टि यद्यपि अपने आराध्य तीर्थकर चन्द्रप्रभ को चरित को उद्घाटित करने की रही है पर उसने आनुषंगिक रूप से जीवन के मर्म को समझते हुए जैनधर्म के प्रमुख सिद्धान्तों को प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है। जिन्मसी के मर्म स्थलों को भावुकता से सहलाते हुए कथानायक के जीवन प्रसंगों को उपस्थित करता चला जाता है। कथा को अनावश्यक विस्तार देने में भी वह विश्वास नहीं करता।

यश कीर्ति ने स्वयं को हर पुष्पिका वाक्य में 'महाकवि' कहा है। इस कथन से सम्भवतः कवि का यही भाव रहा होगा कि उसके काव्य को महाकाव्य कहा जाना चाहिए। ग्रन्थ के अन्तरावलोकन से उनका कथन प्रमाणित हो जाता है। प्रस्तुत ग्रन्थ में महाकाव्य के प्रायः सभी लक्षण मिल जाते हैं। चौदहवीं शती के आचार्य विश्वनाथ के समय तक महाकाव्य की परिभाषा लगभग स्थिर हो चुकी थी। उन्होंने साहित्य दर्पण में महाकाव्य का निम्नलिखित स्वरूप बताया है—

जो सर्वबद्ध हो वह महाकाव्य है। उस काव्य का नायक देवता होता चाहिए अथवा अश्वेद वश का क्षत्रिय, जिसमें बीरोदास आदि गुण हो अथवा वश में उत्पन्न अनेक राजा भी उस काव्य के नायक हो सकते हैं। ऐसे महाकाव्य में भूज्जार, वीर,

और शान्त रस में से एक रस प्रधान होता है तथा अन्य रस गौण रूप से वर्णित होते हैं। उसमें नाटक की समस्त संधियाँ होती हैं। महाकाव्य की कथा किसी ऐसे महान् व्यक्ति पर आधारित होती है जो लोक प्रसिद्ध अथवा इतिहास प्रसिद्ध व्यक्ति हो। धर्म, धर्म, नमस्कारादि आशीर्वचन, या वस्तु का निर्देश होता है। महाकाव्य में कहीं-कहीं खलो की निन्दा और सज्जनों के गुणों की प्रशंसा रहती है। एक सर्ग में एक ही वृत्त की प्रधानता रहती है। परन्तु सर्ग के अन्त में वृत्त भिन्न हो जाता है। सर्ग न बहुत छोटे और न बहुत लम्बे हो। उनकी संख्या आठ से अधिक होती है। सर्ग के अन्त में आगामी कथा का संकेत मिलना चाहिए। उसमें सन्ध्या, सूर्य, रजनी चन्द्र, प्रदोष, अन्धकार, दिन, प्रातःकाल, मध्याह्न, मृगया, शैल, ऋतु, वन, सागर, सभोग, विप्रलम्भ, मुनि, स्वर्ग, यज्ञ, युद्ध, यात्रा, विवाह, मन्त्र, पुत्र, और अमृतद्वय आदि का सागोपाग वर्णन होता है। इस प्रकार के प्रबंध काव्य का नाम कवि, चरित अथवा चरित नायक के नाम पर आधारित होता है। कहीं-कहीं इससे भिन्न नाम भी हो सकता है। सर्गों का नाम कथा पर आधारित होना चाहिए।<sup>1</sup>

महाकाव्य की उपर्युक्त परिभाषा 'चन्दप्यहचरित' पर पूर्णतः घटित होती है। यह एक नायक प्रधान, सर्गबद्ध, शान्त रस प्रधान, ग्यारह संधियों (सर्गों) में निबद्ध, प्रकृति आदि के वर्णन से समोजित, चरित नायक पर आधारित महाकाव्य है। तीर्थकर चन्द्रप्रभ के चरित का वर्णन करना ही महाकवि का मुख्य अभिप्रेत रहा है।

इसमें चन्द्रप्रभ तीर्थकर के परम्परागत सात भवों का वर्णन किया गया है— 1 श्रीधर्म (श्रीवर्मा), 2 श्रीधर देव, 3 अजितसेन, 4 अच्युतेन्द्र, 5 पद्मनाभ, 6 वैजयन्तेश्वर, और 7 चन्द्रप्रभ। इस प्रसंग में वातकीलण्ड आदि द्वीपों, तथा मगलावती, रत्नसजयपुर, कोशल आदि नगरों का वर्णन किया गया है। चन्द्रप्रभ को नायक बनाकर उनके चरम उत्कर्ष को उनके जन्म में बताया गया है चन्द्रप्रभ की जन्म-जन्मान्तर की पत्नियों—सुवर्णमाला, श्रीकान्ता, अजितसेन आदि को नायिकाओं के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

1 अलंकार, रस और छन्द योजना—चन्दप्यहचरित रस सिद्ध काव्य है। इसमें ऋतुओं में विशेष रूप से वसन्त ऋतु का वर्णन किया गया है। अजितसेन की कीड़ा के वर्णन-प्रसंग में ऋतुओं का विशेष आधार लिया गया है इन्हीं प्रसंगों में अङ्गार रस का भी अच्छा प्रयोग हुआ है। श्रीवर्मा और अजितसेन की दिग्विजय



यात्राओं तथा, महेन्द्र, पृथ्वीपाल आदि राजाओं के साथ उनके युद्ध प्रसंगों पर वीररस का सुन्दर प्रयोग हुआ है। ससार चिन्तन और जीवादि तत्त्वों के विवेचन के सदम में शान्तरस का आधार लिया गया है। प्रस्तुत कृति का यही मुख्य रस है अजितजय का पुत्र भोक्त कर्णरस के लिए तथा चन्द्रप्रभ की बाल लीला वात्सल्य रस के लिए उद्भूत की जा सकती है।

अलंकारों में शब्द और अर्थ, दोनों प्रकार के अलंकारों का उपयोग किया गया है। शब्दालंकारों में अनुप्रास और यमक तथा अर्थालंकारों में उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, भ्रान्तिमान, अपहृति, श्लेष, अप्रस्तुत प्रशंसा, विशेषोक्ति, अर्थान्तरन्यास, ससृष्टि, सकार, समासोक्ति, शृष्टान्त आदि अलंकारों का सुन्दर संयोजन हुआ है।

छन्द-योजना की दृष्टि से यह ग्रन्थ वैविध्य लिये हुए अधिक नहीं है। फिर भी उसका संयोजन मनोहारी हुआ है मात्रिक समवृत्तों में पङ्क्ति, अङ्गित्व, श्रोट-नक और पादाकुलिक, वार्णिक समवृत्तों में त्रिपदी, मात्रिक, विषम वृत्तों में गद्या, दोहड़, तथा श्रृङ्खल और घत्ता का प्रयोग विशेष रूप से किया गया है कवि ने इन वृत्तों का प्रयोग विषय और सदम के अनुकूल किया है। माधुर्य, प्रसाद और भोज गुणों का भी मणि-काञ्चन संयोग हुआ है।

चन्द्रपहचरित में ग्यारह सन्धिया है जिनमें कुल पद्य और उनकी श्लोक संख्या (ग्रन्थ संख्या) इस प्रकार है—

सन्धि	पद्य (कडवक)	श्लोक (ग्रन्थ) संख्या
प्रथम	16	162
द्वितीय	19	193
तृतीय	16	165
चतुर्थ	21	214
पंचम	16	173
षष्ठ	26	248
सप्तम	17	160
अष्टम	24	264
नवम	24	234
दशम	17	192
एकादशम	29	300

कुल 225

2305

सन्धि की रचना कडवक छन्दो से होती है और कडवक छन्दों का समुदाय होता है। इन छन्दो में प्रमुख छन्द चार हैं—पद्मिका, अडिल्ल, वदनक और पारणक। हर सन्धि घत्ता से समाप्त होती है जिसे धुवा, धुवक या छड्डणिया भी कहा जाता है। यह घत्ता वट्पदी, चतुष्पदी या द्विपदी होता है। इसके भी अनेक भेद-प्रभेद होते हैं। घत्ता की अन्तिम मात्रा ह्रस्व हो या दीर्घ, इसका कोई निश्चित नियम नहीं है। कडवक में कुल आठ यमक या सोलह पक्तियों का होना आवश्यक माना जाता है पर उत्तरकाल में यह नियम शिथिल होता हुआ दिखाई देता है। यश कीर्ति के चन्दप्पहचरित में भी इस नियम का पालन नहीं हुआ। सन्धि के प्रारम्भ में आने वाले छन्दो को धुवक कहा जाता है। चन्दप्पहचरित में भी ऐसे धुवक मिलते हैं परन्तु उस परिमाण में नहीं जिस परिमाण में पुष्पदन्त ने दिये हैं।

## 9 धार्मिक और सामाजिक संदर्भ

इन सन्धियों में परम्परानुसार राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक तथा धार्मिक विवेचन यथास्थान किया गया है। दो संस्थानों पर ग्राम वर्णन भी मिलता है। जैन धर्म के विवेचन की दृष्टि से तो यह ग्रन्थ एक अष्टा सप्तह ग्रन्थ है। गुणवन्तो के प्रसंग में कवि ने विक्रपरिमाण, भोगोपभोगपरिमाण और अनर्थदण्ड व्रतो का उल्लेख कर आचार्य कुदकुद का अनुकरण किया है। कुदकुद द्वारा ही मान्य शिक्षा-व्रतो में सामायिक, प्रीषधोत्वास और सल्लेखना को तो स्वीकार किया है पर सोमदेव का अनुकरण यश कीर्ति ने अतिथि सविभाग के स्थान पर दान को रख कर किया है (26)। अष्टमूल गुणो का उल्लेख अवश्य आया है पर उनको गिनाया नहीं गया है। उत्तर गुणो अवस्था शीलव्रतो के रूप में इन व्रतो का विभाजन किया गया है। मुनि आचार का भी सक्षिप्त वर्णन मिलता है। इन सारे सदर्भों में मुझे कोई विशेषता नहीं मिली, इसलिए हम उसका पृथक् विवरण नहीं दे रहे हैं।

## 10 भाषा और व्याकरण

चन्दप्पहचरित अपभ्रंश का काव्य ग्रन्थ है। अपभ्रंश पद्य अष्ट अर्थात् बिगड़े शब्दों का प्रतीक है। ये ऐसे विकृत शब्द होते थे जो लोक भाषा में प्रचलित थे और जिन्हें शिष्ट प्रयोग की सफल श्रेणी में नहीं गिना जाता था। ये शब्द संस्कृत व्याकरण से अष्ट और देशज रहते थे। अपभ्रंश शब्द का सर्व प्रथम प्रयोग यद्यपि भर्तृहरि के अनुसार व्याडि ने किया है पर उनका ग्रन्थ उपलब्ध नहीं होता। उपलब्ध ग्रन्थकारों में पतञ्जलि (150 A-D) का नामोल्लेख किया जा सकता है जिन्होंने महाभाष्य में इस शब्द को अपभ्रष्ट के अर्थ में प्रयुक्त किया है और साथ ही

संस्कृत गी शब्द के अपभ्रष्ट रूप गावी, गोली, गोता आदि दिये हैं। भरत (ईसा की तृतीय शताब्दी) ने प्राकृत की जाति भाषा मानकर उसे समान शब्द, विभ्रष्ट और देशीयत के रूप में विभक्त किया है। इसी प्रसंग में उन्होंने संस्कृत को आर्य भाषा माना है जो व्याकरण से परिष्कृत है। जाति भाषा का तात्पर्य उनकी दृष्टि में ऐसी भाषा से है जो सर्व साधारण जन समाज में प्रचलित थी और जिसका कोई व्याकरण नहीं था। भरत ने ऐसी भाषा को उकार बहुवा कहा है जो पश्चिम में प्रचलित थी। और इसी तरह एकार वाली भाषा पूर्व में प्रयुक्त होती थी। इसके बाद भामह (ई की छठी शती) ने अपभ्रंश को संस्कृत और प्राकृत के साथ पृथक् रूप में गिनाया और वण्डी ने इन तीनों में मिश्र भेद को और जोड़ दिया। राजशेखर ने तो अपभ्रंश के कुछ नियम भी बना दिये। उनके अनुसार परिचारको को अपभ्रंश ही बोलना चाहिए। उन्होंने यह भी लिखा कि मरभूमि, राजपूताना और पंजाब के कवि अपभ्रंश का विशेष प्रयोग करते हैं जिसमें टकार, ककार और भकार अधिक होता है। इसी तरह अन्य आलंकारिकों और व्याकरणों ने अपभ्रंश को समुचित स्थान दिया है। नाटकों में तो उसका प्रयोग बहुलता से हुआ ही है। वण्डी ने उसे आभीरी भी कहा है। नमिसाधु ने भी उसका समर्थन किया है। यहाँ आभीरी का तात्पर्य ग्राम्य भाषा से है।

अपभ्रंश भाषा-विकास की कथा को खोतित करती है। वह मध्यकालीन प्राकृत की अन्तिम अवस्था है। बुद्ध और महावीर ने प्राकृत में ही अपना उपदेश दिया। उन्होंने उसे संस्कृत में अनुदित करने की अनुमति नहीं दी। इसका स्पष्ट तात्पर्य यह है कि प्राकृत एक समृद्ध जनभाषा के रूप में उस समय प्रचलित थी। इसी भाषा का उत्तरकालीन विकसित रूप ग्रन्थों के उत्तर-पश्चिम, गिरनार,, गंगा यमुना तथा महानदी के बीचवर्ती प्रदेश और दक्षिण में प्राप्त अभिलेखों में पाया जाता है। निय प्राकृत का भी उल्लेख इस सदर्भ में किया जाना आवश्यक है जिसमें खरोष्ठी लिपि में लिखित धम्मपद उपलब्ध हुआ है। इन भाषाओं से इतना तो स्पष्ट ही है कि प्राकृत एक जाति भाषा के रूप में समग्र देश में फैली हुई थी। संस्कृत तो एक विशिष्ट वर्ग की भाषा थी जिसे कवियों और साहित्यकारों ने सवारा था। बुद्ध और महावीर ही प्रथम महापुरुष हुए हैं जिन्होंने सर्वप्रथम जनबोली को अपनाया। इसका जनरूप वेदों में भी खोजा जा सकता है।

अपभ्रंश को साधारणतः तीन भेदों में विभक्त किया जाता है—1. पूर्वी अपभ्रंश अथवा मागधी अपभ्रंश जिससे प. बगला, उडिया, भोजपुरी मैथिली आदि भाषाएँ निकली हैं। 2. दक्षिणी अपभ्रंश, और 3. पश्चिमी अपभ्रंश जिसे नागरी अपभ्रंश भी कहा जाता है। वैसे तो अपभ्रंश के सैकड़ों भेद हो सकते हैं पर मूलतः तीन भेद

ही माने गये हैं—नागर, ब्राह्म और उपनागर । नागर (शौरसेनी) अपभ्रंश से ही राजस्थानी, और गुजराती भाषाओं का जन्म हुआ है । इसी तरह अन्य भेदों के विषय में कहा जाये तो यह भाषा वैज्ञानिक तथ्य स्पष्ट हो जायेगा कि महाराष्ट्री अपभ्रंश से मराठी, मागधी से बगला, बिहारी, आसामी, उडिया और ब्राह्म से सिन्धी का जन्म हुआ है । उनमें नागर अपभ्रंश में अधिक साहित्य लिखा जाता रहा है । चद-पहचरिउ भी इसी में लिखा गया है । पूर्वी-पश्चिमी हिन्दी के भेदों के आधार पर भी इस तथ्य की पुष्टि हो जाती है ।

अपभ्रंश में स्वर और व्यञ्जन के सदृश में निम्नलिखित प्रमुख विशेषताएँ दृश्य हैं—

- 1 ह्रस्व ए और ह्रस्व ओ स्वर की वृद्धि ।
- 2 ह्रस्व वर्णों का प्रचुर प्रयोग है । अन्त्य स्वर भी ह्रस्व हो जाते हैं ।
- 3 यश्चुति का प्रयोग अधिक है ।
- 4 प्राकृत की सामान्य प्रवृत्तियाँ स्थिर रही ।
- 5 य के स्थान पर ज का प्रचुर प्रयोग
- 6 ञ का अभाव

7 दन्त्य न का प्रायः अभाव है । उसके स्थान पर ण हो जाता है विशेषतः उत्तर-पश्चिमी और प्राच्य क्षेत्र में प्रायः न और ण दोनों हैं ।

8 प्राच्य प्रदेश में व को ब उच्चारण करने की प्रवृत्ति अधिक है । इसके विपरीत पश्चिम में वकार बहुलता है ।

चदपहचरिउ वस्तुतः भाषा की दृष्टि से भी एक उच्चकोटि का अपभ्रंश काव्य ग्रन्थ मिष्ट होता है । भाषिक अध्ययन करने पर इसमें प्रयुक्त भाषा और उसका व्याकरण संक्षेप में इस प्रकार है—

प्रयुक्त स्वर—अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, ओ,

अनुस्वार एवम् अनुनासिक ।

प्रयुक्त व्यञ्जन—क, ख, ग, घ

च, छ, ज, झ,

ट, ठ, ड, ढ, ण,

त, थ, द, ध, न

प, फ, ब, भ, म

य, र, ल, श, ह

भाषा विज्ञान की दृष्टि से इन्हें हम इस प्रकार विभाजित कर सकते हैं—

(1) खण्डात्मक स्वनिम

(i) स्वर

1 जिह्वावा का व्यवहृत भाग—

(1) अग्र स्वर—इ, ई, ए

(ii) पश्च स्वर—आ, उ, ऊ, ओ

(iii) मध्य स्वर—अ

2 जिह्वावा के व्यवहृत भाग की ऊँचाई—

(1) सन्नत—इ, ई, उ, ऊ

(ii) अर्ध सन्नत—ए, ओ

(iii) अर्ध विन्नत—अ

(iv) विन्नत आ

3 ओष्ठ की स्थिति—

(i) वर्तुलित—ओ, ऊ,

(ii) अवर्तुलित—इ, ई, ए

मात्राकाल और कोमल तालु की दृष्टि से षट्षहचरित के स्वरों को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है—

मूल स्वर—(1) ह्रस्व—अ, इ, उ, ह्रस्व ए और ह्रस्व ओ

(ii) दीर्घ—आ, ई, ऊ, ए, ओ

(iii) सयुक्त स्वर—अइ, अउ, एइ, एउ

(iv) अनुनासिक स्वर—अनुनासिकता प्रायः सभी स्वरों के साथ उपलब्ध है।

इन स्वरों के लघुतम गुग्म शब्द की प्रत्येक स्थिति में मिल जाते हैं। इनके उपस्वनिम भी खोजे जा सकते हैं। इनमें बलाघात शून्य स्वर को ह्रस्व करने की विशेष प्रवृत्ति देखी जाती है। इसलिए अन्य स्वर ह्रस्व हो जाते हैं।

स्वर विकार

1 अ > इ = कारणि, उपपलि

अ > उ = परिमलु, सम्पुल्ल

अ > ए = बेल्लि

- 2 आ > अ = कता, तह, चमर, अस्प, अम्ब  
 आ > उ = बिणु, पुणु, एरवर  
 आ > ऊ = बिणू  
 आ > ओ = तहो
- 3 इ > अ = सिरस  
 इ > उ = उच्छु  
 इ > ए = जे, ते
- 4 ई > आ = भारिस  
 ई > इ = कित्ति, नइ, रयरिण
- 5 उ > अ = मउइ  
 उ > इ = पुरिस  
 उ > ई = धीय  
 उ > ओ = पोमाल
- 5 ऊ > उ = पुव्व, मुहुत्त, बहु  
 ऊ > ए = नेउर  
 ऊ > ओ = थोर
- 6 ऋ > अ = पसरिय  
 ऋ > इ = अमिय, किमि  
 ऋ > उ = पुहवि  
 ऋ > ए = गेह  
 ऋ > रि = रिडि  
 ऋ > अरि = उम्भरिय
- 7 ए > इ = पर्वेदिय
- 8 ऐ > ए = केलास  
 ऐ > अइ = दइव
- 9 औ > उ = अणुण्ण  
 औ > ए = करेमि
- 10 ओ > ओ = जोवणु
- 11 ह्रस्व स्वर की दीर्घीकरण प्रवृत्ति—सिही, सीस
- 12 दीर्घ स्वर का ह्रस्वीकरण—अच्छेरअ, परिवक्षा, रज्ज
- 13 ह्रस्व स्वर का अनुस्वारत्व—दसण, असु

#### 14 स्वर लोप

( i ) आदि स्वरलोप—हउ हेड्डिल

( ii ) मध्य स्वरलोप—उदिट्ट

(iii) अन्त्य स्वरलोप—सहावें

#### 15 आदि स्वरागम—इत्थि

16 स्वर भक्ति—आयरिय, किलेस

17 स्वर व्यत्यय—अच्छरिय, वमचरिय

18 स्वरगम—इच्छु/उच्छु, पेक्खवि, मेल्लिवि ।

#### समुक्त स्वर

( i ) (अइ) दइअ, अइस

( ii ) (अउ) पउर

(iii) (एइ) देइ, लेइ

(iv) (एउ) नेउर

#### अनुनासिक स्वर

(अँ) भउहँ

(ईँ) तहिँ, तुम्हहिँ, सईँ

(उँ) सपत्तउँ, चउहुँ

**अनुवार स्वर**—अनुस्वार के पूर्ववर्ती स्वर प्रायः अनुनासिक होते हैं । वर्णों के सभी अन्तिम वर्ण अनुस्वार में परिवर्तित हो गये । अनुस्वार कहीं कहीं बहुवचन का भी द्योतक है । निरनुनासिकता की प्रवृत्ति भी दृष्टव्य है—जैसे—तीसा, सीह ।

(अ) पयगु, जह

(इ) तहि, एहि, भणइ

(उ) तणउ, मुहु

#### स्वर लोप

आदि स्वर लोप—हउ, बलगम

मध्य स्वर लोप—पडिलिउ

अन्त्य स्वर लोप—एउ

**स्वराघात**—गइ, कित्ति, विआस । अन्त्याक्षरो पर प्रायः बलाघात नहीं रहता ।

**व्यञ्जन परिवर्तन और चिकार**—यञ्जुति का प्रयोग विशेष हुआ है । पर व श्रुति का अधिक प्रयोग नहीं हुआ ।

क > य = लोय, मयरव, अणोय

- स > ह = पमुह, सुह-दुह, साहा  
 ग > य = कालायरु, सायार, अणुराय  
 घ > ह = मेह  
 ख > य = वयणइ, च > अ = लोअण  
 छ > अ - अपअ स मे इसका अभाव है ।  
 ज > य = तेयमडलि  
 7 ट > ड = कोडि, फाड्डु, अडविहि, सुहड  
 8 ठ > ड = मड, बीड  
 ढ > ल = कील  
 ण - णकार प्रवृत्ति अधिक है ।  
 9 त > य = निग्गय, इयर, मीलिय, अमय  
 त > उ = पडिहारु  
 10 थ > ह = तह, मिहुण, थ > ड = पडम, थ > ठ = नडिह  
 11 द > य = केयार, द > उ = पउमनाहु  
 12 ध > ह = निहारु, सिरिहरु  
 13 न > ण = वणवालहो, आणद । यह प्रवृत्ति अधिक है ।  
 14 प > व = उवरि, तव, रुव, दीव  
 15 फ > व = पुह  
 16 भ > ह = चदप्पह  
 17 म > व = सवण  
 य > ज = जस, सजोयवि, जोइ  
 य > इ = अक्खइ, कोइल  
 19 र > ड = ड आविउ  
 र > •लोप = पउ (प्रिय)  
 20 व > उ = देउ, भाउ  
 व > अ = तिहुअण  
 व > य = तिहुयण  
 व > म = एमई  
 21 ष > छ = छग्गुण  
 22 ण > ह = दह, ण > स = दस  
 23 पुरोयामी समीकरण—कम्म, धम्म  
 24 पञ्चगामी समीकरण—अग्नि, जोग्ग



### संयुक्त व्यञ्जन-परिवर्तन

क्त् > त् = मुक्ता, क्त > त्त = रत्तउ
क्ष् > क्क्ष् = रक्क्षराग, उभिक्षत्
क्ष् > क्क्ष् = खत्तब्बु, खरिण, खरीबहि
ञ् > न् = नाण्यारण, ञ् = ण्य = विष्ण्यारण
त्स् > न्त्स् = सक्त्स्
त्स् > क्क्ष् = वक्क्ष्, उक्क्ष्
क्ष् > क्क्ष् = उक्क्षोय
ह्य्, ह्व् > ह् = अक्क्षारण
त्र् > द् = सप्ततत्रह्
त्तु > द्दु = द्दित्तु
त्तु > द्दु = परमेद्दिण्
ण् > ण्ह् = उण्ह्, ण् > म्ह् = तन्हा
क्क > क्क्क = पुक्क्करहु
स्व > स = सहाव
श्री > सिरि = सिरिकल
स्म > म = विधिय
स्य > थ = थय

(2) अधिलब्धात्मक स्वनियम—इसके अन्तर्गत अनुनासिकता, विवृति, सुरलहर, तथा बलाघात आते हैं। चदप्पह्वरिउ में इनमें प्रथम दो के उदाहरण लीजे जा सकते हैं।

### कारक रूप

समाप्त—चदप्पह्वरिउ के समाप्त कारक रूपों का अध्ययन करने पर निम्नलिखित प्रत्ययों का पता चलता है इनमें मुख्यतः प्रथमा, षष्ठी और सप्तमी विभक्तिमा शेष रह गई हैं। उकार बहुला प्रकृति है। निविभक्तिक पुल्लिङ्ग अकारान्त प्रयोग अधिक मिलते हैं।

एकवचन	बहुवचन
1 उ, ओ (कब मिलता है)	०
2 इ, ०	०
3 ए, ऐ, ण	हि

4 सु, स्सु हो ०	ह
5 हु, हे	हुँ
6 सु, स्सु, हो	ह
7 इ, ए	हि

पुल्लिङ्ग इकारान्त तथा उकारान्त आदि और स्त्रीलिङ्ग के इकारान्त, उकारान्त आदि के रूप-प्रत्यय कुछ परिवर्तनों के साथ इसी प्रकार लगाये गये हैं ।

### सर्वनाम

एकवचन	बहुवचन
1 ह, ऊँ, तुम, सो, इहु	जे, मे
2 मई, त, तुम, मम	जाई, ताई, अम्हे
3 मई, तेण, जेण	अम्हारिहि, अम्हेहि
5 मइ, ममाहि	अम्हाहितो
6 मज्झु, मम, मोर, तोर	तुम्हई, अम्हई, अम्हाण
तव, तहो, जामु, मम	ताण, जाण
7 अम्हम्मि, मए	अम्हासु, ममेसु
8 संबोधन-तुम	

### विशेषण और अव्यय—

- 1 ( i ) परिमाणवाचक विशेषण—जोवडु, तेवडु, केवडु, एवडु  
 ( ii ) गुणवाचक विशेषण—एहड, जेहड, अम्हारिस, तेहु, एहु, जेहु  
 ( iii ) रीतिवाचक—जेम, केम, जिह, किह
- 2, अव्यय—( i ) स्थानवाचक—एत्थु, जेत्थु, तेत्थु, केत्थु, इह, कह, कहि, एत्तहि,  
 ( ii ) समयवाचक—आ, जाम, ताम, जाव, ताव,  
 ( iii ) रीतिवाचक—अह, जह, किह, जेम, तेम  
 ( iv ) संबंधवाचक—सहुँ

### संख्या वाचक शब्द—

एक्कु, दो, विण्ण, तिउ, तिण्ण चउ, पच्, छ, सत्त, अट्ठ, नव, दस, दह, एयारह, बारह, तेरह, चउदस, पण्णारह, सोलह, सत्तारह, अट्ठारह, बीस, बावीस, पण्णवीस, अडवीस, तीस, तेतीस, पचास, सउसडु, बाहत्तरि, पचासी, सय, सहस, लक्ख, कोडि, कोडाकोडि ।

### संख्या वाचक विशेषण

पठमु, वीयउ, बीऊ, तइउ, चउरथो, पचमो, छटो, छहो, सतमो, अठमो, नवमो, दसमो, दहमो, एयारहमो ।

तद्धितप्रत्यय—अल्ल, भाल, भावण, इक्क, इण, इल, उल्ल, एर,  
क्रिया रूप

क्रिया रूपो मे वर्तमान और भविष्य वाचक रूप अधिक मिलते हैं । भूतकाल का काम प्रायः कृदन्त शब्दो से निकाला गया है । आत्मनेपद और परस्मैपद का भेद भी यहा समाप्त हो गया है । आज्ञार्थक और विध्यर्थक रूप समान हैं । कर्मणि-प्रयोग के रूप भी मिलते हैं । धातुओ मे अधिक भविष्य दिखाई नहीं देता ।

### कृदन्त

(i) वर्तमान कृदन्त अंत और माण प्रत्यय जोड़कर बनाये गये हैं—जाणंत, पइसत; वट्टमाण, सोहमाण । (ii) भूतकृदन्त मे अ (हुअ, गअ), इअ इउ (भक्खिअ, दिट्ठउ,) तथा इय (कहिय, छडिइय) प्रत्यय लगते हैं । (iii) सम्बन्धक कृदन्त—इ (लहि), इउ—(करिउ), इवि (करिवि, पेक्खिवि), ऊण (णमिऊण, मुत्तूण), प्पिणु (करोप्पिणु, मरोप्पिणु), विणु (देविणु) ।

(iv) हेत्वर्थ कृदन्त—गतु, गतूण

(v) विध्यर्थ कृदन्त—करिच्चउ, सहेच्चउ,

आधुनिक भाषाविज्ञान की शेष प्रणालियों के आधार पर भी चंदप्पहचरिउ का भाषिक अध्ययन किया जा सकता है । शब्दसाधक प्रणाली मे पूर्वं प्रत्यय, पर प्रत्यय, समास और पुनरुक्ति तथा रूपसाधक प्रणाली मे सज्ञा, विशेषण, लिंगविधान, सर्वनाम, क्रिया, सयुक्तकाल, अध्यय आदि पर विचार किया जाता है । इसी प्रकार रूप स्वनिमिकी और वाक्य विन्यास पर भी चर्चा की जाती है । विस्तार भय से इसे हम फिलहाल यहा छोड़ दे रहे हैं ।

पीछे हमने अपभ्रंश के भेदो का उल्लेख किया है । उनकी कतिपय विशेषणाएँ चंदप्पहचरिउ की भाषा को समझने के लिए यहा उल्लेखनीय हैं । अपभ्रंश के भेद क्षेत्रीय आधार पर किये गये हैं । इसलिए विद्वानो ने दक्षिणी, पूर्वी और पश्चिमी मे तीन भेद किये हैं । तगारे के अनुसार ये विशेषताएँ इस प्रकार हो सकती हैं ।<sup>1</sup>

(1) दक्षिणी अपभ्रंश की सामान्य विशेषताएँ

1. यहा ष का छ होता है जबकि अन्यत्र-क्ख या-ख होता है ।

- 2 यहा अकारान्त पु वृ एकवचन मे एण मिलता है जबकि अन्य न यह रूप एकारान्त है ।
- 3 उ पु एक. मे यहा-मि जबकि अन्यत्र-उं आता है ।
- 4 अन्य ब-न्ति परक होता है जबकि अन्यत्र हि-परक होता है ।
- 5 साम भवि क्रियापद-स-परक होता है जबकि अन्यत्र-ह-परक, जैसे करिसइ-करिहइ ।

(2) पूर्वी अपभ्रंश की सामान्य विशेषताएँ —

- (i) क्ष > ख-खल = खण, अस्वर
- (ii) त्व > तु-त्त = तुहु, तत्त
- (iii) दव > दु = दुभार
- (iv) व, स > श
- (v) आदि मे महाप्राण ध्वनिया नही आती ।
- (vi) निर्विभक्ति मज्ञा पदो का प्रयोग

(3) पश्चिमी अपभ्रंश की सामान्य विशेषताएँ —

- 1 -हि तथा-हि दोनो प्रत्यय मिलते हैं ।
- 2 ए और न दोनो मिलते हैं । पर शब्द के प्रारम्भ मे प्राय ए स्वीकार किया गया है ।
- 3 व और ब की बदला-बदली ।
- 4 अन्य स्वर का ह्रस्वीकरण
- 5 आदि-अनादि स्पर्श व्यंजनों का महाप्राण हो जाना ।
- 6 य का ज ।
- 7 स का शेष रहना ।
- 8 मध्यवर्ती क, ग, त, द, च, ज का लोप और ख घ फ भ का प्राय ह हो जाना ।
- 9 म का व मे परिवर्तन ।
- 10 नपुंसक लिंग की प्राय समाप्ति ।
- 11 कारक विभक्तियों के तीन समूह—(i) प्रथमा, द्वितीया, सम्बोधन, (ii) तृतीया, सप्तमी, और (iii) चतुर्थी, पंचमी और षष्ठी ।
- 12 लट् लकार के रूपो मे घिसाव, करउं, करहु, जैसे रूपो का प्रयोग-बाहुल्य ।
- 13 लोट् लकार मे अ, इ, उकारान्त रूपो का प्रयोग । जैसे कर करि कर ।
- 14 लृट् मे -स-ह-रूप । जैसे करिसइ, करिहइ ।

1 Historical Grammar of Ahabhransa, 18-19 : हिन्दी के विकास मे अपभ्रंश का योगदान, डॉ० नामवरसिंह पृ 52-63

15 भूतकालीन क्रियापद तिङन्त नहीं थे ;

16 तुमुन आदि प्रत्ययों के स्थान पर अण का प्रयोग ।

17 पूर्वकालिक प्रत्ययों में—इ,—एप्प—एप्पिणु—एव—एविणु आदि शब्दों का प्रयोग ।

18. स्वाधिक प्रत्यय उ का प्रयोग बाहुल्य ।

इनमें अद्वयपुत्रचरित की भाषा पश्चिमी अपभ्रंश है । राजस्थानी भाषा इससे उद्भूत हुई है । इसमें पुरानी राजस्थानी के रूप सरलता पूर्वक देखे जा सकते हैं । कवि भी राजस्थानी ही रहा है इसलिए उसकी भाषा में ये विशेषताएँ होना स्वाभाविक है । उदाहरणार्थ—

- 1 अ को उ हो जाना—पुह्र ।
- 2 आद्य अ का प्राय सुरक्षित रहना—अच्छइ ।
- 3 इ का अ अथवा य हो जाना—एत्तिउ ।
- 4 दीर्घ और ह्रस्व दोनों में ए, ऐ मिलना ।
- 5 ए का इ होना—अम्हि, बि ।
- 6 अनुस्वार और अनुनासिकता ।
- 7 हि—हिं, हु के प्रयोगों में आधिक्य ।

अपभ्रंश वस्तुतः हिन्दी का पूर्ववर्ती रूप है जिसे हम भाषा के विकास की सीढ़ियों में खोज सकते हैं । देशज शब्दों के प्रयोग में भी इसके रूप सहजता पूर्वक प्राप्त हो सकते हैं । इस भाषा का साहित्य-भण्डार विपुल और समृद्ध रहा है । स्वयंभू योगीन्द्र और हेमचन्द्र की परम्परा को जीविन रचने वाले अपभ्रंश कवियों की प्रतिभा से सँकड़ो ग्रन्थों का सर्जन हुआ है जो आज भी ग्रन्थ-भण्डारों में अनदेखे और असुरक्षित—से पड़े हुए हैं । इधर साहित्य और भाषा के विकास में उसका महत्वपूर्ण योगदान है । शोधार्थी इस दिशा में भी अब आगे बढ़ रहे हैं । भाषा विकास की भूली कड़ियों को खोज निकालने के लिए अपभ्रंश साहित्य को प्रकाश में लाने की महती आवश्यकता है । इससे जनबोली के रूप का क्षेत्रीय प्रयोग प्राचीन साहित्य के अध्ययन से सामने आयेगा और उसके विकास की परिधि अभिगृह्य हो सकेगी ।

प्रस्तुत ग्रन्थ सन् 1978 में संपादित होकर तैयार हो गया था । अद्वैत गुस्वर डॉ॰ दरबरीलाल कोठिया ने इसे वीर सेवा मन्दिर ट्रस्ट से प्रकाशित करने का विचार

व्यक्त किया जिसे मैंने स्वीकार कर लिया। तदर्थ हम उनकी साहित्यिक लगन के प्रति विनयावनत हैं। इधर शिक्षा और संस्कृति मन्त्रालय ने भी इसके प्रकाशन की ओर रुचि दिखाई है। अपभ्रंश साहित्य के प्रति बढ़ते हुए अनुराग का यह फल है। इस मूल्यवान् साहित्य के प्रकाशन की ओर हमारा ध्यान अधिक आकृष्ट होना चाहिए।

मुद्रण की अशुद्धियाँ पाठक के लिए खलेगी, यह स्वाभाविक है। कुछ मेरा प्रवास और कुछ प्रेस की असुविधा, दोनों कारणों से मुद्रण पर पूरा ध्यान नहीं दिया जा सका। अनुनासिक तथा ह्रस्व एकार, ओकार का चिह्न भी नहीं दिया जा सका। इसका हमें खेद है। विस्तार के भय से अनुवाद को हमने शब्दशः न रखकर भावात्मक रखा है।

जयपुर का प्रवास, लगता है, अब समाप्ति की ओर धा रहा है। पारिवारिक परिस्थितियाँ जयपुर छोड़ने के लिए विवश कर रही हैं। नागपुर से इतनी दूर पारिवारिक उत्तरदायित्व से विमुख-सा होकर रहना न तो संभव है और न उपयुक्त ही। जैन संस्कृति की सेवा के लिए जैन केन्द्र का अधिभार स्वीकार किया था, पर उसका समुचित विकास नहीं कर सका। हर संस्थान की एक सीमा होती है। साधने, परिस्थितियों और अन्तर्भेद से किये गये प्रयत्नों पर उसका विकास निर्भर करता है। यह विकास मैं सारे प्रयत्न करने के बावजूब नहीं कर सका, इसका हमें अफसोस है। आशा है समाज इस पर विशेष ध्यान देगा। स्वार्थ का दीमक संस्थान को खाये बिना नहीं रहता। त्याग किये बिना संस्थान का निर्माण नहीं होता। और ईमानदार व्यक्ति को जीवित रहने नहीं दिया जाता। ऐसी स्थिति में प्रेम-महयोग के बिना किसी भी केन्द्र का समुचित विकास करना संभव नहीं हो पाता।

प्राच्य ग्रन्थों का संपादन-प्रकाशन एक ज्ञान-यज्ञ है। इस ज्ञान-यज्ञ में जिन्होंने भी प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से हमारा सहयोग किया है, उनके प्रति कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ। विशेष रूप से प्रो माधव रणदिवे सातारा का सहयोग उत्प्रेक्षणीय है जिन्होंने कुछ महत्वपूर्ण सुझाव दिये हैं। प्रस्तुत ग्रन्थ का प्रकाशन इस प्रवास में हो गया, यह प्रसन्नता का विषय है।

पी-3, विश्वविद्यालय निवास

जयपुर-302004

न्यू एक्सटेशन एरिया

सदर नागपुर-440001

दि 12-8-1985

भागचन्द जैन भास्कर

प्रोफेसर एव निदेशक,

जैन अनुशीलन केन्द्र,

राजस्थान विश्वविद्यालय

जयपुर

ॐ एमो सुवहेववाए  
सिरिजसकित्तिविरइउ

# चंदप्पहचरिउ

पढमो संधि

( 1 )

एमिऊण<sup>1</sup> विमल<sup>2</sup> केवलसत्थी सव्वगदिप्पणपरिरज, ।  
लोमालोयपवासं, चदप्पह सानिय सिरसा ॥1॥  
सिक्कालवट्टमाणं<sup>3</sup>, पच वि परमेट्टिए तिसुद्धो ह ।  
तह एमिऊण<sup>1</sup> भणिस्स, चदप्पहसामिणो चरिय ॥2॥

जिएगिरिगुहण्णिग्गय <sup>4</sup> , सिबपहसगय,	सरसइसरिसुहकारिणिय <sup>5</sup> ।
महु होउ पसण्णिय गुणहरवण्णिय <sup>6</sup> ,	तिहुवणजणभणहारिणिय ॥
हु बडकुलणहयलि <sup>7</sup> पुप्फयत,	बहु वेउ कुमरसिह वि <sup>8</sup> महत्त <sup>9</sup> ।
तहो सुउ रिम्मलु <sup>10</sup> गुणगणविसालु <sup>11</sup>	सुपसिद्धउ पमणइ सिद्धपालु <sup>12</sup> ॥
जसकित्तिविबुह <sup>13</sup> करि तुह <sup>14</sup> पसाउ,	महु पूरहि पाइयकव्वभाउ ॥

- |                             |                        |
|-----------------------------|------------------------|
| 1 क, व, तमिऊण.              | 2. क, विमल०,           |
| 3. क, ख, वड्डमाण,           | 4. क, व, ०निग्गय,      |
| 5 ख कारणीय, व कारणिय,       | 6. गुणहि०,             |
| 7 क व ०नहयलि,               | 8 क वि,                |
| 9 ख कुमरसिहहो (?) वे महत्त, | 10. ख रिम्मल,          |
| 11. क. ० विसालु,            | 12. =सातोदीत इत्यर्थः, |
| 13 व ० विबुह०,              | 14 व. तुह ,            |

त णिसुणिवि<sup>1</sup> सो भासेइ-मदु,  
 इह सुइ बहु मणहर णाण वत,  
 गणिकु दकु दवच्छल्लगुणु,<sup>3</sup>  
 कलिकालि जेण मसिलिहउ णामु,  
 णामि<sup>8</sup> समतभद् वि मुण्डिदु,  
 जिउ<sup>11</sup> रजिउ राया रुदकोडि<sup>12</sup>,  
 णीहरिउ<sup>14</sup> बिबु चदप्पहासु  
 भकलकु णाइ<sup>15</sup> पच्चक्खु णाणु,<sup>16</sup>  
 उज्जालिउ सासणु जय पसिद्ध<sup>19</sup>,  
 सिरिदेवणदि मुणि<sup>21</sup> बहु पहाउ,  
 जसु पुज्जिय भवाईए पाय,  
 जिणमेण सिद्धसेण बि<sup>24</sup> भयत,  
 इय पमुह्है जाहि वाणीविलासु,<sup>25</sup>

घत्ता— जहि<sup>8</sup> भुणइ<sup>29</sup> फणीसरु, बहुजीहाहर, अह सहसक्खु गिरिक्खइ<sup>30</sup> ।

तहि पर जिणचरणइ, सिवसुहकरणइ, किह सथुणइ सभिवक्खइ<sup>31</sup> । । । ।

पगलु तोडेइ केम चदु ॥  
 जिणवयण<sup>2</sup> रसायणु विरथरत ॥  
 को वणिणउ<sup>4</sup> सबकइ इयर<sup>5</sup> जणु<sup>6</sup> ॥  
 सइ<sup>7</sup> दिट्ठउ केवलज्जएत धामु ॥  
 अइणिम्मलु ण<sup>9</sup> पुण्णिमहि<sup>10</sup> चदु ॥  
 जिणयुत्तिमिस्सि<sup>13</sup> सिवपिडिकोडि ॥  
 उज्जोय तउ फुडु दसदिसामु ॥  
 जिं तारादेविहि<sup>17</sup> दत्तिउ<sup>18</sup> माणु ॥  
 णिद्धाडिवि<sup>26</sup> वल्लिय सयलबुद्ध ॥  
 जसु णाम गहणि णासेइ<sup>22</sup> पाउ ॥  
 सभरणमिस्सि तक्खणि<sup>23</sup> ण धाय ॥  
 परवाइदप्पमज्जणकयत ॥  
 तहि<sup>26</sup> अम्हह कह होइ<sup>27</sup> पयासु ॥

- 1 क घ निसुणिवि,
- 3 क, ख घ गुणू,
- 5 क ख घ इयर,
- 7 ख घ सइ,
- 9 क ख घ अइनिम्मलु न,
- 11 ख घ जि,
- 13 जिनस्तुतिमात्रेण
- 15 क नाइ, ख घ नाइ,
- 17 क ख देविहि,
- 19, ख. घ पसिद्धू,
- 21 क ख घ नासेइ,
- 23 क ख बि
- 25 ख घ तहि अम्हह,
- 27 ख घ जहि,
- 29 क ख. घ निरिवक्खइ
- 31 ख घ करणइ

- 2 क जिणवयण०,
4. क ख घ ०वण्णणा,
- 6 क ख घ जण,
- 8 क ख घ नाभि,
- 10 ख पुण्णिमहि (?)
- 12 = शिवकोटि इत्यर्थ ,
- 14 क. ख नीहरिउ,
- 16 क ख घ नाणु
- 18 घ मत्तिउ,
- 20 क निद्धाडेवि, ख. घ निद्धाडिवि,
- 22 ख घ. तक्खणि,
- 24 क बाणी०
- 26 य. होइ, घ होही,
- 28 ख ग भुणइ,
- 30 ख. घ. तहि,
- 32 वाक्खयतीत्यर्थ



## ( 2 )

पुणु तह वि करेक्कउ भम्मभाणु,  
अब्भत्थमि सज्जणगुणमहत,  
ससि कवलज्जइ सिही सुएण<sup>१</sup>,  
छिण्णउ घट्टउ दट्टउ जणेण,  
जइ कड्डिउ महिउ सो दुद्धरसु<sup>२</sup>,  
जइ मुत्ताहलु विद्धउ जणेण,  
जइ सिल अण्णालिय सुद्धमवासु,  
जइ खडिउ ताडिउ दाहु दिण्णु,  
जइ<sup>३</sup> एिक्कारणु दुज्जणे एडिउ

ज जिण्णमासिउ भब्बजलहि<sup>१</sup> जाणु ।  
परदोसगह्णि मूई हवत ॥  
तहो मुहि<sup>३</sup> वरिसइ<sup>४</sup> चारा<sup>५</sup> सएण ।  
अदणु तं वासइ सोरहेण ।  
तो रोहु एहवइ जइवइ विरसु<sup>६</sup> ।  
तो हवइ गुणालउ तक्खणेण ।  
तो अइउज्जलु दुइ सुक्खपासु ।  
तहा मेम्मि\* जियाइ ए जाउ अण्णु ।  
सज्जणु तहा वि गुणणिब्बडिउ ।

घत्ता—जो सपइ दोसपरहु असेस, अणुहुत वि गुण बित्थरइ ।

परकारणि देहु, बहुय सणेहु, लीलए<sup>८</sup> तिणु जिम परिहरइ ॥२॥

## ( 3 )

दुज्जणु पुणु इ गालह<sup>९</sup> सरिसु  
सम्माणिउ<sup>१०</sup> उत्तिउ<sup>११</sup> उल्लइ<sup>१२</sup>,

दुद्धे पोडउ कालउ फरसु ।  
घिउ तत्तउ जलविदुहि जलइ<sup>१३</sup> ।

१ ख घ जलहि ।

२ राहुणा इत्यर्थ ।

३ क ख ग मएहि ।

४. क ख वरिसइ कुत्रचित् 'व' इत्यस्य स्थाने 'ब', 'व' इत्यस्य स्थाने 'ज' वा प्राप्नम् । सदभानुसारेण तन्नियत कृतम् । अतएव इत प्रभृति एवा पाठान्तराणां प्रयत्नेन उल्लेख न कृतम् । तथैव 'न' इत्यस्यापि स्थाने 'ए' पाठभेदो न दत्तोऽत्र ।

५ क ख घ. दुद्धरसु ।

६ क ख घ बिस्सु ।

७. क जय

८ ख घ लीलइ,

+ १ - ख घ चाराम,

\*क ख ग ताहेमि ।

९ ख घ इ गालह ।

१० घ सम्माणिउ ।

११ घ उत्तिउ ।

१२ क ख उल्लइ ।

१३ क. ख जलई ।

मुनि दोसु शिष्यच्छद्द पिसुणजणु<sup>1</sup>,  
 मच्छियकाया<sup>2</sup> तह पिसुणजणु,  
 इय बहु अउ शिक्कारणु<sup>3</sup> पिसुणु,  
 लक्खणु महु अ वि वि कह वि एत्थि,  
 छदउ ए उ कासु वि म'ह कयउ,  
 सत्तक्कउ मइ<sup>7</sup> भोयणु मुण्डिउ,  
 विग्गह<sup>8</sup> महु परबुद्धि ए समाणु,  
 तह वि हु मइ<sup>10</sup> चिट्ठत गुणेण,  
 अरभिय कह मूढत्तरणेण,  
 जे एण्ण भम्मिय ते इह सरतु,  
 अत्ता—सकइत्तणमाणे, गम्बुत्ताणे, तहु<sup>12</sup> जिण्णचरिउ<sup>13</sup> कहिज्जइ ।  
 इह कारणि भवियहे, भवदुहत्तवियहे धम्मभाणु रइज्जइ ॥3॥

रयणि दिणोसु जह धूयगणु ।  
 तहि<sup>4</sup> अहि जसति जहि होइ वणु ।  
 महु पुणु पडित्तणु कवणु गुणु<sup>5</sup> ।  
 अच्छउ<sup>7</sup> ज यक्कउ सद् सत्थि ।  
 शिरलंकारहु इहु भउ गयउ ।  
 अहिपाणउ गुरुदेवहो सुण्डिउ ।  
 सधि वि सह<sup>9</sup> मूढत्ति पहाणु ।  
 अइजिणभत्ति<sup>11</sup> गहसिय मणेण ।  
 अवगण्णिय दुज्जणहासएण ।  
 जे पडिय ते दूरेण वसु ।

( 4 )

दो दो रवि ससि बिप्फुरियदीउ,  
 सुइ सण तसु मज्झत्य मेइ ।  
 जोयण सह सकिउ जासु कहु,  
 जोयण वस सहसिहि जो बिसालु,  
 सासउ शिक्कडु सुवण्णमउ,  
 परिणय दिग्गइ पायडिय सार,

इत्थत्थि पसिद्धउ जनुदीउ ।  
 जिणपुज्ज<sup>14</sup> कज्जि<sup>15</sup> फुल्लिय एमेइ ।  
 सहसूणु<sup>16</sup> लक्खु<sup>17</sup> उइउउ सकडु ॥  
 सव्वह गिरिरायहु<sup>18</sup> सामि सालु ।  
 बहु बिहरममाण सुवण्णमउ ॥  
 विक्खित्त पवण शिज्जकरउ सार ॥

1 क. स. ०जणु

3. क. स. घ. ०अण, रत्त सूर्ययोषपरि दोष करोति

4. घ. तहि

6. क. स. भण, घ. गुण

8. घ. मइ

10 घ. सह

12. क. ख. ग. ०भत्ति

14 चंद्रप्रभस्य

16. शब्दोऽय नास्ति

18. स. लक्ख

2 मलिकानां काया, मलिका काश्च का वा

5 क. स. घ. ०पिसुण

7 स. घ. अच्छउ

9 = कलह इत्यर्थोऽपि

11 घ. मइ

13. घ. एत्थि

15 स. पुज्जि

17. क. सहसूण

19 क. ग. गिरिरायहु

भणिकूड तेय जिब रबि किरणु,  
सुरतर मइबि बीस मिय सुव,  
मयणहिवधसुरहिं दिसासु,  
मदारगलियमयरदबासु,

भणिसिततलि वागर किय किरणु<sup>1</sup> ।  
वाणयरकुलसेविय ताड सुव<sup>2</sup> ।  
सुररा सुप्पाइ य सुरइ<sup>3</sup> सासु ।  
पुब्बिहि सपञ्जइ तित्थुवासु ।

घत्ता—सोलह जिण हम्महि<sup>4</sup>, चउदिसुरम्महि<sup>5</sup>, जो मंडिउ चउण्हाण सिलु ।

चउवण्ण वित्थारहि<sup>6</sup>, चउसुरणिबरहि<sup>7</sup>, जहि<sup>8</sup> वदिउ जिणण्हवणु जलु ॥

(5)

तउ पुव्वहि<sup>9</sup> पुव्वविदेहु अत्थि,  
तव यरणि सुरगमि आरुहेवि<sup>10</sup>,  
ता सुवकभाण पयडिहि अउत,  
तहि मगलवइ यामेण देसु,  
जहि सरवराइ<sup>11</sup> ए अमियकु ड,  
तिरु णिहण्ण<sup>12</sup> कप्पदमह अलु,  
विण्णउ<sup>13</sup> दुमेहि<sup>14</sup> कीरहि<sup>15</sup> रवेण,  
जहि मालिहि मजरि कणभरेण,  
सरवरह पालि जहि हसउलु,

जहि होत भविय सिवणयरपयि ।  
रयणतउ दिट्ठु<sup>11</sup> सबलु करेवि ।  
केवल सिवपोलिहि बीसमत ।  
ए लण्छिहि केरउ दिव्ववेसु ।  
तिणु<sup>12</sup> सुलहइ<sup>13</sup> जहि उच्छु अहलउ ।  
जें हक्कारेवि पंथियह फलु ।  
इहु महुव महुव बोसण परेण ।  
विण्णमिय स चुंविमि अलिबिदेण ।  
पण्हारहि गइ सिक्खणु कुसलु ।

1. =माया सैग्राम प्रतिबिंबेत वा,

3 ल. सुरय = श्वास

5 ल. रम्महि,

7 ल. ०रिहि,

9 ल. पुव्वहि,

11. ल. विट्ठु,

13 ल. सुलहइ,

15. ल. दिण्णउ,

17. ल. कीरहि,

2. ल. सुव,

4 ल. हम्महि,

6 ल. वित्थारहि,

8 ल. जहि,

10 ल. अरुहेवि,

12 ल. तणु,

14. ल. निसनिहण्णउ,

16. ल. दुमेहि,

केयारपालिरक्षणापराहि,  
 कुवि धुत्तु कीरु लिह्वक्कइ भणइ<sup>1</sup>  
 इम वच्चिवि जहि केयार खट्ठु,  
 घत्ता-पह सइदलु<sup>2</sup>, एवपरिमलु, त्रिलिह्वि भमरु भुवगउ<sup>3</sup> ।  
 सरपालिहि, गोवालिहि<sup>4</sup>, चु बइ मुहुमहु चगउ ॥5॥

( 6 )

जहि गामइ धरा धरा णुणयाइ,  
 जहि सेर हीउ<sup>5</sup> धिर थोरगत,  
 जहि गोबलाइ सिम्र बहलपिडु,  
 केलासकाइ<sup>6</sup> जहि वमहणाह<sup>7</sup>,  
 भट्टारह जहि रामिउ कणाह<sup>8</sup>,  
 ए पेक्खच्छउ<sup>9</sup> विग्गहि पवरु,  
 जहि च्चदकनि थल सारणिहि,  
 जहि सवस्थ वि गु छविय दक्ख,  
 महवइलच्छिपरिपुणयाइ ।  
 मसिलिपिय ए पीऊसपत्त ।  
 ए देसकित्ति पसरिय पयडु  
 ए देहज<sup>10</sup> सिसिअ<sup>11</sup> हरिवराह ।  
 खलिल्लि दीसहि पोसिय जगाह<sup>12</sup> ।  
 मच्चिल्लिउ गिरिरायह सिविर ।  
 मिम्हिवि सावणु सिंसि तीरणिहि ।  
 मइव सीअल एममुक्करक्ख ।

घत्ता- तहु<sup>13</sup> देसहु सुहवासहु, मग्गिणायर मणिसचउ<sup>14</sup> ।

ज पेच्छिवि, मणिरावच्छिवि<sup>15</sup>, सक्कु वि करइ पवचउ ॥6॥

( 7 )

जहि गयग सरिसु सिय फलिह सालु<sup>17</sup>, अइतु गतमण्णाहि<sup>17</sup> जो विसालु ।  
 जसु उप्पणि मुणइ<sup>18</sup> अण्ण पहु, गयणत्थि<sup>19</sup> तित्थु अण्णलय रहु<sup>20</sup> ।

1 ख मुद्ध०,

2 ख भणइ,

3 = निज पति शब्द इव शब्द करोति शुक , 4 ख सयदलु,

5 ख भुवगउ,

6 ख ० हि,

7 महिषीत्यर्थ

8 ख ० काय

9 ख नाह,

10. ख देसज,

11 ख सेसिय,

12 पक्ख०,

13. ख तहो,

14 = रत्नसचयपुर इत्यर्थ ,

15 ख ० वडिवि,

16 क, ससालु,

17 ख ग तमगाहि,

18 ख मसुणइ,

19 = गगनस्थित शाले

20 रथ,

जहि चंदसान पगणि पसुत्त<sup>1</sup>,  
 तम्मुहि पडिचदहु करइ मति,  
 जइ एववाला सयणि परम्मुहं,  
 जासु परम्मुह सोतहे भग्गइ,  
 पेच्छिवि चदपडिम रयणमणि,  
 जहि तु गगेह सिर सठियाइ<sup>4</sup>,  
 सुहसेवइ एहवाहिणि<sup>6</sup> हि बाउ,  
 जहि इंदनीलमणि<sup>7</sup> सयण हरे  
 भावि वि नेहिणि भग्गइ बइदहु,

घत्ता—तहि पुरवरि<sup>8</sup>, मणिमय हरि, दुत्थिउ चणइ समाणउ ।

अह सुक्खिउ, जइ पिक्खिउ, सो सक्कह<sup>9</sup> सम ठाणउ । 1711

( 8 )

जहि कालायरु बहु भूम भर,  
 अणवरउ वेढमणि सभरेवि,  
 जहि तरुणिहि अक्ख कपोलविदि,  
 लच्छणहु लच्छिपोयडइ<sup>10</sup> भडत्ति,  
 जहि दाण मणोरुह<sup>13</sup> सज्जणाह,  
 जहि जुण्हसरिस भइसण्हचीर<sup>14</sup>  
 जहि दड जुत्तु परिछत्तु होइ,  
 घासइ चदणु पुच्छयह बंधु<sup>16</sup>,

घत्ता—घटत्तणु, तरलत्तणु, तियथण मयणह दीसइ ।

गुणबतहु, तहि संतहु, दोसु ए भगिपईसइ । 1811

सो लक्खिय राहुहि हरिणमेत्त ।  
 पिच्छिवि सबलं विय गहरण हंति<sup>2</sup> ।  
 तु वि मणिमिति दइय ठिय सम्मुहं ।  
 मीलिय लयणिहि बुढा जग्गइ ।  
 पायाहि<sup>3</sup> रिण्हसइ अहिंसव सइरणि ।  
 मिट्ठणइ<sup>5</sup> रइरस सम कठियाइ<sup>5</sup> ।  
 फुल्लारविद कपत्तु भाउ ।  
 एणीते सुअ सामल अणिय करे ।  
 कत्ता लिग्गिअ पडिबहु ए दिट्ठु ।

उच्छलइ गयणि ए तम सिबिर ।  
 अल्लिउ रवि उप्परि उच्छरेवि ।  
 अदउ पडिबिबउ ते अरु दि ।  
 मणिण गउण सारण<sup>11</sup> किति ।  
 ए पटुव्वहि विणु अत्थिय<sup>13</sup> जणाहं ।  
 कोमल सीहल सुहइअ सरीर<sup>15</sup> ।  
 अग्नि हउ विणु भेसे एत्थि कोइ ।  
 अणहु पटु कामु वि दुहपबधु ।

- 1 क पसित
- 3 क पायाहि
- 5 ख कट्टियाइ, पवन इत्यर्थ
- 7 ख ०मरो
- 8 ख पुरवरे
- 10 ख लच्छलहुलडि
- 12 ख मणोपह
- 14 ख ०वीर
- 16 ख बहु

- 2 = राहु न भाति
- 4 ख ०याइ
- 6 = आकाशगंगा इत्यर्थः
- 9 ख ग सक्कह
- 11 = नारायण इत्यर्थ
13. ख. अक्खियय क
15. वेद इत्यर्थ

तहि कयखण्यहु रामेण राउ,  
जसु भमइ किति मुक्खण तरम्मि,  
जसु तेयजलणि एदी बियगु<sup>३</sup>,  
घाइबु<sup>५</sup> बि दिणि दिणि देइ भप,  
सक्कु बि गिण्पायउ पदमु तासु,  
रूबाह कारिउ कामवीर,  
तहु रायणुपलि गिबसेइ लच्छि,  
ते कारणि जहि जहि देइ दिट्ठि,  
जसु सगरि सम्महु<sup>८</sup> घणुहु होइ,  
मुहि गिबसइ सरसइ जासु निच्छु.

धत्ता—इह तिहुयणि, बहुगुणजणि, तसु पडिच्छहु<sup>११</sup> ए दीसइ ।

अह होसइ, गुणसेसइ, जसु बाईस रिसी सइ ॥१॥

( ९ )

ज पिच्छिबि सुरवइ हुउ विराउ<sup>१</sup> ।  
बेरिव<sup>३</sup> अइ सकडि नियबरम्मि ।  
जलनिहि सलिलट्टिउ धिरि भुवणु<sup>४</sup> ।  
तत्ते अतत्तु जय जलिय कंय ।  
अवभास कसणि पडिमह पयासु ।  
किउ तासु अग मलिणहु सरीर ।  
जा पुब्बवसिय हरि पिहलवच्छि ।  
तहि तहि<sup>६</sup> ऊहट्टय दुत्थ सिट्ठि ।  
एहु पुणु विचिंति बडि बक्खु कोइ ।  
पइ मित्तु लहइ कहि तहि<sup>१०</sup> असच्छु ।

( १० )

जसु गुण गायहि सुक्खामिणीउ,  
जसु रिउ तिय सिरु गिबकेसुजाउ  
गहणिवि रिऊण<sup>१२</sup> जसु गिब बिलासु,  
सुढ बरूप हिरणि पिहलु दीहु,  
इम भु जिय सिरिफलु निखसेसु,  
जसु पवर गुणाव भउ भडि<sup>१४</sup>,  
तसु कणयमाल रामेण कत,

रोमचतुह कचुअ तरीउ ।  
सम्बउ इहु हुउ सगर पहाउ ।  
सपत्तउ सत्तमलणि गिबासु ।  
मुत्ता हरणउ कय हरि हरीहु ।  
काणणि<sup>१३</sup> बरा रज्जहु कुवि बिसेसु ।  
बुम्मा इय ए<sup>१५</sup> करहु करडि ।  
लावणा पुष्पा गुणसीलवत ।

१ क बि०

३. क बि

५. =सूर्य

७ ख उह

९ ख पय

११ ख ०बंडु

१३ ख कणणि

१५ ख. न.

२ = वृद्धा कीर्ति

४ = धररोन्द्र बिप्पुर्वा

६. क तहि तहि

८. ख समुहु

१०. ख तहि

१२ = रिपून्, गृहीत्वा

१४. क ख भडि

सोहग्यभारपरिपूरि भग,  
जहि वयख रायख जियदुम्मणोह,  
मित्तत्तणु जायउ समदुहाण,  
रिययक<sup>१</sup> गवभरकोवणाहें,  
जुज्झतहें अतरि गडइ वसु,

॥ अत्ता ॥ मुरकामिणि, एरभामिणि, तहि सरिसी किहू होही<sup>२</sup> ।

ज<sup>३</sup> पिक्खवि, बउ लक्खवि, लच्छिवि रियमणि मोहि ॥१०॥

( ११ )

अह अवरोप्प<sup>४</sup> पिम्मभरट्टहें,  
समारिय सुत्तरमि मज्जंतहें,  
अह एकक समइ<sup>५</sup> बहुलक्खणाल,  
सालसु सलोणु हुउ पडुदेहु,  
सिइ मुहु पडुव वण हू विहाइ,  
ए अमिय कलम लोळुप्पसास,  
बलिणोयरेण किउ तिबलि भगु,  
तहि सपणणइ मणि दोह्लाइइ,<sup>७</sup>  
रावगासिहि पुण्णिहि अणुउ पुत्तु,  
ए पम्म अत्थ कामह रिहाणु,  
ए उगगउ कुलणहि सहस्रभाणु,  
तोसैं उच्छत्तिलउ पुत्तवि इहु,  
सिरि पडमनाह रामेण उत्तु,  
ता रिम्मल कलसिक्खणि पउत्तु,  
कालें सो तरुणत्तणहु पत्तु,

पविदियसुह जोइ पयट्टहें ।  
जाइ कालु बहु केलि करतहें ।  
गम्भे<sup>६</sup> सभाविय कणयमाल ।  
अइ अवलु बहुलु ए सरइ मेउ ।  
भमरकिउ सुक्खरि कु मुखाइ ।  
ए दत्तकु प<sup>८</sup> गबलिहि पयास ।  
कालें जिप्पइ बुउ तमि पयवु ।  
जय साहारणि कय सोह्लाइ ।  
बहु लक्खण बजण फुरियमत्तु ।  
ए पवरवेरि काणण किसानु ।  
ए पिसुणवस कट्टण किवाणु ।  
चटुगमि ए खुम्भिउ समुददु ।  
सो सिसु ससि जिम बडइ तुरतु ।  
स सबलु वि जाणिउ ते<sup>९</sup> रिस्तु ।  
उम्भूलिउ ए तूलियहि<sup>१०</sup> वित्तु ।

१ ख रियत्तव,

३ क आ.,

५ ख गम्भे,

७ ख. साइ

९ ख त,

२ ख कहू होही,

४ ख. समए.,

६ = अमि,

८ ख विजाणिहू

१० क तूलयह = निज रूपगर्वकथकानी ।

॥ घत्ता ॥ तरुणत्तणि सुहृत्तणि, सोमय, दोसहि<sup>1</sup> चत्तउ ।  
जरयतहि<sup>2</sup>, सुमहनह, तरुणु वि गुणि<sup>3</sup> सपत्तउ ॥1॥

( 12 )

एक्कहि<sup>4</sup> दिणि<sup>5</sup> शरवइ कणायपहु,  
दिट्ठइ पत्तलि<sup>7</sup> गोहण सरत,  
ता इक्कु नुव्वइ पसु किमियगत्तु,  
णिक्कलि वि ण सक्कइ जलु विट्ठरि,  
बइ सिवि णहु सक्कइ हिट्ठ थाणु,  
पाण,ण जति बल्लह करक,  
शरवइ अवलोयवि<sup>10</sup> त विसणु,  
हाहा समारिहि इह अवसु,  
सुहु सल्लिणु ण पावइ विसयतत्तु,  
तह उवरि गेयका एहि खड्डु,

ठिउच्चद साल<sup>6</sup> सिरि तुच्छ सह ।  
पउ पीउ पीउ तडिऊ<sup>8</sup> सरत ।  
दुद्दम कदम उत्तारि खुत्तु ।  
उप्परि काया ठिय वण्ह पूरि ।  
सघडिउ पुव्वकम्मह बिहाणु ।  
मुक्कलिय वि ण दुक्कालरक ।  
विततउ रिग्गवे यहु पवण्णु ।  
ते घण्ण घण्ण जे सिबपयसु ।  
रिण्यविग्गकम्मपक्केण खुत्तु ।  
इय जतु घाउ खुटेण विट्ठु ।

॥ घत्ता ॥ अम्हारिमु, विसयालमु, तरुणि वडि सरस सत्तउ ।  
रिण्यकम्मे, मिद्धम्मे, कट्टिवि तम विलिखित्तउ<sup>11</sup> ॥12॥

( 13 )

समारि सुक्खु णहु कह वि अस्थि,  
खणि होइ रज्जु खणि सिरकमुज्जु,  
खणि काणायगत्तु खणि कोटपत्तु,  
खणि हरिपयामु खणि पुड विदामु  
खणि कोटिसूख खणि इक्क<sup>14</sup> भीरु  
खणि मयलसुखु खणि शरयदुवसु,

सुरणर पसु शरयह भमियपयि ।  
खणि सग्गा<sup>12</sup> नीडु खलि असुइ कीडु ।  
खणि सयलणाहु खणि जुयल बाहु<sup>13</sup> ।  
खणि गव्वमेरु खणि दीराकेरु ।  
खणि कप्पकखु खणि भमिय भिक्खु ।  
खणि जसनिहाणु खणि पाउवाणु ।

- 1 ख दोसहि,
- 2 ख जरयतह,
- 3 ख गुण,
- 4 ख एक्कहि,
- 5 ख दिण,
- 6 = गृहे,
- 7 = तुच्छ जलसरोवर
- 8 क तडिउ, = सरोवरि
- 9 ख मुक्कलिय
- 10 क अवलोद्वि
- 11 क लिखित्तउ
- 12 ग सग्ग
- 13 = हाथसकुचित
- 14 ख पक्क ।



खणि रयणिदाखि खणि सिव्ह भासि,  
खणि सुत्तुत्तुलिखणि छु डू सूलि  
खणि मरण कुक्कु खणिपाण मुक्कु,

खणि घुसिण रगु खणि किमिउ लगु ।  
खणि पियरभतु खणि विरहवतु ।  
• • • • •

॥ घत्ता ॥ खणि मारहो जय सारहो, रुवें हसिखि चमक्कइ ।

खणि रक्कु, बहुसक्कु, सरिसउ होइ ए सक्कइ ॥ 13 ॥

( 14 )

ससार भावि समतु जतु,  
कडूलह जह भाइ अग्निताउ<sup>1</sup>,  
अमुणतउ वोहि सहाव सुक्खु,  
ज<sup>2</sup> वज्जणाउ त अहिल सेइ,  
जह<sup>4</sup> कोइ<sup>5</sup> बालु मट्टियहि<sup>6</sup> गिड्डु,  
जह वज्ज<sup>9</sup> जतउ वज्जणाणि<sup>10</sup>,  
तह दिणि दिणि आमणु मरणु,  
खग मित्तुह अज्जइ सुह भति,  
जह नक्खणि<sup>11</sup> कट्ठह बलिय काइ,  
जहि तहि सुहु पयजतीहि<sup>12</sup> होइ,  
एरमिषु लगइ<sup>14</sup> कामिणि करकि,  
सो एत्थि जतु जो मह ए<sup>15</sup> ताउ,  
सो एत्थि<sup>18</sup> जो ए<sup>19</sup> हुउ सुउ कलत्तु,  
तहि इह किज्जउ किरकेणु रोहु,

दुक्खुवि मिणइ सुह ठाणि थतु ।  
खणु सुहु पुणु दारणु दुक्ख ठाउ ।  
णिण मोहे<sup>2</sup> माणुसु चम्मक्खु ।  
ज<sup>3</sup> कज्जु ताहि वूरेंत सेइ ।  
सक्कर<sup>7</sup> रसु मित्तइ<sup>8</sup> अइसणिड्डु ।  
पइ पइ आसणिणय आउहाणि ।  
लोयहु सपज्जइ दुट्ठयरणु ।  
अग्गइ तो गइ दुट्ठ पति ।  
मिगारु करिवि सइ<sup>12</sup> लच्छिगाइ ।<sup>13</sup>  
तह मयलह विणु भम्मेण जोइ ।  
अप्पउ णिब्बोलइ पावपकि ।  
सो विहु एत्थि<sup>16</sup> बि राजो<sup>17</sup> ए भाउ  
सो एत्थि जो ए हुउ सत्तु मित्तु ।  
भवि भवि उप्पज्जइ<sup>18</sup> अणुदेहु ।

1 क अग्नि०

3 क जें,

5 ख. कोवि

7 ख सक्कर,

9 ख ग विज्जहु,

11 ख भक्खणि,

13 ख ०गाइ

15 ख लग्नउ,

17 ख तहि,

2 ख मोह

4 ख जह,

6 ख. बालुमट्टियहि

8 मित्तइ,

10 विज्ज

12 ख. सइ,

14 ख हि,

16. क ०न,

18 ख उप्पज्जइ ।

॥ घत्ता ॥ जिणवयणाइ, भवदमणाइ, मेलिहवि भवरु ए मल्लउ ।

तहि<sup>1</sup> उत्तउ, दयवतउ, किज्जइ चरिउ बहिल्लउ ॥14॥

( 15 )

इय चितिवि णिठारियउ कञ्जु  
इय चितिवि कुक्किउ पउमणाहु,  
परिपुण्णराय लक्खण सणाहु,  
हक्कारेवि<sup>2</sup>स सामेन मति,  
उब्बेसि वि एदणु रायचीडि,  
ढालिय जलऊ रिय हेमकु भ,  
सइदकु लेवि पडिहारु हुउ,  
आउच्चिउ एदणु बाहु एयणु,<sup>+1</sup>  
ता भएइ मति जोडे विहएथ,  
किं कारणि बहु मिल्हेवि रज्जु,  
सो एत्थि जीउ देहदु<sup>3</sup> परक्खु,<sup>4</sup>  
जीवहो देहहो एहु कोइ भेउ,  
इय णिमुण्णिवि एरवइ मुण्णिय तब्बु  
इह<sup>5</sup> देहमज्झि बहु णाण सत्ति,  
सासय बेयणु अण्णा मुण्णिज्ज,  
जइ जीवहो देहहु इक्कु भाउ,

लइ देमि सुपुत्तहु एहु रज्जु ।  
सुखरण करसारिथ ब हु ।  
गभोरु एण्ड<sup>2</sup> बाहिण्हिहि एणहु ।  
जे रज्ज महाभरि णिब्बहति ।  
बहुसेय रयण किरणावलोढि ।  
उन्निय<sup>4</sup> मणि तोरण केलि खभ ।  
किउ रायलोउ सयलु वि विणीउ ।  
सइ सच्चिन्तउ किर जाम गहणु ।  
सुणि एकु वयणु सामिथ कयस्थ ।  
पारभितु एणहे गहिल कञ्जु ।  
जो मुक्के देहि लहइ मुवखु ।  
इम्विज पइमिरि मच्चिद देउ ।  
पभणइ<sup>7</sup> होणि सुणहि मति सव्वु ।  
विककप्प जालि कहु चडइ जुत्ति ।  
सुहदुह बेयणु मा मति किज्ज ।  
तो कि एहु मडयहु पीडताउ ॥

॥ घत्ता ॥ तव चरणे, बयधरणे, सो ससारहु मुच्चइ ।

घर सरणे, दुह करणे सो भव भमणइ सचइ ॥15॥

( 16 )

इय करेवि<sup>10</sup> णिरुत्तरु पुहवि बाहु<sup>9</sup>,  
वरिण जतु जतु सो पत्तु तित्थु,

सच्चलितु वणि चरणिक्कमाहु ।  
सिरिहव णामेण मुणिदु जित्थु ।

1 ख. तहि,

3 ख. हक्कारिवि,

5 ख. देह हो,

7 ख. पभणइ,

9. विबाहु,

+1 = अश्रु प्रवाह

2. ख. एण्ड,

4 ख. उन्निय,

6. ख. रुक्खु,

8 ख. इय,

10 ग करिवि ।

तहु चरणमूलि गिब्वडिय सिक्ख'  
 दूनहि राखइ सिरिषोमणाह,  
 कपवय दिणाइ<sup>3</sup> ठिउ सोयजुत्त,  
 जो गायबतु सो पढ विमिस्त,  
 इम मंगगि पालइ सत्ति धम्म,  
 अक्खगहिअ चारि विराय विज्ज<sup>4</sup>,  
 सत्तिहि<sup>5</sup> तिहि<sup>7</sup> जुत्तउ उअइवत्त,  
 अरि छव्वग्गु बि न पढमु जिगिउ,  
 सत्त गुरज्जु इम सो करेइ,

तिविहेण लइय जिणणाह दिक्ख ।  
 शिय जणण विरुहि<sup>1</sup> शिख दुम्मणाहु ।<sup>2</sup>  
 मत्तिहि पडिबोहिबि किउ सुचित्त ।  
 जो अण्णायउ सो सुउ बि सत्त ।  
 बारइ जणबउ जतउ कुकम्म ।  
 छग्गुणविहिणा<sup>5</sup> किय सयल कज्ज ।  
 पच्चगु<sup>8</sup> करइ सो गूढ मत्तु ।  
 रा बि कोइ सत्तु तं कण्ण सुणिउ<sup>9</sup> ।  
 सक्खुबि राहु सरिउहु अणुहरेइ ।

॥ घत्ता ॥ तहो रायहो, महितायहो, सरिसउ अवरु जु<sup>11</sup> भासइ<sup>12</sup> ।

सो माणउ , गुण जाणउ , शियमइ मोहे गासइ ॥१६॥

इय सिरिचदण्हवरिण्-महाकय जसकित्ति विरइए ।

मह।अब्भ सिद्धपाल सबगभूसणो, सिरिपउमणाहराय पट्ट बधो ।

एगाम पडमो सधि समत्तो ॥छ॥ अथ 162

1. ख. विरहि

2. ०णाहु

3. ख. दिणाइ,

4. = आन्वीक्षिकी भयीवार्ता दण्ढनीति इत्यर्थ

5. = सधि, विग्रह, यान, आसन, द्वेष, सश्रयश्चेति ।

6. ख. सचित्त, स षड्विधा-परिवार संरक्षण, विवेक पूर्वक कार्य सञ्चालन, स्वरक्षण, प्रजारक्षण, दुष्टनिग्रह शिष्टपुरस्कारश्चेति,

7. प्रभुशक्ति, उत्साह शक्ति, यत्नशक्तिश्चेति

8. आन्वीक्षिकी, त्रयी, वार्ता दण्ढनीतिश्च

9. ख. सुणिउ

10. =स्वामी, अमात्य, जनपद, दुर्ग, कोष, दण्ड, मित्रश्च,

11. अव-रुज्जु

12. ख. भासइ

## बीउ संधि

( १ )

जिण वयणकमलपरिमल-सकमणा पुक्कलद्धसोहणगा ।  
गणहरणमगहिया,<sup>१</sup> सरस्सई हवउ सुपसण्णा ॥४॥  
जिण भत्तउ, गुणरत्तउ, सयलमुवणा बितामणि ।  
जा अक्खइ, सुहु दक्खइ, ता गिम्मलि एककहि<sup>२</sup> दिणो ॥१॥

ता कण्णपट्ट पिञ्जरमरीह,  
अङ्गिणवफलफु लयदक्खवतु,  
सामिय तसु को आए सुदेहि,  
ता राए<sup>३</sup> वुत्तउ कय पसत्ति,  
आएसु लहेवि पडिहारएण,  
पणविवि फलपल्लवफुल्लहत्थु  
तुह मुरहियवणा णामेण वर्णे,  
ए णाणरासि पुरिसत्तु पत्तु,  
ए चारु चरणु पक्कवक्खु जाउ,  
ए दिक्ख किउ इहु सीमभारु,  
लज्जमि हउ जहु तहो गुण कहतु,

पणविवि पभणइ<sup>३</sup> पडिहारु धीरु  
वणवालु दारि आविउ तुरतु ।  
आवउ अहवा बलि जाउ गेहि ।  
मालाइ खेउपइ सारि भत्ति ।  
आणिउ वणमालिउ तक्कणेण ।  
जोडे वि हत्थ वोटलइ कयत्थु ।  
णामे सिरिहव मुणि पत्तु वग्गे ।  
ए दसणभरु जायउ सगत्तु ।  
ए सजमि धरियउ तबसि भाउ ।  
ए पायहु ठिउ सइ समयसारु ।  
कालि विणु वणिजायउ वसतु ।

पत्ता—इय वयणइ, सुहजण णइ, वणवालहो णिसुणेप्पिणु ।  
बट्टरयणइ, आहरणइ, उत्तारेवि तहो देप्पिणु ॥१॥

( २ )

मिल्लिवि सिहासणु हरिसघामु,  
आणदभेरि दाविय पुरम्मि,

पय सत्तहि तट्ठिसि किउ पणामु ।  
हरिसावे सिय णायरजणम्मि ।

१ = स्वीकृत

३ ख पभणइ

२ घ, इक्कहि

४ ख राय

सहु सयले लायर परियरेण,  
 बहुअट्टभेयपूयाकरेण,  
 अइतोमि सपत्तउ वणति,  
 विणु महपारो<sup>1</sup> केसर पटुल्लु,  
 क किल्लिवि फुल्लिउ एो ववाम्,  
 एा वमवेरु विलएण गहिउ,  
 सहयान रक्खु भजरिउ भक्ति,  
 रोमचकच्चुइउ सम्बवेहु,

सवलित राउ धम्मायरेण ।  
 अणुवि सयल्ले अ तेउरैण ।  
 जहि अलिउल येहि धारवैति ।  
 एा मुणि शांमिउसाधयंहे सुल्लु ।  
 मिल्लहि पक्खांमिणि पायेफासु ।  
 विणु तरुणि दिट्ठि अ कुसुमसहिउ ।  
 एा मुणि दसरिण तीसिउ सच्चित्ति ।  
 मुणि दसरिण कसु वा गत्थि एोहु ।

धत्ता—इय तरुवर, कृमृमुक्कर, जो शियतु बलि वृद्ध ।

ता शिम्ममि, सियसिलत्तलि, तद्धत्तलि मुल्लिबह दिट्ठउ ॥२॥

(3)

पिट्ठिवि तति पयाहिणु करेवि,  
 अ ये विपाय मयुवरण लम्बु,  
 पइ<sup>३</sup> दिट्ठइ मह सकियरथु जम्मु,  
 पइ<sup>३</sup> दिट्ठइ लद्धउ मोक्खमग्गु,  
 पइ<sup>३</sup> दिट्ठे तुद्धउ कम्मपासु,  
 तुह दसणु भवमरुकप्पकक्खु,  
 पइ<sup>३</sup> पेच्छहि जे आनण्णमव्व,  
 ज ज दिज्जइ उवमाणु तुज्जु,  
 को सहस किरणु को अमियमाणु,  
 को चित्तामणि को सत्तिलरामि,  
 कि बहुणा तुहु सुपसणु<sup>७</sup> जाह,

पच्चगपणामे पुणु एवैवि ।  
 सेच्चइ<sup>३</sup> इहु कमु<sup>४</sup> तारिसह<sup>५</sup> जोग्गु ।  
 पइ<sup>३</sup> दिट्ठइ शिच्चलु जिणह धम्मु ।  
 पइ<sup>३</sup> दिट्ठइ गेह गणउ सग्गु ।  
 पइ<sup>३</sup> दिट्ठे मह सत्तारणासु ।  
 तुहु दंसणु जीवहे देइ सुनल्लु ।  
 पइ पणवहि जे शिरु सुद्धव्व ।  
 त त शियमोहहु तरणउ गुज्जु ।  
 को कप्पर रक्खु का कामधेणु ।  
 को मवर कहि तुहु<sup>६</sup> जयपयासि ।  
 शिम्मम्लु रयणत्तउ हत्थिताह ॥

धत्ता—ता मुल्लिबह, तबत्तिरिहरु, आसियवाउ पबपइ ।

सियकिरणह, शियदसरणह, जुण्हाजलि सह लिपइ ॥३॥

1 पारो

3. य सच्चउ

5 ख तारिसहे,

7 ख पसणु

2 = ववलश्रीवृक्ष

4 क कम्मु

6 ख कह तुह

( 4 )

जि सासइ सुहि सभइ सिद्धि,  
 ता एरवइ पभएइ सुढभाउ,  
 भवियएभए कइबर तोसएणु,  
 इह पठमि किज्जइ जीवरक्ख,  
 जा एरइ दारि रुघएह भित्ति,  
 जा सग्य सिहरि सो बाएणपत्ति,  
 जा सयल सुक्ख विहवह<sup>1</sup> रिहाणु,  
 जा सयलविजय दुम मेहुकालु<sup>2</sup>,  
 एणु वि वोत्तिज्जइ सम्भवणु,  
 ज<sup>3</sup> सयलह साहुत्तएह हेउ,  
 ज सयललत्थि बधएह दोर<sup>4</sup>,  
 ज सयलएणए छप्पत्ति बीउ,  
 तइ यउ बज्जिज्जइ चोरकम्मु,  
 ज गुणसेलह सिरिबज्जदडु,  
 ज पालबल्लि उप्पत्तिकडु,  
 ज एरयदारफाडण कुहाडु,

सत्तुइ सपज्जउ धम्मविद्धि ।  
 महु धम्म कहिणि किज्जउ पसाउ ।  
 सायारुक्खमु भासइ मुण्डि ।  
 बहु सुहकारणि जाणिय परिक्ख ।  
 जा तिरिय जोणि सवरणि मित्ति ।  
 जा मोक्ख महापहि सूरकत्ति ।  
 जा सुहमगलु कमलाणमाणु ।  
 जा असुहतिमिररवि किरणजालु ।  
 ज पावरेणु<sup>5</sup> खयकालपवणु<sup>6</sup> ।  
 ज सयल पटुत्तए विजयकेउ ।  
 ज जम्मगहणसघण किसोह ।  
 ज जहु तिमिहर ताडणपईउ ।  
 जे वित्तिएण वि पलाइ धम्मु ।  
 ज सयल दोसबिसहरकरडु ।  
 ज लोहजलहि पण्णामहि चवु ।  
 ज जससरीरि अणिवित्ति साडु ॥

धत्ता—वउ तुरियउ<sup>7</sup> सुहचरियउ<sup>8</sup>, ज परदार विवज्जणु ।

त गुत्तउ गुणवत्तउ, कय ससार विवज्जणु ॥4॥

( 5 )

परदारगमणु एरयहो पयाणु,  
 ज बहु कलकउप्पत्तिठाणु  
 ज सयलसील करकहह किसानु,  
 ज पिमुणालोय भक्खुइ हासु,

ज सयल कुकम्मह कुलणिहाणु ।  
 ज वधु सुध राउरि तक्खथाणु ।  
 ज रिम्मसगुणदेह मसाणु ।  
 ज बुद्धकिन्ति खयोय सासु ।

1. ख विहविह,

2. ध पाउरेणु,

3. ख. जे,

7 ख तुरिउ,

2 ख मेह,

4 क खयकालु,

6 ख होह,

8 ख चरिउ,

(15)

ज सयल सुक्ख भिक्खह पुग्गिक्खु,  
पच्चम वउ ज परिगहपमाणु,  
सतोसें विणु तण्हा समुद्द,  
लोहे सक्कु बि रक्कु समाणु,  
अइ लुद्धु पासि ए थाइ गिह्,

ज पावकूवतठि मदच्चक्खु ।  
जं तण्ह तरगिरणि पल्लयमाणु ।  
तिहु अणु बोत्तिबि<sup>1</sup> चत्तइ रउद्द ।  
विणु बोहे रकु बि चणायमाणु ।  
जह पुत्त मुअण ह बेस खुद्द ।

अस्ता—इय पच्च बि, मणुसक्खेवि, जो वयाइ परिपालइ ।

सो सावउ, जिए गुण भावउ, मुक्खलत्थि मणु चालइ ॥5॥

(6)

अणु बि पालह तिणिए गुणव्वय,  
तहि दिसि बिदिसिहि ममणपमाणउ<sup>2</sup>,  
भोयपभोयह सखावीपउ,  
तिक्खावय चउरो अणुउ जहि,  
अट्टमि चउदसि पोसहु किज्जइ,  
अ तकालि सल्लेहण सरणउ,  
इय बारह वय जयणा करेज्ज,  
सम्मत्तु बिसुद्धउ मणे चरिज्ज,  
जो पबवीस सम्मत्तदोस,  
जे अट्ट मूलगुण जिएगुण पमुत्त,  
किरिया ते वण्णउ सावयाह<sup>3</sup>.

चउ सिक्खावयणियम करिब्बय ।  
अणुअ चम्मवेस परिहाणउ<sup>4</sup> ।  
एक्ख दडपरिहरणउ तइयउ ।  
सामाइउति स्काल करिज्जहि ।  
तिविहो<sup>5</sup> पत्तहो दाणु दइज्जहि ।  
किज्जउ सण्णासि<sup>6</sup> सुहमरणउ ।  
पुउ रयणिहि भोयणु परिचयज्ज ।  
.....  
ते सबि पालहि<sup>7</sup> जालेवि असेस ।  
ते अवि पालह तुहु गिह गिहत्त ।  
सयलु बि करि गिज्ज मुणिज्ज ताह ।

अस्ता—इय गिमुणिवि, मणि मण्णेवि, एरवइ अणइ<sup>10</sup> सुहावे ॥6॥

तुह वयणिहि, सुह सबणिहि, गामिय मुक्कउ पावे ।

1. ख. घ. बोलिबि,
3. ख. परिहरणउ,
5. ख. तिबिहद्द,
7. क. सन्नासि,
9. ख. सावयाहं,

2. ख. पमाणउ,
4. घ. अनुज्जीत,
6. ग. मरणउ,
8. घ. बज्जहि,
10. ख. अणइ,

( 7 )

महु पुक्खभवन्तर जम्मकहा  
ता गिमुण्णिवि मुण्णि पच्चक्खु एणु,  
इहु<sup>१</sup> पुक्खरद्धु एणमेण दीउ,  
तहि सीऊयानइऽपर विदेहि,  
तहि उत्तरतहि एणमे सुअधि,  
जहि एणवेत्ति बड्ढियतलाह,  
अण्णायामडलि सचरति,  
थलकमलिणि सत्थरि बोसमत,  
जइ सव्वदिवसु पहि णिण्वहति,  
जहि<sup>२</sup> उच्छुजतरस सारणीहि,

आयण्णवि इच्छावित्त जहा ।  
अम्मावहि अक्खइ भवविहाणु ।  
एण सयलहु दीवहु एहु जीउ ।  
बहु रमणिज्जमडियविदेहि ।  
देसुत्थि पक्ककमलेहि सुअधि ।  
फलनामिय फोफलि एउ लाहु ।  
पोमिणि दत्ति दरवारसु पियति ।  
अण्णजरिक्किणि किउ पिक्खणुउवत ।  
अण्णालयपहिय तो कोसु जनि ।  
महु एणइउ हसिज्जहि तीरणीहि ॥

धत्ता—पहि आसहि, कणरासिहि, जो सव्वच्छवि भासइ ।

अणु कालहु, दुक्कालहु, एण बहु दुग्ग पायासइ ॥७॥

( 8 )

नहि पुक्खरु एणमि सिरिसिरिपुरु,  
जहि मणि वेहकिरण उज्जालइ,  
बहुकामिणि मुहुचदइ पयासइ,  
अरि अरि सिहरि सिहरि रमतउ,  
जहि लाइय जलि पडिबिबि याइ,  
तह मूढा बाणरि दिति भव,  
जहि णील सालरुइ हरिय भनु,  
पुणु पेच्छवि तियमुह्यद लक्खु,

अ तिय लुक्क लच्छिकीलीयरु ।  
कमल वियासुण वर रविपालइ ।  
अदकत सलिलिहि समिभासइ ।  
दीसइ जहि रवि कलसायतउ ।  
पिक्खवि तीरट्टिय<sup>५</sup> उक्खणाइ ।  
जहँ एणयर विहसि वि करुणकप ।  
अदहु भपावइ मउ तुरतु ।  
अतु वि ए लक्खितु हुअ विलक्खु ।

धत्ता—तहि पुखरि, बहु सुहवरि, एहे वि रइजइ दीवहु ।

अहदिट्ठउ जणसिद्धउ, दाणच्छेउ करि<sup>६</sup> कीवहु ॥८॥

1 ख. इय,

3 ख मुह,

5 ख तीरठियउ,

2 ख जहि,

4. —सूर्यकलशमान,

6 = बालहस्तिन.,



## ( 9 )

तहि पुरवरि सिरिसेणु राउ,	ए बम्मअत्थकामहु सहाउ ।
ए खत्त घम्मुयिउपुरिस भाउ,	ए देह जुत्तु जायउ पयाउ ।
ए मुत्ति भावि ठिउ सुद्धभाउ, <sup>१</sup>	पच्चक्खु दिट्ठु ए दाणुराउ <sup>१</sup> ।
ए सयल बिज्ज सच्चउ, सकाउ,	ए मयणतू अहकार घाउ ।
ए जलहि गहिरगव्वहु बिसाउ,	ए इहु गिरिबीत्तणु अपाउ ।
ए ससिसोहग्गसरीर लाउ,	ए हरिसूस्तए पलयभाउ ।
ए सुरगुरू बिज्जावलि विराउ <sup>२</sup> ,	ए सक्ककित्ति भूर्याहि <sup>३</sup> सुवाउ ।
ए कु दुज्जलगुणरासि भाउ,	ए एग्गमलुकल <sup>४</sup> सोहग्ग ठाउ ।
ए अरियणतिमिरहु सहसपाउ <sup>५</sup>	ए कप्पसक्खु भिक्खुबह चाउ <sup>६</sup> ।
ए कामिणि मण पीउस साउ,	ए साह एहे रणह कसाउ <sup>७</sup> ।

धत्ता—गरणहहु, गुणगाहहु, सयलपुहवि पालतहु ।

अइवतहु ए एवतहु को सरिच्छु इ दु बिठाहु ॥१॥

## ( 10 )

जसु सियकित्ति अमियरस सायरि,	तिहुवणु मुत्तिबत्त <sup>८</sup> रइ अपायरि ।
जसु असिवर छेयेण पसिद्धा,	भूमीहर वसाणहु लद्धा ।
रक्खिउ तहु <sup>९</sup> बिहिणा इक्क वसु,	ते इक्क छत्तु <sup>१०</sup> तहु किउ पससु ।
सिरिकता एामे तासु कत,	वट्ठरुबलच्छि सोहग्गवत्त ।
जियमुहइ दहु लच्छण ठाराउ,	अ पुण्णिम चदहु उवमाणउ ।
ताव तरलु एग्गमलु जुइ एत्तह,	ए अलि उरि विउ केयइ पत्तह ।
जिय <sup>११</sup> सक्क जुयलु <sup>१२</sup> सोहाविलासु,	ए मयण बिहग्गम घरणपासु ।

1. = कर्ण ,

3. = वृष

6. = त्याग

7. = रडादि फिटकडी,

9 = राज ,

11. = उपरि

2 = रागरहित

4 = मनोज्ञ,

6. = सूर्य.

8 = धुक्तिरिव,

10. = एकछत्रराज्य कुक्ष,

12 = घ जइ,

बत्थच्छलु ए पीउसकु म,  
अयलीणु मज्झु ए पिसुणजणु,  
जिइ पिहलणिय बउ अण्णमाणु,

अह मयणमघ गयपीणकु म ।  
अणरमणमुत्तणि कुविमणु ।  
ठिउ मयणराय पोढहु समाणु ।

धत्ता—इय मयणहु, जयजयणहु ऊरुअलु<sup>१</sup> घर तोरणु ।

अइकोमलु, रत्तुप्पलु, जिय पय कतिहि चोरणु ॥१०॥

( 11 )

सा तहो रायहो पाणजियारिय,  
याणहु सत्ति व सुरहो कति व,  
धम्महो सत्ति व सीलहु सति व,  
इक्कहि दिणित्ताहि लोउ बिसज्जि वि,  
जा एउइ अतेउरि आवइ,  
गल्ल हत्थ एणु अमु मुवती,  
जपइ एरवइ सभमवयणो,  
महु जीवतहु मुवणु जिएतहु,  
सूरु बिल्लिक्कइ तेउ ए मुक्कइ,  
तातुहु शियमणि केण स दुम्मणि ॥

चदहो जोगह बरइसुहकारिय ।  
तक्कहु युत्ति व सिद्धहु युत्ति व ।  
दाणहु कित्ति व अत्थहु मुत्ति व ।  
सुकविसहा सुहरसु अणुहुजिवि ।  
ता अइदुम्मण पिय परिहावइ ।  
कज्जल ऊरिहि मुट्ट मइलती ।  
इहु अवराहु तुज्ज किबु कयणो ।  
सक्कु वि कपइ आण ए चपइ ।  
कालु वि तामइ<sup>२</sup> बलु ए पयासइ ।  
-- \* -- -----

धत्ता—इयकते, पलवते, पुणु पुणु सा एणु पुच्छिय ।

ता चालइ, सज्जालइ. लीलइ सहिय शियच्छिय ॥११॥

( 12 )

सा पभणइ कि पि स सोयवत्त ।  
अहि तुहु सामिउ तहि कहि विसाउ,  
पियसहि अज्जु सणोह पहिद्विय,  
सायर डिभ बहुअ कोलता  
ता सामिणि हियउल्लउ मल्लिउ,

सामिय शिसुणहि इहि तरणिय वत्त ।  
पुणु सव्वह उप्परि कम्मभाउ ।  
उवरि सिहरि पम्पी विवइद्विय ।  
दिट्ठा अवरुप्पर शिवइता ।  
पुत्त इच्छ मारो ए पेल्लिउ ।

तें कारिणियह अछइहुम्मणि,  
त रिणुणिरिणरवइपडिभासइ,  
सब्ब विबुडि परक्कमि सिद्धउ,

अवर भति मा किञ्जहि रिणमणि ।  
एय बिजियि विक्खेण पयासइ ।  
पुत्तलाहु पुणु पुण्णि पसिद्धउ ॥

धत्ता—अइपवियसु, अम्हइ कुलु, पुत्तें विणु एहु सोहइ ।

विणु तरणें, बहु किरणें, को एह मडउ बोहइ ॥12॥

( 13 )

विणु एदणेण कि रज्जफलु  
विणु एदणेण कि हसइ कु<sup>1</sup>लु,  
विणु एदणेण मणि हसइ जलु,  
विणु एदणेण महु शाम बलु,  
विणु एदणेण महु बिमलु<sup>2</sup>,  
पुणु तहवि य पुच्छिय कुविमवण,  
तह मुणि वि करेसमि सुह रिहाणु  
तुह सोए महु, सतत्तु देहु,  
महु गेह तावि पुहवी सतत्त<sup>3</sup>,  
इय सुह वयणहि कता सासि वि,  
जा इच्छइ रिणय गेहि वडहुउ,

विणु एदणेण कि पुरिसवलु ।  
विणु एदणेण कसु लच्छि जलु ।  
विणु एदणेण कहि पिय रजलु ।  
विणु एदणेण एहु जस सक्कु सलु ।  
कह होही रिट्ठव कम्म मलु ।  
रिणयणु पयासिय भुवण गुण ।  
जह तुह सपज्जइ फल रिहाणु ।  
महु तावे तत्त<sup>3</sup> सयलुगेहु ।  
मा सुदरि भुवणि पसारि वत्त ।  
कय बहु बाहुवे हिसइ हासिबि ।  
ता वणवालु दारि सइ दिट्ठउ ।

धत्ता—मउलियकरु, पणमियसिण, जूयकुसुमदलवारउ ।

बणमालिउ, सरिसालिउ, जपइ वयणु पियारउ ॥13॥

( 14 )

हो देव जूय सुरहिण दिसासु,  
कोइलडक्का बडिडय पयाउ,  
अवय मजरि तोमर करतु,

आविउ सिसिरति वसतमासु ।  
उवव रिण सण्णट्ठउ मयणराउ ।  
मलयाणिल गव वरि सचरतु ।

1 ध. कहि सोहइ कुलु,

2 = तपोनिर्मल-

3 = मम तापेन सर्वजनतप्तः,

4. = राजान- तप्ता.,

उद्धिरहसावलि घयघरतु,  
कामिणि भूवल्ली षणु कुरातु,  
त रिणसुरिणिवि चलिउ पुह्विणाहु  
वहु पचवण्णा कुसुमहि रसानु,  
कोइल भमरारव सुहियकण्णु,  
सीयल मलयारिणल लीलविद्धु,  
बणु पिच्छिवि जा सतुट्ठु राउ,

अलिपति तिकलसङ्गइ बहुतु ।  
अइतिकल कडक्कासरमुबतु ।  
ए पबणे पेरिउ वारिवाहु ।  
वह सोरहु धाविउ भमरमासु ।  
अइबहुइ<sup>१</sup> महुवरफल भक्कवण्णु ।  
इयपचिदिय विसयहि सणिद्धु ।  
विहरणह लग्गु वज्जिय विसाउ ।<sup>१</sup>

धत्ता—ता गयणहु, मणुय अगमणहु, चारणु मुरिण सपत्तउ ।

तवजलरो, भवइहणे, जो सव्वऽगे तत्तउ ॥१४॥

( 15 )

जो अण्हाणे सामलियगत्त,  
जो वारइविहतवदुव्वलगु,  
जो बडिडय अइदीहरण हयव,  
तसु पय पराविषय बहु भत्तिजुत्त,  
कइयह महुहोही चरणलाहु,  
शिणुसुरिणिवि<sup>२</sup> भासइ मुरिणवरिदु,  
रिणयराय लच्छि उद्धरियधम्म,  
पुणु पुत्तजम्मपडिसेहहेउ<sup>३</sup>,  
पुव्वहि इह पुरि बहु धणसणाहु,  
सिरिकुक्खि णाम तहु तरिणय कत्त,  
णामेण मुरादा तासु पुत्ति<sup>४</sup>,  
थिय एकक दिवसि अवरिक्खणारि,

ए भाणजलण धूमेण छित्तु ।  
एणं मुत्ति णारि विरहे गिसणु ।  
ए मण मायगहो सिणि णयव ।  
पभणइ एरवइ हउ हुउ पवित्तु ।  
गिम्मुक्क सयलमगाऽवगाहु ।  
रिणय णागमऊहहि पुण्णिमिदु<sup>५</sup> ।  
जइ इह तुह<sup>४</sup> होही पुत्तजम्म ।  
रिणसुराहि ज हुअउ कालखेउ ।  
देवगहु णामे आसि साहु ।  
सोहगखलावण्णवत्त ।  
सायारधम्मपालण मुजुत्ति ।  
एवजोव्वणि पीडियगअभाणि ।

१ स बहुय,

२ स रिणसुरेवि,

४ स यह

६ देवागदश्रीकुक्षयो पुत्री सुनन्दा,

३ = पूर्णचन्द्रवत् मुनिः,

५ = पुत्रजन्मप्रतिषेधकारण,

अवलोकवि<sup>१</sup> किवउ शियाणवधु,  
इह परभवि गम्भि राक्खि कज्जु,

माहोउ मज्झु गम्भहो पवधु ।  
ज माणुसु किज्जइ पीठपु जु<sup>२</sup> ।

धत्ता—जिएसरणें, सुहमरणें, मरिवि पढमकप्पहो गय<sup>३</sup> ।  
तहु भाविवि, सुहभाविवि, हुध दुज्जोहण रायसुय ॥१५॥

( 16 )

सा एह तुज्ज सिरिकत भज्ज,  
एवहि उवहुत्तउ तासु फलु,  
होही एरवइ मामति किज्ज,  
तावहि करिज्ज सायारु वम्मु,  
ताणिउ पभणइ महु तोळि मति,  
बारह वयाह एयारसिट्ठि<sup>४</sup>,  
छेयणु वधणु घायहि ताडणु,  
अलियकहाणउ मम्मपयपणु,  
ववणी चोरणु जो वज्जो सइ,  
दव्वहु रावणु हरियहु धारणु,  
लहु भाहिय तुलमाणह सगहु,  
अवरविवाहु अजोणिहि मेट्टणु<sup>५</sup>,  
विहवसमुण सीसयरिणि कीलणु,  
अइवाणहो अइसगहु करणउ,

चिरभवहु शिहाणे फल विरज्ज ।  
कइवव दिणेहि सुध अतुल बलु ।  
तहो पवइ मुणिएरणउ<sup>६</sup> चरिज्ज ।  
अइचाररहिउ एरु सुढकम्म ।  
सायारहु कइ अइयार हुति ।  
मुणिए पभणइ शिसुणहि सुढविट्ठि ।  
अइभरवत्तणु अमणमिवारणु ।  
कूढलेहकरसण्णा जपणु ।  
वीयाणुव्वउ सो सविसेसइ ।  
रायविउद्धउ करणी कारणु ।  
तइया अन्नय दोसपरिगहु ।  
मइ विज्ज अइ सुरह समीहणु ।  
तुरियाणुव्वयदो सुम्मीलणु ।  
विम्हइ<sup>७</sup> लोहा अइभरवहणउ ।

धत्ता—इय पचह, सुहसचह<sup>८</sup>, भासिय दोसाणुव्वयह शिण्चलु ।

एवहि सुणु, शिण्चलु मणु, करि शिम्मलु, भासमि दोसगुणव्वयह ॥१६॥

1. ख. अवलोकवि, अन्यस्त्रिय गमंवती अवलोक्य सुनन्दा निदान कृतमित्यर्थं
2. ख. पुज्ज,
3. = सुनन्दा,
4. ख. चरणउ
5. = प्रतिचारसृष्टि
6. = हस्तपादादिकामचेष्टा
7. ख. विम्हय = विस्मृत
8. ख. सेचह

( 17 )

उद्बह तिरिच्छा अइकमणु,  
 सखितहु खित्तहु बीसरणु<sup>१</sup>,  
 मडहासु मडामम पइयइणु,  
 असमिक्खा करणउ वज्जिज्जहि,  
 विसयायर विसयह अइसुमरणु  
 अइ अणुहुउ<sup>२</sup> वज्जहि जाणोप्पिणु,  
 अप्पहु<sup>४</sup> वसणु पुग्गल खेवणु,  
 ते कहियणि सुणि बीयहो<sup>६</sup> विसेउ,  
 विणु भत्तिए<sup>६</sup> बीसरणो जुत्तउ,  
 एवहि पोसह वयणु सुणिज्जाह,  
 मुक्कापोडिय अप्पडिलिहरणइ ,  
 ए पोसहवयदोमा सिट्ठइ ,  
 आयर समरण भाव वि जुत्तउ,  
 हरिय पिहाण विहारो जुत्तउ,

खित्ताबहि पिहुलत्तण करणु ।  
 इय पढमगुणव्वय दोस गणु ।  
 धिट्ठवयणु अइभोयपसाहणु ।  
 बीयगुणव्वय दोस वइज्जहि ।  
 अइलुलत्तणु अइत्तहत्तणु ।  
 पेसणु<sup>३</sup> सइणु अणु आणावणु ।  
 जे पढमहो सिक्खावयहो दोसणु ।  
 दुट्ठेतणु मणुवयणो जुत्तउ ।  
 वूय सामाइय दो समुणिज्जहि ।  
 गहरणवि सज्जणु अणुअज्जरणइ ।  
 आयर सुमरण मुक्खाणट्ठइ ।  
 हरियपिहाणवि हारो मुत्तउ ।  
 अतरि मच्छर दो सिगहियउ ।  
 बइया विव्वहो दोसा कहियउ ।

धत्ता — इय वयणिहि, मलहरणिहि, मुणिणाहहो णिउ हिट्ठउ ।  
 अववमणइ, तहु चरणइ, वडिबि भवणि पइट्ठउ ॥१७॥

( 18 )

सायारधम्म घुर घरणधीरु,  
 अउविह दाणायर मण वि वसु,  
 सकलत्तउ जिणहरु अणुमरेवि,

जिणह्हाणा पुज्ज शिम्मल सरीर ।  
 वर धम्म भाण बाहिय दिवसु ।  
 रादीसरि अट्ठाहो करेवि ।

१ सख्याकृतक्षेत्रस्य विस्मृति

२ पूर्वानुभूत

४ ख. अइपहु

६ =अनादरेण

३ प्रेषितपुरुष

५ द्वितीय शिक्षाव्रतस्य दोषा.

७ ख. जिणठ्हाण

जा अञ्चइ ता संजणिय हरिस,  
 सा गम्भत्पाय पडुरियदेह,  
 गौलासु पीणु थणु जुउ धबलु,  
 जभाई रियडी विर सहीव,  
 भालसु वरमित्तु व भत्तिजुत्तु,  
 तहि लज्जासहु वड्डइ उवत्त,  
 सा सुत्तिव मुत्तिय गम्भिरिया,  
 मुणि वाणि व रिक्कल अत्थपरा,  
 तहि कुन्नि व लोयट्टियउ भरा,

कतहि सपण्या गम्भदिबस ।  
 ए फलिइ थडिय पुत्तलि गिरेह ।  
 सकल एाइ चहइ जुवल् ।  
 अ गउ एाहु मिल्हइ गुण गहीण ।  
 सामीउ एा मिल्हइ एय चित्तु ।  
 उज्जमि सहू एासइ बलिपवत्त ।  
 मोहालि व जलभर बाहिरिया ।  
 जयणालि व गुरु तत्तणारि हरा ।  
 केवल सत्ति व तहि भुवण भरा ।

धत्ता—जिए अ वणि, सुहसचणि, तहि दोहल या जाया ।

या मुरिगदारिहि, बुहमारिहि, सुह रिक्क पूरइ राया ॥१८॥

( 19 )

अह सुहतिहि बेला भरवहेसु,  
 रियतेउज्जालिय सुइहरु,  
 अ तेउरु पुरु रोमच्चियउ,  
 गुत्तिहि मिल्हिय अरिबदिदलीउ,<sup>३</sup>  
 वड्डा वउ राय अण्णुल्लु,<sup>४</sup>  
 दसमइ दिरिण तहु भगलिउ धम्म,  
 दिरिण दिरिण एादणु वड्डणहलण्णु,  
 राऐ कल<sup>५</sup> सच्च सिक्खविउ,  
 सयलउ रिाव विज्जउ सिक्खविउ,  
 राभेरण पहावइ रायकण्ण,

सयलेसु उच्चढाणय गहेसु ।  
 उप्पण्णु पुत्तु एादि व सयर ।  
 तूरत्तय भाव पवच्चियउ ।  
 खजति पायमण एादलीउ ।  
 किउ आवि विरज्जह तराउ<sup>६</sup> मुल्लु ।  
 गुरु सुयणहि किउ सिरिधम्म एामु ।  
 सयलारिभणोरहमडुभण्णु ।  
 रिणम्मलु गुणगारव लक्ख विउ ।  
 रिक्क एाणय रायणु वक्ख विउ ।  
 ताए परिणाबिय सील पुण्ण ।

1. ख मोहासिव

2 कारागृहात् वदिजममुक्ता

4 =कल समूह

3 =आत्मसमान याचक कृत

धत्ता—गुरारायहो जुवरायहो, अपि वि रियमहि रज्ज भरु ।  
इ दिमसुहु, रिहृरिगिब दुह, सड अणु हुजइ कयपसरु ॥19॥

इय सिरि चदप्पहचरिए महाकब्बे महाकइजसकित्तिविरइये ।

महाभव्व सिद्धपाल सवण मूसणे सिरिधम्मजुवराय पट्टबधो

णाम बीड सघी सम्मत्तो ॥छ॥ 2 सधि ॥छ॥

॥अथ सख्या ॥ 193 छ ॥

[इति द्वितीय सधि]

— — — — —



## तइउ संधि

( १ )

अह एककहि दिणि सिरिसेणराउ,  
मा रयणिहि घर पगणि बइट्ठु<sup>१</sup>,  
ता गहहु पडती उक्क विट्ठु  
ए रज्ज मोहु तम अरुण कति  
ए हरिसिय तब सिरि घट्टवीरु,  
ए फुट्ट भवोयर रत्तघार<sup>४</sup>  
त पिकिखवि<sup>५</sup> गरवइ मणि विसणु,  
मा धम्मु हरिणि सुह अणु हविज्ज,  
चितिय इह भवि गाहि कि पि मारु  
फेणु व णिस्सारउ मणुअ जम्मु,  
मल वीयउ मल उप्पत्ति ठाणु,  
जइ एरिसु एगारहि अणु मुण्डिउ.

सुहरस पीयूम णिबुद्ध काउ ।  
बहुकामकेति बिच्छरि पइट्ठु ।  
ए मुत्ति दिट्ठु अइराय पुट्ठु<sup>३</sup> ।  
बेरग तेय ए वीबयति ।  
ए कु कुम छट्ठुइ कामभीरु ।  
इदिय बेड करण तत्त आर ।  
बेरग परम भावहु पवणु ।  
मा अत्थ काम तण्हा चरिज्ज ।  
दिह मणि बि वरिउ ए सहइ वियारु ।  
परवावारें जहि एत्थि धम्मु ।  
मल पूइगष दुक्ख विय धाणु ।  
तो अमिय सुरहि भावेण धुण्डिउ ।

घत्ता—वा सिबि बहुगषिहि, णिहय दुगषिहि, आहारिसु मइ मोहियउ ।  
निय तणु मलपिडउ, असुइहि भइउ, अणु हुज्जइ तमगअहि यउ<sup>६</sup> ॥१॥

१ ल वइट्ठु,

२. ल पइट्ठु, व वइट्ठु,

३ = मुत्तिदुष्टि अति रागदुष्ट ,

४ ल भवोरहु<sup>०</sup>, (=ससारो दयस्य रत्तघारा क्वा दृष्टा)

५ ल पेकिखवि,

६. ल. व्यहियउ, व यहियउ,

## ( 2 )

ज चंद सिरिच्छउ मुहु भणइ ,  
 जे काम भलि तिकखा कडक,  
 ज विवाहर पीयूस<sup>1</sup> ठाण,  
 जे पीण तु ग धण अणयकु न,  
 ज रयण मज्झ सोहणु अछि,  
 अणु बि किर जित्तिय<sup>2</sup> सयल खोरिण,  
 जइ कोडि सख खारीउ धणण,  
 ता परकारणि<sup>3</sup> बित्तर बिहाणु,  
 जह गणइ अहिणय<sup>4</sup> सयण बधु,

त कफ पिडउ कि राहु नुणइ ।  
 ते सम्बउ दूसिय मल गत्वख ।  
 ते फुडु रिट्टीवरण मल रिहाण ।  
 ते मसह पुट्टलु दिड वियन ।  
 त पिहिय धाणु को छिवइ हच्छि,  
 तो<sup>5</sup> सोयव्वउ<sup>6</sup> बउहत्थ कोणि ।  
 तो सइ भुजइ दो पसर<sup>7</sup> अणण ।  
 किं किज्जइ अप्पह पाव ठाणु ।  
 तह पुत्त कलत्ता इय पबधु ।

धत्ता—इय चित्तिवि राए, जाणि विराए<sup>8</sup>, करणिज्जउ निट्ठारियउ ।

सडिवकह खडणु, रिणकुल मडणु, वेए सुउ हक्कारि अउ ॥2॥

## ( 3 )

पर्यामय सिरु सो अणइ वइट्ठु,  
 हे पुत्त पुत्त बहु अछ सुणहि,  
 जा जरवाउलि रा तिग कुडीरु,  
 जा लायणु वरु<sup>1</sup> भेयउ मूणइ,  
 जा सबणु माहु वयणइ सुणइ  
 जा पय सु तित्थ पयिहि चडति,

विरलिय रणइ दिट्ठिय बिट्ठु ।  
 मामहु वयणहु पडिवयणु अणहि<sup>2</sup> ।  
 बूणिवि<sup>12</sup> रिण पाउह महु सरीरु ।  
 मपेच्छवि तसु<sup>13</sup> रक्खणु करेइ ।  
 जा जीह जिणायमु पडु अणइ ।  
 जा कज्ज अकज्जइ सभरन्ति ।

- 1 ख मुहु,
- 2 ख जेतिय,
- 3 = शयितव्य वस्तुर्हस्त भूमौ,
- 4 ख परकारणे,
- 5 अणिहि,
- 6 कपयित्वा,
13. वस्तुन

- 2 पीठम,
- 4 क ता ,
- 6 ख पइस,
- 8 ख अहिणव,
- 10 - जरा एव वधूला तेन तृणकुटी इव ।
- 12 घटादि पदार्थभेद जानाति,

ता इच्छामि छेद<sup>1</sup> भवहि पासु ।

जिए दुखल छुरीइ होइ बि गिरासु ।

अइ वुठहु बट्टइ भोय तह

अह पुणिएमचदहु बहल मुण्ह ।

घत्ता—तिय<sup>2</sup> हासहु मंदिर, बहु गय<sup>3</sup> कंदिर, सयललोय असुहावणउ

सव्वगे कपिर, सास बि जपिर, वुट्टत्तणु विलिसावणउ ॥3॥

( 4 )

धेरउ मरिण तत्तउ सुरइ<sup>4</sup> भग्नु,

एणइ तउ साणु<sup>5</sup> व अट्टिलण्णु ।

एवि मित्तइ एवि उवभोय सक्कु,

पिक्क व हिट्ठि ए पणु थक्कु ।

धेरहु ठकिय सबणाइ वैवि,

ए गइय बुद्धि घर बार देवि ।

एणिकर डिय एयणइ एणउ उवति,

ए विव सिय जेरलय<sup>6</sup> कुसुम पति ।

मुहुहु<sup>7</sup> तीएि वडइ बतसेणि,

ए फुट्ठी पाण कवट्टु गोणि ।

पडुरउ सीसु केरिसउ भाइ,

वुट्टत्तए कितिए बबलु एणइ<sup>8</sup> ।

खल्ली<sup>9</sup> ए बोइय तव पत्तु<sup>10</sup>

दोहम्म एणसव भणहु वित्तु<sup>11</sup> ।

सव्वगउ बलि विल्लरहि छिण्णु,

ए काल सुणइ<sup>12</sup> दतिहि बिक्किण्णु ।

अइ एणहुहु एणहुहु पहि सचरेइ,

ए काल हरिय रय<sup>13</sup> पउ<sup>14</sup> ठवेइ ।

अट्ठगइ तत्तु कप्पति<sup>15</sup> केम,

जरवेवि<sup>16</sup> चडिउ अजयात्त<sup>17</sup> जेम ।

घत्ता—बहुलाल गलतउ, रोय किलतउ, वुट्ठत्तणु असुहाव एणउ ।

एणिलज्जु असुदरु, तहहु मंदिर, को व भिउडि भीसावणउ ॥4॥

1 = संसारपापस्य छेदं बोद्धामि,

2. स्त्रीणां हास्यस्यान,

3 = रोग.

4 कामो भयन.

5. श्रान इव,

6. जरा एव लता,

7 ख मुहहो,

8. ख एणइ,

9 = टांठि,

10 ताम्रभाजन,

11 = पात्र विशेष

12. = काल एव श्रानस्नेसा दत्तं,

13 = वेगः

14 = पादौ,

15 क ख ग कपति, घ. कप्पति,

16 = जरा एव देवि,

17. = लग्नापराधः,

( 5 )

ता हउ करेमि लहु अप्पकज्जु,  
 मा ग्गियजणु अप्प विरत्त किज्ज,  
 मा दुज्जण लोयहँ अगूधु दिज्ज,  
 मा केण वि गम्बुत्ताणु हुज्ज,  
 मा अजस गुरुअ<sup>३</sup> गयवणि चडिज्ज,  
 मा दाणरहिउ लच्छीउ मुज्ज<sup>५</sup>,  
 मा अमुरविजय कम्मड मरिज्ज,  
 मा पावपिसुणु चरिउ चरिज्ज,  
 मा अहकरपीडणि पइ<sup>६</sup> खदज्ज ।

तुहु परिपालहि<sup>१</sup> सत्तगु रज्जु ।  
 मा जणउ बयारइ बीसरिज्ज ।  
 मा साहुहु<sup>२</sup> गुण पच्छइ करिज्ज ।  
 मा विसम समण<sup>३</sup> पासए पडिज्ज ।  
 मा चित्ति वि पावहु दब्बलिज्ज<sup>४</sup> ।  
 मा तित्थ सत्थु दूरो चइज्ज ।  
 मा मम्मह वाणी वज्जरिज्ज ।  
 मा चिरमतिहि कूलु सहरिज्ज ।

घत्ता इय रज्जु करतहु, महि पालतहु, सिरिमुह कित्तिउ पुण्ण भरु ।

तुहु धुउ सपज्जउ, तेउ समज्जउ<sup>७</sup>, सयलमणोरहकप्पतरु ॥5॥

( 6 )

इय सिक्खइ महु तहु दिण्णलच्छि,  
 मिरिपहनामेण मुग्गिद पामि,  
 काले दुद्धर तवि<sup>८</sup> वि<sup>९</sup> हणे वि दुक्खु,  
 इत्तहि पुग्गरि<sup>१०</sup> मिरिभम्मराउ,  
 मतिहि मितिहि णडिवोदयत्तु.

गउ उववणि वुट्ठय मति पुच्छि ।  
 सगहिय दिक्ख भवभमण ग्गसि ।  
 सपत्तउ गिरु गिण्वाण सुक्खु ।  
 गियजाणण<sup>११</sup> बिउय गिरु बराउ<sup>१२</sup> ।  
 ठिउ सयल पुहवि गीइहि ठवत्तु ।

1 क पयपालहि,

3 = अयश गुहहस्तिनि,

5 क भोज्ज, घ मु ज,

7 क तउ समज्जउ

9 क ख घ 'वि'—इति नास्ति शब्दोऽय

10 ख ग घ पुरवरे

12 ख ग विराउ

2 ग घ बसण = विसन पाप्मी,

4 ग दवु = पापिनो द्रव्य,

6 ख ग पय,

8 क तवे

11 ग घ जणण

ता विजय जत्त<sup>1</sup> पायाणु दिण्णु,  
 पायाण<sup>2</sup> तूर रक्खाडियाइ,  
 करि दाणपवाहिहि<sup>3</sup> समिउ मग्गि,  
 अणुकूलवान पसरिय अएहि,  
 बहुवलभारें<sup>4</sup> एणु कपियाइ,  
 अउरगसेण गइ बूरिवाइ,

अउज्झिह<sup>5</sup> बल सेणा सपवण्णु ।  
 गिरिसिगिहि<sup>6</sup> मुहु वयरिहि<sup>7</sup> हियाइ ।  
 रयभरि सहु अरि पायाव<sup>8</sup> अग्गि ।  
 छाइउ<sup>9</sup> रवि सहु अरियणज्जेहि ।  
 सेसें सहु<sup>10</sup> अरिउल दप्पियाइ ।  
 पहि गिरि सहु अरिहकारियाइ ।

धत्ता—बलभरि महि दुत्तइ, गिरिउ सुहुल्लइ, बम्म पिट्ठकडयहि<sup>11</sup> मुडइ ।  
 दिसि चक्कु<sup>12</sup> सलक्कइ उयइहि<sup>13</sup> पलक्कइ, णायमुवणु लउहडि पडइ । 17।

ता बेरिवग्ग बल खल भलन्ति,  
 किवि तट्ठा किवि सम्मुह चडति,  
 किवि दततिणउ किवि गलि कुहाडु  
 किवि मिल्लहि पुत्तकलत्तवग्गु,  
 किवि सयललच्छि डोवणु कुणन्ति,  
 किवि रिम्मल<sup>14</sup> मुहि चलति अकु,  
 किवि गहहि बेल मिल्लेवि<sup>15</sup> गब्बु,  
 किवि पिच्छवि सव्वउ वाउ खीणु,  
 किवि जाणिवि इहु<sup>16</sup> लेहो ए मति,

ए गहभय फणिसलवलति ।  
 किवि काणणि किवि जममुहि पडति  
 किवि दतगुलि किवि चवहि चाडु ।  
 पियपाण लेवि आरुहि<sup>17</sup> दुग्गु ।  
 दव दद्धरक्खु<sup>18</sup> वसइ<sup>19</sup> हवति ।  
 सकलकु कुणहि<sup>20</sup> ए अणमियकु ।  
 तक्खिण ए लहहि जिम रज्जु सव्व  
 दुद्धर तव<sup>21</sup> सारहि<sup>22</sup> एणु अदीणु ।  
 रिण सयलु रज्जु दाणेण दिति<sup>23</sup>

1 घ यत्त

2 ख अज्झिह

4 ख बेरिहि

5 क पायाल - पावप इत्यर्थ

7 ग भरि

9 ख पुट्ठि

11 घ उवहि

13 ख वसइ

15 ख कुणहि

17 क ख. वायु

19. एस राजा समस्तराज्य गृहणास्तीति 20 ख दति

3 सयाम भेरि

6 ग छावउ

8 ग सहु

10 ख बक्क

12 दद्धरक्ख,

14 ख. रिम्मल

16 ख मेल्लेवि

18. ग घ तउ

घत्ता—इय दुदर रिउयण, अइदणियमण, सखल वि घाणा<sup>21</sup> वसिकरइ ।  
 पणम तह तूसइ अट्टह<sup>22</sup> रूसइ, खत्ति घम्मि मो णिउ चरइ<sup>23</sup> ॥7॥

( 8 )

जइ णिह णिउ समरि अरि णिकाउ,  
 जो एते<sup>6</sup> दिट्ठउ तियहि यम्मि,  
 तह रिउकुल सुगपूयाणिरास<sup>7</sup>,  
 तह<sup>9</sup> अणुल परवकमु सभरति,  
 कण्णिट्ठु णुलि<sup>10</sup> किउ युद्धु कज्जु,  
 कुवि भणइ चारुमइ कीय बुद्धि,  
 कुवि भणइ वम्म णिग्वाय<sup>13</sup> तत्तु,  
 कुवि भणइ पढम महु हत्थ छिण्ण,  
 कुवि भणइ तासु<sup>15</sup> करि कु भ पिक्खि<sup>16</sup>  
 कुवि भणइ जग्गुमइ तासु दिट्ठु,  
 कुवि भणइ घणुह अइगकु तासु,  
 कुवि भणइ दिट्ठमइ वाणतिकख,

तो फिरि<sup>6</sup> फिरि ओवइ तह पयाउ<sup>5</sup> ।  
 विरहाणलमिसि पत्तउ तहम्मि ।  
 वय<sup>8</sup> जोवियरक्खह तिणह आस ।  
 जीवति मुक्क किवि अरि भणति ।  
 दीहरभुवदण्णह पडउवज्जु ।  
 मरसउ कोहाडउ<sup>11</sup> लइउ जुद्धि<sup>12</sup>  
 असिक्ख मुहु मइ तेण णु घेत्तु ।  
 पायगुलि दतहि ते<sup>14</sup> वियण्ण ।  
 अज्ज वि वीहमि तिय क्षण णिरक्खि<sup>17</sup> ।  
 ते सुरयमज्झि<sup>18</sup> पिय वेणि तट्ठु ।  
 ते नेहणि भूल्लइ णउ विसासु<sup>19</sup> ।  
 अज्ज वि भीसावहि तिय कडक्ख ।

घत्ता—पसरियजयस्सायह, बहुरिउ रायह<sup>19</sup> इय वित्तु पयट्ठि वि<sup>20</sup> ।  
 चउविसउ जिरणेप्पिणु दडुगहिप्पिणु, किउ पयाणु<sup>21</sup> ऊहट्ठि वि ॥8॥

- |   |                  |
|---|------------------|
| 1 क ०याणा   | 2 क यद्दह,       |
| 3 ख चरण   | 4 ख ते फेरि फेरि |
| 5 = राज प्रताप  | 6 घ यते          |
| 7 क ख ०निवास = कुल देवतापूजाया निराश                      |                  |
| 8. = स्वस्य जीवस्य रक्षा कृता मुखे तृण घृत्वा             |                  |
| 9 श्रीधर्मराज   |                  |
| 10 कण्णिट्ठु गुलि = कण्णिठागुलिना कृत्वा मया कार्यं कृतम् |                  |
| 11 कुहाडक स्कये कृत्वा,                                   | 12 क युद्धि      |
| 13 हृदये निषत्तिन तप्त                                    | 14 क घ ति        |
| 15 = राज करिणः कु भच्छल दृष्ट्वा,                         | 16 ख पेक्खि      |
| 16. ख णिरिक्खि  |                  |
| 17. = रतिनव्ये स्त्रीवेण्या सकाकात् भयप्राप्त             |                  |
| 18 = भूलताया न विलास                                      | 19 ख. रायह       |
| 20 = प्रवर्त्य  | 21 ख उहट्ठिवि    |

( 9 )

गियभ्राण महावि बि सयलराय,  
 रिउददु लच्छि भच्छियह<sup>1</sup> देवि,  
 गिय पुरि सपत्तउ विजयवतु,  
 हरिसिय पुरयर भग्घइ<sup>3</sup> लह,तु  
 भइ गायरसोह भंगल गियतु<sup>5</sup>,  
 गियगेहि गिसण्णउ तुट्टिवतु,  
 ता इक्क समय नहि गायक विट्ठु,  
 चिरिवि<sup>6</sup> बेरगुहु तो पवण्णु,  
 सिरिकतहो<sup>7</sup> पुत्तहु देवि रज्जु,  
 सिरिपहहु<sup>10</sup> मुणिदहु<sup>11</sup> पायमूलि,  
 सो तेरह विहु चारित्तु चरिवि<sup>15</sup>,  
 सिरिहर गामे सपण्णु वेउ,  
 दो सायर उवमइ भ्राउमाणु,

शिम्मलि जसि भवलि तिमुरण छाया ।  
 गिय गिय पुरि गारवर मुक्कलेवि ।  
 बहु वदियणेहि<sup>2</sup> गिरु वदियतु ।  
 पोरगण<sup>4</sup> लज्जज्जलि महतु ।  
 जिरापडिमइ पहि पाहि गिरु रामतु ।  
 पचेदिय सुह माणइ महतु ।  
 भवलोयतहु तकलणि विणट्ठु ।  
 विसएसु तण्ण को कुणइ वण्णु ।  
 सइ<sup>8</sup> चल्लिउ साहण<sup>9</sup> भण्ण कज्जु ।  
 संगहिय<sup>12</sup> दिक्ख गुणकण<sup>13</sup> कुसुलि ।<sup>14</sup>  
 सोहम्मसम्मि उप्पण्णु भरिवि ।  
 बहुदेवांगण सजाउ सेउ ।  
 किं वण्णमि तहु सुक्खहु पमाणु ॥

- 2 ख वदियणिहि,
- 4 घ पडरगण,
- 5 ग समइ,
- 7 ख घ सिरिकतहु,
- 8 ख. सइ,
- 9 ख साहर्ण,
- 11 ख मुणिदहे,
- 12 ख घ संगहिष,
- 13 क गण,
- 15, ख. चरेवि

3. = भय्यनिश्लाघानि

6 ख. चित्तिवि,

10 ख. सिरिपहहो,

14 = पृथ्वी,

घत्ता—सोसइ ग्राहरणहि, सुरमण हरणहि<sup>1</sup>, देवगिहि<sup>2</sup>, गिरु भूसियउ ।  
चउरसु मठाणउ, तेयगिहाणउ, तहो वउ णहु<sup>3</sup> मणइ सियउ ॥६॥

( 10 )

ग्रह धादय णामे दीउ अत्थि,  
इसुणारिहि सेलहु पुब्बभग्गहि,  
अलका णामे तहि अत्थि देसु,  
जो थलकमलणि मयरद पिगु,  
कामुय जणुव्व जो मइ विहाइ,  
मदाणिहत्तिर तरुमालु  
आवत्तणाहि रमणिय विसेस,  
सुपयोहर<sup>8</sup> हरिणि कमल गित्त  
तहि कोसल णामे अत्थि णयरि,  
जहि रयणज्जणि उडुपडिविविय,  
जन्नि मइ रिणि निमिरि वि सच्चरति,  
वहि गेहमि हर जालय पहुत्तु,  
तक्कणि ह अउ<sup>10</sup> एयहु कलकु,

तहो दाहिणि कीडिय धमरसत्थि ।  
चउवग्ग लच्छिणच्चणह भरहि ।  
ण सुक्ख सग्ग<sup>5</sup> लहु तणउ वेसु ।  
बहुपक्क कमल सोरहिय अगु ।  
उच्छव रसु आसव<sup>6</sup> मत्तुणार्हे ।  
णं छक्किउ<sup>7</sup> धुम्मइ मय विसालु ।  
विहगावलि मेहल सिरि विसेस ।  
वहुणइउ घरइ ण पियकलत्त ।  
बहुसुक्ख लच्छि गुणगणहि पवरि ।  
मुत्तिय भदिण हमिहि<sup>9</sup> चु विय ।  
णियमुह चदिणि दीसइ तुरति ।  
कानागरु धूमहि अदुच्छित्तु ।  
एहयलि<sup>11</sup> किल कहि समुहरिणु अकु ॥

घत्ता—तहि पुरवरि<sup>12</sup> राणउ, तिजय पहाणउ, अजितजउ<sup>13</sup> णामेण हुउ ।  
इदु व सामच्छिहि, भुवण<sup>14</sup> कयच्छिहि, जो महि पालइ पीणमुअ ॥१०॥

- 1 क हरणाहि,
- 3 ख णउ,
- 5 ख मग्गालहो,
- 7 ख राच्छक्किउ,
- 8 ख सुपउदर,
- 9 ख हसहे,
- 11 अ कहि ससु कहि हरिण अकु,
- 12 ख पुरवरे,,
- 14 ख भुवणि०

- 2 ख देवगहि
- 4 =पर्वता
- 6 =मद्य
- 10 ख ह्यउ,
- 13 ख घ अजियजउ,



## ( 11 )

जसु सिय गुणेहिं व भडु भडु,  
पायाव अग्नि जसु ता वियाड,  
जसु गभीरत्तु णु गुण लज्जित<sup>4</sup>,  
पडिदिणु जसु पायाव पलित्त<sup>5</sup>  
जसु भइ सादराउ उच्छलियइ<sup>6</sup>  
भोमरा<sup>9</sup> सूप्र सप्पह<sup>10</sup> तट्ठी<sup>11</sup>,  
जसु अजियसेण एामेण कत,  
जिइ अग्गइ<sup>12</sup> दासि व लच्छि भाइ,  
चक्खुड्ढावरिण ग कामकतु,  
रोहिणि दोहग्गह<sup>15</sup> एाड खारिण  
ताह पग्गवर रइकीलतह,

पूरित सयवत्तिहिं ण करहु<sup>1</sup> ।  
उप्पति<sup>2</sup> व भुवणहो जसपय इ<sup>3</sup> ।  
लवणोवहि कसिएत्तु समुज्जित ।  
सूरें अप्पउ जलरिणिहिं चित्तउ ।  
एहयलि गुरुकइ<sup>7</sup> विदु व कलियइ<sup>8</sup> ।  
जसु गिहु मुइ भूवेवि वइट्ठी ।  
कुलसील सुगुण सोहग्गवत ।  
अगहु मह<sup>13</sup> पुत्तलि रभएाइ<sup>14</sup> ।  
इदारी रक्कि व वतु ।  
गवरिय दुच्छिय थेरी<sup>16</sup> व जाणि ।  
पचेदिय सुहरसु माएतह ।

धत्ता—सुरु तिरिहरु एामे, गुणगण धामे, जो सुरलोउ पवणएउ ।

आवेविवि<sup>17</sup> मोहम्महु, सु जिय सम्भुहु, सो तह सुउ उप्पणएउ ॥1१॥

## ( 12 )

तहु एामु परिट्टित अजियसेणु,  
वालु वि गुण गउ रवि सपवणु'  
वालु वि ज वुड्डह पुरि वइट्ठु,  
वालु वि कुलभर धुर धरण धोर,

जो अरि रिणव चिडिया चडसेणु ।  
वालु वि सुय सायर पारु तिणु ।  
वालु वि एयविल्लिहिं कवु दिट्ठु ।  
वालु वि अरिवर एिहलग धोर<sup>19</sup> ॥

1 क ग करइ,

3 = यश पदानि

5 ध पलित्तउ

7 = बृहस्पति शुक्र च,

9 = रौद्रसूकरात् शेषनागाच्च,

11 = भूकुलदेवी या राज्ञ भुजायां प्रविष्टा,

12 = अजितसेनाया अगे

14 = शरीरमल पुत्तणि कारता,

16 दुष्विचता वृद्धा इव यस्या अगे गौरी भानि,

17. क. अविवि,

18. = शत्रु राजा इव चिडास्तेषा प्रचड

19 ख, अरिभडणिहल एिबीर

2 ख उप्पति,

4. ख लज्जिइ, घ लज्जियउ,

6 ख उच्छलियइ,

8. ख कलियइ,

10 ख सप्पहो,

13 ग ध. मल,

15 ख दोहग्गहो,

बालु वि धम्मिकक गिणवद्<sup>1</sup> गाहु,  
त पिच्छिवि एणवद् तरुणु हतु,  
हउ धणु पुणु जसु एहु पुत्तु,  
गुणवते पुत्ते ज जि सुक्खु,  
गुणवतउ भत्तउ रुववतु,  
ता दिउजइ इहु जुवराय लच्छि,

बालु वि जण सिकखादाण एाहु ।  
चित्तइ एणदणु गुणगण महत्तु ।  
एए<sup>2</sup> मह कुलु चिर कित्ति जुत्तु ।  
पीऊस हाणु त हुइ विलक्खु ।  
पुण्णे हि विणु दुल्लहु<sup>3</sup> होइ पुत्तु ।  
कुलवुड्ड मति सयले वि पुच्छि ।

घसा—हक्कारि वि बुहयणु<sup>4</sup>, धणुसहु परियणु, आलोइ<sup>5</sup> वि मतिहि सहु<sup>6</sup> ।  
ववियणि पटतिहि, मगलि हतिहि, जुवरायहु<sup>7</sup> पउ<sup>8</sup> दिणुतहु ॥1211

( 13 )

जा मगलु मगलि आहासइ,  
जा राउ<sup>10</sup> रयणभाभूसणाए,  
जा पुत्तु ए विज्जइ एणवरेहि,  
ता<sup>13</sup> चदरोइ एामे असुह,  
दसण गिणमिति सजाय कोउ,  
अवहरिउ तेण<sup>14</sup> जुअराउ भत्ति,  
खण मित्तु एककु समूहु<sup>16</sup> राउ,  
वा षिट्ठी सह गियपुत्त सुण्ण,  
सभमि अवलोय<sup>19</sup> वि चउदिसासु,

जा पुप्परियणु हरसे लसइ ।  
उवविट्ठउ सह<sup>11</sup> सिहासणाए ।  
मउ डग्ग कीडिउ विव घरेहि<sup>12</sup> ।  
बिरजम्म बेरि सभग्ग पव ।  
सभोहि वि तहि अच्छाण लोउ ।  
विच्छारियि<sup>15</sup> माया विज्जु सत्ति ।  
पच्छा जायउ चैयणहु भाउ ।  
बोवाहि<sup>18</sup> जि रडी एाइ<sup>17</sup> कण्ण ।  
चित्तइ एणवद् मिल्लिवि निसासु ।

- 
- 1 क विवद्,  
3 ल दुल्लउ,  
4 ल बुहयणु, घ पुहयणु,  
5 ल आलोण,  
7 ल जुवरायहो,  
9 = यावत्  
11 ल सेह,  
13 = तावत्,  
15 ल विच्छारिवि,  
17 = सभा दृष्टा,  
18 = विशाहकाले रडा इव सता,  
19 ल अवलोएवि ।

- 2 = यावत्,  
6 ल सह,  
8 घ पदु  
10 = राजा,  
12 ल °घरेहि  
14 = पुत्रेण इत्यर्थ,  
16 ल घ समुच्छु,

किं मोह एह किं इ दजालु,  
ज पासि व इट्टउ एच्छियुत्तु,  
इम चिते वि सो सोयणह लग्गु,  
हा पुत्तपुत्तकहि संपवणु<sup>१</sup>,  
देहेहि पुत्त पडि वयणु<sup>३</sup> ताम,

किं सिरिणउ किं वा मइ<sup>२</sup> भञ्जालु ।  
अहवा को जाणइ दइव सुत्तु ।  
हा दइव मणोरहु मज्झु भग्गु ।  
कहिं पुणु तुह मुहं पिच्छमि अपुण्णु ।  
ए फुट्टइ हियडउ मज्झु आम ॥

धत्ता — इय बहुविलवतउ, करणु रुवतउ, मरवइ मुच्छा विहलुगउ ।

अ तेउरु बाइयउ, सोयपरायउ, परियणि हाहा काइ किउ ॥13॥

(14)

जियसेणा पिच्छवि राय मुच्छ,  
दुष्णि वि सिंघिय हरिचन्दरोण<sup>५</sup>,  
ता दुष्णि वि चेत्येण कह वि पत्त,  
महण वि भणइ हा पुत्त पुत्त,  
दइवें दक्खालिवि मणि निहाणु,  
ए अमिय पु दुट्टुदुवडि लग्गु,  
ए अघहु देविणु अक्खि जुवलु,  
दीणहु देविणु सइ<sup>६</sup> इ दरज्जु,  
ए रयणत्तउ पावे वि वतु<sup>१०</sup>,  
सुहकित्ति वि हउ गुरणतेउ यामु  
हा पइ विणु कुलि अ धारु जाउ,

मुच्छिय हिमहय पोमिणि सरिच्छ ।  
दुष्णि वि विज्जिय चमराऽणित्तेण ।  
एभिंसास भूलक्किय सुयणगत्त ।  
पइ<sup>७</sup> विणु जीवेवइ कवणवत्त ।  
रकहु अप्पिउ अक्ख ठाणु ।  
तक्खणि दइवें तहु पत्त भग्गु ।  
दइवें उप्पाडिय खणिण विमलु ।  
तक्खणि दइवे किउ अक्ख मुज्ज<sup>९</sup> ।  
ए गुणसेणिहि खडहडिउ जतु ।  
विणु पुत्ते एयहु<sup>११</sup> एत्थि एामु ।  
हा हा कह हो ही एहु राउ ॥

धत्ता — एारवइ एिह धीरउ, उवहि गहीरउ, बार बार मोहिज्जइ ।

दइवें एिह सूरि<sup>१२</sup>, अहवा भीरु वि, कह विणु भेउ करिज्जइ ॥14॥

- 1 = मतिभ्रान्ति,
- 3 ल पडिवयण
- 5 घ हरियदरोण
- 7 ल पुहं
- 9 भोज्ज
11. घ. यहु महु वा पाठ ।

- 2 ख. पवणुउ
- 4 क. कारुकउ
- 6 ख. पइ
- 8 ख ग सइ
10. = इमित
12. ग. सूरुवि

( 15 )

जा पु०<sup>१</sup> परियणु सुय सोयमुत्तु,  
 ता तबभूसणु गामे मणिगुदु,  
 उगगीबेत्ते<sup>२</sup> आवतु दिट्ठु,  
 पीऊसें खित्तउ<sup>३</sup> एण्ड<sup>४</sup> अक्कु,  
 कहुणा सीयनु ए मेघवाहु,  
 जा सो आबिबि महिपउ<sup>५</sup> एतुदेइ,  
 गिण करि डोइय आमणि बइट्ठु,  
 हरिसमुमिस्स जलि पाय धोय,  
 पुणु सट्ठु पयारिय पूयकरि वि,  
 महु घरि आयउ तुहु अज्जु एाहु,  
 ए जलहि किलतह जाग पत्तु  
 ए गन्धलि तिसियह जलगिहाणु,

अत्थइ एरवइ दुहपकि खुत्तु ।  
 चारणु एहयलि ए अमलचट्टु ।  
 गियदेह तेय भडलि पइट्ठु ।  
 सगहिय महव्वय एाइ सक्कु ।  
 रयएत्तय भूसणु गुग सणाहु ।  
 ता उट्ठि वि एिण्ड पायहि पडेइ ।  
 बीसरिउ सोउ एिण्ड हियइ तुट्ठु ।  
 जे गयलहु होअहि<sup>६</sup> तरण योय ।  
 वज्जरइ राउ सिरि हत्थ वरिवि ।  
 ए दाव पलित्तह वारि बाहु ।  
 ए अइइहि मुल्लह मग्गु पत्तु ।  
 रयणिहि चक्कह उइउभाणु ।

धत्ता—चिरदूहवतीयह, विरहे दुहियह, जहपिम्मे<sup>८</sup> पइ सुरय सुहु ।

तह तुह पट्ट दमणु, सिव सुह फमणु, अम्हह दुहियह हरइ दुहु

( 16 )

इय सुणेवि राय वयणइ जयदु  
 हउ पिच्छिवि<sup>९</sup> पइ सुय सोयतत्तु,  
 अम्हाण वि गुणमणि पक्खवाउ,  
 ता जागतु वि किह<sup>१०</sup> करहि मोउ,  
 तच्चइ बुज्जन हो कासु मोहु,  
 मुह मगलि सव्वु विघीह होइ,

कय आसिवाउ भासइ अणिगु ।  
 आयउ पडि बोहण धम्म जुत्तु ।  
 को तुह सरिसउ एिण्ड सुद्ध भाउ ।  
 सजोयवि ऊय सहाऊ लोउ ।  
 अब्बकमइ ए रवि करभर तमोहु ।  
 दुहि पडियइ एरवइ वियलु कोइ ।<sup>११</sup>

1 ख पुत्तु

3 ख वित्तउ

5 घ एय

7 = दुर्मंगस्त्रीणां

9 ख पेच्छिवि

११ ग विरलु

2 क ०बेत्ते

4 ख गुइ ग माइ

6 ख होवहि

8 पिम्म

10 ख वहु

ताम करहि तुहु एदणहु बुक्खु,  
 केहिबि दिणोहि भावेइ इच्छु<sup>१</sup>,  
 त एणसुणिवि हरिसिउ शरवरिदु,  
 मुणि बदिउ पुणु उट्टे बि जाम,  
 सो असुरे हरियउ विमलचक्खु<sup>१</sup> ।  
 बहु चक्कवट्टि लच्छी कयच्छु ।  
 पुलयकरिय एं चम्मकदु ।  
 जइ<sup>२</sup> गयण मग्गि सचलिउ ताव ।

धत्ता — मुणिएणायहो बयणिएहि, पीणिय सवणिएहि, सोबीसासु पवण्णउ ।  
 गिय मदिदि अच्छइ, सुहु सइ बछइ, मगल लच्छि रवण्णउ ॥16॥

इय सिरिषदप्पहचरिए मद्दाकइ जसकित्ति बिरइए  
 महामव्व सिद्धपाल सवणभूसणे अजियसेणावहारो

नाम तइऊ सची समत्ता ॥169॥ ग्रन्थ सख्या 164 ॥

— — —

1 ख कमलचक्खु

2 ख भाविसइ पच्छु,

3. क. जय

## चउत्थो संधि

( 1 )

अहं अमुरेण<sup>१</sup> गयणि उप्पाडिवि<sup>२</sup>,  
मारण कारणि कोवे मुक्कउ,  
णाम मणोरमु गहण<sup>३</sup> सरोवरु,  
पडणुप्फानिउ जलु पालिहि<sup>४</sup> गउ,  
ता मयराइय अलयरधाइय,  
तरिवि तरिवि<sup>५</sup> सो तडिहि पवुत्तउ<sup>१०</sup>,  
जा अगइ ता णामे परुसा,  
जहि हरिण हरहि करिमुत्तियभरु<sup>१४</sup>  
णदीहर तरुमाहिं खुडियउ<sup>१६</sup>,  
जहि<sup>१८</sup> तरु जाल<sup>१९</sup> णिविड अधारइ,  
जहि धुरुहरिय घोरवग्गालिहि,

गपिणु द्वारे अइ भम्माडिवि<sup>८</sup> ।  
कहवि कहवि पाणिहि<sup>४</sup> णउ चुक्कउ ।  
तहु<sup>६</sup> जलिणि वडिउ रायहु सुयवरु ।  
गियवाहहि मो<sup>९</sup> तरणह नग्गउ ।  
कुप्परकरपायहि ते धाइय ।  
बहुसेवाल वि तूरिहि<sup>११</sup> गुत्तउ ।  
पिच्छइ अडई<sup>१२</sup> कुससुइ<sup>१३</sup> परुसा ।  
पइ-पइ<sup>१५</sup> णिवइड दिसि पसरिउ करु ।  
गयणहो<sup>१७</sup> तारामडलु पडियउ ।  
फणिभइ सूर ण पाइयसारइ ।  
हरिणु ण णासिवि सक्कइ फालिहि ।

धत्ता—कटयतरु<sup>२०</sup> छडइ, उप्पहि हिडई, जा णिव गदणु निच्छुवरणे ।  
ना दिमि जोयते, गिण्भयवते दिट्ठउ गिरिवरु लिच्छु खणे ॥१॥

- १ क मुरेण,
- ३ घ भमाडिवि,
- ५ घ गहणे
- ७ क जलुप्पालि
- ९ घ तरेवि
- ११ ख विल्लरिहि, ग विमूरिहि,
- १३ दर्मसूची ति
- १५ घ पइ-पइ
- १७ घ गयणहु
- १९ वृक्षममूहेनेति

- २ क ख ग उप्पाडिवि,
- ४ क कहविष पाणिहि
- ६ ख तहो, घ तहु
- ८ राजकुमारो
- १० पवुत्तउ
- १२ ग अडपी
- १४ ग ०तरु
- १६ क ग खुडिअउ
- १८ ख जेहि
- २० क ख कडयतरु

( 2 )

जासो गिरिवर सम्मुहें बल्लिउ,  
ता अजलगिरि सिहरममाणउ,  
आमिसपिहसरिसबल्लोयणु,  
दीहरदाड बिलाइय<sup>२</sup> शरसिह,  
अह सो भासाइ सिववधरसर<sup>३</sup>,  
भूमिमहारिय पायहि मलयहि<sup>४</sup>,  
इह उववणि बहुलह बित्थारइ,  
सक्कु वि इह आवतु वि थक्कइ,  
तुहें पुणु जियभुयगव्वुत्ताणउ,  
ता अमरासुर सिरिमचूरणु,

मंधरसीयलपवणिहि<sup>१</sup> पिल्लिउ ।  
दिट्ठउ एक्कु पुरिखुकोवाणउ ।  
पिगल भपडकय भीसावणु ।  
अग्गइ-थक्कउ गुरुमुग्गस्सर<sup>५</sup> ।  
रे रे कोत्तुहु रक्खसु सुरणइ ।  
खमवतहो<sup>६</sup> मुहु सहु सइ खउलहि ।  
आयन्नु वि एहु अत्थु<sup>७</sup> पसारइ ।  
अणु को वि कह आवणु सक्कइ<sup>८</sup> ।  
मइ आसथि<sup>९</sup> वि आउ अयाणउ<sup>१०</sup> ।  
सिक्खादेसइ भुग्गर पहरणु ।

अन्ता—इय कडुयइ सबणिहि, तहो बहु वयस्सिहि राय सूणु मणितत्तउ ।

भवभिउडि करेप्पणु<sup>११</sup>, पुरउ सरेप्पणु<sup>१२</sup>, जपइ रोसपलित्तउ ॥2॥

- 1 क मघर०
- 2 घ विलुप
- 3 क ग गुर०
- 4 घ ०सिह
- 5 ख ग घ मयलहि
- 6 घ खमवतहु
- 7 ग हत्थु
- 8 = आगमन शक्यते, अपि तु नेति
- 9 घ आसथे
- 10 ख अयाणउं
- 11 क कदिग्गणु
- 12 ख. सरिप्पणु

( 3 )

को रे तुहु कहि पोरिसु बहेसि,  
 हउ<sup>1</sup> परभउथट्टह<sup>2</sup> हियइ<sup>3</sup> सल्लु,  
 जइ अचछि सत्ति ता पुरउ बुक्कि,  
 महु<sup>5</sup> वज्जमुट्ठिमहरेण हण्डिउ<sup>6</sup>,  
 ता रोसि घुरक्कि बि सककुक्कु  
 ता कुमरु भालि उड्डिय पउट्टु<sup>7</sup>,  
 पाणिहि पाणिबद्ध पउ पायहि,  
 जा अवरोप्पर<sup>8</sup> दप्प मरट्टह,  
 दण्ड जुद्ध<sup>10</sup> गिरि गहणि पयट्टइ,  
 ता कुमरे भुयदप्प करालिउ,

वयणिहि भीसावणु किं करेसि ।  
 दप्पिय सुर असुरह दलणमल्लु ।  
 ग्रह कुवि अप्पह<sup>4</sup> साहाउ कुक्कि ।  
 णाउ बि तुह पच्छा केण सुण्डिउ ।  
 असुरे मुग्गर पाहार मुक्कु ।  
 मुग्गर वच्चिवि अगहु पइट्टु ।  
 सीसिहि सीसु पहार पहायहि ।  
 पहुयदण्ड<sup>9</sup> पहार पलुट्टह ।  
 दुहुजणमज्झि रा कुड्डिउ<sup>11</sup> हट्टह ।  
 पाइ<sup>12</sup> धरिवि रक्खसु अप्फालिउ ।

धत्ता—ता सुरसुह<sup>13</sup> दसणु, मिलिहउ<sup>14</sup> भीसणु पच्चक्खउ सजायउ ।

णिरु जोडिय हच्छउ, पणमिय मच्छउ, विहिमि बि भणइ सरायउ॥3॥

( 4 )

हउ सुर हिरणु भवणाहिवासि,  
 जा मदरि जिणु बदवि<sup>16</sup> णियतु,

पारिक्ख करणि तुहु<sup>15</sup> आउ पासि ।  
 ता तुहु दिट्ठउ सोमालगत्तु ।

- |   |                     |
|---|---------------------|
| 1 ख ग घ हउ  | 2 ख ग घ वट्टह       |
| 3 ग हियय, घ हियइ                                    | 4 घ अप्पहो          |
| 5 क ख ग महो   | 6 क हण्डिउ          |
| 7 कुमारस्य ललाटे लम्बनोच्छ्रितेन पतित । + क ख पाहार |                     |
| 8 क अवरोप्पर  | 9 ख पट्टुव, क पट्टय |
| 10 क जुम, ख जुद्ध                                   | 11 घ गहणे           |
| 11 घ कुविउ  | 12 ख पाय, घ पाइ     |
| 13 ख सुर  | 14 घ मिलिय, ग मिलिह |
| 15 ख घ तुह  | 16 घ बदवि           |



हउ तुट्ठउ तुह साहसि ए वी<sup>६</sup>,  
 जे हरियउ सो तुह<sup>२</sup> सत्तु होइ,  
 जइ यह<sup>३</sup> तुहु सिरिपुरिषम्मराउ,  
 तहि दो गहवइ ससिसूरु एणम,  
 ना ससिएण रविघरि दिणु खत्तु,  
 पइ जाणिवि ससि रिण्णहिउ तित्थु,  
 सो ससि जाइउ<sup>७</sup> इह चढरोइ,<sup>८</sup>  
 इमु<sup>११</sup> भणिवि कुमरु हत्थिहि<sup>१३</sup> गहेवि,  
 सइ<sup>३१</sup> शिव भवणहो सपत्तु सत्ति,  
 जा गामणायर तडि मचरेइ,

अवसरि सुमरिब्बउ<sup>१</sup> कहमि धी<sup>५</sup> ।  
 मइ पुणु चिरजम्महो मित्तु जोइ ।  
 सुग्गधिदेसि पसरियपयाउ ।  
 करसणि सपायणि जणियकाम  
 चोरिउ तह<sup>४</sup> गेहहु<sup>५</sup> सयलु वित्तु ।  
 सुरह<sup>६</sup> वणु अण्णिवि किउ कयत्थु ।  
 हउ रवि हिरणु सुरु एणायलोइ<sup>१०</sup>  
 खणि अइइ वाहिरि मुक्कु लेवि ।  
 कुमरु वि देसहो पिक्खइ घरत्ति ।  
 को देसु एहि<sup>१४</sup> इय मणि करेइ ।

धत्ता—ता पाडिय बु वउ<sup>१५</sup>, गहिप करवउ<sup>१६</sup>, जाइ लोउ सवु<sup>१७</sup> एट्ठउ ।

यिर<sup>१८</sup> वियसियणिन्ते<sup>१९</sup>, विम्बिह<sup>२०</sup>चित्ते, कुमरे रहि वि सुदिट्ठउ ।।४।।

- |  |                   |
|--|-------------------|
| १ ख घ अवसरे सुमरेब्बउ                        | २ ख तुह           |
| ३ क अह                                       | ४ घ तहो           |
| ५ क ख ग गेहहो                                | ६ ग सूरह, घ सूरहो |
| ७ ग जायउ, घ जयउ                              | ८ ख इट्ठु         |
| ९ ख चढरोइ                                    | ९ ख हिरणु         |
| १० ख घ एणायलोइ                               | ११ क इम्ब         |
| १२ घ हत्थेहि                                 | १३ क सइ           |
| १४ ख यह, ख एहु (प्रतिभातिहेतुतावदित्यर्थः ।) |                   |
| १५ ख पुब्बउ                                  |                   |
| १६ क ख ग मुक्क विलवउ                         |                   |
| १७ क सव एणउ, ख घ सउणट्ठउ                     |                   |
| १८ क ख थिय                                   |                   |
| १९ घ ०णोत्ते                                 | २० दिम्बि         |

बुद्धतणभावें मग्गि धक्कु,  
 भो कक्क कक्क<sup>1</sup> पामडिय सोउ,  
 त सिमुणिवि बेरउ कोवि चडिउ,  
 ज एहु चि वेयरु<sup>2</sup> जवि<sup>3</sup> मुणोसि,  
 इच्छेव<sup>4</sup> अरिजय एणम देसु,  
 तहि जयवग्गमा एणमेण राउ,  
 ससिपह एणमेण तह<sup>5</sup> जाय पुत्ति,  
 अवरु महिह एणमे एणवेण,  
 रोमिप्तिहि<sup>6</sup> बारिउ दिनु राउ,  
 ता भग्गमणोरहु एणउ महिहु,  
 जयवग्गमसेणु<sup>7</sup> सगरि एणहत्तु,  
 उज्जाडिय पुरवर बहु पएसु,

ता कुमरे पुच्छिउ पुरिसु एक्कु ।  
 किं देसहो<sup>8</sup> एणसइ सब्बु मोउ ।  
 वोत्तइ<sup>9</sup> भाउभ<sup>10</sup> तुहु एणहु पडिउ ।  
 असगाहे पुणु पुणु पुच्छवेमि ।  
 पुरु विउत्तु अन्धि बहु सिरिविसेसु ।  
 जयसिरिकता मुह बढराउ ।  
 एण सयलरुव सोहग्गमन्ति ।  
 स विवाहहु<sup>11</sup> मग्गिय एणएण ।  
 जाणेवि महिदहो तुड्ड<sup>12</sup> भाउ ।  
 मेलिवि<sup>13</sup> सबल्लिउ राय विदु ।  
 एण्वहि पुरवइ<sup>14</sup> विट्ठण<sup>15</sup> पट्टत्तु ।  
 तहो भय कपिउ एणसेइ देसु ।

बत्ता—त कुमरु सुणो प्पिणु, हियइ<sup>16</sup> हसेप्पिणु, विउलणायरि दिसि दुक्कउ<sup>17</sup> ।

दिट्ठउ माहिदहु<sup>18</sup> अविणय कदहु<sup>19</sup>, सिविर एणयर बहि मुक्कुउ ॥5॥

- 1 घ एउ
- 3 घ बुल्लइ
- 5 ल घ वइयरु, वृत्तान्त इत्यर्थ
- 7 क इच्छुज्ज, ल घ इच्छुव
- 9 ग सावे बाहहु
- 11 ल तुच्छ, घ तुच्छु
- 13 क सिणु
- 15 ल विड्डण, घ वेट्टण
- 17 क दुक्कउ, ल दुक्कइ
91. ल. घ कदहो

- 2 घ देसहु
- 4 ल भाउव
- 6 ल एण
- 8 ग तह
- 10 क एणमिप्तिहि
- 12 ल घ मेलवि
- 14 क पुरवइ
- 16 ल घ हियइ
- 18 घ. माहिदहो

( 6 )

ता दिट्ठउ पुरवर बलिहि<sup>1</sup> रुद्ध<sup>2</sup>,  
 किबि<sup>3</sup> सालभित्ति जोबति<sup>4</sup> बीर,  
 किबि चडणि दति असिवर गहति,  
 किबि समिर पडतउ सगहति,  
 किबि गिय उवरण्जु<sup>5</sup> भतइ किलति,  
 किबि जतिगोलिकय<sup>10</sup> खड खड,  
 ता कुमर पोलि<sup>13</sup> सम्मुह बलेइ,  
 जतहु जतहु<sup>15</sup> तहो दिण्ण आण  
 पभणहि भो तुव सिरि<sup>17</sup> एच्छि कज्ज.  
 आणालघणु पुत्त, वि महिदु,

ए चक्कवूहि अहिबण्णु छुट्ठु ।  
 किबि करि कु भहु<sup>5</sup> उल्लहि<sup>6</sup> बीर ।  
 ए चलियपाण अम्मल घरति ।  
 बेणिहि<sup>7</sup> घरि अरियणि चाडदति ।  
 घाइबि भरि सिरि पासय बिबति<sup>9</sup> ।  
 तह बिहु पायारहु<sup>11</sup> भिडहि<sup>12</sup> चड ।  
 चउरगु<sup>14</sup> सेण्णु तिरणममु कलेइ ।  
 गबि मण्णइ<sup>16</sup> जा ता कर किवाण ।  
 ज राय आण भजहि अणिज्जु<sup>18</sup> ।  
 ए सहइ गिरु गायहो<sup>19</sup> तणउ<sup>20</sup> कहु ।

बला—त एणिसुणिबि कुमरे, बखिय समरे, ससर वणुह उदालियउ ।

इह भजमि आणउ, अणु<sup>21</sup> एणव भाणउ<sup>22</sup>, गियभुयदप्पकरालियउ ॥6॥

- |                        |                           |
|------------------------|---------------------------|
| 1 सेनाभि इत्यर्थं      | 2 ग रुद्ध                 |
| 3 = केबिदित्यर्थं      | 4 क जुबति                 |
| 5 क कु भहो             | 6 क उल्लहि                |
| 7 क ख बेणिबि           | 8 ग घ उयरह                |
| 9 ख पामिब              | 10 ग घ जतगोलिकय (यजगोलकं) |
| 11 = कोटसमीपे          | 12 क भिडडहि               |
| 13 घ पडलि              | 14 क ख सिण्णु             |
| 15 ग घ जतहो तहो, जोहहि | 16 ग घ मण्णइ              |
| 17 = मस्तके            | 18 ग. अणज्जु              |
| 19 ख घ गायहु           | 20 ग. तणउ                 |
| 21 ख ग अर              | 22. ख. ग. घ. भाणउ         |

इम भणिवि जाम सघेइ<sup>1</sup> वारण  
 किवि हक्कमिति<sup>2</sup> महियलि लुठति<sup>4</sup>,  
 किवि मुटिठ केवि<sup>6</sup> घणु कोडि पिल्ल,  
 ता घाइउ बलु चउरमु तित्थु,  
 ता वेडिउ<sup>8</sup> गिब सुउ बहुबलेहि,  
 ए बालसूत तममडलेहि,  
 ग हरिकिसोर कु जरगगेहि  
 ता कुमरुघोरुकार मेर,  
 बल मायिर मदर जिम चरेइ,  
 सेणु ब चिडिया<sup>13</sup> चचुहि हरोइ,  
 ता गलगज्जिवि धायउ<sup>14</sup> महिदु,  
 कुमरे सधाणिक्खुरुप्पुदिण्णु,  
 ना सालसिहरि<sup>16</sup> ठिय एायरेहि

ता घाइय मड कट्ठिय<sup>2</sup> किवाण ।  
 किवि वेयपवरणपेल्लिय<sup>6</sup> पडति ।  
 किवि चूरि वि वारिणिहि किय ससल ।  
 सीहु व गुजारड कुमरु जित्थु<sup>7</sup> ।  
 ए गरुडराउ एवफणिकुलेहि ।  
 ए जलण फुलिगउ तरण चार्णि<sup>9</sup> ।  
 ए चरमदेहु<sup>10</sup> कम्मह हरेहि ।  
 जहि हक्कइ तहि दिमि पडइ सेरु<sup>11</sup> ।  
 करिकु भिकु भिकरणहि<sup>12</sup> सरेइ ।  
 बलु सयलु वि विवर मुहु कुरोइ ।  
 पलयम्भहु<sup>15</sup> रुट्ठउ एाइ चदु ।  
 पडमु जि आवतहु सीमु छिण्णु ।  
 जेइ कारिउ<sup>17</sup> कुमरु कयायरेहि ।

बल्ल—जयवम्मणरेसर, कयदु दुहिमरु, पुरुवाहिरि एमीसरियउ ।

रए रेणु<sup>18</sup> पसगहु, तहि कुमरम हु, आलिगिवि बज्जरियउ ॥7॥

1 घ सघइ

3 = हकालमात्रेण

5 घ ० पिल्लिय

7 ख जेत्थु

9 = तृणसमूहै

11 — आस्फालनै

13 घ सिचानइव

15 घ पलयरही

16 ग घ जय

2 ख घ कट्ठिय

4 क ढलति

6 ग मुडकेवि

8 क ख विट्ठिउ

10 ख चमरदेहु

12 घ ० किरणहि

14 घ घाइउ

16 क ग ० मिहर

18 घूलि

( 8 )

शिककारणु तुह सजाउ बधु,  
 ग्रह एम्मलवसह इहु सहाउ,  
 कि मेहह गिरिगणु जवयरति,  
 प्राइब्बु पयासइ वाउवाइ,  
 मेइणि<sup>7</sup> लोयहो<sup>8</sup> सम्मदुःसहइ,  
 परकारणि एज्जमु करति,  
 ता भणइ कुमरु इहु तुह पयाउ,  
 ता दुणि वि चडिया कुसुम रहे<sup>10</sup>,  
 पोरगण<sup>12</sup> लोयण कमलपति,  
 किय मगले णिव मदिरि पइदुः

ज<sup>1</sup> मह वसणहो<sup>2</sup> पुरि दिणु खणु<sup>3</sup> ।  
 ज परदुक्खह द्दु ति काउ ।  
 ज दावाणु आविवि समति ।  
 कुम्भु वि पुहवीहर<sup>5</sup> बरणावाइ<sup>6</sup> ।  
 तरुणि णिय सिरिफलभाउ बहइ ।  
 कि लोय पासि कि पि वि लहति ।  
 कय पुण्णह कह होही विपाउ<sup>9</sup> ।  
 सचल्लिय पुरवरि<sup>11</sup> रायपहे ।  
 णिवडइ<sup>13</sup> तहो उप्परि हरिसवति<sup>14</sup> ।  
 अणदिय णरवर लोयदिदुः ।

धत्ता—तट्टि मणिमयमदिरि, मण आणदिरि, णिव कयभत्ति पइदुः<sup>15</sup> ।

जा केलि करतउ, सुहु मु जतउ, अच्छइ सयल मणिदुः<sup>16</sup> ॥८॥

( 9 )

ग्रह इक्कहि<sup>16</sup> दिणि ससिपह सहीहि,  
 विण्णत्तउ णरवइ मयणरुद्धु,  
 बालत्त जुवत्तणु अतरच्छ,

महदेविहि मदिरि सगईहि ।  
 समिय कि अच्छहि कज्जमुद्धु ।  
 पुत्तिहि वडइ<sup>17</sup> भारिय अवच्छ ।

- 1 ख जे, ध जि
- 3 क ख ० कधु
- 5 ग घ पुहवीभर
- 7 ग मेयणि
- 9 = पापरहित
- 11 ख पुरवरे
- 13 घ वडइ
- 15 घ पहिदुः
- 17 घ. वडइ

- 2 क. ख विसणहो, ग, महो वसणहो
- 4 घ आवेवि
- 6 ख णइ
- 8 ख घ लोयहु = लोकस्य समर्द्धनम् ।
- 10 रवे
- 12 ख व पउरगण
- 14 ग छत्ति
- 16 ग एक्कहि, घ एक्कहि

जइयह लगु दिट्टु महिद कालु,  
 तहयह<sup>१</sup> लगु चिता बखल्लुड  
 तह तत्तु, अगु बिरहाण बेरा,  
 जइ सहियणु रायण सुष<sup>२</sup> फुसेइ,  
 तहो जलयरकुलसताउ जाणि,  
 हिम पिडवि तत्तायसि मिलति,  
 तह चंदहो सा बीहेइ पुढ,  
 तह कोइल बीणा<sup>३</sup> सह तट्टु,  
 तह णोलुप्पल<sup>४</sup> खडह तसेइ,

सो कुमार मयणगुण<sup>५</sup> लक्खणालु ।  
 कि पि बि रिणु पउ साएइ<sup>६</sup> गूढ ।  
 जह मुत्तियकण<sup>७</sup> फुट्टहि खणण ।  
 ता हत्थि दढे, खणि जलु मसेइ ।  
 दाविहि जलकेलिहि कीयहाणि ।  
 जे सीयल ते तहि<sup>८</sup> डाहु दिति ।  
 जह दप्पणि मुह दसरि विरुड ।  
 जह तियह वि बयणइ दिति कट्टु ।  
 जह सहियणु<sup>९</sup> एहु भहिलसेइ ।

धत्ता—पुणु कुमारहु<sup>११</sup> रामे, अमयहु वामे, जीवइ सा सुकुमाल तरा ।

तहो रुबहि लिहियहि, अहगुणकहियहि, रिणुवाहइ सारइणि<sup>१२</sup> दिण ॥ ९ ॥

( 10 )

त रिणुणिवि एरवइ पुलइ अगु,  
 सत्तिपह बल्लाविय<sup>१४</sup> रयणमाल<sup>१५</sup>,  
 बीबाहहो<sup>१६</sup> जा उवयण हति<sup>१७</sup>,

जयसेणु हक्कारि वि ए अणगु<sup>१३</sup> ।  
 ए एहसरल पायवह डाल ।  
 जा रिण्मिस्सिय<sup>१८</sup> मुह दिणु कहंति

- 
- 1 ल ग, जइयह  
 3 ल ग, तइय ह  
 5 ध मोत्तियकण  
 7 ध तहो  
 9 ग रीणुप्पल,  
 11 ग कुमारहो  
 13 ल. ध हक्कारित कुमार विण अणगु ।  
 14. ल क धत्तिवि वय  
 15 ल ध ० वरणमाल  
 16. ल ध बीबाहह  
 17 ल ध होंति ।  
 18 ल जा रिण्मिस्सियमुहु, ध जाणे भित्तिय ।

- 2 सयण०  
 4 क ल एउ इवयेइ गूढ,  
 6 ल ध सुय  
 8. ल ०वेणा  
 10 ध सहियणुणह  
 12 ग सारयणि

ता अत्रियसेण<sup>1</sup> पयाव पहाखउ,  
 बेयट्ठसेल दमिल्लणह् सेण,  
 धरणीचउ णामें तित्थु राउ,  
 सो अण्णइ आणिय मधिरत्थु,  
 पियधम्मु णामु तो<sup>2</sup> बभयारि,  
 कोडी<sup>3</sup> कोवीण विहसि अणु,  
 ता णिव उट्ठि वि<sup>10</sup> किउ इण्णकार,<sup>11</sup>  
 सो पभणइ पिरु बइ सेवि तित्थु,  
 जइ मुक्कउ धरु परिवारु बधु,  
 मइ सुणिउ सुवम्महो मुखिवराहु,  
 विउल्लिख णयरि जयवम्मु राउ,  
 ससिपह् णामे तसु तणिय कण्ण,  
 जो होही तहि कण्णाहि<sup>15</sup> कतु,

इण्णतरि<sup>4</sup> अण्णिककु<sup>5</sup> कहाखउं ।  
 रत्थिपुर णामें पुरवरहो<sup>6</sup> सोण ।  
 सेयर सबबूढाणु वि पाउ ।  
 सेयर सामतिहि पालियत्थु ।  
 गयखहु<sup>7</sup> मग्गे संपत्तु दारि ।  
 सव्वण्णवि मु'डिय<sup>8</sup> उत्तमणु ।  
 डोइउ<sup>12</sup> सिहासणु रयणसाह ।  
 हउ भायउ कारणि तुम्ह इत्थु ।  
 तो णिव गर अऊ मोहहो<sup>13</sup> पबधु ।  
 त णिणुखहि शारवइ मुक्कमाहु ।  
 सुवल्लयमज्झि पसरिय पयाउ ।  
 सोहम्मरासि लायण पुण्ण ।  
 सो चक्कवट्ठि तुहु पुणु कयतु ।

अन्ता — इय सुत्तलय वयणिहि, पबडिय मयणिहि, धरणीचउ मलितत्तउ ।  
 मेलिबि स्यामनइ, बेय चलतइ, विउल्ल णपरि सपत्तउ ॥ 10 ॥

( 11 )

ताम विमाणिहि णहयणु छायउ,  
 ता धरणीचइसेयरणाहे,<sup>16</sup>

पववण्ण मेहिहि ण रायउ ।  
 विज्जापय किय तणु सण्णाहे ।

- 1 क. अत्रियसेण
- 3 ख. अण्णिककु
- 5 ख. पुरवरहु
- 7 ख. ग. गयणहो
- 9 घ. मु'डिउ
11. ख. इण्णकार, घ. इण्णयार
- 13 ख. मोहह
- 15 ग. कणाहि ।

- 2 ख. अण्णिक, घ. अण्णिकरे
- 4 ख. बेयट्ठ
- 6 ख., ग. -ता
- 8 ख. ग. घ. कु डी.
10. क उठिबि
12. ख. डोयउ
- 14 ग. विउल्ल
16. घ. ०वय०, घ. ०वर०

वयणकला विष्णुस समञ्जिउ,  
 गउ सो जयवम्महो शिव भविरि,  
 जयवम्महो<sup>1</sup> भग्मइ<sup>2</sup> सो जपइ,  
 हउ दूधउ<sup>3</sup> धरणीधररायहो,<sup>4</sup>  
 तुहु भ्रमुणियकुलजाइ सहावहु,  
 पुणु ससिपह तुहु पुत्तिपहाणी,  
 ता खगरायहु<sup>8</sup> सइ धुम दिज्जइ,  
 दूय<sup>10</sup> वयण जयवम्म पलित्तउ,  
 ता भजियसेणहो वयणु रियच्छिउ,

जद्धउ एणमें दूउ विसज्जिउ ।  
 पारभिय बहुमगल सुद्धरि ।  
 दसण किरणु जुण्हइ धरु लिपइ ।  
 भग्मइ मुक्कल्लिउ<sup>5</sup> वहि भाव हो<sup>6</sup> ।  
 परदेसियहो<sup>7</sup> विबाहु करावहु ।  
 धरणीधर खगवइणा जाणी ।  
 पइसिवि हठ कारें<sup>9</sup> मालिज्जउ ।  
 ए धूमद्धउ सप्पिहि सित्तउ ।  
 बोल्लिउ<sup>11</sup> तेण दूउ रिग्गच्छिउ ।

धत्ता—रे रे तुहु<sup>12</sup> दूवउ<sup>13</sup>, भाउ<sup>14</sup> सिहवउ, मादिब्बइ बहु जुगउ<sup>15</sup> ।

रियसामिउ आणहि, काइ वियाणहि, जो भज्जवाए भग्गउ ॥ 11 ॥

( 12 )

त रिमुणिवि दूधउ पत्तु ठाणि,  
 तुहु भुधबलु ए विज्जावलिट्ठु,  
 त सुणिवि कुमरु चित्तइ हिरण्णु,  
 ता कहइ<sup>16</sup> कुमरु चित्तन्तु तामु,  
 जे भ्रमुइ कीड माणुस हवति,  
 जो सगरी मह पइ धरि हग्गेइ,  
 भह हु ति<sup>17</sup> विज्ज विज्जाहराह,

जहवम्म भग्गइ भो कुमर जाणि ।  
 ता सगरि जयसिरि होइ कट्ठु ।  
 सो सपत्तउ सुरसिरिय खण्णु ।  
 त सुणिवि सो वि भासइ सहासु ।  
 ते सामिय पइ कि पर हवति ।  
 भो मणु यहुँ कहैं सका कुरोइ ।  
 पइ दिट्ठे सबिणास ति ताह ।

1 ल जयवम्महु

2 ग भग्ग

4 घ धरणी धय०

6 ख. ०भायहु

8 घ खगरायहो,

10 ग, दूह्य०

12 क तुहु, ग तुह

14 ल भाइ सिद्धा भउ, घ सिद्ध भउ

15 ग जोम्यळ

16 ताहे केइ; ख ता कहिउ,

3 घ, दूवउ

5 ल भोकल्लिउ

7 ल परदेसियह

9. कारि

11 ल बुल्लिउ

13 घ दूधउ

17 ख. होति,



इय जा भवत्पह बज्जरति,  
ता दिव्यत्पहि पूरित महतु,  
भारहिउ कुमर बबलु पवणु,  
ता राहयलि ए भावसहो<sup>8</sup> कालु,  
इवलहसिय खगबिज्जुलरसालु,  
सरघोरणिघाउ बलु मुघतु,<sup>5</sup>

ता राहि रणतूरारउ<sup>1</sup> सुणति ।  
सुरि रहुणिम्मउ बिउ<sup>2</sup> बाहवतु ।  
सइ सजायउ सारहि हिरणु ।  
वेमाणयेह पिहि यतरालु ।<sup>4</sup>  
रणतूरसइगज्जिरविसानु ।  
सपत्तउ खगबलु पुरि तुस्तु ।

धत्ता—त पिक्खवि खगबलु, छाइय राहयलु, भसुरि<sup>6</sup> रहु सचालियउ ।<sup>7</sup>  
सरहस आवतह, बाणमुयतह, खयरह गणु पच्चारियउ ॥12॥

(13)

रे खयरहु जसु कण्णाहि ल.सु<sup>8</sup>  
गिडउ लह तुम्हह को विसेसु,  
त एणिसुणि विघायउ<sup>9</sup> खयरसेणु,<sup>10</sup>  
तातें रहु गधरागणि चासिउ,  
बेठिउ रहुवरु सइ<sup>11</sup> परिवाडिहि,  
एक्कु<sup>13</sup> गुयदह<sup>14</sup> सरगुणि सघइ,  
इय<sup>15</sup> दिव्यत्प पहावे सल्लिउ,  
किवि सविमाणा महियलि पडति,  
किवि सरपतिहि सल्लविय सूर,  
किवि सरसूडिय पाडिय विमाण,

सो भाइवि दुक्कउ भम्हपासु ।  
ज राहि ठिय जो बहू महि पएसु ।  
ए जलहि भुवण रिल्लण पवणु ।  
कुमरें घणु गुणु करि भप्फालिउ ।  
हक्किउ सुहुहु खयर जक्कोडिहि ।<sup>12</sup>  
सउ ताएइ दइसइ परिबिषइ ।  
कुमरे खग बलु सयलु वि पिल्लिउ ।  
किवि रहिसूवता खइ हुडति ।  
ऊहट्टि जति सगाम दूर ।  
एणसति केवि एणियसेवि पाण ।

धत्ता—इय वियलिय पहरणु, बहुल्लडियरणु, एणियबलु पिक्खवि भग्गउ ।<sup>16</sup>  
घरणीघइ<sup>17</sup> बाइउ<sup>18</sup>, कोव परायउ, भाइवि जुञ्जण लगउ ॥13॥

1. ख घ तूरह
3. ख पाउसहु व पाउसहो
5. ख मुयतु
7. ख सचारिउ
9. घ. विघाइउ
11. 4, ख घ सय
13. घ इक्कु
15. घ इह,
17. ग. घरणीघउ

2. ग एणिम्मउ
4. ग भतरालु
6. ख भसुरें रहु एणिम्मउ
8. घ मासु,
10. ग घ.० सिणु,
12. ख ग बलकोडिहि
14. ग. गइदह,
16. घ. पेक्खवि,
18. ग बायउ

(14)

पहरते धरणीषड् चितित,  
 त चितिवि दिव्यत्वं सम्मिञ्जय,  
 रवि बाणिहि<sup>1</sup> सा कुमरें लडिय,  
 कुमरें सा बिहु अणिनि दडिय,  
 तें कुमरें मरु डेण विहडिय,  
 अइ बहुकोब तिमिर-पाराइउ,<sup>4</sup>  
 जा आइवि सो सदणि हुक्कइ,  
 उरि एणिमिअउ तिए<sup>7</sup> लडि हडियउ,  
 ता अफ्फालिवि तूर तुरतउ,  
 शिक्कलियउ जय जयहि भएतउ,  
 ता सुरु सुह वयणेहि समज्जिउ,  
 हरिसियणायर मगल पुट्टउ,

भूगोयरहो विज्जवलवतित ।  
 वसतम एणमें विज्ज वि सज्जिय ।  
 ता घण विज्ज लणिवें मडिय ।  
 पुणु लयरि फणि बाण पयडिय ।<sup>2</sup>  
 ता लयरि<sup>3</sup> सविज्ज सबि लडिय ।  
 कट्टि<sup>5</sup> वि लणु विमाणहु<sup>6</sup> आइउ ।  
 ता कुमरें कर सम्बलु मुक्कइ ।  
 ए आइवि कालहु मुहि पडियउ ।  
 एयरहो एरवइ मगलवतउ ।  
 शिवहत्तिहि चाम डालतउ ।  
 कुमरें एण्य आवासि वि सज्जिउ ।  
 सइ पुणु तहि एयरम्मि पइट्टउ ।

अन्ता—सुह जो यह मेलइ,<sup>8</sup> एणु सुहवेलइ, ता विवाहु सपाइउ ।

कय विण अन्धेविणु, ससिपह-लेविणु, एण्य एयरहो ता आइउ<sup>9</sup> ॥14॥

(15)

पुण्ण मणोरह हरिसिय पियरइ,  
 पुरु परियणु आयुद महिल्लउ,  
 ता ताए एण्यरज्जिपरिट्टिउ,  
 ता चिरभवकयपुण्ण पहावें,

रोमचिय बहु सज्जण एण्यरइ ।  
 आयउ<sup>10</sup> भेट्टण सव्वु बहिल्लउ ।  
 मयलकोडिहि चारु पहिट्टिउ ।  
 चक्काउह एणमस्स<sup>11</sup> सहावे ।<sup>12</sup>

1. घ बाणेहि ।
3. ल. लयरेंस
5. ल कन्धिबि
7. ल तेण
9. घ. आयउ
11. ग एणमेण,

2. क. पयपइ, घ. पयपिय
4. क पराइउ
6. ल घ. विमाणहो
8. ल. मेलए
10. घ. आयउ
12. ल. आवाह सलहि मह सम्भावे

चक्ररयणु सह आइवि सिद्धउ  
 सोलह सहसिहि<sup>2</sup> जकिअहि रक्सिउ<sup>3</sup>,  
 सुर असुरह<sup>5</sup> दिवदपु मूलणु,  
 असिवर अरिसिरि वेणु<sup>6</sup> समाणउ,  
 तहि जसु लुट्टइ तिणि गुणि कालउ,  
 अरिपाणाणिलु बायलु<sup>7</sup> भक्खइ

सह सिक्के<sup>1</sup> आरेहि समिद्धउ ।  
 जिट्ठवास<sup>4</sup> आइवु व लक्खिउ ।  
 मुक्क भभोहु सकुल भणुक्कलणु ।  
 तेयज्जलण धूमहु उमवासउ ।  
 सिय जस सिण्णसर तिणि सिउ भासउ ।  
 कपहुतु अप्पहु किह<sup>8</sup> रक्खइ ।

अत्ता—कामिणि मणिमिद्धउ, तेय समिद्धउ, सोमसूरजे लिहियउ ।  
 अणि तिमिर विणासहि, वत्थुपयासहि, बलहु<sup>9</sup> किरण ।  
 भरसहियउ ॥ 15 ॥

(16)

विज्जुलरयणु जल घम्मह बारणु,  
 महिरमहाजल तरणिहि महियउ,  
 चूडारयणु सुतेय समिद्धउ,  
 हत्थि रयणु ए जगम मंदर,  
 दत्तमुसल जुउ तसु पडिहासइ,  
 मणवेयालउ चवलु तुरगमु,  
 दडरयणु कुलिसु बत्त सुसिद्धउ,  
 उवरो हिउ बहुविज्जा महियउ,  
 इट्ठ व सेणावइ अन्नयरियउ,  
 सिय रयणु<sup>11</sup> विधी गुण सपण्णउ,  
 धावरजगमगेह धडावणु,  
 आयन्नय कर सिण्णइ सिउणउ,

बारह जोयण आयव बारणु ।  
 बारह जोयण चम्मू वि कहियउ ।  
 एणसिय एणित्तमु भाविवि सिद्धउ  
 गधयणासिय गयधवसु दर ।  
 कुट्टियसिर मणिकत्तिव वीसइ ।  
 बैयह तेयह एणवइ सगम् ।  
 वज्जसिलाभेयणपडिबद्धउ ।  
 बहुविह विग्गविसासणु<sup>10</sup> महियउ ।  
 पवर परक्कम गुणपरियरियउ ।  
 अय भोयासत्तउ जण मणिणउ ।<sup>12</sup>  
 सुत्तधरणु सिप्पावम आणणु ।  
 गिहवइ जायउ भूसिय भवणउ ।

1. च. सक्कि
3. क. रक्सियउ
5. ल. असुरह
7. सर्प इत्यर्थः
9. ल व बहल
11. य पणु

2. ल. सहि
4. ग. जेट्ठ
6. क. ल. वेणि
8. गह.,
10. क वरव
12. पत्तिरिय कपुस्तके नास्ति

बला—इय बजवह दयणिहि, चितादमणिहि, सो कयणु सजायउ ।

ठिय रावहिं रिहाणहि, बहुवण खासिहि, इह सोहइ<sup>१</sup> सत्पायउ<sup>२</sup> ॥16॥

( 17 )

पडुव रिहि<sup>३</sup> सखि बणइ पूरइ,  
छहसमयह फल कुसुमइ घाणिवि  
बहभेयइ बहुतरइ देयइ,<sup>४</sup>  
सब समय तुहुउ सरीरइ  
मणिकण याह्य घर उबयरणइ,  
माणउ छत्तीस बि दडाउह,  
णैसपु बि सयणासण आणइ,  
सब रिहाणु सत्पु तमु पूरइ,  
छणबइ सहस भतेउरराणी<sup>५</sup>  
वत्तीस सहस सामतयाह,<sup>६</sup>  
सय तिणि सट्ट सुयार तामु,  
चउरासिय लखइ गयबराह,  
कोठिउ भट्टारह हयवराह,  
बलास सहमवर मडलाह,

पिगलु बिबाइरणइ पूरइ ।  
कालु समपइ बछा जाणिवि ।  
सखिणिहाणु एम्ब<sup>७</sup> तमु सेवइ ।  
पोम रिहाणु देइ बहुबीरइ ।  
देइ महाकालु बि मणहरणइ ।  
मग्गिउ देह पयासिय भरिवह ।  
सामिउ जारिस रिय मणि माणइ ।  
बकउ हु चितामर चूरइ ।  
तमु हूवइ रिजिय भच्छराणी<sup>८</sup> ।  
सक्कु बि घामकइ भलि जाह ।<sup>९</sup>  
किंकर तिकोडिणउ<sup>१०</sup> मुघइ<sup>११</sup> पासु ।  
तितियजि गणिवबहि रहबराह ।  
तिणि जि काठिउ बरधेणुमाह ।<sup>१२</sup>  
करसणि जुपइ कोडी हलाह ।

बला—इय सिगि परियरियउ, बहुगुणभरियउ, गव्वह दोसह<sup>१३</sup> मुक्कउ ।

महियलु पालतउ, पिमुणहणतउ, जा भच्छइ सुहि यक्कउ ॥17॥

( 18 )

- 1 ल, सोहेइ
3. ल घ रिहिं
- 5 ल. एम
- 7 ग राणी
- 9 क जाह
11. ल मुयइ, घ मुयइ
- 13 ल सव्वमर, म. दोमे

- 2 क ल सव्वायऊ
- 4 क होमइ
- 6 क रेण, ल राणि
- 8 क याह
- 10 ल घ राहु
- 12 क बाह

ता गण्डित एहं दुःखिहारेण,  
 मघावत बरिसहि धखकुमार,  
 सभ्वत् कुसुम पूरिय वणु,  
 सपत् सय पट्ट तित्थमरु,  
 अजियजउ सट्ट चक्काउहेण,  
 गउ समयसरणि दिट्ठउ जिणहु,  
 हरिवोडिणि सण्णउ आण लीणु,  
 करमउलिवि तिपयाहिए करेवि,  
 अपुवहरिसभारे<sup>३</sup> गरिट्ठु<sup>४</sup>

वाइअहि सुववाणिसुत्तरेण ।  
 भू कोहाराहि मास्म कुमार ।  
 वावहि सुर एहि वम जय भणंनु ।  
 पडिबोहिय तिहुअण भव्वमरु ।<sup>१</sup>  
 हरिसे बंदण चत्तिसउ जवेण ।  
 बह भत्ति करण बाउनु महिदु ।  
 रिम्मलकेवल सुहरसपवीणु ।  
 पचम पणामे सो एवेवि ।<sup>२</sup>  
 क्कट्ठि वि खर कुट्टइ वइदु<sup>५</sup>

घत्ता—अह भत्ति थुरो विणु,<sup>६</sup> पूयकरेविणु, तत्त्वइ जाण ए वखइ ।  
 कर जुउ मडलेपिणु, विणउ करेपिणु,<sup>७</sup> अजियजउ शिउ पुच्छइ ॥१८॥

(19)

इह<sup>८</sup> सामिय भीसणु भवपवधु,  
 अवेयणु कम्महु कुट्ट सहाउ,  
 ता भिण्णयुणह कह<sup>१०</sup> होइ सगु,  
 अह जइ बडउ कह जणिय सुक्खु,  
 ता परमेट्ठिहि सम्मसवाणि,  
 हुट्ठउ<sup>१३</sup> डपकवण सासमुक्क,  
 दिडपचमेय<sup>१४</sup> मिच्छत लीणु,  
 अप्पा फलिदु व शिण रिम्मलणु,

सुद्धप्पहो कह सभवइ वधु ।  
 जीवहो<sup>९</sup> सम्भेयणु शिण्णु भाउ ।  
 एह सुद्धवयणि चित्तहो<sup>११</sup> पसनु ।  
 जीवहो<sup>१२</sup> सपण्णइ सुद्ध मुक्कु ।  
 उल्लसइ सम्भ सदेहहाणि ।  
 जावणु पसरणि कुट्ट वण्णचुक्क ।  
 अप्पा बंधिजइ दिट्ठि लीणु ।  
 आसव सरिण्णु सो बरइ रणु ।

- १ ख सम्भव
- ३ ख अपुवम हरिसें०
- ५ ख कोट्टई वइदु
- ७ घ. विणई एवेपिणु
- ९ ख जीवहु
- ११ ख घ चित्तहु
- १३ क. हुट्ठउ, ख हुट्ठउ

- २ ख. स एमेवि
- ४ ख रिट्ठु
- ६ क. ख पिणु
- ८ ख इय
- १० ख घ कहि
- १२ ख घ जीवहु
- १४ घ विट्ठु

जह जह<sup>1</sup> बिबरीयउ हूबइ भाउ,  
जह सच्छ जलण बिस पमुह दब्ब,  
तह भव्येयण कम्मइ मलाइ,  
जह रिम्मलु एहु सभरइ<sup>1</sup> रत्तु,

तह तह<sup>2</sup> खिज्जइ सुद्धउ सहाउ ।  
पुरुसे उरि धितइ हणहि सम्भ ।  
जीवें लइयइ पीडाहि ललाइ ।  
तह पचहि बेहहि जीउ सत्तु ।

अन्ता—ससारहु कारणु, दुक्ख-णिबारणु, तह अविरइ जाणिज्जहि ।  
सा पुणु बारहविह, बहुदोसाबहु,<sup>5</sup> महजयणेण निबज्जहि ॥19॥

## (20)

अणुवि पयावीस कसायरत्तु,  
जह चारि कसाय पमाण रगु,  
जह पणारस ओगेहि बधु,  
इम बद्धउ कम्मिइ सुद्ध जीउ  
ता पच पयारइ भवि चरेवि,<sup>7</sup>  
ता खिल्ल विल्ल सजोउ बहइ,  
तत्थवि पुणु जुम<sup>10</sup> समिलाणएण,  
पुणु भवि चिडिय ओएण तित्थु,  
ता परसेवा दासिद्धदधु,<sup>11</sup>  
तहि हु तहो जइ हुइ काललद्धि,  
जइ कम्म गठि सभेउ मिद्धु,  
त लद्धु,<sup>12</sup> पुणवि जेइ बभइ कोइ,

वधिज्जइ कम्महि दुहु विगुत्तु ।  
तह जीविवि कम्मह हुइ पसगु ।  
पूरिज्जइ सरि तहि लवणसिधु ।  
सिम भडि पिडिउ णावइ पईउ ।<sup>6</sup>  
चउगइ<sup>8</sup> बहु ओणिहि ससरेवि ।<sup>9</sup>  
दुल्लहु मणुयत्तणु कहवि लहइ ।  
हुइ अज्जलडि पुणो कएण ।  
सुहकुल जाई सुाव हुइ कयत्थु ।  
हिइइ बरबासहो पासि बद्धु ।  
जइ भव्वत्तणु सलहइ सुद्धि ।  
तो कहवि कहवि सम्मत्तु लद्धु ।  
तहु भह मह को उवमाणु होइ ।

अन्ता—जइ पुणु दिहु<sup>13</sup> सद्ध सणु, दोस णिहसणु, गुण जुत्तउ पडिबज्जइ ।  
ता कमि किसिपतउ, गाढमुअतउ, कम्म पडलु णिह भिज्जइ ॥20॥

## (21)

इह जह<sup>14</sup> जह सुट्टइ कम्पासु,

तह तह अप्पा पयडइ पयासु ।

- 1 क जह जह
- 3 ख जहि
- 5 ग ० बह
- 7 ल चरेइ
- 9 क सभरेवि
- 11 क दधु
- 13 ग दिह

- 2 क. तह तह
- 4 ग सभाइ, घ सभाए
- 6 ख पइउ ब. पडीउ
- 8 क ० गहि
- 10 ग जुय
- 12 क लहि, वि ख लहे
- 14 घ इय

ता दब्बाइय सामगि लहइ,  
 ता ह्णिबि षाई कम्मह विपाणु,  
 इय ह्णिबि सयलु ससार दुक्खु,  
 त ग्गिसुगिबि अजियजय रायहो,  
 पुत्त कलत्त मोहु ऊहट्टिउ,  
 ग्गिम्महिय सयल ससार दुक्खु,  
 तेरहबिहु चरणहु चरिउ भाव,  
 बारह बिहु दुद्धक तउ चरेइ,  
 जियसेण गहिय सावय वयाइ,  
 सा बदिबि जिणु अणु पियरपाय,  
 पइ साहु-साहु आयरिउ चरणु,  
 जे सुणि वि चम्पु ए वि सगहति<sup>1</sup>,  
 इय गिरु भरोवि गिय रायक पत्तु,

ता दुद्धर चरणहु भाव बहइ ।  
 उप्पाइबि केवलु सुद्ध गाणु ।  
 जीवहो सपज्जइ राय मुक्कु ।  
 संसारिय सुह जाणिय बिरायहो ।  
 मणु गिब्बेयहो कत्तियपयट्टिउ ।  
 जिणपाय मूनि सगहिय दिक्खु ।  
 पालइ बारह सजमह सार ।  
 इय कम्मपास छिदणु करेइ ।  
 खाइय सम्मत्त सम कयाइ ।  
 जियसेणु भणाइ भो ताय ताय ।  
 ज जिण वयणह आएसु करणु ।  
 ते चपा पुरि सुव गार हवति ।  
 मणिहरिस सोय सबेयपत्तु ।

धत्ता—ता जिणपाय गामणिहि, बह सुह करणिहि, सो दिणाइ<sup>2</sup> अइवाहइ ।  
 चउविहि बहुदाणइ, कय गुणि माणइ, सावयत्तु गिब्बाहइ ॥ 21 ॥

इय सिरि चदप्पहचरिय महाकइ जसकित्ति बिरइए  
 सिरि सिद्धपाल सबणमूसणे, जियसेण सायारचम्मलाहो गाम  
 चउरपो सधी समत्ता ॥ 4 ॥

1. च. आयरति

2. च दिणाणि

## पंचमो संधि

( 1 )

ता चक्काइय रयणइ पुज्जिवि,  
पुअ दिसिहि<sup>१</sup> पयाणु<sup>३</sup> वियणउ<sup>४</sup>,  
चक्करयणु अगइ धिउ वल्लइ,  
जतउ जतउ पुअ ममुद्धो,  
तडहु तइ जोयण चउबीसहि,  
बारह जोयण चम्मु पसारिउ,  
बारह जोयण बाणु पमुक्कउ,  
जा एामकिउ तहि<sup>६</sup> सर दिट्टउ,  
मतिहि मिक्खिवि सेवकराविउ,

सयलवलह<sup>१</sup> सामग्गिसमग्गिवि ।  
बज्जिय बु दुहि सद्<sup>६</sup> रवणउ ।  
खधा वारु पुट्ठि तसु हल्लइ<sup>६</sup> ।  
तीरि पराइय<sup>७</sup> सलिलरज्जहो ।  
मागह देवह भवणइ दीसहि ।  
तहो उप्परि रहवर सचारिउ ।  
मागह भवणहो जाइ वि ठुक्कउ ।  
ता गलगज्जड<sup>९</sup> भागहु रुट्टउ ।  
मणि पाहुड तेसणि वियराविउ<sup>१०</sup> ।

धत्ता—मागह<sup>११</sup> कर लेविणु, विणइ ओवेविणु, दक्खिण दिसि सो दल्लिउ ।  
जलणिहि तडि आवे विणु, बाणुरए विणु, व तणु दडिवि मिल्लिउ ॥ १ ॥

( 2 )

तह<sup>१२</sup> पच्छिम परिहासु वि साहिबि,

वायव मिच्छह कर उम्माहिबि ।

- १ ख बलह, घ ओवलहि
- ३ क ख पायाणु,
- ४ ख विहणउ, क वियणउ,
- ५ ख सद्धु,
- ७ क परायउ
- ९ क गज्जइ,
- ११ घ मगह,

- २ ग ओदिसेहि,
- ६ ख. हल्लइ,
- ८ क तहि,
- १० ब वियरायउ,
- १२ ग तह ।



सोणावइ हरि रयणि चढाविबि,  
 भट्टवरिसु गुहदारियव सेबिणु,  
 खडियरयणि ससिसूर लिहेविणु,  
 छत्त भजिण<sup>1</sup> सपुडि वसु गोविणु<sup>2</sup>,  
 मिच्छसुद्ध सामिय दडे बिणु,  
 रियपुरि सत्तण गम्बु मुए विणु,  
 ईसाणह मिच्छह करु सेबिणु,  
 भण्णवि भण्णमिय रिउ उप्पाडिवि,

दडे तिमिसह दारु फडा विबि ।  
 ता उल्हाणिय मुहिपइ सेबिणु ।  
 एयारह दिणविट्ठि सहे विणु ।  
 वायकुमारिहि मेहजिणे विणु ।  
 वसुह<sup>3</sup> गिरिहि रियणामु ठवे विणु ।  
 गगादेविहिं भग्गु गहेविणु ।<sup>4</sup>  
 — — — — —  
 बेयट्टहो लयरह पइ पाडिवि ।

घत्ता—गुहदार उपाडिवि<sup>5</sup>, दडे फाडिवि, गगसुत्तु जहि पत्तउ ।

तहि मग्गिसरे विणु, पुहवि जिणे विणु, रियणायरहो सपत्तउ ॥2॥

( 3 )

साहिबि छक्खडइ चक्कणाहु,  
 ता सोसिय विरहिणि रुहिरमासु,  
 हिमदड्ठ सयल उववणाहि कालु,  
 वालाणदिति रिय भहरि मयणु,  
 उल्लसहि सरोवरि चारुकमल,  
 भजरि पिजर पिच्छि वि रसाल,  
 कोइल<sup>7</sup> हविकय तियमुयहि माणु,  
 मलयाणिलि सुरहिउ सञ्जुलोउ,

जा भच्छइ जयसिरि सुहसणाहु ।  
 सपत्तउ तित्थु वसत मासु ।  
 ऊसरिउ भक्ति<sup>6</sup> हेमतु कालु ।  
 सव्वत्थ वि सचइ वाण मयणु ।  
 शिञ्जल शिवसइ सइ जेसु कमल ।  
 हा पहिय मरहि विरहि रसाल ।  
 जाणिवि दुस्सह कामहु<sup>8</sup> पमाणु ।  
 मल्लोरय पिजरु णहविलोउ ।

- 
- 1 ग घ भयण,
  - 2 क ख. देविणु,
  - 3 क ख वसुह,
  - 4 क ०महेविणु,
  - 5 ग. उपाडेवि,
  - 6 क ०मत्ति
  - 7 ग कोयल०,
  - 8 क. कामहो ।

तिय पय ताडिउ बिसयइ असोउ,  
दाबागल सिरिदरिसहि पलास,  
महु<sup>1</sup> गइसहि फुल्लति बउल,  
दिसि एारि गहिहि बहु कुसुमवासु,

कामिणि कुट्टिउ सध्वु वि असोउ ।  
एां कामणिहय पहियह पलास ।  
तियमुत्तुवि बछहि बिसय चवल ।  
महुमासु सयल बिसयह रिवास ।

घस्ता—पाडल बिल्लहि<sup>2</sup>, बियसिय फुल्लहि<sup>3</sup>, मज्झु गहिबि अलि गायहि ।  
एावइ रइकतहो सिधिरि चलतहो, काहल सखइ बायहि ॥3॥

( 4 )

ता अतेउर<sup>4</sup> बहुपरियरियउ,  
कुसुमेकतु<sup>5</sup> तित्थु वणि<sup>6</sup> दिक्खइ<sup>7</sup>,  
के पइ रय रासिहि वणु धवलउ,  
धलिउलि अघारिउ तहि वणु,  
कामिणि कुल तहि कुसुमइ गहति,  
कुबि वणुमाला एियउरि करेइ,  
कते एाव बहु चुंविम एिक्कु जि,  
कुबि सिर उप्परि पोमुभ माडइ  
कासुविमुह तडि अलिउलु भमेइ,  
कासु वि कते<sup>13</sup> किउ गुत्तभेउ,

एारवइ केलीवणि सचरियउ ।  
सरवरि सणु<sup>8</sup> विसमेसु व सिक्खइ<sup>9</sup> ।  
मयण एावहु कितिहि एा सबलिउ ।  
एा मयण मोहु पच्चक्खु हुवु ।  
एा कामवाण कोवि<sup>10</sup> खुडति ।  
एा कामयेहि तोरणु भरेइ ।  
ककण चु जावहि माणु<sup>11</sup> मजि ।  
एा वयण होऊ<sup>12</sup> यारणि पाडइ ।  
एा राहु विवु चदहु कमेइ ।  
एा वज्ज पहारे<sup>14</sup> गुत्तभेउ ।

- 
- 1 क ल - मुहं,  
2 क बिल्लहि, ल वेयल्लह,  
3 क ०हि  
4 क. तातेउरं,  
5. ग ०मवकतु,  
6 क. वणु,  
7 घ देक्खइ,  
8 ल. होउ  
9 ल. सिक्खइ,  
10. क. ल- व. कोवे,  
11 क मोणु,  
12 ल. होउ  
13 ल कति  
14. ग पहार ।

सह माणजलणु सबलिउ भल्लि,  
किवि चपयमाला सिरि करेइ,

जह मयण बाण तलिय धरति ।  
ए कामजलण जालिहि जलेइ ।

घत्ता—इय बणि वियरतह, केलि करतह. एारिहि समु सजायउ ।

धणारमणि लुलतउ, से उजणतउ, सइ पडिकतु व भायउ ॥ 4 ॥

( 5 )

ता एरवइ<sup>१</sup> सर सम्मुहु चलिउ,  
घणसेलह भारेण करणतउ,  
काहिबि पहि रसणा बुबावइ,  
घण घुव्वह<sup>२</sup> कि<sup>३</sup> ह भार सहसइ,  
ए पढमु जि सलिल तलि एगी,  
जो दहु पुरिस पमाणउ विट्टउ,  
चक्कजुअलु<sup>४</sup> जलु छडिवि एट्टउ,  
दिक्खिवि ताह ललिय गइ सवरु,  
बहु घण सेलहि सो सरु महिउ,  
तह हासु व सो<sup>५</sup> फेणु जि दरिसइ,  
जलि एय एहि अजणु पक्खालिवि,  
जइ जावइ<sup>१०</sup> रसु पायह फिट्टउ,  
जलि अलि सहु केयइ पत्तु तरइ,

महु महु मलयाणिलि पिल्लिउ<sup>६</sup> ।  
अवला जणु खिज्जइ पहिजतउ ।  
मज्झु तलिणु सुट्ट<sup>७</sup> तु व भावइ ।  
पच्छा दूसणु महो जणु वेसइ ।  
धाइवि सेयमिसिण अलिगी ।  
सा तिय एहिहि सयलु पइट्टउ ।  
जउ थण कु भह विच्छरु दिट्टउ ।  
हसा एट्टा मिल्लिवि<sup>८</sup> सरवरु ।  
अण्णु वि पाय पहारिहि एिहियउ ।  
णिम्मलु अवरुवि कहवि ए बिरसइ ।  
कमलिहि सहु एिह साविय मेलिवि ।  
तो रत्तुप्पल सोरहु<sup>११</sup> उट्टउ ।<sup>१२</sup>  
ए धीवरि चोईय एाव तरइ<sup>१३</sup> ।

1. क. एरवर

3 ख ०घु व्वह, ०घ घुव्वह

5 क ०सेय०,

7. ख मेल्लिवि,

9 क जो ।

10. ख. जावय,

12 ख. उहट्टउ.

2 ग घ पेल्लिउ,

4 घ. कह

6. ख ०यलु०,

8. ख तह

11 ख. सोहणु

13. क. ख. ०वरइ

घत्ता—इय जा जलि कीलइ, परिसमु मीलइ, शरवइ तियगणजुत्तउ ।

ता पविरल<sup>1</sup> किरणउ, जग आह रणउ, पच्छिम दिसि रवि रत्तउ ॥ 5 ॥

( 6 )

ता जलकेलि मुअवि<sup>2</sup> पुहईसर<sup>3</sup>,  
सूरु बि दिएलि अत्यवरिणपत्तु,  
रविरहहो तुरग मवेय पुण्ण,  
ता रहिर पवाहि<sup>4</sup> सिघु जरिय,<sup>5</sup>  
छुटु सूरै<sup>6</sup> जलणिहि भादिण्ण,  
बहु उवयारहो सुमरयणि<sup>7</sup> थक्कहि,  
त<sup>8</sup> रवि सभइ<sup>9</sup> सीयलु जायउ,  
घबलु विकालु विइक्क<sup>10</sup> बियारऊ,  
तम भर दीवय णिह<sup>11</sup> उरि पिबति<sup>12</sup>,  
पोमिणि मीलइ पिर पोमणयण,  
उरि जलिय काम उज्जालएण,

गउ गेहहो बहु कामिणि परियर ।  
सो मूढउ जो इह गव्वजुत्तु ।  
णिंसि मुह<sup>3</sup> सेरिह सिगम्भभिण्ण<sup>5</sup> ।  
लोए<sup>6</sup> सा सभा णाम भणिय ।  
तावहि तारा सीयर पवण्ण ।  
रवि सताव<sup>11</sup> लइय फुडु चक्कहि ।  
चक्क मिहुणु पुणु ताव परायउ<sup>14</sup> ।  
मुक्खहो रज्जु ब ठिउ अघारउ ।  
अम्म<sup>18</sup> मुव कज्जल मिसि वमति ।  
मुच्छिज्जइ पियविरहि ए कवरण ।  
सयरिणि पिय घर बब्बहि सुहेण ।

घत्ता—ता तम भर एट्टउ<sup>19</sup>, राय गरिट्टउ, पुव्वसेल मिरि दीसइ ।

कई<sup>20</sup> खवणु ब हासइ, भुवगु पयासइ, माणिणि सिक्खा सीसइ ॥ 6 ॥

- 1 ग ०रल,
- 3 क ०वीसरु,
- 5 ख घ सिगम्भभिण्ण,
- 7 क मिलिय,
- 9 ख सूरि,
- 11 ख ०सताव,
- 13 ख सभा, क स भइ,
- 15 बिऐक्क,
- 17 क धिवत्तु,  
घ. पियति ।
- 19 क कय,

- 2 ख घ मुअवि,
- 4 ग घ मह,
- 6 ख बाहे,
- 8 ग लोए
- 10 सुरमणि,
- 12 खा ति,
- 14 ख पराइउ,
- 16 ग णिह
- 18 म हम्म
- 20 पाय

( 7 )

पुर्वगणु पदमु जि आलिगी,  
जावय लिस् थाए<sup>१</sup> हणियउ,  
काम किरा डह ससि जाणपत्तु,  
तम भए ज ससि गिम्भलु भक्सइ,  
महु अरि ससि जिप्पइ तियमुहेण,  
तहो<sup>३</sup> पिट्ठणि सण्णउ चंदुलेवि,  
कइरव वणि भमरा रुणु<sup>४</sup> भुणति,  
चदिणि सयल भुवण तलु चवलिउ,  
सयरणि कडक्क तत्तहि, मरेहि  
ता किरण वधि पीयूस विडि,  
तिय माण सेल दारट्टु<sup>६</sup> पुण्णु,  
ता चवलिउ गयण<sup>७</sup> कुविदि लोउ,

पिच्छि वि सिसिता कोवि पसगी ।  
ते कारणि ससि रत्तउ जणियउ ।  
गयणयल जलहि सवरणिपत्तु ।  
उरिठिउ<sup>२</sup> त जणु लछणु पिक्खइ ।  
इय चित्तिवि तमु कवरी छलेण ।  
कुसुयच्छलेण ससि किरण केवि ।  
ए ससि हयतमवधव हवंति ।  
हरि सियमयण हाति ए सवलिउ ।  
ससि भमिय कु मु भिण्णउ<sup>५</sup> खरेहि ।  
पभरइ चवल ते हूम सिडि ।  
ससि वज्जणालि ते करि वि बुण्णु ।  
अण्णह कह एहु पयामु होइ<sup>८</sup> ।

धत्ता—इय पिक्खि वि चदिणु, मण आणदिणु, कामिणु जणु सण्णउ<sup>९</sup> ।

पारमिउ मडणु, जगमणु दंडणु, कत चित्तु<sup>१०</sup> विज्जइ<sup>११</sup> ॥ ७ ॥

( 8 )

हरियदिणि<sup>१२</sup> किवि लिपति<sup>१३</sup> भगु,  
मुहि एण एहि वल्लीरपति,  
किवि हारावलि गिय गलि कुणति,  
किवि रमणि घरहि मेहलह माल,

ए विसि पाइय गियसण अणणु ।  
ए काम भुवण जुयलि वि लिहति ।  
ए सुह ससि सेवइ उडुह पति ।  
ए कामहो मदिरि तु मसाल ।

- १ पाय
- ३ ख. घ तट्ट, ग तहि,
- ५ ग भिन्नउ,
- ७ क ख. मयण,
- ९ ख. ०मण इज्जइ,
- ११ ग वज्जइ
- १३ क. लपति

- २ ख उरिठिउ,
- ४ घ ०जणु,
- ६ ख ०रट्ट
- ८ क. ख घ ख. होइ
- १० ख जि, घ. ग. जे,
- १२ ख ०दणु, ग दणि ।

बहु भग कति सारिच्छ नीर,  
ता कालायरु<sup>१</sup> धूमच्छलेण,  
सो सिगारहु भर तह<sup>२</sup> जायउ,  
ता पुङ्खीसरु<sup>३</sup> तिय णु विलसइ,  
सेविवि सेविवि काम पलित्तउ,  
जा सयल काल कामे पलित्त,  
जा सखणाहि सारिच्छ जोणि,

तहि पहिरहि शिर सुरहिय सरीर ।  
ए विरह दुक्खु तियणु मुण्ण ।  
जे कामु वि कामे सुपराउ ।  
भमरु व पोमि पोमि आवासइ ।  
ता तिय रयणहो धरि सपत्तउ ।  
जा बहु कालेण वि जरइ वत्त ।  
जा शिर पचिदिय सुक्खलोणि<sup>४</sup> ।

॥—तहि<sup>५</sup> सुरइ<sup>६</sup> पसगिउ, बहु सुहि भगिउ, शिदा सुह किरणाणइ ।  
ता दीव घुणत्तउ, सेउ हणत्तउ, मिसिराणिनु रइ आणइ ॥ ८ ।

( ९ )

गिय वसु परिवार कलाइ मुक्कु,  
त कइरवदुह मीलत तुड,  
तम भिव्व व जे शिसि कमल कोस,  
ते कुक्कुड रव काहल मुगेवि,  
छुइ तम तक्कर शानराण पइट्टु,  
सभा<sup>१०</sup> विद्दुम वणु विच्छइ,  
मूईहु अलिहक्कहि धूम गण,  
रइ घर जालिहि रविकर विसति,  
जिण भवणि<sup>१२</sup> रसहि पाहाय त्र,

ज राया किर अत्यव गि दुक्कु ।  
अलिकुल गिलनि ए रिसह खड ।  
पइ सिवि अलि लुक्कहि<sup>७</sup> जणिय तोस ।  
पीसरहि सूर आवउ मुणेवि ।  
पुम्बगण उट्टइ<sup>८</sup> रत्तघट्ट<sup>९</sup> ।  
रविबिबु पक्कफलु ए बरइ ।  
ए धम्म विवज्जइ एरवर पिमुण ।  
ए तत्त मयण एाराय इति ।  
ए भउ हक्कहि सम्मत्त सूर ।

- १ क ख कालायरु,
- २ ख सो सिगारहु, ग सो सिगारभारु तहो
- ३ ख पहवी,
- ४ ख० ०खेणि,
- ५ घ सुरय
- ६ छ घ उट्टइ,
- ७ ख सभा०
- ८ ग भवण ।

- ५ घ तहे,
- ७ ख अलित्हुसहू,
- ८ ख घ, ०घट्ट
- ९ ख अलित्त्वक्कहि,

घत्ता—बूरिवि पय भारें, दरिसिय सारें, मसह पिडु ब मुक्कउ ।

मल रहिर गलतउ, हह्दुमलतउ, मणु आवय<sup>1</sup> बहि बुक्कउ ॥10॥

( 11 )

त पच्छिवि<sup>2</sup> एरबइ<sup>3</sup> चिताबिउ,  
हा ससार जलहि भीसावणु,  
त हउ जगि एहु कि पि ए<sup>4</sup> देक्खमि<sup>5</sup>,  
जेण बि जीवइ तेण बि मरेइ,  
वुहि वुट्टुवि एहु बेरमि जाइ,  
बहु गेह कज्जि<sup>6</sup> गहिलिय मणेण,  
पावहु एहु वीहइ विसय सत्तु,  
जइ<sup>7</sup> कोई<sup>8</sup> दयावरु कहई तवु,  
जीवहु<sup>9</sup> गिय देहु बि बेरि ठारिण,  
जहि देहु किरपरि सुसरउ<sup>10</sup>,  
एारी करकि<sup>11</sup> एह काउ गिड्डु,  
सइ ज तउ तिरि वउ देइ दुक्खु'  
ता हउ गिच्छउ पवह करेमि,

बुक्ख जलण जालहि सताबिउ ।  
मणुयह<sup>4</sup> एहुउव<sup>5</sup> जिरु एक्खावणु ।  
मणुय मरणु ज किरणहु लक्खमि ।  
ता मणणहु किहु एहु भउ घरेइ ।  
जाणिवि जाणिवि एहु तच्चि ठाइ ।  
जमु पत्तु बि एवि दिट्टउ जणेण ।  
बुज्जविउ ए बुज्जइ मोहरत्तु ।  
त गिणु गिणिवि एउ मणोइ सव्वु ।  
मूठउ भवि गिणवइ मणु जाणि,  
को किर संपिक्खइ तासु रुउ ।  
जमि पारद्वि<sup>14</sup> बाणेण विड्डु ।  
पढमु जि मुक्कउ पुणु जणइ सुक्खु ।  
भव कारणु सयलु बिपरि हरेमि<sup>15</sup> ।

1 क. आवइ

2 क ख ग पिच्छवि,

4 क ख मणु वहु,

5 क. ख एडयउ

7 क. दिक्खमि

9 क. जय

11 क. घ. जीवहो

13 क. कण्णकि, ख. करेकि

14 घ. पारद्वी

15 क. हरेवि

3. घ. एरबइ

6. क बि

8. क. कज्जि०

10. क. को बि

12. क. सत्तुउ, ख. सरउ

रवितेय पयासिय घरपएस,  
ता मगल तूरहिं हरिणम रिणु,  
किय समयल पहायहु रिण्वकज्जु,  
ता कणायरयणि आसणि वि इट्ठु,

सम्बनछवि एणसिय तम असेस ।  
उट्ठिउ पुहईसरु विगय तदु ।  
ताह वि पहिली किय देवपुज्जु ।  
सहमडवि इदु व एणरहिं दिट्ठु ।

घत्ता—तावहु सामतहि, अण्णु विमतिहि, सिरुघरलाइ वि वदियउ ।

किय अवसर ववणिहि, सुमहुरवयणिहि, कय वदिय रिणिहि एदियउ ॥१॥

( 10 )

ता जयकु जरु सेवय आयउ,  
दीहरघोर सुवद्दुलहत्थउ<sup>१</sup>,  
पविसद<sup>२</sup> सणु महु पिगल सोयणु,  
सत्तिहि<sup>३</sup> ठारिहि मउ वरिसनउ,  
दिग्गय बलु रिण्व मणि चिततउ,  
कर सीयर भरिघर<sup>४</sup> सिचतउ,  
पयभरि कुम्मपुट्ठि चूरतउ,  
विकितवि रिण्व पडिकावलड विक्खिय  
कर पिछइ कुवि रिण्व राइ पुरवरि,  
ता<sup>५</sup> अण्णिवकु वि आरी घायहि,  
तातहो पुट्ठि चलइ जा करिवरु,  
इय तिहि जा सो करि खिल्लाविउ,  
ताति कहवि इक्कु एरु गहियउ,

ए अजरण गिरि चलण परायउ ।  
अइ गुरु कु भि समुण्णइ<sup>१</sup> मत्थउ ।  
आयविर एहु वक पलोयणु<sup>२</sup> ।  
रिय छाया बिंवि विरु सतउ ।  
उह दिसि फुट्ठ सहसणिह<sup>३</sup> दतउ ।  
कु भिय मतरयण ए दितउ ।  
रणकेली विणु रिण्व भूरतउ ।  
घाइय करि दमणइ जिहि<sup>४</sup> सिक्खिय ।  
तह कुडि घावइ जा कोवह भरि ।  
पुत्तिहि घाइवि खु चइ पायहि ।  
पासिहि घाइवि सहु रिण्वराइ कुवि एरु ।  
रिण्वभच्छण वयणिहि बुल्लाविउ ।  
पायघरिवि<sup>५</sup> भूमी सहु रिण्वियउ ।

1 क समुन्नइ,

2 क कविसद,

4 ख अट्ठिहि,

6 घ लरिघर,

8 क तो

10 ग. पाइ० वरिवि

3 क सोयणु

5. ए सहसणि

7 क घ. जह, जिहि

9 क आरीय, घ. यारी



धत्ता—इय जाणिवि<sup>१</sup> चितइ, उवसमवतइ, पुहवीयसर सह सठियउ ।

ता वि एमत्तउ, इय पभएत्तउ, वणवइ<sup>२</sup> दारिपरिट्ठिउ ॥११॥

( 12 )

देव देव मुणिवर वणि<sup>३</sup> भायउ,  
पच्चमहव्वय भरणिव्वाहणु,  
पचेदियदारह<sup>४</sup> कयसवर,  
पच्चह गिग्गयह जो उत्तमु,  
पच्च सरीरह जो मिल्लहण<sup>५</sup> मणु,  
पच्चह मिच्छत्तह<sup>७</sup> जो एासणु<sup>६</sup>,  
समिदिय पच्च वि एिम्मल पालइ,  
पच्चह जीवसमासह रक्खणु,  
पच्चाचारु जु एिण सचारइ,  
पच्चह मेरुहि जो जिणवदइ,  
पच्चाणुत्तर सुरहि<sup>८</sup> जु पुज्जिउ,  
धावर पच्चह जो दयवत्तउ,

गुणपहु एामें जग विक्खायउ ।  
पच्चाणुव्वय भवियह साहणु ।  
पच्चयएाण पयासिहि<sup>५</sup> दिणयर ।  
पच्चह परमिट्ठिहि जे किउ एमु ।  
भावह पच्चह जाणइ लक्खणु ।  
सज्जायह पच्चह परिपोसणु ।  
पच्च वि अत्थि काय एवि चालइ  
पच्चासव जाणणि सुबियक्खणु ।  
पच्चवाण जम्मु वि सहारइ ।  
पच्चम गइ सुहरसु अहिणवइ ।  
पच्चह मिच्छह जणु जें वज्जिउ ।  
एिहा पच्चउ जें एिण जितउ ।

धत्ता—त एिसुणिवि एारवर, कपा वि विसर, अणु सणुएत्त जाणिउ ।

अगहु आहरणहि, पसरिय किरणहि वणमालिउ सम्माणियउ ॥१२॥

१. ख घ जामणि
२. घ वणयर
३. ल घ वणि मुणिवर,
४. क दारह,
५. ग पयासिइ
६. घ मिल्लण
७. ग. घ. मिच्छत्तह
८. ग घ. तासणु
९. क. ०सुरइ

ता रिणउ मउ वणि दिट्टउ मुणिणु,  
 दो दोसिहि<sup>1</sup> मुक्कउ गुण महतु,  
 दो<sup>2</sup> तवि सताविष कित्तिष गत्तु,  
 दो रिणजराइ रिणजरेइ<sup>3</sup> कम्म,  
 दो सगइ जेण पढमेण मुक्क,  
 दो भेयउ पुग्गलु<sup>4</sup> जो मुणेइ,  
 दो वेयणीउ जो फुडु खवेइ,  
 दो सीलह जो सगहइ माउ,  
 तिहु अण्ह जो जाणइ सहाउ,  
 तिण्णिवि सबर<sup>5</sup> जसु फुडु हवति,  
 तिण्णि वि गुत्तिउ जसु गाढयति,  
 तिण्णि वि गुणवय जो जणि कहेइ,  
 कालत्तउ जसु पच्चक्खु भाइ,  
 जो तियगारव<sup>6</sup> छाया विमुक्कु,  
 तिहु वडहि जो उड्डकाउ,

तहो परियरि दिट्टउ मुणिहि विदु ।  
 दो मुक्खहि रिण रिणम्मलउ द्वुत्तु<sup>7</sup> ।  
 दो बध गाढ<sup>8</sup> बधणाहि<sup>9</sup> चत्तु ।  
 दो मज्झि<sup>6</sup> पालइ परव धम्म ।  
 दो गुत्तकम्म<sup>7</sup> बधणाहि च्चुक्कु ।  
 दो सिद्धह<sup>9</sup> जो वदण करेइ ।  
 दो भेउ धम्म जो वज्जरेइ ।  
 दो जीवसमासह अण्ह काउ ।  
 तिहु सम्मत्तह बुज्झंइ भाउ ।  
 तिण्णि वि वेयइ<sup>11</sup> जसु खयहो जति ।  
 तिण्णि वि मूढइ जसु अवसरति ।  
 तिहु जोयह जो रिणभर सहैइ ।  
 लोपत्तउ कर आमलउ र्णाइ ।  
 जो तिय सत्तइ उक्खणाणि ठुक्कु ।  
 तिहु मुडिहि जो सुद्धउ सहाउ ।

धत्ता—इय पिकिल्लवि मुणिवर, बहु गुण गण हर, एरबड पायहि पडियउ ।

सुद्धय रिण्य भावे, वियलिय पावें, ए गुण सेठिहि बडियउ ॥13॥

- |  |                             |
|--|-----------------------------|
| 1. ख = रागद्वेष इत्यर्थं,                      | 2. ख ह                      |
| 3. = पुण्यपाप ससारीक बध इत्यर्थं,              |                             |
| 4. ख. बधणाहे,                                  | 5. = सविपाक अविपाक निर्जरा, |
| 6. = इन्द्रिय प्राण समय,                       | 7. = उच्च नीच मोक्ष,        |
| 8. = स्कन्ध-परमाणु,                            | 9. = सकल-सिद्ध निकल-सिद्ध,  |
| +. = बाह्य-आन्तर,                              |                             |
| 10. = मनवचन कायसवर,                            |                             |
| 11. = स्त्री, प. नपुंसक,                       |                             |
| 12. क गावर०, = रस—ऋद्धि—तप इति त्रिगौरव—छाया । |                             |

## ( 14 )

ता एरवह पुइ वइणिहि भासइ,  
 अज्जु मज्झु लोयण कय पुण्णइ,  
 अज्जु जि सहलउ महो मणुय जम्मु,  
 अज्जु जि मह<sup>2</sup> चितामणि कररु,  
 अज्जु जि भवसायर जाणु मेत्तु<sup>3</sup>,  
 ता सामिय फेडहि भव विसाउ,  
 तुह<sup>4</sup> करणा सायर गुण महत्तु,  
 त एिसुणिवि मण<sup>5</sup> पारिक्ख हेउ,  
 भो एरसामिय सोमालयत्त,  
 जह<sup>6</sup> पु सहइ कक्करह मुट्ठ,  
 तुह<sup>7</sup> सिरसकुसुम सोमाल देह,  
 ज हरियदण<sup>8</sup> रसपकि खुत्तु,  
 जो हसत्तुलि पल्लकि सुत्तु,

अप्पहो पावत्तिमिह लिप्पणासइ ।  
 अज्जु मणोरह मुह<sup>1</sup> पडिपुण्णइ ।  
 अज्जु जि मह एट्ठउ थोरकम्मु ।  
 अज्जु जि मुहो पुरिसह तुरिउ अत्थु ।  
 अज्जु जि मह सम्बह सार पत्तु ।  
 मह दिक्खदाणि किज्जउ पसाउ ।  
 मह रक्खहि रक्खहि दुहसहत्तु ।  
 मुणिवरु जंपइ पयडिय विवेउ ।  
 खर भार सहत्ति न कमलपत्त ।  
 कक्कह<sup>6</sup> कुंपउ ए<sup>7</sup> सहइ चट्ट ।  
 जिण दिक्खा पुणु बहु दुहहं गेह ।  
 त चियरय भरि कह<sup>10</sup> लुठइ<sup>11</sup> गत्तु ।  
 तहो थडिलि कह लमिहइ चित्तु ।

धत्ता—इय<sup>12</sup> बहु सिरिभोयहि, एिह एियसोयहि<sup>13</sup>, जो एिह सुक्खइ माणइ ।

सो दुक्खह मविह, एयरण असु दर, अप्पउ तउ किह<sup>14</sup> भाणइ ॥ 14 ॥

## ( 15 )

त एिसुणिवि पभणइ धरणि एाहु,  
 सामिय सच्चउ मह भाइ सुक्खु,

तवयरण<sup>+</sup> गहणि एिम्बह<sup>15</sup> गाहु ।  
 पुणु गुरु अउ एरयहो तरणउ दुक्खु

1. ख. ग. मह
3. क. मित्तु
- + . क. तुह
6. क. कक्कह
8. क. तुह
10. क. किह
12. ग. धय
14. ख. किह, ध. कह
15. ख. एिम्बहइ ।

2. क. मुह,
4. क. मण०
5. = जीर्णवस्त्र इत्यर्थः ।
7. क. कावसु,
9. क. ० अदण
11. ग. लुठइ
13. क. सोहहि
- + तववरणि

कत्थवि वदणि लोलेइ पिडु,  
 कत्थवि जीवहो चामर दलति,  
 कत्थवि रयणासणि सुहणि विट्ठु,  
 कत्थवि भालिगहि हरिणएत्त<sup>६</sup>,  
 कत्थवि जयवारण सिक्खियत्थु<sup>७</sup>,  
 कत्थवि सुकविहि पयडिय गुणेहु,  
 कत्थवि रुवे जित्तउ अणुगु,  
 इय बहु भए ससाणि एडिउ,  
 इय भणिवि कठ कदलहु हारु,  
 जिय सत्तणाम णियणदणासु,  
 जा बिभिय किपिवि भणहि मति,  
 भाहरण कत्थ परि हरिवि सव्वु,

कत्थवि भवगाहइ<sup>८</sup> पूय भडु ।  
 कत्थवि ताता<sup>९</sup> मुग्गर पडंति ।  
 कत्थवि एणव हत्थिय सुलि विट्ठु ।  
 कत्थवि डायणि घुट्ट ति<sup>१०</sup> रत्त ।  
 कत्थवि खर<sup>११</sup> चडियउ बिल्लमत्थु ।  
 कत्थवि हाहाकारेण सोहु ।  
 कत्थवि कुट्टे सडि पडिउ अणु ।  
 हउ<sup>१२</sup> भमिउ<sup>१३</sup> कम्मबधेहि जडिउ ।  
 उत्तारिवि ण णिय रज्जुभारु<sup>१४</sup> ।  
 भाइच्छिवि गलि बल्लियउ तासु ।  
 ता केसभारु उप्पाडि भत्ति<sup>१५</sup> ।  
 तवयरणु गहिउ परिपालिय गव्वु ।

प्रस्ता—ता मुणिवर इदं, सिव सुहकदे 'चरणहो सिक्खा इक्खिय ।

विणएण गहिण्णिणु, करमउ लेप्पिणु<sup>१६</sup>, तेण वि सा सवि सिक्खिय ॥१५॥

( 16 )

ता सो वारह विहि तउ पालइ,  
 वारह अणु विक्खउ भणि चितइ,  
 वारह अणइ सुत्तहो पढेइ,  
 वारह उवयोगइ भणि धरेइ,

वारह अवरिइ वूरे टालइ<sup>१७</sup> ।  
 वारह पायच्छित्तइ मतइ ।  
 सिद्धाणु योय<sup>१८</sup> वारह दिडेइ ।  
 सावय वारह वय वज्जरेइ ।

- 1 क भवगावइ
- 3 ग ०णिउ
- 5 ग सिरिकयच्छु,
- 7 क. हउ
- 9 क रज्ज०
- 11 ख ले विणु
- 12 क ठालइ,
- 13 ग जोग

2. ख. तत्ता
- 4 क बुट्ट ति
- 6 ग खरि
- 8 क भामिउ, ख. भमिउ,
- 10 क सत्ति
- + क खरणि०

तेरहविहि चारित्तु<sup>१</sup> सु एणम्मसु,  
 चउवह पुब्बइ जाणइ विसेस ।  
 चउयह गणइ जो<sup>२</sup> परिहरेइ,  
 चउवह मल वज्जवि पिडु जेइ,  
 इय बहु काले सो तउ करेवि,  
 गउ अच्चुव सग्गहो थिरु भरेवि,  
 वावीस जि सायर भाउबधु,

तेरह कसाय दूरज्जिऊ मलु ।  
 तह चउवह पक्किण्णह असेस ।  
 तह पिउ पयडि गियमणि धरेइ ।  
 चउवह गुणसेठिहि कमि चठेइ ।  
 अरुहक्खरु गियमणि सभरेवि ।  
 हुउ अच्चुइ<sup>३</sup> दुक्खणि अवयरेवि ।  
 कि वणिणज्जइ तह सुह पबधु ।

वृत्ता—सुर तिय मण एदणु, सिव अहि एदणु, ते आणु<sup>४</sup> अह मह गउ ।  
 जिणवर पय भत्तउ, सुरसुह सत्तउ, जायउ पुण्ण पसगउ ॥१६॥

इय सिरि चदप्पहचरिए, महाकइ जसकित्ति बिरए  
 महाभम्ब सिउपाल सवणभूसणे जयसेण अच्चुय  
 सग्ग गमणो एण पवमो सधी सम्मत्तो । (ग्रन्थ १७६, अक्षर १४)

१. ख. चारित्तु

३ ग. °अच्चइ

२ ग.- जा

४ ग. याणु ।

## छट्ठो संधि

( 1 )

सो बहु काले सगहो बवेवि<sup>१</sup>,  
तुह<sup>२</sup> पोमणाहु ह्रषउ एरेसु,  
इय पुव्वभवतर मुणि कहेवि,  
त णिसुणिवि एरवइ पुलइ अगु<sup>३</sup>  
परमेसर विरजम्मतराइ,  
पुणु पच्चउ किं गिवि फुडु कहेहि,  
त णिसुणिवि पुणु भासइ जईसु,  
कच्छवि करि तुह पुरि आवेसइ,  
त आइणि वि बढिवि मुणिदु,

कणयप्पह णिव बरि अरवरेवि ।  
मणि सवय पुरवरि सिरि असेसु ।  
जा मउण<sup>४</sup> भाउ पक्कउ बरेवि ।  
पुण रवि भासइ हरसें सरगु ।  
महो कहियइ पइ<sup>५</sup> सयलाइ ताइ ।  
महोमणि ससउ जिह<sup>६</sup> अबहरेहि  
कय वय दिवसिहि ण गिरिवरीसु ।  
ति फुडु<sup>७</sup> पच्चउ तुह फुडु होसइ ।  
णिय एयरि परायउ एरवरिदु<sup>८</sup> ।

घत्ता—ताह पुरि मुहमत्तउ जिण पक्कउ, जा एरवइ बरि अच्छइ ।

ता मुणि अकिय, दिणि, ता सिय पुरजणि, करि आवतउ पिच्छइ ॥॥

( 2 )

गज्जइ गहीरु ण पलयमेहु,  
मयगव सयल णासिय गयदु,  
पयभर दुल्लिय<sup>९</sup> महि पडिय गेहु,  
उट्ठिवि एरवइ<sup>१०</sup> सम्मुहउ ठाइ<sup>११</sup>,

ए बल्लइ गिरिवरु विज्झु एहु ।  
कर सीकर सिचिय सूरबदु ।  
पच्चक्खु णाइ खयकाल देहु ।  
गेहहो उत्तरि कय पयइ जाइ ।

१ ख बएवि,

३ ख घ मोण,

५ क पय,

७ क त विरु,

९ घ पयभर ठोल्लिय<sup>९</sup>

११. ख. घ थाइ ।

२ क तुह,

४ ख घ यगु

६ ग. जिव,

८ ख घ एरवरु, घ. एरवहिदु

१०. ख घ एरवरु,

ता करि कह<sup>१</sup> उप्पाडे<sup>२</sup> बि बडु,  
जा झाइवि किर बल्लेइ हत्तु.  
बल्लिवि अप्पु गु एक्कलि बि जाइ,  
पुणु पु छि<sup>३</sup> लग्गु करि सिद्ध भिरेइ<sup>४</sup>,  
इय बउपासिहि पुणु पुणु फिरेइ,  
अइ दतउ करि सम्मुहं पइट्ठ<sup>५</sup>,  
दिडध<sup>६</sup> मिलेवि बडउ गइ दु,

सम्मुह बायउ ए पलय बंडु ।  
ता एउ दिट्ठिहि उबरिल्ल वत्तु ।  
पुणु झाइ बि पक्खइ<sup>७</sup> हएइ<sup>८</sup> पाइ ।  
दब्बट्ठिवि पुणु उप्परि बडेइ ।  
करि सिक्खावलु पायहु करेइ ।  
सा गारबइ कुंअप्पलि बइट्ठु ।  
एिय मेहि परिट्ठिउ एरबारिडु ।

अस्सा—ता तहि इक्कहि<sup>९</sup> दिणि, सह अबरर खणि, दूउ एक्कु सपत्तउ ।

बुल्लएह<sup>१०</sup> वियक्खणु, एउ<sup>११</sup> सुलक्खणु, पुइइपाल एिब मतउ ॥२॥

( 3 )

सो भएइ<sup>१२</sup> एम जोडेवि हत्तु,  
अहिपालु राउ पभएइ एम,  
महो<sup>१३</sup> करि सइ बणिकेली पइट्ठु,  
सगट्ठिवि सो बि अप्पणउ कीउ,  
पुहबीपालहो विट्ठुरइ सन्नु,  
कालु बि हक्किउ घर हरइ अत्ति,  
असद वि<sup>१४</sup> दासत्तणु करइ तासु,  
अपुणु बि तसु पुण्णत्तणेण,  
ते दुण्णिमित्त ते तासु मित्त,

पइ<sup>१५</sup> बुञ्जिय सयल विणीय सत्थ ।  
पइ<sup>१६</sup> अणिणउ एरिसु कियउ केम ।  
तुम्हिहि हिइतउ कहि विदिट्ठु ।  
को किर सहि सइ एरिसु बिलीउ ।  
भूलें जे इ दुवि मुअइ गळु ।  
दइउ<sup>१७</sup> बि उहट्ठिवि करइ भत्ति ।  
गहक्ककु बि सकइ दीहसासु ।  
परिणमइ चित्ति चित्तिउ खणेण ।  
जे विग्घते बि पाइक्क भत्त ।

१. ख. बर

३ क. पु छिअ

५. व सामुह

७. ख. दिडप

९. ग. व. ०ह

११ ग भएइ

१३. ख. मह

१५. ख. ग अदसवि

२ क. उप्पडिवि

४ व. फिरेइ

६. ख. सामहु पयहु

८. ख. इक्कहे

१०. ग. एउ

१२. व. पइ

१४. ख. देउ

जे भवसण<sup>1</sup> लोयहो किर हबति,  
 भण्णो वि केवि जे लोयहूहु,  
 इय जाणिवि सुहु एहु राय हत्थि,  
 त ढोइवि<sup>3</sup> सयहो<sup>4</sup> पडहि पाइ,

तैं तहो<sup>2</sup> इच्छिउ फंलु सयलु दिति ।  
 ते तहो दासत्तणि सवि पडहु ।  
 भण्णुवि शिबधरि जैं साह भत्थि ।  
 जिह<sup>5</sup> जीबिउ रञ्जु वि सुत्थिरु धाइ ।

धत्ता—त शिमुणिवि राए<sup>6</sup>, तरलियछाए, जुवरायहो<sup>7</sup> मुहु दिट्ठउ ।

एणं उग्गयें सूरे, हयेतमपूरे, रत्तुप्पलु परमट्ठउ ॥3॥

( 4 )

जुयराउ मसइ रे दूष दूय<sup>8</sup>,  
 जो पोमणाह एरवारह देउ,  
 जइ पुण्णो पेरिउ धरि करिवु,  
 भहवा ज किरपा इक्क<sup>11</sup> बत्थु,  
 भह जइ सेवइ ता लहइ हत्थि,  
 ज शिक्कटउ तहो रञ्जु भोउ,  
 ज पइ सामिहि किय<sup>12</sup> सुहुउ गच्छि,  
 हु तिहु सयलवि गल गज्जि सूर,  
 त सुणिवि दुउ कोवें पलित्तु,  
 जा<sup>14</sup> हउ दूह ता बुल्लह तुरत,  
 हउ बुल्लमि सारउ इक्कु वयणि,  
 कइ तुम्हह सिरु पयथीदि<sup>16</sup> तासु,

सुह जीह किण्ण<sup>9</sup> सयलंड दूष ।  
 त पडि कह<sup>10</sup> किज्जइ विणयभेउ ।  
 भापउ तह भप्पइ कह एरिदु ।  
 जइ गहइ सामि ता सो कयत्थु ।  
 भविणइ पुणु जीउवि तासु एत्थि ।  
 त पोमणाह पापह पसाउ ।  
 त सव्विय करि सगरह कज्जि ।  
 विरला पुणु वायहि विजय तूर<sup>13</sup>  
 ए धूमउउ बहु धयहि सित्तु ।  
 पच्छा दिक्खे समि भय पुलंत<sup>15</sup> ।  
 बहु कहिही वाया कलहु कण्णु ।  
 भह सुत्थिही<sup>17</sup> सगरधर दियासु ।

- 1 ग भवसण
- 3 व ढोएवि
- 5 व जह
- 7 —पोमणाहस्य
- 9 व ग किण
- 11 क यक्क
- 13 = सत्तामतूरेति
- 15 क पुलंत
- 17 क. लुटिही

- 2 ग. तहु
- 4 घ. रायहो
- 6 = कजकप्रभ इत्यर्थे
8. क दूष दूष
- 10 क किह
- 12 घ. सिय
- 14 = दूत
- 16 ग ०परि०



घण्टा—इम दूयहु<sup>1</sup> बबलहिं, भइभणदमणहिं, सबल सुहइ नहिण तत्ता ।  
स्वेवे कपत्ता, ससिउकता, फुरिया हर कलकत्ता ॥४॥

( 5 )

ता भणइ एरेसर पोमणाहु,  
सो मूडज जो दूयहु रुसइ,  
जो जसु कवल मित्तु भु जेसइ,  
दुम कहिह तुहु इय जारो विणु,  
अह तुह सगर केली पूरमि,  
ता दूयउ स्थिय एमउहु पढुत्तु,  
जे बूढमनि<sup>5</sup> रायपारउत्त,  
जे बुद्धि सत्य सगामधीर,  
जे वज्रजगठिणिह पर अभेइ,  
निररायणीइ सुणि उडगाहु ।  
दूअउ<sup>2</sup> पडिसदु व गिरि भासइ ।  
सो तमिहिं आएसु करे सइ ।  
मासिकके करि डोयमि आ विणु ।  
बिहु वयणहो एहु एककु अदूरमि ।  
राउ वि मत्तया भविहिं<sup>3</sup> प्रहुत्तु<sup>4</sup> ।  
जे रायफल अणुहव रसिमन्त्रित ।  
जे परउवाय शिदुदल्ल<sup>6</sup> वीर ।  
जे कुल कमि पयडिय सुहु विवेय ।

घण्टा—तै तहि उबवेसिवि, कुमर एणवेसिवि, एरवइ भणइ सरायउ ।

सो सिग्गहु जोगउ, अविणाय भग्गउ, महु यह मतणु आयउ ॥५॥

( 6 )

ता जिठमति<sup>7</sup> पुबहु<sup>8</sup> एामु,  
ज तुह अगइ बोलेमि<sup>10</sup> कि पि,  
जे एिच्च सूरभावेण<sup>11</sup> तत्त  
अइडिडवि<sup>13</sup> विग्गहु जे मत्तति,  
एिक्कारणु दीवें सहु पयमु,  
भूय<sup>15</sup> वि दडि हउ<sup>16</sup> सिरहो घाइ,  
ज मसिण कट्टु जण भर सहेइ,  
पभणइ सामिय तुहु<sup>9</sup> एमहु घामु ।  
हउ रोहि साहसु करमि त पि ।  
ते सावय दो पाइम एिक्क<sup>12</sup> ।  
ते जीविय रउजहो सल्लिबु किति ।  
रूसिवि<sup>14</sup> एणअह सहु पक्क<sup>17</sup> अ गु<sup>18</sup> ।  
सामेण वि सल्लिबे<sup>17</sup> सोम अह ।  
त पिहि महियउ जलणुम्महेइ ।

1 दूयहु

3 घ मदिरहु

5 ल. बुद्धमति,

7. ल. जेदु,

9. ग. तुहु

11. ल. सुर०

13. घ आइच्छिवि

15 = अम

17 क वसल्लें, ल वसल्लि

2 घ. दूवउ

4 ल. पत्तु,

6. ल. शिदुवण,

8. = पुरोहित

10. ल. घ. बोलेमि

12. = पावइययुक्ता

14. ल. रूसेवि,

16. क. दडिहय, ल. दडें हउ

18. = कठिन काष्ठ इत्यर्थ

इय जाणिवि साम्हो करहो भाउ,  
सामे तिरियवि<sup>१</sup> अणुकूल होति,  
अमिउ व जे सामु रसति राय,

सामु जि सम्बत्त वि सुकसठाउ ।  
दडे पुणु रुसिवि पाण लेति ।  
देव वि परिसेवाहिं तासु पाय ॥

धस्ता—सा तहि जुवराए, समरउवाए, सो कुलतउ वारिवि ।

गिय पयपण बेप्पिणु, पुरउ सरिप्पणु, उत्तउ समुउ सारिवि ॥६॥

( 7 )

तहो दुट्टहु किह<sup>२</sup> सामु पउ जहि,  
सो दुट्टउ को वणि पलित्तउ,  
तत्तउ तिल्लु व सीयल सलिलें,  
उच्छुहु दुट्टहो एकु जि सहाउ,  
सीहे उववणि कहो कियउ सामु।  
सायव पयइ बिह जलिया सामु,  
गुरुदेवह पियरह बियाउ जुत्तु,  
अणम तहो जइ किर करइ<sup>३</sup> लल्लि,  
इय गिसुगिबि पुणु पुरु हूइ मति,  
जइ तुम्हह बिम्बाहिं हुवउ गाहु<sup>४</sup>,  
जाणो विणु चारहिं बलहु मज्झु,  
ता पभणइ एरवर पोमणाहु,  
जाणिवि चरेहिं तहो बल पमाणु,

पसरिय गिय जस पायउ मजहि ।  
लोहु व विठु साम वु पसित्तउ ।  
सो उददीपइ सामि सहलें ।  
पीलिज्जतउ<sup>५</sup> फुडु सरसभाउ ।  
ज कपइ सयलु वि महह गामु ।  
पुणु तह विहु बाइउ नसण कामु ।  
दुट्टहु पुणु कुवि<sup>६</sup> विवरीउ सुत्तु ।  
तो सुहउत्तणु सइ कूवि<sup>६</sup> बल्लि ।  
पभणइ जिह कुमरहो होइ सति ।  
ता पहिलउ चर सचरणु साहु ।  
ता पयडिज्जइ समरहो गुज्झु ।  
पुरु हूइ अणित हो साहु साहु ।  
पच्छा दिज्जउ समहु पयानु ॥

धस्ता—इय मनुकरे विणु, चरपोखे विणु, परबलवल्लुउ लक्खिवि ॥६॥

भेलिवि सामतइ, परहु कयतइ, पुट्टिपाय छलु रक्खिवि ॥७॥

१. अग्नि दयातीत्यर्थ ।

२. अ. पीलिज्जतहो

३. अ. करहिं

४. अ. लल्लिवि

५. सुलीलु ।

२. अ. ग व. कह

४. अ. कूड

६. अ. हुमवग्गाहु

६. अ. तहो

## ( 8 )

ता बज्जाबिय पुरि विजयढक्क,  
मुह दिवसेँ गुरु भंयस रमालु<sup>६</sup>  
भारुडउ जय बारणि सलीलु  
बल भरि भज्जइ फणि उत्तमगु,  
जा कुम्म पिट्ठि<sup>७</sup> भज्जेइ गाढ,  
तासु विदाठा किर जामु डेइ,  
तातहो तुरयाहि साहिज्जु दिण्णु,  
एण्डियधर उट्ठिउ रेणु भारु,  
ता पुण रनि करिमय बाहिणीउ,

तह<sup>१</sup> सहँ विवडहि गिरि गुक्क<sup>२</sup> ।  
सबल्लिउ एणउ अरिपलमकालु ।  
बहुवदि विदि पयडिय सुसीलु<sup>३</sup> ।  
ता कुम्मि धाइवि दिण्णु भगु ।  
ता चाइ वि कोलें ठविय दाड<sup>४</sup> ।  
जा भूमिषक्कु किर लडइ डेइ ।  
खुरि लणिवि लणिवि रउ एहि पइण्णु ।  
ता कहवि कहवि ते बरहि भारु ।  
तहि पवहहि फणि दुह बाहिणीउ ।

धत्ता—रय पडलहि पिडियउ, ए भय सहियउ, एहु कर सूर पसारइ ।

भल किय बल पहरण, दरसिय बहुरण, पिकिलवि दुक्कु<sup>६</sup> विचारइ॥ ८ ॥

## ( 9 )

जा पहि बल्लइ बहु कडय लोउ,  
उप्फडिवि<sup>७</sup> फडिवि ता सुविह<sup>८</sup> जाउ,  
अणिएत्तहि मउ उल्लवइ<sup>१०</sup> ताम,  
कासु वि कल्होडु पाडेवि गोणि,  
कासु वि पडि भग्गउ तिल्ल मडु,  
कासु वि इक्कल्लहो<sup>११</sup> सप्पि सयडु,  
कुवि सयडि<sup>१४</sup> रुडु कुट्टणहि उत्त ।

ता कथवि बेसर करिवि कोउ ।  
जा<sup>६</sup> घर लुट्टइ<sup>९</sup> कुट्टणहि काउ, ।  
आवतउ कु जउ तसइ जाम ।  
ता एासइ जाणिय घरहो जोणि ।  
बुप्पडइउ पाणह हसिवि मडु ।  
उच्छल्लिउ<sup>१२</sup> रिस्लह<sup>१३</sup> विट्टु पयडु ।  
चडि ही<sup>१५</sup> जाणिवि बहिराय वुत्त<sup>१६</sup> ।

- १ ल ०पट्टि
- ३ घ. तासुहँ,
- ५ ग करेवि,
- ७ क सुच्छि,
- ९ ग. लुट्टइ,
- ११ ल. ०लहँ,
- १३ ल. व. रिस्लउ,
- १५ बडही ।

- २ क डाड,
- ४ क. पिछि बिछेउ,
- ६ ग. उप्फडिवि
- ८ ग ता,
- १० ल उल्लइ
- १२ ल. व. उच्छलियउ,
- १४ क सयड,
- १६ = बाह्यरायवूर्त.

केरावि एरवइ अग्नेसरेण,  
पहु खडिहु छडहु<sup>1</sup> इय अणेवि,

संगहिय दीहक वा करेण ।  
कुट्टणि हय बेरइ<sup>2</sup> सभरेवि ।

घत्ता—इय बल वित्त तहि, पहि वडि<sup>3</sup> हुतहि, तहि भरि देसु परायडु<sup>4</sup> ।

पिच्छिवि जल ठाणइ, सिविर पमाणइ, उपमाणइ किरि रामउ ॥ 9 ॥

( 10 )

मणिकूड सेखु पुट्टिहि ठवेवि,  
उविसय शुद्धर ए कुल गिरिद,  
सल्लइ पल्लय वारण चरति,  
सिविरहो दूरें वारण णिवड,  
हरि मवुर धमहि हरि बइटु,  
तह उहु इक्कु आबइर सिस्थु,  
तह तोडि वि तडुउ इक्कु<sup>5</sup> बाहु,  
पिच्छिवि महियलि लीटु तु साहु,  
जा गोलि<sup>11</sup> भूमि किर जणहि दिटु,  
पिच्छिवि रायहो सहि णाणु केउ,

तहि सिण्णु<sup>6</sup> अबासिड भूमि लेवि ।  
जहि सिरि<sup>7</sup> खलति एहि सुरचइ ।  
वण विहरण सुरइ<sup>8</sup> सभरति ।  
जण सचरुण<sup>9</sup> सहहि मयसिण्ड ।  
ए सयल लोयमण मित्तु इटु ।  
जइ सेरिहु ताणइ लुरिय सत्थु ।  
जहु<sup>10</sup> मुट्टे पिट्टे पडिउ सण्ड ।  
सिट्टिणि पभणइ हा बाहु बाहु ।  
ता घरु नाडिवि वेसावइटु<sup>12</sup> ।  
णिय णिय दिसि ठिउ मामन लोउ ।

घत्ता—इय जातहि चञ्चलु<sup>13</sup>, अइदुत्सहबलु, आबासिवि सुहि कठिउ ।

ता वारुणि<sup>14</sup> रत्तउ, पुण्व विरुत्तउ, रवि अत्थवणि परिट्टउ ॥ 10 ॥

( 11 )

ता रयणिहि भडसिज्जा हरत्थ,  
अभत्थिय रयरसु वित्थरेवि,

सिय रमणिहि सिण्ड जोडेवि हत्थ ।  
मूरुग्गमि सगर अरु मूणेवि ।

- 1 ख घ छडहु छडहु,
3. ग घ पहि पहि
5. ग घ. सेणु,
- 7 ग सुरकइ, घ सेक्खइ,
9. हक्कु,
11. ख. ०गुलि,  
घ ०गोण
- 13 ख चलु,

- 2 ग बेरइ
- 4 ग. पराडऊ,
- 6 ख सिरि,
8. ग सचरु,
10. ग तहु,
12. क वेसवेइटु, = बाण रायभूर्त
- 14 ख. वरणि;

कुवि भणई खाह सुँट पाणणाहु,  
 दारिवि<sup>2</sup> अरि करि सिर सीधलाइ,<sup>3</sup>  
 कुवि भणई दति दसणाइ मूडि<sup>4</sup>,  
 कुवि पभणइ तोडिवि लसुक्कणा,  
 कुवि पभणई अरि करि मज्जलेण,  
 कुवि पभणइ महो इहु गाँहू जाणि,

माँहू खोँह बडउ इक्कु<sup>1</sup> महु ।  
 डोवहि भाणिवि मुताहलाइ ।  
 सामिय महु कर बल्लावि वूडि<sup>5</sup> ।  
 महो कु डल अण्णहि मणिरवण्ण ।  
 महो<sup>6</sup> मंडणु किंज्जहि सीयलेण ।  
 महिपालहो सिर दक्खवहि भाणि ।

अन्ता—इय आ पियसुआरिहि, रक्खसुआरिहि<sup>7</sup>, सुहसु जोउ<sup>8</sup> अण्णत्थिउ ।

ताण रणविकलणि, सुहउ समिकलणि, गिरि तिरि सूख कविस्थिउ<sup>9</sup> ॥ 11 ॥

( 12 )

उगगउ विणयउ पयडिउ पयासु,  
 तह सुहउह रिण उच्चसिउ अण्णु,  
 कासु वि रोमविउ कवउ कुट्टु,  
 कासु वि तिरि बडउ बीर पट्टु<sup>13</sup>,  
 कासु वि राए दिण्णउ पसाउ,  
 काहवि अणिय<sup>14</sup> राएण लग्ग,  
 काहवि पेसिय राए सणाहु,  
 कुवि पभणइ सामिय बुज्ज भाण,  
 कुवि भणइ पुराहे<sup>15</sup> महो होइ लज्ज,  
 इक्कहु दाहिए बाहहो पयाहुँउ,  
 कुवि भणइ मज्ज इहु तिवसु चक्कु,

सण्णज्जइ बलु<sup>10</sup> रिणिरि<sup>10</sup> साहिसासु ।  
 जह बाहुदडि उर कथय सणु ।  
 ए सत्तु<sup>11</sup> पाण विह सुत्तु तुट्टु<sup>12</sup> ।  
 ए अरि लडिउ रत्तवट्टु ।  
 ए अरि जीविय कय मुल्लभाउ ।  
 ए अरि तिरि वेण्णउ हस्सि<sup>15</sup> लग्ग ।  
 अरिजीविय कोसव रह ससाहु ।  
 पुहवी पालहो सगहमि पाण ।  
 त<sup>17</sup> करजुएण सण्डहि कज्ज ।  
 को सहि सउ रिण्णिउ अरिणि काउ ।  
 पहरतहो शासइ कालवक्कु ।

- 1 घ. जोरँ,
- 3 घ फोडिंवि
- 3 ल ग घ. लीपलाइ
5. घ वूडि
- 7 ग रह
- 9 ग. कयत्थिउ
- 11 ल सपत्तु
13. क वट्टु,
15. ग. हस्स
- 17 क. जे

- 2 ल घ. एक्कु,
- 4 ग घ सूडि
- 6 ग. महु
8. ग. आण्ण०
- 10 ल रण
12. पट्टु. क छुट्टु ।
14. घ. अण्णिय
- 16 क. धुणहँ

घत्ता—इय जा भइ गच्छहि, पहरण सज्जहि, गिब<sup>1</sup> पसाय परितुठ मण ।  
ता पुहबीपालहो, रिउ लय कासहो, सबलिय रण दप्प बण ॥ 12 ॥

( 13 )

ता<sup>2</sup> पोमणहू रणतूर सदहु,  
सिब सामा<sup>3</sup> वायस<sup>4</sup> छर उलुय,  
सइ मत्त बिजय गय पुणवि मत्त,  
अणुकूल समीरणु सुह<sup>5</sup> सणाहु,  
इय सबण पणुल्लित बलित जाम,  
पहु खडिबि बिसहर मयर तासु,  
हत्थहु वियलित असिबर तुरतु,  
छिकित सम्मुहु उढ<sup>6</sup> मु अगि,  
इय असबण पिढु तु बि सगव्वु,  
सपत्त सइ एण्य बलिहि तित्थु,

घत्ता—ता बज्जिय तूरहि, धाइय सूरिहि, दुण्णिबि बल अभिट्ठिय<sup>8</sup> ।

ए पलय पणुल्लिय, सइ उच्छलिय, दो जलरासि पणुट्ठिय ॥ 13 ॥

( 14 )

धूलि धारिउ गयणहो विमाणु,  
घणु टकारें जाणियउ जोहु,  
घटा टकारें मुण्डिउ<sup>7</sup> हत्थि,  
करिमय हय<sup>9</sup> लाला सुहउ रत्ति,  
तारेणु पडलु हउ विरलु जाउ,  
गयणयलु सरिहि छायाउ महतु,  
जइ बाणिहि खडिउ बाण पुच्छु,  
कासु बि अउ फरिमा लग्गहत्थु,  
कासु बि सिरु असिहउ गयणि पत्त,  
तहि सो गच्चइ रणि बहु बिसेमु,

ए काल रत्ति भरु राहु भाणु ।  
हक्कतु मुण्डिउ पडियवखु गोहु ।  
बक्कहो बिककारें रहु बि अत्थि ।  
अइ गाहु गाहु सिचिय धरित्ति ।  
दिट्ठउ अणुण्णिहि बलह भाउ ।  
रबि तेउ राट्ठु भउ ताउ दिनु ।  
तो बेए भिदहि फलिहि वच्छु ।  
एण्णइ सिरु रक्खुइ गिरु<sup>10</sup> बरत्थु ।  
महि धावतउ गिरु लग्ग खुत्तु ।  
जह सिलपुत्तिहि खट्टु गु बेसु ।

1 क गिम्ब, घ

3 क. साम

5 क सह

7 ख पुठवी

9 ग हरि

2 घ त

4 क. वीयस

6 क. लग्गु

8 ख अज्जिअया

10 क गिय

पर पायण मणि सचिउ किलेसु,  
ता एण्वइ शियमणि चितवतु,

कुवि तुट्टइ सिरिउ बहइ तोसु ।  
कि सीसें महु बाहु जयंतु ।

घसा—किवि मडिय बहुरण, बिलसिय पहरण, लुय शिय सीसहि जुज्झहि ।  
रणरस भावेसहि, बहुम बिसेसहि, अप्पउ मुयउ ए बुज्झहि ॥14॥

( 15 )

कुवि सामियकज्जि एण्वइ गाहु,  
वामेण पडतउ सिरु घरेवि,  
कुवि सारिवि सामिहि तणउ कज्जु,  
सोवइ दीहइ एण्वइ<sup>१</sup> अचिनु,  
कुवि खगें करि सिरु हणइ सूरु,  
कासु वि हरि रुढहो पडिउ मुहु,  
कुवि पहरइ दतिहि हुट्ठु<sup>२</sup> पीडि,  
सारिवि शिय सामिहि कज्जवग्गु,  
कुवि धणुहि सहु बिड्डउ सरेण,  
लुय कासु वि सयल वि पाणिपाय,  
कासु वि जइ तोडिउ पडिउ बाहु,

तुट्टउ पिच्छिवि दाहिएउ बाहु ।  
पायहु दुक्करु बषइ सरेवि ।  
करिदततलिणि कितिए समज्जु ।  
कण्णह चमरिहि<sup>३</sup> शिरु बीइयतु ।  
बित्थरइ जसु व मुत्तरहु पूरु ।  
बहु भल्लिहि खिल्लिउ शोय रुड्डु ।  
ए जीविउ रक्खइ दारु शोडि ।  
हे जीविय तुज्झ पयाणमुग्गु<sup>४</sup> ।  
ए धाइवि गिलियउ जम मुहेण ।  
तह विहु मुहु जपइ सुहडवाय ।  
तह विहु एण्डु मिहइ खम गाहु ।

घसा—इय बलह भिडतह, पुरउ सरतह, बहु सो एणउ जल सारिएणउ ।  
महियगणि फ इय, पूर पराइय, भूझ जाइ भणहारि एणउ ॥15॥

( 16 )

हुद्धरसर सल्लिय सयल गत्त,  
ता पुहविपालु मणिघरि वि दप्पु,  
तहो सरघोरणि धाराहि सित्त,

जा सुहड एणह ऊसरणि पत्त ।  
सचल्लिउ प्रासीविसु व सप्पु ।  
पडिक्खु सुहउ एणसण पडत्त<sup>१</sup> ।

1 ग निहइ

3 क दतोट्ट छड्डु

5 घ. ०वहइ,

7 घ सर,

9. ख. पवत्त, घ पवित्त

2 ख घ. चमरेहि

4. ग घ जोग्गु

6 घ. वियलिय,

8 घ. पिच्छिवि

अरि पिच्छिवि गुणरय सिरि सणाहु,  
 आ दोह वि हत्थिहिं दत्तिदत्त,  
 ता पुहविपालु कोवारुणासु,  
 पभणइ रे तुह गयवरहु सण्णु,  
 ता पोमणाहु जंपइ मरोसु,  
 रे पहर पहर पढमेण भग्गु,  
 त रिणसुणिवि एरवइ पुहविपालु,  
 जे जे सरसव्वल सो मुणइ,  
 दुण्णिवि मदं गिरिवर समाण,  
 दुण्णिवि सायर गभीरधीर,  
 आ दुण्णि विजयसिरि अतरत्थ,

कुंजरि आरुद्धउ पोमणाहु ।  
 अग्निट्टहि सिहि कण पायडत्त ।  
 एणिसास भूमि मिल्लिवि दिसासु ।  
 महसर पूरेसहि तुट्ट दप्पु<sup>१</sup> ।  
 रे फेडमि तुह दुव्वयणा दोसु ।  
 सव्वहु दुव्वयणाहं मग्गि लग्गु ।  
 जुज्झइ रुद्धउ ए पलयकालु ।  
 ते पोमणाहु रिण्णफल करेइ ।  
 दुण्णिवि पलयग्गहु बलपमाण ।  
 दुण्णिवि बहु भडकोडीहि वीर ।  
 आ रिणहणहिं बहु सत्थिहिं कयत्थ ।

अन्ता—ता कोव पलित्तं, जयसिरि सत्ते, पोमणाहु पुहवीसं ।

अणु गुणि आरोइउ, लक्खहो ओइउ, अद्ध इडु<sup>२</sup> सर रोस ॥16॥

( 17 )

मुक्कउ एहु सर जालेहिं रुद्धु,  
 आइवि गल कदलि तामु लग्गु,  
 शिव डियउ सीसु सहु कुलवलेण,  
 ता पोमणाहु पुहवी सरेण,  
 उत्तरि वि गयदहो सीसु दिट्ठु,  
 कु डल मउडेहि वि एट्ठसोहु,  
 त पिच्छि वि राया मणि विसण्णु,  
 सिय जस हेय<sup>३</sup> मडइ अणत्थ,

ए टलइ कम्म व चिरकाल वद्धु ।  
 ए जयसिरि लीला पोमुलग्गु ।  
 तट्ठउ भडयणु सहु परियणोण<sup>४</sup> ।  
 बज्जाविय जयदु दहि सरेण ।  
 सो रिणय भूली पडलेहि पुट्ठु ।  
 ऋपडिय विरलठिय सिररु होहु ।  
 चितइ हा माणुसु मोह पुण्णु ।  
 एहु जाणइ अणपहु इय अबत्थ ।

१ ख दुट्ठदव्व

३ क परियरेणि, ख सिय जसेण,

४ ख घ सिरिजसह हेउ

२ क अद्धु



मल मुत्तह पुटलु असुइ भडु<sup>1</sup>,  
 धारवत खलिय जे सरसभूहु,  
 जो जुजभइ गुरु गयकु मि चडिउ,

पुणु तह वि गुरुउ<sup>2</sup> हकार चहु ।  
 सो खेवइ एहु मरियह बूहु ।  
 सो एणकरडिबि एरु दत्त पडिउ ।

धस्ता—जो इय गल गज्जइ, समरु समज्जइ, बहु कोवग्गि पलित्तउ ।

हातहो सु डीरहो, भडसयवीरहो<sup>3</sup>, सिखूलिहि सहु<sup>4</sup> सित्तउ ॥17॥

( 18 )

इहु मइ एिह एिउं कोवेण अज्जु,  
 को बघउ माणुसु अम्मचक्खु,  
 कोवेण जि सचइ पावकम्म,  
 कोवेण वि खिज्जइ एिय<sup>5</sup> गुरोहु,  
 कोवे चडवग्गु वि शयहो जाइ,  
 कोवे सिय कित्तउ खयहु जति,  
 कोवे विवेय गुरा विलय जाहि,  
 कोवे धावइ<sup>7</sup> पायडहि एोहु,  
 कोवे माणुसु सावय समाणु,  
 कोवे खणि मुणुणु वि होइ भूउ,  
 कोवे अप्पाणुधि हएइ भत्ति,  
 कोवे समाणु एहु होइ<sup>10</sup> सत्तु

भवि भवि मइ एिह एोसइ अणज्जु ।  
 भवि भवि अणु हुजइ एरयदुक्खु ।  
 कोवेण पणासइ सयलु अम्म ।  
 कोवे पियरवि मेस्सति मोहु ।  
 कोवे खणोण चिर तउ पलाइ ।  
 कोवे<sup>6</sup> एारि व पिय दूरि थति ।  
 कोवे बाहिउ आसण्ण धाहि ।  
 कोवे सपय मेस्सति गेहु ।  
 कोवे सम्बह एिदाए ठाणु ।  
 कोवे सुअणाह<sup>8</sup> बिकाल दूअ ।  
 कोवे एिगोय एिच्चह चरित्ति<sup>9</sup> ।  
 ज एरु भीसणु दुह पक्खित्तु ।

धस्ता—कोवग्गि पलित्तउ, समदम चत्तउ, किण्हलेस रसरगिउ ।

अप्पा दुह भावइ, सुक्खु ए पावइ, विसय कसाय पसंगिउ<sup>11</sup> ॥18॥

- 1 ख घ पिडु,
- 3 ग ०वीरहु,
- 5 क ख घ कोवेण खइएिय गुरु
- 6 क. कोवेण
- 8 ग सुय०
10. घ कोवि,

- 2 ग गुरुय०,
- 4, क ख. सरिण
7. ग भावय
- 9 ग. चरत्ति
- 11 क, पहतउ,

अणु वि दिह माण पिंसाय रुद्ध,  
सइ शिगुणु शिंदइ गुण महन,  
सइ शिगुणु<sup>१</sup>वे<sup>२</sup> गुरुयणि करइ रोसु,  
माणे<sup>३</sup> एहु कासुवि लेइ सिक्ख,  
माणि एहु सुयणह होइ पासि,  
माणे खिर तव गुण खयहु जंति,  
माणे खर मडल मुड जोणि,  
माणे दगडय डु ववि हवति,  
माणु जि सक्खह अविणयहं कहु  
माणु जि कोहाहिय दोस भूलु,  
माणु जि मिच्छत्तदु माह बीउ,

घत्ता—तह माया सप्पिणि दन्न वियप्पिणि जाह हियइ विलि शिवसइ ।

ताह वि जण एसहि, विरसु पयासहि, धम्म वि सुहफलु रूसइ ॥१॥

माया तव सीलह सक्ख एसु,  
माया मयनह दुह फलहं, साउ,  
माया भवोहि पीयूसणु<sup>४</sup>,  
माया पडिदूतिय भवहो जाणि,  
माया तिगियह जाणेइ मग्गु,  
माया मुहगइ नेहहो कवाडु,  
माइउ वच्चइ पठमेण अणु,  
माइउ मजारहो अणु हुरेइ,  
माइउ मल भडु व<sup>५</sup> पडि बिहाणु,  
माइउ खरमल गूढय<sup>६</sup> सहाउ,  
मायायउ एणु केडिबि सुवम्भु,

कासुवि एणु एमइ<sup>१</sup> ण सुलि छुद्धं ।  
सइ पाउ वि शिगुभच्छइ महत ।  
अणुहु मणइ बहुगुण विसेसु ।  
माणि मित्तइ गहिया वि दिक्ख ।  
माणे सपज्जइ लोय हासि ।  
माणे मित्तिवि पडिवक्ख होति ।  
माणे घर पंगणु एणयलोणि ।  
माणे टु टुल मटुल हवति<sup>४</sup> ।  
माणु जि पावो वडि वैल चहु ।  
माणु जि सक्खह उरि तिकख सुलु ।  
माणु जि सम वल्लिहि हत्थि खीउ ।

माया दुक्किय कम्माह पासु ।  
माया गुण सेलह वज्जवाउ ॥  
माया अकित्ति फुणुवइ फासु<sup>६</sup> ।  
माया खडत्तण लोह खारि<sup>७</sup> ।  
माया जस वल्लीह एणि खग्गु ।  
मामा सुपुट्ट धम्मय साडु ।  
पच्छा वधव पिय माय वप्पु ।  
मणिहि सिर कोमलु सरु करेइ ।  
सव सुज्जय ते उव असुइ ठाणु ।  
अन्मतति एणु एणिरसउ भाउ ।  
पावइ धीय अहव विऊम<sup>१०</sup> जम्मु ।

१ व एणवइ

३ ग माणि

५ =ससार सर्पस्यामृतपास

७, क जोणि

९ क गुह्य,

१० क. अहनिवस०, ख. अहवा निउ, निउस=नपुंसक

२ क शिणुवि

४ ग हवति,

६ क. फुणुवइ फासु, ग. फुणुवइ पासु,

८ क सडुव,

घेसा—घण्टा<sup>१</sup> वि तह लोहें, पसरिय मोहे, ग्रम्हारिसु जणु बंढउ ।

काठ व भवसायरि, बहु दुहदायरि, शिवबइ तिय सबि<sup>२</sup> गिहउ ॥20॥

( 21 )

लोह जि कुकम्म सयलह शिहारी,  
लोह जि सोयह बंढाल मेहु,  
लोह जि भविरह गिरि नईय मेहु,  
लोह जि गुण कक्खह पवि किसानु,  
लोह जि दोहग्गहु होइ खोरि,  
लोह जि लज्जा दक्खिण्ण एणु,  
लोहिउ सिरि मण्णइ भाय ठाणि,  
खोणी खणि घल्ली सिरि सुहाइ,  
लोहिउ मणिउ उट्ठेवि जाइ,

लोह जि पावहु उप्पत्ति ठाणु ।  
लोहु जि सम्बह दोसाह देहु ।  
लोह जि दुहु<sup>३</sup> लच्छिहि दिहु सरोहु ।  
लोह जि जस कुमुयह सहस भाणु ।  
लोह जि भपाय सज्जण<sup>४</sup> जोरि ।  
लोह जि मित्ततरण दयह तासु ।  
भोगिच्छइ तें न छिबेइ<sup>५</sup> पारि ।  
एिय एरय गमणु पच्छाणु एाह ।  
सिरि जण एाहि, गालिसु एोवि<sup>६</sup> एाह ॥

घत्ता - इय मूलकसायहि, जणिय पमायहि, हउ चउगइ सतत्तउ ।

एवाहि कउ? मिल्लमि<sup>७</sup>, भवसुहु पिस्समि, जिरा तवचरणहि  
सत्तउ ॥21॥

( 22 )

हक्कारि वि पुत्त सुवण्णएाहु,  
पुहवीपालहु सुउ<sup>१</sup> सोयजुत्त,  
दिण्णिय तहो सिक्खा नउ सरिज्ज,  
पयगडियमति सामत्त सोय,  
सइ पत्तउ तुरिउ वणति नित्थु,

दिण्णउ स रज्जु महि सिरि सण्णहु ।  
एिय जणारणज्जि यप्पि वि सुभत्तु ।  
यिउ कएगएाह सेवा करिज्ज ।  
भवगण्णवि बहु पायडिय सोय ।  
सिरिहउ एामेण मुणिदु जिस्थु ।

1. ग बहु

3. क दुह

5. ख. लिबेइ

7. ग. घुष

9. क सुतु

2. ग. घ सब

4. ख सज्जण

6. क. वलि वि मुणिंवि

8. ग. मिल्लमि

तवतिव्वतेय ताविम्र<sup>1</sup> सरीर,  
 ससार समुदह कु भ<sup>3</sup> पुत्तु,  
 गुण सेढि शिसेणिहि हणु व देउ<sup>4</sup>,  
 बहु सुत्तसमुदह तिरिय लोउ,  
 बहुणरयुव्वासण घूमकेउ  
 णिरु खति सति पिय बद्धराउ,  
 मिच्छामय गुरु कारण कसाणु.

बहुक्कम्म सुहइ णिदलण वीर ।  
 इ दियजण कम्मह देम<sup>2</sup> सुत्तु ।  
 णिम्मल सीलावासहो सुकेउ ।  
 जाणिवि अणिट्ठ जे वत्त भोउ<sup>5</sup> ।  
 सुह सुर मदिरिण मूलदेउ ।  
 मोहारि हणणि वट्ठिय पयाउ ।  
 पच्चक्खु वि इह ण सुद्ध णाणु ।

घत्ता—तहो पयपण वेप्पिणु, करमउ लेप्पिणु, विणए<sup>6</sup> एरवर भासइ ।  
 पइ सामिय दिट्ठे, जगमण इट्ठे, भवकलमलु दुहणासइ ॥22॥

( 23 )

तुहु सिवसुह नाणइ सत्त गेहु,  
 पुहु भवभीरुह अणमित्तु<sup>7</sup> वधु,  
 तुहु चिंतामणि चिंतामणीणु,  
 तुहु कप्प हिउ कप्प हि बारा,  
 तुहु भवजगलच्छलि<sup>8</sup> अमयकु डु,  
 तुहु गुणग्यगह रयगाहग्गु,  
 तुहु गाण लच्छि मणहरणु रूउ,  
 पइ रइ वि<sup>10</sup> पलाविय विहव सीलु,  
 पइ देवहु<sup>11</sup> फेडिउ घोरुमाण,  
 अदस वि पइ पिल्लिय<sup>12</sup> पायमूलि,  
 तुहु सव्वह जीवह करुण भाउ,

तुहु दुह दावाणल समणभेहु ।  
 तुहु पावपलित्तह अमल सिधु ।  
 तुहु कामधेणु कामय गवीणु ।  
 अहिय<sup>8</sup> फलु देहि मगोरहाराण ।  
 पासमि सहल रभारुकु डु ।  
 तुहु जणचितातिग पलयदाहु ।  
 पइ बुज्झिउ अण्णहु बिर सरूउ ।  
 गियमण होप्पाडिउ आसकीलु ।  
 मिल्लिवि सयलह इच्छाहु ठाणु ।  
 ज सइ णिवसइ<sup>13</sup> मिरि गहरणकूलि ।  
 महो दिक्खदाणि किज्जउ पसाउ ।

- 1 ग ०ताविय
- 3 अगस्त्य इत्यथ
- 5 क जे वत्त लोउ
- 7 ग अणिमित्त०
- 9 ख ०थलि
- 11 ग दैवहु, घ घ दइवहु
- 13 ख णिवसहि

- 2 ग दैय
- 4 य ०अवेउ
- 6 ग विणय
- 8 क अहिउ
- 10 क ख रवि, घ रयवि
- 12 घ चल्लिय

घत्ता—इये वेयराई भोसिवि, गुग्गु<sup>1</sup> पयासिवि, केस भार उप्पाडिउ ।  
ए पावहो धूलह, सुह पडिक्कलह, भव दूरे रिण्डाडियउ ॥23॥

(24)

भिल्लिवि<sup>2</sup> वेत्थालकरणभारु,  
तिथयर एगम बघणह पासु,  
पढमे सम्मत्तह केरइ सुद्धि,  
गुरु तव सय बुद्धह विणयवतु,  
अणवरउ एणु उवऊय<sup>3</sup> जुत्तु,  
जे अभयदारा पमुहाइ<sup>4</sup> दाण,  
बारह विहु तउ सोतवइ तिउवु<sup>5</sup>  
सो जुगह वइवाविउवजुत्तु,  
धच्छज्जलवतु सुयसायराह,  
धसरा पाहावण बहुगुरोहि,

सगहिउ जिणिवहो चरण सार ।  
सोलह कारण तउ सिद्ध तासु ।  
भिल्लिवि सकाइय दोसबुद्धि ।  
वयसीनह मल दूरे<sup>6</sup> चयतु ।  
सवेयपरम भावम्मि सत्तु ।  
ते वियरइ रक्खय जीव पाण ।  
रणसतउ रक्खय सुद्ध दव्वु ।  
जिणगणि वेहुसुय पवयणह भत्तु ।  
अपमाइउ छह भावासमाह  
सो कीरइ रजिय बहुजरोहि ।<sup>7</sup>

घत्ता—इय सोलहकारण, भवदुहृत्तारण, भाविवि तहि तिथ सुद्धऊ ।  
सामिय जिणहहो, सुक्ख सणाहहो, एगमकम्मु तें बडउ ॥24॥

(25)

इय सो<sup>8</sup> दुद्धर चिर तउ<sup>9</sup> चरेवि,  
इ दियवलु सयलु वि रिण्जरो वि,  
रिण मोह महामडु रणि जिणेवि,  
तह अट्टरुट भाणए चणवि,  
तिविहेण विसल्लेहण कुरोवि<sup>10</sup>,  
रिय सवहो लम्मावण करेवि,  
गुरु दिणए सिक्ख धिरमणि<sup>11</sup> धरेवि,

मणु मक्कडु अप्पहु बसि करेवि ।  
हियहु सल्लउ तउ उक्खरोवि ।  
कोहाइ कसायह कुल हरोवि ।  
धिरमम्म सुक्कलइ मणु ठवेवि ।  
बहु दुद्ध परीसह धवगरोवि ।  
परममु<sup>11</sup> चरियक्कमु<sup>12</sup> अणुसरेवि ।  
ससारहु दुक्खइ सभरेवि ।

- 1 क, गुम्
- 3 ग गल
- 5 पमुहाय, घं पमुहाइ
- 7 ध कीरइ रजिय सो बुद्धजरोहि
- 9 घ तउ चिर
- 11 ग परमम

- 2 भेल्लेवि
- 4 क उवऊअजुत्तं
- 6 ल तत्तु
- 8 — मुनि पोमणाह
- 10 क विसल्लेहणाहु रोवि
- 12 ग ०कम, घ परगणचरियाकम्मु

मणि सिलि भरिहक्खर उभिकरेवि,  
 कृवि कप्प मुण्णु भावण थिरेवि,  
 सिवसुह छायाफलु जणु धरेवि,

सुद्धप्प सरूवहु कल धरेवि ।  
 सुद्धप्प रसायणि पयसरे वि<sup>1</sup> ।  
 णिच्चलु पडिय मरहो भरेवि ।

धत्ता—सुहजोय पहावे, विवलिय पावे, बैजयति सपत्तउ ।

उववायहो सपडि, सुहर सिलपडि, सपण्णउ सुहसत्तउ ॥25॥

( 26 )

णिहरुम तेयाणुहि णिप्पण्णउ,  
 णिहरुम देवावहि सपण्णउ,  
 णिहरुम सुक्कलेस पडिबण्णउ,  
 णिहरुम बभवेरु आयण्णउ  
 तित्तीय पक्खिहि सासु समज्जइ,  
 वयरण केलि सहावय मुक्कउ,  
 अहमिदत्तण लच्छि महत्तउ,  
 सुरहिय सुरतरु लविय मालउ,  
 अहणि सुसुह भावण सलीणउ,  
 सतोसामयरसि मज्जतहु,

णिहरुम आहरणेहि खण्णउ ।  
 णिहरुम<sup>2</sup> ससारिय सुहपुण्णउ ।  
 णिहरुम सत भाव सकिण्णउ ।  
 तित्तीसोवहि<sup>3</sup> जीविय धण्णउ ।  
 तित्तीय वरिस सहासिहि भु जइ ।  
 ईसागब्बिहि दोसिहि मुक्कउ ।  
 हरथ पमाण वेह सुपसत्तउ ।  
 सुद्ध गुणणि णिव्वाहिय कालउ ।  
 ससारिय बहुभावहि खीणउ  
 जाइ कालु एो मुत्ति वसतहो ।

धत्ता—वज्जिउ भवभावहि, तण्हा ताविहि, सो सिद्धव ससरीरउ ।

तहि सुहफलु माणइ, सुह सवि जाणइ, थिर भावेण गहीरउ<sup>4</sup> ॥26॥

इय सिरिचदप्पह चरिए महाकइ जसकित्ति विरइए

महाभव्व सिद्धपाल सबणभूसणो पोमणोह

अणुत्तर गमणो छट्ठो सघी समत्तो ॥

(ग्रन्थ सख्या 248 ॥

13 ग. चिरमणि

2. क णिरुपम

1. घ पइसिरे वि

3. ख वत्तीसो०

# सत्तमो संधि

( 1 )

भणिउ भवप्पवचो, चदप्पह सामिणो समासेण ।

गन्धाइय कल्लाणह, णिरुवय सपय भणिमो ।

अह इच्छु पसिद्धइ भरह खेत्ति,  
देमह अइउत्तमु पुब्बदेसु,  
जहि कलमि छित्त<sup>१</sup>सुरहिय समीरु,  
दिसि दिसि मणिबिभिउ दूरिजाइ,  
ॐजहि गहवइ पुत्तिउ वणहरेण,  
तो<sup>२</sup> धुत्त कारणहु<sup>३</sup> दूरजाहि  
गायतिहि गोवलवालिवाहि,  
तहि कणरासिउ अइ उच्छवति<sup>४</sup>,  
जहि दुक्ख पहिउ पुण्णेण लद्ध,  
ज मग्गइ तनहु देइ जुट्ठ

गगा-सिधू णइ जल पवित्ति ।  
सिरुपुण्णगामपुर हय किलेसु ।  
उच्छुय रसणई<sup>१</sup> सीयल सरीरु ।  
केरिसु सुदुच्छ इय मुण्ण णाइ ।  
भूमि बि गहु पिच्छमि गिरि समेण ।  
ताहि पयमूलि वि केयारु ॐ खाहि ।  
खज्जिय ण अलिमुहि डसहि ताहि ।  
जहि सुरवासह बिता मुयति ।  
णिद्व आणिहि अमु व गेहि छुद्ध ।  
गामिय कप्प हि व सरिसमिद्ध ।

वस्ता—इय सिरिबिरिहि, पयडियसारिहि, गामहि पुराहि पसगउ ।

आलवण मुक्कउ, ठाणह चुक्कउ, सम्मु व पडिउ सरगउ ॥१॥

( 2 )

जा आयरुव्वरयणायरह<sup>५</sup>  
जो<sup>७</sup> सुक्ख सुगालहु<sup>६</sup> मूलगेहु,

जा सावरुव्व बहुकणजलाह  
जो दुक्खजलण उवसमण मेहु ।

1 क रमई

2 ग ता,

3 ग कारनहु

4 ग च. उच्छवति

5 ख ग च आकर०

ॐ ख च जहि गोगण उब्भवि पुच्छ केउ, सुरवेणु हि तज्जहि दुद्धहेउ ।

6 ग जो सयल सुमगह,

7 = देश

+ = क्षेत्र, ॐ = क्षेत्र

जो बहुसिरि णक्खणि भरहं गमु,  
जो सुक्ख भव्वगण समवसरणु,  
जो उववण मेहह गवण ठाणु,  
जो धम्मकुसुम सोरह वसन्तु,  
जो पवरसत्त सताण कामु,  
जो उण्ण जल णह णेहवधु,  
जो चउ वयकरिउल विज्जवामु,

जो णइ वरिण<sup>1</sup>पहियहि<sup>2</sup> रायपंधु ।  
जो दुहकम्मह जिण णाहवरणु ।  
जो भववल्ली<sup>3</sup> कट्टण किवानु ।  
जो रोयसोय<sup>4</sup> नासण करतु ।  
जो महणइ<sup>5</sup> मायिरि जणिय यामु ।  
जो जण पोसण भरि दिण्णुखधु ।  
सो सव्वह विहविह सुक्खवामु ।

घत्ता—तहि देसि मणोहरि, बहुविहपुरवरि, चवउरी नामेण पुरि ।

जा सव्वह सम्मह, विहवसम्मह सपणीण<sup>6</sup> मिरिउ वर ॥2॥

( 3 )

गयणत्यफलिह मालिहि<sup>7</sup> महनु  
जे धरिउ सग्गु सइ णिरवसेसु,  
ज सेवइ पडिहा मिसि समुद्दु,  
जहि पोमराय माणिक्क गेहि,  
जहि नु गनीलधर किरण यति  
जहि रयणगेह सिहरेहि बिद्ध,  
तहो<sup>8</sup> पिच्छहु तारा विवरलक्ख,  
जहि चदकेतिघरसिहर णीरु,  
जहि णील सिहर किरणेहि छण्ण,  
जहि रयणगेहि दीहरसिरेहि,

अवलवण मुक्कउ खड्डहुतु ।  
अवगणिवु अप्पहु भर किलेसु ।  
रयणासउ सइ णिर रयणलुद्धु ।  
बाला लायति ण घुमिणु देहि ।  
आइच्चु वि मग्गहु करइ मति ।  
णह मडल असि छाया मणिद्धु ।  
पक्कय उप्पाइणि निम्ब लक्ख ।  
णह णइ यहि आणइ रनि पूरु ।  
गग वि कालिदी सलिलवण्ण ।  
सग्गु वि उज्जालिउ भासुरेहि ।

घत्ता—जहि सिहरि वइट्ठी, णियमणि तुट्ठी, दप्पण भत्तिण चदहु ।

बाला मणु चल्लइ णिय करु फिल्लइ, णियवयणहो पडिछन्दहु ॥3॥

( 4 )

जा सव्वह सम्मह लक्खिक्कोसु,

जा सिद्धेण वि सजणइ तोसु ।

- 1 ग घ धणि
- 3 ख भववल्ली
- 5 = नय
7. ग लहि

- 2 ग घ पहिवहं
- 4 घ समु
- 6 क ख सपणीण
- 8 तहु



जा भूय<sup>1</sup> भूमि सारेण सिद्ध,  
जा धम्म अत्थ कामहु णिहाणु,  
जा हेमगिरिहि ण लज्जभारु,  
ण मलय विडवण पडहु राउ,  
ण अमय कुण्ड गण-गम्भणासु,  
ण रवि-ससि रुडमाणहो पणासु,  
ण घणय सुणिहि अवभेयघासु<sup>3</sup>

जा तिजयप्पवण सचयणि वद्ध ।  
जा णिरुवम भवसुक्खाह ठाणु ।  
ण रोहण सेलहु अजास सारु ।  
ण णदण कवहु वि गोघ्न<sup>2</sup> भउ ।  
ण कप्परुक्खहु कामु तासु ।  
ण फणि णयरहु सिरिमय विणासु ।  
ण सब्बह सारह इक्कु वामु ।

घत्ता—रहि रयण मणोहरि, मणिमव बहुहरि, महसेउ<sup>4</sup> णामेण जिऊ ।

जो धरपालनउ, पिसुण हणनउ, अणहु जइ णिरु परममिउ ॥4॥

( 5 )

जसु रिउ तिय उरकामेण मुक्कु,  
जसु असिवर धाराजल समुद्<sup>5</sup>,  
अरि अजमम णिहि<sup>6</sup> मयलिउ तिलोउ<sup>7</sup>  
आकप्पु<sup>8</sup> तरतउ मज्जिलाइ,  
जसु जयमिरि णिवमइ बाहुदिण्ड,  
जसु बामरगाहिणी पडिम अगि,  
जसु पयतलि णिव सिर पोममाल,  
जसु खवि णील ताडक तेउ,  
जसु वेरिय पुरिसायारुमुक्क,

पहु ताडण इरिए ण सोहवुक्कु ।  
भूमोहर कुलु वोलइ रउडु ।  
जसु किति अन्नय सावरि वपोउ ।  
सेबल बल्लरिहि गुत्तुणाइ ।  
असि पडिमा णीलोप्पह खडि ।  
ण महिमलच्छि विय पयडरगि<sup>9</sup> ।  
ण लुय अरि सिरि बहुघर रमाल ।  
ण धरणि भार किण कसणभेउ ।  
सब्बउ अबला होए वि थक्क ।

घत्ता—तहु बहु गुणरासिहि, सिसु ससिहासिहि, तहु बभडु विवभरियउ<sup>10</sup> ।

जहि बधिहि तुट्टइ, तडपडि फुट्टइ, दिसिबालेहि विसूरियउ ॥5॥

( 6 )

तह कायकनि लायणु तासु,

जह मयलइ सिरिहिमि करहु कामु ।

1 ग भोय०

3 ख अवभेय० घ अवलेव०

5 घ अकपु ख ० घाला०

7 ख तिलोमु

9. घ पयडरगि

2 घ वि गोव

4 ग महसेणु, घ महसेणु

6 क जसु सम०

8 ब अकपु

10 क विप्परियउ

तह गुरुमाहृप्पहो परुपयासु,  
 भंगल किर सेवहि तासु पाय,  
 कल्लाण वि ईच्छहि तासु सगु,  
 आसीवाय वि अहिलसहि सेव,  
 सुदस वि दासत्तणि पइ पउत्त,  
 लच्छीण वि लच्छी तेण होइ,  
 सूरत्तणु सूरउ होइ नित्थु,  
 सु विवेउ नित्थु जायइ विवेउ,  
 सच्चहु सपज्जइ अवर सच्चु,  
 सिद्धी ण वि तू सिवि देइ सिद्धि,  
 एाणा ण वि पयइ परम एाणु,  
 सत्तीण वि सो मघइ सत्ति,

जह दइउ वि दूरिदिठियउ तासु ।  
 महिमवि बहु मण्णइ तासु छाया ।  
 सुख वि कच्छहि तसु मण्णइ रगु ।  
 वरदाण वि पभणहि देव देव ।  
 गुणगउरुव<sup>1</sup> सारवि चेउ भत्त ।  
 विज्जाण वि विज्जा करइ सोइ ।  
 सुयदेवि वि सिक्खइ अवर गथु ।  
 देवत्तणु सिज्जइ परमु देउ ।  
 उदारत्तणि गुणु अवर णिच्चु ।  
 बुद्धी ण वि दरिसइ परम बुद्धि ।  
 भाणाण<sup>2</sup> वि परउव दिसइ भाणु ।  
 एाया ण वि देइ सुणाय<sup>3</sup> जुत्ति ।

प्रस्ता—रुवहु रुवत्तणु, वलहु वलत्तणु, मीलहु ते सीलत्तणउ ।

मण्णउ फुडु दिण्णउ, मणहर वण्णउ वग्गहु पुणु वग्गत्त एउ ॥6॥

( 7 )

तसु लक्खण बैची एाम कंत,  
 जा सुइ वस घणु लय कराइ,  
 जा मुणि वारि व एारु चारु वण्ण<sup>4</sup>,  
 जा लच्छिव अजडासयहु पुत्ति,  
 जा लीलामदिर बहुगुणाह,  
 कदप्पहो जा दिइ दप्पगठि,  
 सिगारहो अहिणव जीवकोसु,  
 लावण समुदहो रायहु<sup>5</sup> वेल्,  
 तारुणहो एावइ परम सिद्धि,  
 अणुरायहो ण किउ पट्टबधु,

गुण सीलरुवसोहग्गवत्त ।  
 पुणु गुणि वकत्तरि एाव थाइ ।  
 एयत्त सत्त पुणु तहु सयण्णु ।  
 जा गोरि व एाहु उप्पण<sup>6</sup> गुत्ति ।  
 कीलावणु सयलहु तियकलाह ।  
 सुक्खहो किर अहिणव जम्मसिद्धि ।  
 विग्गम सुविलासहो परमतोसु ।  
 सोहग्ग गयंदहो एाइ लील ।  
 रुवहो ण सिद्धी परम रिद्धि ।  
 जणायणयह<sup>7</sup> एा सपुण्ण<sup>8</sup> बधु ।

1 ग घ गुणगउरुव

3 घ सुणाह

5. ग उप्पण

7 क, घ, जणायह

2 क रज्जभीणा

4. ग, घ चारुवण्ण

6 ख घ एाह

8 धं सपुण्ण०

धत्ता—जा पिकिखिबि कामहो, ससि ठिय लामहो, गियवाण विवेरीह बहि ।  
दिठ उरिपयसता<sup>१</sup>, मम्मुद्धिवता, अणुदिणु सल्लिउ बउ दमहि ॥६॥

( ४ )

मालय<sup>२</sup> सोरहु अणु अमयसारि,  
चन्दहु<sup>३</sup> लायणु वि कमल कंति,  
कदप्पहु दप्पहु सिरि पहाउ,  
कोइल वीणा भमरालिराव,  
वासा घण रत्तिहि बहुलु वतु,<sup>६</sup>  
मयमत्तह हसह गइविलासु,  
करि कु भ पिहुत्यणु सीहमज्झु,  
एडत्तिव ले विणु चारुदब्ब,  
विहिणा गिम्माविउ एहु रुउ,

उज्जालिय हेमहो किरण भार ।  
णव सिरस कुसुम केसरहु पति ।  
सरसइ देविहि बहुकल कलाउ ।  
विहू<sup>४</sup> म<sup>५</sup> बिभीहल सोण भाव ।  
गभीरत्तणु सायरहु<sup>६</sup> कतु ।  
मुणियाहह गिम्मलसीलभासु ।  
कदप्प सरासण चारुगुज्झु ।  
अणुवि मेवि वि रससारसब्ब ।  
उवमाण दि बज्जिउ सुह सरुउ ।

धत्ता—मुत्तिव सह देहे, सुहरस जेहे, तहु हुइ<sup>७</sup> मणहारिणिय ।  
अप्पहु सिव सत्तिव, विणयहु<sup>८</sup> भत्तिव, चित्तहु बद्धा कारणिय<sup>९</sup> ॥८॥

इय जा दुण्णिावि सुह जेह सत्त,  
ता सुरवइ आएस पउत्तउ,  
वरिसइ गिम्मल मणि बहुधारिहि,  
आणिवि आणिवि सुरवइ कोसहु<sup>११</sup>,  
दिणि दिणि वारह कोडिउ रयणह<sup>१२</sup>,  
पच वण्ण अमुल्लइ वरिसइ,  
बहु पुण्णहो महग्घु किं सीसइ,

वग्गत्तय फल सभारमुत्त<sup>१०</sup> ।  
धणउ मेह वरिसणहु पटुत्तउ ।  
इइ गिज्जिय रवि ससि गुरु सारिहि ।  
पुण्ण पहाव जणिय मणि पोसहु ।  
पचासवि लक्खह बहुकिरणह ।  
दालिइहो एणउ वि कह हवि सइ ।  
रयणायर जल हीणु व दीसइ ।

१. ग ०पइ०

४. विदुम०

६ क सायहो, ग सायरहो

८ क विणयहो, ग विणयहो

१०. घ सामार०

१२ क. गयणह

२ घ मानए

३ ग चदहो,

५ क वंतु

७ क. एत हुइ, ख सातहो हुइ

९. ख घ करणिया

११ ग घ कोसहो

मणि बिट्ठहि जा एरवइ हिट्ठउ, विम्हिउ जा मणि गेहि बड्ठउ ।

घत्ता—ता दूरि वि गयणहु<sup>1</sup>, सरहिय पवणहु, तेउ पडतउ दिक्खइ ।  
सहि सहु उक्कधरु, पुहवि धुरधरु, सदेहिउ ऊतक्खइ ॥9॥

( 10 )

कि पुप्फयत ते तिरिउ जाहि,  
कि तारा ते दिणि एहु फुरति,  
इय जा ससउ गियमणि करेइ,  
थिर थोर पीणथण भारभग्गु,  
मदारदारमयरदनित्तु,  
हरियदण मुरहिय दहदिमासु,  
आवेप्पिणु पमणि दिण्णपाय,  
निरिकत्ति कित्ति धिदि बुद्धि एणम,  
गिय गिय बाहण परिवारेयुत्त<sup>4</sup>,  
आवेप्पिणु<sup>5</sup> जय कारियउ राउ,  
पमणिउ परमेसर ति जयणाह,

कि जलणजालते उट्ठुआहि ।  
कि विज्जुल घण विणु एहु हवति ।  
ता अक्खर गणु फुडु अवयरेइ ।  
मुहि परिमल धाविय भमरवग्गु ।  
हारावलिकच्चिय दामजुत्तु<sup>2</sup> ।  
सुरकुसुम गधकिय गयर वासु ।  
एउर भुणि<sup>4</sup> धावियह मराय ।  
अण्णु वि ही लच्छी बहुलधाम ।  
बहुदेव भोय मसार भुत्त ।  
मयणहो मक्कहो ण सिरि म्हाउ ।  
निणिण वि भुवणट पइ किय मगाह ।

घत्ता— ता भणइ एरेमरु, ण ति दिवेसरु<sup>6</sup>, अक्खर गणु धरि आयउ ।  
कि कारणु पुच्छमि, कज्जु गियच्छमि, सग्गहो पण्णु परायउ ॥10॥

( 11 )

ता जपइ सिरि<sup>7</sup> एामेण तित्थु,  
तुह मदिर अट्ठम नित्थ णाहु,  
ता सक्के पेसिउ तुम्ह पासु,  
ता राय लक्खण देवि गेहि,  
ता तहि जाइवि तिहि दिट्ठ देवि,  
पिबिज्जवि मुक्कउ गिय रुवमाणु,

तुहु घण्णु घण्णु णरवइ कयत्थु ।  
छहि मासिहि होसउ तिजय एाहु ।  
सोहणु इह देविहि गम्भवासु ।  
पेसिय धय पोइय धवलमेहि ।  
बहुराय महिमि किय पायसेवि ।  
बिरकालु वि ज पिणि बद्ध ठाणु ।

1 ग ०णहो

3, ग सुणि

5 घ आवेप्पिणु

7 श्रीदेवी इत्यर्थ

2 ०गुत्तु

4 ग घ जुत्त

6 दिणेसरु

अवरोप्य<sup>१</sup> वजं पहि एहु रुउ,  
इदाणि वि पयहो होइ दासि,  
को चव बिबु को अमयकुंडु,  
को परमणैहु को रइविलासु,  
को चदणु<sup>३</sup> को किर सग्गु सुवसु,

कैत्यवि णहु दिट्ठउ फुडु सरुउ ।  
महलच्छवि लज्जइ ह्रस्व पासि ।  
को मयणदप्पु को कमलसडु ।  
को कुसुमवासु को सुखफासु ।  
को गेयसारु को परमसुखसु ।

धत्ता—इहु रुउ उवतहं, हरिसु बहतह, एण विकासु विभासहि ।

अह एहा दिट्ठी हिय बइट्ठी, ता एह बि पडिहासहि ॥११॥

( 12 )

पण विप्पिणु गिय आगणस कज्जु,  
पारभिउ सेवा कम्मु सब्बु,  
कुवि आणिवि<sup>४</sup> खीरोवहि जलाइ,  
कुवि आणिवि सुरचदणु महनु,  
आणिवि देविहि निपेइ अगु,  
कुवि पारिजाय मदारमान,  
कुवि गण णाहि बहु पत्त भग,  
कुवि हार कडय ककण किरीड,  
णेउर मुहिय पालबभेय,  
ढोवइ आहरणइ मणि गिरुद्ध,  
कुवि ग्यण कनि सण्णिह सुचीर,  
कुवि वामइ अगणहु धूमिदेहु,

विण्णवियउ सयलु विवि विणयसज्जु ।  
मिल्लिवि देवत्तण णाम गब्बु ।  
सुहण्हाणु करावइ सीयलाइ ।  
हिमु मसिणु सुगधिहि मह महंतु ।  
ए णिहणइ सुअण णहो ताव मगु  
सिरि वधइ महम्मर भुणि रमाल ।  
गडच्छलि विनिहइ<sup>५</sup> जणिय रग ।  
केयूर रसण कु डल मुचूड ।  
आहरणपवर पयडिय विवेय ।  
हरि तियह वि जे किर देहि सद्ध ।  
पहिरावइ गिरु सुहई सरीर ।  
कुवि सुरहि वानु अप्पइ णिरेहु ।

धत्ता—कुवि<sup>६</sup> थई यहि गाहिणि, मण अवगाहिणि, कुवि भोयण रस आणइ ।

कुवि फल दल भारइ, गणदण सारइ, ढोवइ जे मणि माणइ ॥१२॥

( 13 )

कुवि लेइ<sup>७</sup> दंडु<sup>८</sup> पडिहारि धाइ

कुवि धवलच्छत्त सधरण धाइ ।

१ घ अवरोप्य

३ घ वेप्पिणु

५ क शब्दोऽय नास्ति

७ घ लेवि

२ घ कंचणु

४ घ आणेवि

६ ग किवि

८ घ देडु

कुवि उज्जल चामर गाहि णीउ,  
 कुवि असिबरे<sup>१</sup> हृत्थिय भगरक्ख,  
 किवि<sup>२</sup> भक्खणीर<sup>३</sup> मदिरि णित्त  
 किवि एच्चहिं जाणिवि भरह भाउ,  
 किवि वसवीण सुणि<sup>४</sup> भ्रमयघार,  
 किवि मद्दल तिवलहिं पडहराव,  
 किवि चाडु चवहिं चारणह भास,  
 छठि भासिहि किवि गिरु कवहि कब्बु,  
 किवि सरस कहहि सा गाहवत्त,  
 किवि वक्खाणहि जिण समय भेय,

कुवि रयण उवाणह बाहिणीउ ।  
 किवि सिज्जा पालहिं सुह मसिक्ख ।  
 किवि गेह कम्म भारे पउत्त ।  
 किवि गायहिं वुज्झिय परम साउ ।  
 सबणे सुखिवरहिं गिरु सुक्ख सार ।  
 देविहिं उप्पायहिं<sup>५</sup> सुक्ख भाव ।  
 किवि मडलु मडिवि देहिं राम ।  
 किवि इदजालु दक्खहिं सव्वु ।  
 किवि सवाहिं देवीहिं गत्त ।  
 किवि दरसहिं तहिं फलपत्त छेय ।

घत्ता- -इय बहु सुररमणिउ, सुर मण दयणिउ, तहिं जिण मायरि सेवहिं ।  
 पिताइय दोसह, बहु मलपोसह, मोहण बिहिणा देविहिं ॥ 13 ॥

( 14 )

इय जातहिं सोहिउ गम्भवासु,  
 ता लक्खण देवी सयणि सुत्त,  
 जा किर भरणोदयहो फुरइ कालु<sup>६</sup>  
 दिट्ठउं भइरावणु पडम इत्थु,  
 जगम केलासुव वसह एाह,  
 लच्छी दिट्ठी कमलासणच्छ,  
 गिल्लछणु दिट्ठउ घण मियकु,  
 मणिकु भ जुअलु रयणेहिं पुण्णु,  
 मीणह मिहु णुल्लउ तरलु तिण्णु,  
 दिट्ठउ गज्जतउ जलणिहाणु,  
 एाहमडवि दिट्ठउ सुरविमाणु,

समघाउ करणि शिम्मल पयासु ।  
 चिंताइय दोसहिं दूरि चित्त<sup>७</sup> ।  
 ता दिट्ठु सिबिण सचउ रमालु ।  
 मेहुव गज्जतउ उट्ठु इत्थु<sup>८</sup>  
 मीहहो किसोरु बिप्पुरिय वाहु ।  
 मदारमाल जुअलु वि पसच्छ ।  
 दिट्ठउ ऊवतउ बालु<sup>९</sup> अक्कु ।  
 शिम्मलु सरु दिट्ठउ मिरि रवणु ।  
 दिट्ठउ सरवरि केली कयळु ।  
 सिहासणु सीहिहिं वुज्झमाणु ।  
 अण्णु वि एायालउ लच्छि ठाणु ।

- 1 घ कवि
- 3 ग घ भुण्ण
- 5 ग घ. चत्त
- 7 ख उट्ठहत्थु, ग. उट्ठुहेत्थ
- 9 घ लक्कु

- 2 क रक्खणीर
- 4 घ उप्पयहिं
- 6 सूर्यकालात् प्राक् स्वप्न दृष्टा ।
- 8 ग बाल, रा

दिट्ठउ मणि सच्च विप्पुरतु,

णिद्धमउ जलणु वि वगवगतु ।

धत्ता—इय सोलह सिबिणह, सुहफल णिउणह, पिच्छिवि सा पडिबुद्धी ।  
वहु मगसत्तुरिहि, ए<sup>१</sup> सुहपूरिहि, सानिक्क पारिद्धी ॥१४॥

( 15 )

ता करिवि पहायहु पिच्चकम्मु,  
गाहहु पासम्मि पट्ठस भत्ति,  
त णिसुणिवि एरवह दिट्ठि सत्थु,  
तुह तिहु अणि<sup>२</sup> वण्णी देवि इत्थु,  
तुह होसइ एदणु तित्थ एाहु,  
ऐरावें दिट्ठे<sup>३</sup> दाणवतु,  
सीहे<sup>४</sup> मह विक्कमु तेय जुत्त,  
मालइ सुरेहि सिरि वरिय पाउ,  
सूरिति लोय पसरिय पयाउ,  
मीणे सीयल सिब एायर ठाणु,  
जलणिहि<sup>५</sup> दसणि<sup>६</sup> भवजलहि सोसु,  
सुरजाणे सुरवर एाह बिदु,  
मणि पूरे रयणत्तयहो हम्मू<sup>७</sup>,

अण्णु वि सपाइवि साहुवम्मू ।  
अरिकय सिबिणवलि दिट्ठि जुत्ति ।  
सिबिणय फनु अक्खइ ताह तित्थु ।  
तुह तिय जम्मू वि जायउ कयत्थु ।  
ऐरावइ कर पाल व वाहु ।  
जगभाह वरइ<sup>८</sup> ववले महतु ।  
सिरि दसणि तिहुयणि लच्छिदुत्तु ।  
चदे<sup>९</sup> सोहग्गहो सीम ठाउ ।  
कलसे सवलहो मगल पहाउ ।  
सरवरि उप्पाइय विमल एाणु ।  
सिहासणि पयइह भविय तोसु ।  
एायाले एायहे देइ एादु ।  
जलणेए दहइ ससार कम्मू ।

धत्ता—सु बिहाणइ विट्ठउ, मइ फुडु पुट्ठउ<sup>१०</sup> सिबिणउ तुरिउ फलेसइ ।  
तुह पुण्णपमाणे, वहु सुह ठाणे<sup>११</sup>, सक्कु वि दासु ह्वेसइ ॥१५॥

( 16 )

अह भुजिवि बद्धउ आउ कम्मू,  
छडिवि विमाणु सो वेजयतु<sup>१२</sup>,

अवगाहिबि सयलु वि सार सम्मु ।  
अहमिदु चवे विणु दिट्ठि वतु ।

- १ क. एो
- ३ क दिट्ठि
- ५ घ सिहि
- ७ कलणेहि
- ९ क रम्मू
- ११ घ णाणे

- २ यणि
- ४ घ. वरह
- ६ क चदि
- ८ ग दसणें
- १० ख. ग सिट्ठउ
- १२ ख बंजयतु

पचमि दिशि चित्तद्व<sup>1</sup> किञ्च पचिस,  
 लक्ष्मण देविहि भवद्गणु गच्छि,  
 ए सुत्ति मज्झि साय वु विदु,  
 ए पोमिणि दलतलि ठिउ<sup>2</sup> तुसारु,  
 ए सो जिणि लीणउ बेजयति,  
 ए परमप्पउ शिय अत्तरप्पि,  
 ए दम्बतम्बु जिण समय मज्झि,  
 ए सच्च<sup>3</sup> वयणु मुणिसणमुहम्मि,  
 ए सुक्खु परिट्टिउ वम्मवति,  
 ए वग्गत्तउ गिरु पुरिसयारि,  
 जह सुक्खे<sup>4</sup> एअच्छति इत्थु<sup>5</sup>,

ससि वेसुवरे विणु चारु रिक्खि ।  
 ए चदु पइट्टउ सरय अग्गि ।  
 पडिविचिउ सरवरि एाह चदु ।  
 ए दत कु पि पारयहो सारु ।  
 ए सिद्धु बुद्धु<sup>6</sup> मोक्खहो<sup>7</sup> सिसति ।  
 सिद्धत्तणु ए भविआण अप्पि ।  
 ए परम वम्मदय चण्णमग्गि ।  
 ए पडिवण्णउ सज्जण जणम्मि ।  
 ए कित्ति पमरु गुण दाणवति ।  
 ए गिण्णु रोहु बह्व दाणसारि ।  
 तह वेउ परिट्टिउ गच्छिअत्थु ।

धत्ता—सुर दु दुहि वज्जइ, तिहुअण गज्जइ, ता सुरहरिसे<sup>8</sup> पिल्लिय ।

शिय शिय परिवारे, दरिसियसारे, तहि पुरवरि सचल्लिय ॥16॥

( 17 )

अउवीसइ व कप्पामराह,  
 खालीस सक्क भवग्गामराह,  
 ए आइवि शिय शिय वाहणेहि,  
 अग्गधर कोडाकोडीहि जुत्तु  
 वेउअण दरिसिय बहु पयार,  
 हय वारह कोडिउ सद्ध तूर,  
 आहवि पुरु तिपयाहणु करेवि,

वत्तीस जि सामिय वितराह ।  
 रवि चदु जुवलु जोइसवराह ।  
 दरसिय आहरण पसाहणेहि ।  
 शियलच्छि रिद्धि ए भारमुत्त<sup>9</sup>  
 शिय वाहण पयडिव वेयसार ।  
 वरिसिय गघीवय कुसुम पूर ।  
 महसे एाहु मदिरु अणुसरेवि ।

1. ख ग. चत्तद्व

3 क घ सुद्ध

5 घ. सच्च

7 घ एच्छु

9 क घ. सभार मुत्त

2 क चिउ

4 घ मुक्खहु

6 घ सुक्खि

8 घ हरिसि



लक्ष्मण देविहि पार्याह पदेवि,  
 महसेण पुरउ जोडे<sup>1</sup> वि हत्थ,  
 दोहिवि जीबाविउ जीवलोउ,  
 दोहिमि<sup>2</sup> ढकिय एरयाह<sup>3</sup> दार,  
 रयणाहर रिहि पूया करेवि ।  
 पुणु भणइ तुम्हि दुष्णि वि कयत्थ ।  
 दोहिमि तय लोयहु हणिउ सोउ ।  
 दोहिमि सुब्बियउ अबियसार ।

घत्ता—इय बहु सुपससिबि, असुह णिहसिबि, गन्धद्विउ त्रिणु सधुणिबि ।  
 हरिसे<sup>3</sup> एच्चता पुलउ वहता, गय सुरठाणहु सुहु कुणिबि ॥ 17 ॥

इय चदप्पहवरिए महाकइ जसकित्ति बिरइए  
 महाभन्व सिद्धपाल सवण भूसणे ।  
 गवभाबयरणे एणम सत्तमो सधी समत्तो ।, 7 ॥  
 (ग्रन्थ सख्या 160)

1 घ जोरे

3. क. रयण'हं

2. स दोहवि

3 स. घ. हरिसे

## अट्ठमो संधि

( 1 )

जह जह तहि जिणु परिपुण्णदेहु,  
देवी सा ए फलहि<sup>१</sup> बडिया,  
ए गिम्मल<sup>२</sup> पुगिणहि परियरिया,  
ए गम्भ बवल किरणहे कलिया,  
उअरिण<sup>३</sup> बलि तिउ भारेण अम्भु,  
कम्मे सहु यए जुउ कसरणवत्तु,  
कोहे सहु कपइ पयह चारु,  
ससारें सहु भोयणु वि महु,  
एिइइ सहु बट्टइ तिजय पुण्णु,  
अम्मे सहु अणहणु होइ तुगु,  
ज भाइय सहु दय बहु फुरेइ,<sup>४</sup>  
उवरें सहु बट्टिउ भुवणणोहु,

तहं तह तहि बवसिय किरण गेहु ।  
ए अमयपिडले विणु<sup>५</sup> मडिया ।  
ए गिग्गय जिणु जस विअरिया ।  
ए सोक्खर सायण रमलुलिया ।  
ए जीवय जम्भु जरत वग्गु ।  
मोहे सहु उज्जमु मद सत्तु ।  
माणे<sup>६</sup> सहु भीणउ सरपयाह ।  
कम्मे<sup>७</sup> सहु एट्टउ बसरण विहु  
आलसि सहु धावइ समह सिण्णु ।  
लोइ सहु गिम्मलु होइ अगु ।  
तेए सहु तउ<sup>८</sup> पसरणु करेइ ।  
अ गे सहु बवलित तिजय गेहु ।

अन्ता—इय सा गम्भालस, सुह भरलालस,<sup>९</sup> एाह एोह रस सत्तिय ।  
दोहलय समज्जइ, जिणपय पुज्जइ, अम्भ भाव बहु सत्तिय ॥ १ ॥

( 2 )

उप्पण ताहि दोहलय भाव  
बदिहि मिल्लिय अरियण कुलाड,

अरि केलि पक्खि गोयण सहाव ।  
चिर मोयण परिसें सकुलाइ ।

- १ ख फलिहेहि
- २ ग गिम्मले
- ३ ग माणे
- ४ क उरेइ
- ५ ग ०लाल

- २ ख ग बैणु
- ४ व उयरिण०
- ६ क कामे, ख कम्भि
- ८ ख ग वउ

अणु वि भवइ शरमाहं धार  
पिहुला बणि इच्छा सम्मवारि  
लीरोवाहि सल्ले<sup>१</sup> भाविण्हाणु<sup>२</sup>,  
जाणइ सुरमउडा<sup>३</sup> बेमि पाय,  
भावइ भित्तणु हरि गयाह,  
तिहुयणि उज्जालउ ग्रहिलसेउ,  
जाणइ जणु बोलमि भनियकु डि,  
जाणमि<sup>४</sup> पीयमि संतोस सार,  
जाणमि जइ मोडमि कामबाण,

सभीडिण रक्खिब जणुपयार ।  
बिहुडावणि बडा मुक्खवारि<sup>५</sup> ।  
इच्छइ सुवण्ण कमलेसु जाणु ।  
भवाइ तिहु छत्तह तणिय छाय ।  
इच्छइ पडिबोहणु नइ हयाह ।  
परमप्यहु लम्माउ मलु फुसेउ ।  
जाणइ सामु वावमि अज्जलडि<sup>६</sup> ।  
जाणमि<sup>७</sup> शिखाडमि कम्म भाइ ।  
जाणइ<sup>८</sup> अक्खमाहमि पक्खणाण ।

वत्ता—जे करइ मणोरह, मणवच्चावह, ते सुरवइ सविपूरइ ।

जिणभत्ति गहिल्लउ, मणह पहिल्लउ, भाइवि दुक्खइ चूरइ ॥२॥

( 3 )

त रावमासाह पारपुण्ण बहु,  
पोसहु एयारसि किण्ह पक्खि  
देविण् जणियउ जिणु बवलु वण्णु,  
समचउरलु सठाणेण जुत्तु,  
अ गुक्कमव सोरह महमहतु,  
मलसेण वज्जिउ<sup>१</sup> विप्फुरतु,  
सयला हिम रुबे सिरि महतु,  
तेइ सूरु हइ भासयतु,  
अभयणिग्गउ रां बालसूरु,  
ए अरणिहि जलण फुलिमु विट्ठु,  
ए अरणहु हूवउ परमु राणु,  
ए राणाहु उवसमु हणिय कामु,  
ए सिवहु हूउ शियारस<sup>१०</sup> सहाउ,

ए।एत्तव जुत्तउ पुण्ण साहु ।  
उच्चट्टिय सयलहि रायरिक्खि ।  
सह सुट्ठुत्तर लक्खण पवण्णु ।  
पढने सहएणे वडिय वत्तु ।  
सिय पुट्ठपवल सोणिउ बरतु ।  
लोआहिउं वीरिय नइ<sup>२</sup> वहतु ।  
पियहियवाणी ससारवत्तु ।  
पुवणु वि तक्खणि उल्लासयतु ।  
ए बाणिहि शिण्णउ अक्खपूरु ।  
ए भम्महो सुहफलु जणिउ इट्ठु ।  
ए सत्तहु जायउ परमु दाणु ।  
ए समहु हूवउ सिव सुहु सुषामु ।  
ए अण्ण सहावहु परम जाउ ।

1 क सुक्खवारि

3 घ भाइण्हाणु

5 घ भरहल्लडि

7 घ जाणइ

9 ख, घ शिख ०घ. लोयाहिउं

2 ग. सल्लि

4. घ सुरमउडाहि

6. घ जाणइ

8 ख. मलसेइ विवज्जिउं

10 क इवउं तिरियण

पत्ता—ता हरि सिय तिहुअणु, राखिय सुरयणु, बाहिय लोयह<sup>1</sup> शङ्क गय ।  
अणु वि सोयतह, करणुरुअतह,<sup>2</sup> जीवह एट्टा सयल भय ॥3॥

( 4 )

खोणिहि उट्टाइय मणिणिहाण,  
फुल्लिय छह समयह दुमह जाइ,  
राए बढावउ<sup>4</sup> अणुतुल्लु,  
राखहि सिरि हरि मणि तुट्टियाउ,  
वायउ सोयलु तहि मलय वाउ,  
जो रयणिहि वरिसिउ तीस पक्ख,  
वरिसइ अइवीहरधार जुत्तु,  
गिम्मलु जायउ तहि गयण मग्गु,  
इवह कपिय सिघासणाइ,  
जोइस घरि जाया सिघाणाय,  
बज्जइ सत्तावलि भवण ठाणि,

रा दुच्छहु उप्परि करिय याण ।  
अट्टारह अणिहि पुहइ<sup>8</sup> भाइ ।  
अप्पि वि किउ रिय पुहवीहि मुल्लु ।  
रिय पुण मणोरह<sup>5</sup> पुट्टियाउ ।  
गधोवय विट्ठिहि सुह सहाउ ।  
सो घणउ भेहु सुर कुसुम लक्ख ।  
बहु हरिस पुण सभार मुत्तु ।  
अइ धवलु धवलु हुउ<sup>6</sup> दिसिहि वग्गु ।  
कप्पिहि उट्टिय घटारणाइ ।  
वितरघरि वज्जिय पडह धाय ।  
कि कि एहु कीरड पुणखाणि ।

पत्ता—एवकारणु वज्जिय, मेहव गज्जिय, रिय रिय तूर सुरो विणु ।  
रिय अवाहि पउ जहि, ससउ अजहि, मणि बहु हरिसु कुणे<sup>7</sup> विणु ॥4॥

( 5 )

एागे जाणिवि उप्पणु एाहु,  
उट्टिवि रिय रिय सिहासणाइ,  
तहिसि जाइवि पयमत्तजामु,  
ता बाविय दु वहि हरिगणेण,  
सोहम्म<sup>9</sup> चित्तउ रिय करिहु,  
आयउ जोयण लक्खिक्क माणु,

सुरवइ गणुवहु भतिए सणाहु ।  
मणि भार किरणभाभूसणाहु ।  
भूयलि लाइवि<sup>5</sup> सिरु किय परामु ।  
आयण्णाय वेविहि धिरमणेण ।  
वेउव्वि वि ए सिय गुरु मारिहु ।  
वत्तीस हिवयणिहि<sup>10</sup> आसमाणु ।

- 1 ख लोयहु
- 3 ख पुहवि
- ० क मणोरह
- 7 ख घ जणे
- 10 क. वयणिहि

- 2 ग घ. ०यतह
4. ख. बढाउ
6. ख वलु हुउ
- 8 ग घ लाएवि
- 9 घ सोहम्मे

तहो मुहि मुहि दंत वि भट्ट भट्ट,  
तहो दति-दति सरवर विसालु,  
रिण कमलि कमलि वत्तीस पत्त,  
बहु चमरहि मडिय बहुय कण्ण<sup>1</sup>  
बहु एमिहि मयजलु रिण्भरतु,  
विज्जुलमाला रिण्ह कक्खवतु,<sup>2</sup>  
बहु रयण पिट्ठ<sup>3</sup> भइ वित्त देह,

केलाससिग सारिच्छ सिट्ठ ।  
वत्तीसहि कमलिहि भइ रमालु ।  
दलि दलि खम्बहि बहु हरिणणेत्त ।  
तहि मरिण किंकिणि लक्खेहि खण्ण ।  
ससि सूरु वि बटा जो<sup>4</sup> वहतु ।  
मरिण पच्चवण्णक वलु वहतु ।  
सब्बह भयसय राणाह<sup>5</sup> गेह ।

धत्ता—केलासु व जगमु, चउपय सगमु, मेरु व जिण जसि धवलियउ ।  
विज्जु व हिमभारे, पसरिय सारे, भाइवि ए रिण्ह सबलियउ<sup>6</sup> । 5 ॥

( 6 )

जे गिरि पमुहइ उवमाणु तासु,  
जो हरिहि पयावउ धवलु वण्णु,<sup>7</sup>  
देवह जिण भाउ व मुत्तिवतु,<sup>8</sup>  
सत्तह रिण्वाहु व कायवतु,  
जीवह पूरु व हकार वतु,  
धामह धावेसु व लब्धिबतु,  
गुण महिमह वासु व कित्तिवतु,  
दाणह गेह व सु विवेयवतु,  
सुपयासह वासु व सिय दिसासु,  
बहुभेय पुट्ठि उक्खिभय सुकेउ,

दिज्जहि ते सब्बइ होहि हासु<sup>9</sup> ।  
तेयहो गेह व सिय भार वण्णु ।  
भावह ए वेउ व सत्तवतु ।  
कायह सधाउ व जीववतु<sup>10</sup> ।  
हकारह तेउ व धामवतु ।  
लब्धिहि अहिठाणु व गुण महतु ।  
कित्तिहि सठाणु व दाणवतु ।  
.. . . .  
सुविवेयह गाणु व फुडु पयासु ।  
दिसि बयणह मण्णु मय विलेउ ।

धत्ता—तं पिच्छि वि सुरवर, बहुविहु अच्छर, मरिण सतुहुउ जायउ ।  
लीलइ आरूठउ, हरिसे बूढउ, कुट्टय मज्झ परायउ ॥ 6 ॥

1 = बहुकणं

3 = कक्षायुक्त

5 ग ठाणाहि

7 = सर्वपर्वतानां हास्यं भविष्यति

9 = जिन परिणाम इव मूर्तिवान्

2. ग जु

4 = तूणं

6 क सबलिय

8 = हस्ती इन्द्रप्रताप इव

10 = कायानां सधात इव जीववान्

( 7 )

कोडी सप्त वि भणु कोडि बीस,  
 भ्रातृ मूलदेवीय<sup>3</sup> इत्यु,  
 तित्तिय तिय गणु<sup>5</sup> पडिहरिहिं चलिउ,  
 सव्वह कप्पह सच्चलिय देव,  
 शिस्सखा जोइस चलिय सव्व,  
 भवणामर हलिय तक्खणेण,  
 अइ पिहलु वि एह सकडउ जाउ,  
 वेमाणिहिं बासइ फुड विमाणु,  
 भ्रातृद्वइ रहुरह<sup>6</sup> वरिहिं तित्थु,  
 छत्ते शिह सिज्जइ अबलु छत्तु,

इ दणिय इत्तिय तहि<sup>1</sup> गिरीस<sup>2</sup> ।  
 को सखेसइ<sup>4</sup> परिवारु तित्थु ।  
 बहु हरिस भत्ति भावेण कलिउ ।  
 शिण्य एहिहिं सहु जिण विहिय सेव ।  
 वितरणं चलिय मलियगव्व ।  
 विज्जाहर चाविय सहु मणेण ।  
 दिसि मग्गु वि हूवउ तुच्छ भाउ ।  
 जाणिहिं मज्जहिं फुडु सिविय जाणु ।  
 गयवरु छउइ<sup>7</sup> गयवरु पत्थु ।  
 विविं भालुद्वइ<sup>8</sup> विवु गुत्तु ।

धत्ता—बहु पूभा पत्तिहि,<sup>9</sup> ठिय सयववत्तिहि, पूभपत्त शिह सिज्जहि ।  
 बहु मगलव्वहिं, अवरिहि सव्वहिं, अवरुप्पह तहि मज्जहि ॥7॥

( 8 )

एह छत्तिहि दीसए अवसवणु,<sup>10</sup>  
 अयवडिहि<sup>11</sup> मगलक्खेहि किण्णु,  
 शीलुप्पलु मउ<sup>12</sup> सीयरि चएहि,<sup>13</sup>  
 रविकुल सकुल<sup>15</sup> कणायहु<sup>16</sup> कुडेहि<sup>17</sup>,  
 कुरु विवहिं ए अरुणेहि भाइ<sup>19</sup>,

ए कोडाकोडिहि सत्तिहि छण्णु ।  
 चमरिहि ससिकइ जालेहि पुण्णु ।  
 रभा चच्चियउ कयली सएहि<sup>14</sup> ।  
 जउणा सकडु<sup>18</sup> मरगय पडेहि ।  
 महलीलिहिं मह अवारु एणइ ।

- 1 क तिह,
- 3 = इन्द्राणी,
- 5 ख गुणु,
- 7 ग छट्टइ,
- 9 क तूया० = पूजापात्राणि,
- 11 ग अयवडिहिं,
- 13 = छवीससमूहै,
- 15 = सूर्य समूह सकटम्,
- 17 = सुवर्ण चुम्बै,
- 19 = रक्तनेत्रै केलिशने कृत्वा,

- 2 ग शिरास, = ईर्ष्या रहित,
- 4 = सख्यां करोति,
- 6 = रथ रथेन संघट्टते,
- 8 क भालुरिबि, ध. भालुम्बि,
- 10 = नमो छत्रे- कृत्वा उज्जवल जातम्,
- 12 = नीलोत्पल निष्पन्न,
- 14 = कलि इन्द्राणीव तथा वटित नम,
- 16 ग कणायहो,
- 18 = यमुना नदी सकटम्

ससिकतिहि एगवइ बबखिलु,  
सभाकालु व बिदुमह पुर,  
सुरकुसुमहि भालहि कतु एगइ,  
हु दुहि सदेण पिहल बाइ<sup>२</sup>,  
एग्गेण सयलु वि एग्गेवतु,

बेरुलिवाहि एगवइ हरियगुतु ।  
रपणिहि एगहमण्डलु एगइ सूर<sup>१</sup> ।  
गधिहि सोरह सछण्णु भाइ ।  
गेय ए कल्लोलेहि जाइ ।  
भारेण सयलु वि तलिल्ह सतु ।

घत्ता—बउ सुरहणिकायहि, गयणि भमायहि, बमडु वि तह पूरियउ ।  
जह बाहण देवहि<sup>३</sup>, कयपहुसेवाहि, सकडु मग्गु वि सूरियउ ॥८॥

## ( 9 )

कुवि सुरु पभणइ लहु मग्गु देहि,  
कुवि पभणइ केसरि करहि दूरि,  
कुवि पभणइ हरिणु म आणि पासि,  
कुवि भणइ म पिल्लहि भाइ इत्थु,  
कुवि भणइ बसहु बिसयहु टालि<sup>४</sup>,  
कुवि पभणइ सदणु दूरि किज्ज,  
कुवि भणइ भेहु वयहु एसाडि<sup>१२</sup>,  
कुवि भणइ सपु परमग्गिणेहि,  
कुवि भणइ हतु मकडि म बल्लि,  
कुवि भणइ मोरु तुह अइरमालु,

महु<sup>५</sup> सीहहो गयबह दूरि रोहि ।  
सरहि हउ<sup>६</sup> पण्छा भावि सूरि ।  
महु दुट्टहु<sup>७</sup> बग्गहो दूरि एगसि ।  
सेरह<sup>८</sup> भग्गइ हरि जाइ कित्थु ।  
उभरहु<sup>९</sup> मलेवि मासूलु<sup>१०</sup> बालि ।  
आणिवि गइ उप्परिमाधरिज्ज<sup>११</sup> ।  
मा उप्परि आणिवि मूढ फाडि ।  
मा गरुडहु आणिवि मुहि करेहि ।  
मज्जारु मिलेसइ सीलु वेत्ति ।  
पुणु मज्जु सुएहु<sup>१३</sup> एगइड करालु ।

घत्ता—किवि भणहि सुरेसर, बहुबाहणवर, अग्गि पत्थइ जाए महु ।  
पडसिवि अइ सकडि, पाडिय धयवडि, एहु बाहणइ गमेसहु ।

## ( 10 )

इय जह जह पुरि आसण्णहुत्ति,

तह तह सुरबाहण लहुय वति ।

- 1 = मालिभि व्याप्त नमः
- 3 = बाहन देव
5. = अष्टापदै हत
- 7 क सरह
- 9 सर्पात्
- 11 = गजोपतिमाधारय
- 13 = स्वाय

- 2 क वा इ
- 4 क महो,
- 6 क दुट्टहो, व दुट्टहु
- 8 बिज्जकात् दूर कइ
- 10 स उभरहो नकुल
- 12 बातात् दूरी कइ

आइवि तहि पुरि किय कुसुम विट्ठि,  
 बुदुहि<sup>1</sup> अफालिय कय विसैस,  
 ता इदाणी सई उतरेइ,  
 आइवि बढाविउ जिणहू<sup>2</sup> ताउ  
 जाइवि सूई हरि भति जुत्त,  
 दिहुउ परमेसर तिजयणाहु,  
 रोमचकषु हुउ सयलु वैहु,  
 हिय उल्लउ हरसि<sup>7</sup> पूरियऊ,

घत्ता—जिण मायरि ससिवि, कुलु बि पससिवि, माया सुउ तहि अप्पि वि ।

जिणणाहु लएप्पिणु, हरिसु वहेप्पिणु, पुणु रवि गयणु वि सप्पि वि । 10।

( 11 )

अप्पिउ सुरणाहहो वरम देउ,  
 करकमलइ मउलइ सुरह सत्थु,  
 सुरणायणाइ पूरइ हरिस बाहु,  
 पुर पभराहि षण्णउ सहसचक्खु,  
 से सुवि<sup>12</sup> तहि दुत्थियउ<sup>13</sup> रुउ पेक्खि,  
 रायणाहिय लक्खण पिक्खि सक्कु,  
 देवग पिहिय सुक्खरि सिरम्मि,  
 ईसारो धरियउ षवलु छत्तु,  
 साराक्कुमार माहिइ एणाह,  
 जे अवर पवर देवाहु एणाह,

घत्ता—इय तहि सोहम्मं, माणिय सम्मे, अइरावइ सच्चालियउ ।

सीयर आसारिहि, मयजलधारिहि, एणहपहु पुरउ करावियउ<sup>16</sup> ॥ 11 ॥

गंधोवय रयरिहिं जणिय सिट्ठि ।  
 तूरत्तउ<sup>4</sup> पयडाहि सुरवरेस ।  
 गियकज्जहो अवसर मणि घरेइ ।  
 गियहहू<sup>3</sup> किउ मगलहू<sup>4</sup> भाउ ।  
 दिट्ठी<sup>5</sup> लक्खण देवी सपुत्त ।  
 कप्पूर षवल सोहा सरणाहु ।  
 सोअणजुउ<sup>6</sup> एण सावणह भेहु ।  
 बहुलोयण हेउ विसूरियउ<sup>8</sup> ।

जय जय मण्ड हरिगणु सुमेउ ।  
 अहिणउ पिच्छवि<sup>9</sup> जिणचंदु तित्थु ।  
 जगि दुल्लहु जिण दंसणह साहु ।  
 सहसक्खु वि सेसक्खिहि<sup>10</sup> समक्खु<sup>11</sup> ।  
 कह होइ तित्ति अवरह समिक्खि ।  
 अणिमिस लोयणु होए वि षक्कु ।  
 सक्के संठवियउ कोमलम्मि<sup>14</sup> ।  
 पिडे<sup>15</sup> वि तासु जिण जसु पवित्तु ।  
 चामरढालणि जाया सरणाह ।  
 ते करजोडिवि ठिय सेवगाह ।

1 ख ग दुदुहे

3 ग हच्छह

5 क ग दीट्ठी

7 ख घ हरिमै

8 = बहुनेत्राणि यदि भविष्यन्ति तदा

जिनस्य रूप सर्वं पश्यामि इति विषाद कृत ।

9, ख पुच्छिवि

11 = सहस्राख्य शेषनेत्रं रूप पश्यति,

13 घ दुत्थियउ,

15 घ पिडे एकीकृत्य

2 ग जिणहो, घ जिणहु

4 क मगलह

6 ग लोयणा

+ = गीत नृत्य वादित्राणि

10 क सेसार्कहि

12 = धरणेन्द्र

14 = कोमलवस्त्रादिच्छादिते

16 = नभपथानि पुरकारापित



( 12 )

ता चल्लिय चारिवि सुरणिक्काय,  
बहु जाणहिं गयणु ए कहवि दिट्ठ,  
जोयणसयसत्त वि एणउ<sup>१</sup> जाम,  
तह उप्परि रवि जोयण बहेहि,  
एक्खत्तइ चहु चहु वुह पहाणु,  
तिहु मगलु तिहु पगुलह<sup>२</sup> ठाणु,  
उडुगणु सुरकरि सीयर सरिच्छ,  
एहणइ रत्तप्पल<sup>३</sup> भति मूढ,  
आइच्चवि वि<sup>४</sup> तह विवइ हत्थु,  
दु दुहिरव तट्ठउ सत्ति कुरगु,  
सुरणरिहि सक्किवि मुहह तुल्लु,  
तह गेए णिच्चलु कियउ तामु,

पत्ता—इय एह पह मु जिहि<sup>७</sup>, सुरह मण्णुज्जहिं, बैए एह अइकत्तउ<sup>८</sup> ।

ता दिट्ठउ मदरु, बहु सिरि<sup>९</sup> सुन्दरु, सम्मुट्ठ ए आवत्तउ ॥१२॥

( 13 )

सुरगिरिणा पिक्खवि तिय समेय,  
णिज्झरणा तुमारिहि छइय देय,  
मणिसिलसिषासणु पाय डेइ,  
वाय दोलिर<sup>१०</sup> तरु भिसि एमेइ,  
करिभजिय चदण इसु पुरेइ,  
मयणाहिहि परिमलु विक्खरेइ,  
कोइल भुणि गेयइ पायडेइ,  
६ हणेय,

भूमडलु ठकइ धयह छाय ।  
जगमु भुमणत्तउ एणइ सिट्ठ ।  
महि छडिबि तारा दिट्ठ ताम ।  
चहु वि असियहिं किट्ठउ सुरेहि ।  
तिह सुकुतिहु जि सुरगुरु सुजाणु ।  
तह भग्गइ सुद्धउ एहु वियाणु ।  
पसरिय मण्णुज्जहिं गयणि अक्ख ।  
कुवि सुर करि केली भावगूढ ।  
जहि पिक्खवि विहसइ सुरह सत्थु ।  
ता णिम्मलु हवउ तामु अणु<sup>५</sup> ।  
आणिवि अप्पिउ सइ हरिणु मुल्लु ।  
जह खदहो छट्ठइ शेय<sup>६</sup> पासु ।

माणिक दित्ति दीविय सुतेय ।  
सुरतरु कुसुमेहि पयरइ भरेइ ।  
चमरी पु छहिं चामर लिखेइ ।  
थल कमलसि तत्ति एणइ<sup>११</sup> सठवेइ<sup>१२</sup>  
कप्पदुम दलचीरइ धरेइ ।  
मारुअ<sup>१३</sup> हल्लिय ताहिहिं एणडेइ ।  
मारुअ<sup>१४</sup> पूरिय बसिहिं रणेइ<sup>१५</sup> ।  
लोलिर लयाहिं पडिहार<sup>१६</sup> होइ ।

- 1 घ एणउअ
- 3 = नभ एव नदी कमल
5. चन्द्रस्य शरीरम्
- 7 ग नेय,
- 9 = अतिक्रान्त, उलघित,
- 11 क ख बात दोलिल
- 13 = थल कमलान्येय शप्य स्थापयतीति मेरु
- 14 घ मारुय
- 16 = शन्दयति

- 2 = शनि
- 4 ग, वे,
- 6 घ गेह,
- 8 घ बुद्धिर्ह,
- 10 घ विह,
- 12 क तराइ
- 15 ख घ, हल्लिर
- 17 = मरु प्रतिहार करोति ।

पभणइ कूरह मारहउ कोइ,  
सुरतर कलि,यहि रोमधि धनु,

देवहि दिट्टउ मंदर सरगु ।

अल—उज्जल सोवणिहि, बडिउ सुवणिहि, बहुबिह रयणिहि सजडिउ ।  
सच्चउ भूणारिहि, तिहुअणसारिहि<sup>1</sup>, उरयलि पदकु व संघडिउ ॥13॥

( 14 )

जो भूयो महुण बीयकोसु<sup>2</sup>,  
फणि भवणहो सिरि ए कणयकु भु,  
ए अम्मकरिदिहो हेमघमु,  
ए एहसिरि करि<sup>3</sup> इहु माहुलिगु,  
ए दियवउ<sup>10</sup> इहु किउ मोक्खमणि,  
तसणाडि बस मज्झम्मि दिट्ठु,  
ए सग्गणिहाणु व सधर हिट्ठ,  
ए रोदसि पजरि चक्कवाउ<sup>13</sup>,  
ए जिणवरणाण सुवण्णपीडु<sup>14</sup>,  
ए त्रयकडिसुत्तहो कणयखेल,  
ए दहदिसि बैल्लिहि पिणु कडु,

उवरिट्ठिय वण अलि जणिय तोसु ।  
एह<sup>5</sup> गगधवल<sup>4</sup> धयवड<sup>6</sup> विघमु ।  
रविमसि बामर जुयलिहि अदसु<sup>7</sup> ।  
उप्परि वणपत्तिहि अइसुरगु<sup>8</sup> ।  
ए कणयणि सेणी चउण सणि ।  
गोरोयण पिण्डु<sup>11</sup> व एणइ सिट्ठु<sup>12</sup> ।  
वहु हेमकोडि सजणिय सिट्ठु ।  
ए एहमूकीलण कील भाउ ।  
वहु गहुमुत्तिय रगलि लीडु ।  
उडुगण रयणिहि भडिय सुमेल ।  
इय दिट्ठउ सुरगिरि तेय रुडु ।

अल—सुरतर मय रदिहि, परिमसु रु दिहि, जो ए पिजर जायउ ।

अह जिण जलणाणिहि, धुसिण समानिहि चिह लिपिउ सच्छायउ ॥14॥

- |  |                               |
|--|-------------------------------|
| 1 ग. तिहुयण०,                              | 2. कवलपोकरी मजरी मध्यप्रवेशाः |
| 3 आकाश-गगायाः पूत्रापट्ट ,                 | 4. ख दही,                     |
| 5 घ. धय बवड,                               | 6. ग. घ. जुयलिहि,             |
| 7 =मायारहितो मेरु ,                        | 8. हस्ते,                     |
| 9. ख घ. सरगु,                              | 10 ग. घ दीवउ,                 |
| 11 =गोरोचन पिण्डु इव,                      | 12 ग सिट्ठि,                  |
| 13 =आकाशपृथिव्योः पञ्चरे चक्रवाक इव मेरु , |                               |
| 14 ग सुवण्णवीडु                            |                               |

( 15 )

तहं<sup>1</sup> उप्परि पंडुय<sup>2</sup> वणु रमासु,  
 छहि ऊणिहि सुरतर जाय<sup>3</sup> छणु,  
 पडुय सिल तहि ईसाण कोणि,  
 प्रहं<sup>4</sup> दु सरिच्छी पीयवणु,  
 जोयण पचासखि वित्तरेण,  
 सिहासण तिणिण जि रिण्णवित्तु,  
 वणुसय पच जि उदयेण हुति,  
 उप्परि तहो प्रहं<sup>5</sup> ठिय बिसाल,  
 तहि आबिबि सुरयण जिणसणाह,  
 सुरगिरिहि पमाहि ए बिहि करेबि,

जोयण सय पंचहि<sup>6</sup> र्थ विसालु ।  
 अउबिबि अउ चार सिला पवणु ।  
 उत्तत्तकखय किरणाह कोणि ।  
 जोयण सउ बीहत्तरिण पवणु ।  
 अट्ट बि जोयण उदयत्तरेण ।  
 मणिमय पभणइ जिण समय सत्तु ।  
 पच जि वणुसय वित्तरेण यति ।  
 अट्ट रयण चित्त सोहारमास ।  
 दु दुहि सरवट्ट रिम भुवण एाह ।  
 चिरण्हव<sup>7</sup> ए बिहाणइ<sup>8</sup> संभरेबि ।

वत्ता—ता वायकुमारिहि, बहु परिवारिहि, तहि रवपडुउ<sup>9</sup> सरियउ ।

णिम्मणु भावरिसहु, पयडिय हरिसहु, सप्पिण्ह<sup>10</sup> भूयणु कारियउ<sup>11</sup> । 15।

( 16 )

गवोवड वरिसि बि वणुकुमार,  
 कणदेबिउ तहि कुसुमइ खिबति<sup>12</sup>  
 ता इदं हत्थिहि जिणवरिदु,  
 बिणि वेसिउ मणिकुमि सिंहवीडि,  
 दाहिण सिहासणि पदमु सक्कु,  
 अवरह कप्पह जे देवणाह,  
 अउमेय<sup>13</sup> तूरवितर सुरेस,

कु कुम रस लिप्पहि भत्तिसार ।  
 मुत्तिय रंगाबलि एण भरति ।  
 उत्तारि बि ए अकलकु चदु ।  
 कोमल सुरवडि<sup>14</sup> अयच्छाउ लीडि ।  
 वामइ ईसाणइ इदु बक्कु ।  
 ते छत्त चमर चारण सणाह ।  
 वायहि<sup>15</sup> पयटिय चारह<sup>16</sup> विसेस ।

1 क. तहो, व तहु,

3 ग. जाल,

5. ग. व बिहाणे

7 क. ख. सन्निहु

9 = मेवकुमार,

11. = वत्त

12. वतत बीणादिक बाध इत्यादि अनुबिध,

13 ख. वायह

2 क पडुव

4 = पूर्वजिनस्नानविधानेन

6 = रजसमूह

8. व करावियउ

10 ख. लिबेहि,

14. = सगीत

भुवणोसर गायण पद्मिणिसङ्गा,  
दिसिपाल केवि पडिहार जाय,  
देवगण गण मयल भएति,  
बहु धूव धूम पायउण सार,  
धवर वि जे केइय देवसत्थ,  
देविहि सेणी किय मिलवि ताम,  
दोसेणउ<sup>१</sup> दो सककह णिबद्ध<sup>२</sup>,

एइ सावि परिद्विय जोइ घण्ण ।  
सोवण्ण दह विप्फुरिय काय ।  
दिसि कण्णउ मयसकरि फुरणति ।  
सहि जाया णिरु अग्गिय कुमार ।  
ते पतिकरणि जाया कयत्थ ।  
सुरमिरि खीरोवहि मञ्जु जाम ।  
खीरोवहि जलु आणणि सुसिद्ध ।

धत्ता—इय मिलवि सुरेदिहि, बहु आणदिहि, ण्हवण करणु पारद्धउ ।

णिय रिद्धि पहावें, णिम्मल भावें, जारि सुणिय सिरि सिद्धउ ॥16॥

( 17 )

ता देविहि करि किय करणयकु म,  
जे बाण्ह जोयण उदय तुंग,  
मुह वित्थर जोयणु इक्कु<sup>३</sup> जाह,  
हत्थहु हत्थें सवरहि ताम,  
दाहिण सोसिहि सोहम्मु लेइ,  
दुण्णि वि कप्पेसर जिणु ण्हवति,  
णिय हत्थिहि ढालहि कलस लक्ख,  
तेत्तिव<sup>४</sup> सलिलि<sup>५</sup> बालु वि जिणिदु,  
खीरोवहि जलु खीरहो समानु,  
ण<sup>६</sup> मदिह जायउ धवलवण्णु,  
ण पिडिय सयलु वि हिमहो सेलु<sup>१०</sup>,

बहुगघ कुसुम मगल वियम ।  
पिडुलत्तणि जोयणु अट्ठरग ।  
को तहि सखा जारोइ ताह ।  
खीरोवहि<sup>४</sup> जिणवर अणु जाम ।  
वामहि ईसारोदु वि भिलेइ<sup>५</sup> ।  
वहुमत्तिभार<sup>६</sup> णिरु पायडति ।  
कप्परपूर परिमल परिवल ।  
एहु खुहिउ माण गुवि ण गिरिदु ।  
जिणकनि मिलिउ अइतेय ठाणु ।  
ण फलिह घडिउ केलास वण्णु ।  
ण भुवणहु मुत्तिय एककमेलु<sup>११</sup>

१ = इ श्रेणीबद्ध

३ घ एककु,

५ ख विलिलेइ,

७ क तत्तिय,

९ क त, ख ते,

११ = भुवणस्य मुक्ताफला एकत्रीकृता,

१२ क ख घ सख,

१४ चन्द्रकान्तिमाणिभि जटित

२ = सोवर्मज्ञानी निबद्धे

४ घ क्षीरोवहि,

६ ख ०भते०,

८ ख घ सलिले,

१० = हिमाचला पर्वता,

१३ घ पडिउ,

ए० सक्ख<sup>12</sup> कस्य कप्पूर षंडउ<sup>13</sup>,  
ए० पारय लित्तउ हेमपिण्डु,

ए० चंदकति खीलेहि जडिउ<sup>14</sup> ।  
ए० पिडउ षिउ<sup>1</sup> जिण जसहु खंडु ।

अस्ता—ए० रिम्मल चदहि, जुवहार दिहि, सव्विहि सुरगिरि ढकियउ<sup>2</sup> ।

अह जुय बहु पुण्णिहि,<sup>3</sup> जिणपयपुण्णिहि, आइवि ए० परिभकयउ<sup>4</sup> ॥ 17 ॥

( 18 )

जय जय पभणतिहि सुरगणेहि,  
ज सयलताव सहारठाणु,  
ज सचिय बहुरय पडलणासु,  
ज सुवणरज्ज अमिसेयतुल्ल,  
ज सयलरूप सोहण्य हेउ,  
ज धम्मवत्ति पल्लव<sup>5</sup> एमेहु,  
ज सगलच्छि उवभोयधम्मु,  
ज सव्वह दयभावहु चिबेउ,  
ज जिणहेउ मिच्छत्तहाणि,  
ज जिणवाणिहि दिडकम्मछेउ,  
ज गठिहि भेयहो काललडि,  
ज दव्वहो सुडिहि भवभावउ,

गबोवउ बंदिउ सुहमखेहि ।  
ज चिर बहुजन्म मलाव साणु ।  
ज सयल लोह सघाय तामु ।  
ज सुक्खमहाफल जएण फुल्ल ।  
ज सयल विजय सठाणकेउ ।  
ज रिम्मल गुण-गरा केलिगेहु ।  
ज सयलहु धम्महु सव्व<sup>6</sup> कम्मु ।  
ज सयल विवेयहु जइरु<sup>7</sup> होउ ।  
ज मिच्छाहाणिहि जइरावाणि ।  
ज कम्महो छेयहु गठिभेउ ।  
ज कालहो लडिहि दव्वसुडि ।  
ज भव्वहो भावहु सिय सहाउ ।

अस्ता—तहि काल मणाहरि, सुरगिरि उप्परि, ज गबोवउ वदिउ ।

सुरगणु ते रिण्जकर, ठिउ बहु अण्णकर, अमरत्तणि अहिणयिउ ॥ 18 ॥

( 19 )

ता सक्क पविसुर रिण्णिभण्णइ,  
मणिमय कु डल जुमले<sup>8</sup> मडिय,  
एयण घाडिउ सेहुर सिरि वडउ,  
उरयलि हारदाम अवलविय,

हुयइ<sup>9</sup> मसोहर एाहो कण्णइ ।  
ए० ससि सूरे सइ अवरु डिय ।  
ज सुवणत्तय सारसमिडउ ।  
मज्झहो सुयवीय<sup>10</sup> व पडिविविय ।

1. क, ठिउ,

3 = दीप्तिबहुपूर्णे जिनपापपुण्यं,

5 क पवण०,

7 ग. घ. जोरिण

9. घ सुगुलि

2 ल ढंकिउ,

4 घ परियकिउं

6. ष सुदयकम्म

8. ग हुयइ,

10 = घ सुयव = वसोपवीत

मणिकिण्णि मेहलकडि सठिय,  
ककण केयूरहि बाहुजुधलु<sup>१</sup>,  
करसाहा मुदिय बहुरमाल,  
मय जुधल चार खेउर महतु,  
देवग बीर सछण्ण<sup>२</sup> गत्तु.

ए मदिह गहपति परिद्विय ।  
मदिय रयखावलि कति सबलु ।  
रमणच्छलि ठिय पालवमास ।  
धप्पु बलच्छि सोहा बहुलु ।  
मदारमाल सभार भुत्तु ।

धत्ता—इय बहु धाहरणिहि, पसरिव किरणिहि, सुरणाहहि सो पुज्जउ ।  
णियलच्छि पमाणे, मण उवमाणे, सिम्मल पुण्णु समञ्जिउ ॥१९॥

## (20)

जग मङ्गणु मङ्गिबि मङ्गणेहि,<sup>३</sup>  
जग चदणु चच्चि वि<sup>४</sup> चदणेहि  
जग सोरह<sup>५</sup> साहिवि सोरहेहि,<sup>७</sup>  
जग रगह लाइवि बुसिण ग्गु,  
जग विधह उभिभय चिधपत्त,  
-- -- -- -- --  
जग मेयह मेयड<sup>६</sup> पायडे वि,  
जग पुज्जहो पुज्जाविहि चरेवि,  
जग राहह सीसत्तणु सरे वि,  
जग कित्तिउ कित्तिहि मित्थरेवि,

जग भूत्तणु भूसिउ<sup>४</sup> भूसणेहि ।  
जगमगलु माणि वि मगणेहि ।  
जग तिलयह कारि वि तिलयभगु ।  
जग छलह धारिवि चवल छत्त ।  
जग रयणहो रयणवर ठवे वि ।  
जग दीवहो लीरायणु करेवि ।  
जग उत्तमु उत्तम पय चरेवि ।  
जग सेवह सेवाभरु करेवि ।  
जग पणमिउ बहु पणमिहि एवेवि ।

धत्ता—ता सयलु वि, सुरवर सिरि, सठियकर, धुवरह सइ पारभहि ।  
णिय बुद्धि पहावे, णियमयभावे, भइ बहु भत्ति वियमहि ॥२०॥

## (21)

जय जय परमेसर सिद्धबुद्ध,  
जय भावाभाव सहावभाव,

जय परमप्य णिय भाव सुद्ध ।  
जय जाणिय जेम्मल फुडु सहाव ।

१ ग पयजुधल०

३ क. मङ्गणाहि

५ क चच्चिउ

७ ग सेहरेहि

२ क. सछण्ण

४ ग. भूसिवि

६ ग सेरुहे

८ य मेयड, घ. गीयड 'गीतानि)

जय धृष्यमेध परमप्य माण,  
 जय परम परपर परमबोह,  
 जय सयल धमल धकलक देह,  
 जय धजय धजर धजरामरेस,  
 जय धभय<sup>1</sup> धभाव धमेय रुध,  
 जय शिहुध<sup>2</sup> गिरंजण जोहराह,  
 जय परमवध बभाणवध,  
 जय ईस विसंसर परमणिच्च,  
 जय बिस्सरुध<sup>3</sup> विस्सिक मुत्ति,  
 जय कारण करणातीदणाण,  
 जय उवसम वीरिय एय ठाण,  
 जय सच्चह तेयह परमतेय,  
 जय परमभाणि भाणह बुलक्ख,  
 जय करुणा सायर गुण महत्त,

जय सत्तमग्नि विष्णाण ठाण ।  
 जय समरस गियरस जणिय सोह ।  
 जय केवल सयल कलाह गेह ।  
 जय भाविय परम कला बिसेस ।  
 जय जाणिय दब्बट्टिय सरुध ।  
 जय रव विय दुक्ख ससारदाह ।  
 जय शिह गिय मोह महा वियत्त ।  
 जय पयडिय जीवाजीव तच्च ।  
 जय जाणिय सुद्धायारजुत्ति ।  
 जय गारो हविय मुणिय पमाण ।  
 जय कामय<sup>4</sup> रयणत्तय शिहाराण ।  
 जय शिह गिय बहु भिक्खत्त जेय ।  
 जय जीवह<sup>5</sup> पयडिय पयत्त मोक्ख ।  
 जय जय जग सामिय सहज सत्त ।

धत्ता—इय धुरिणिवि जिणेसरु, बहुगुण गणहरु, धइ हरिसें पडिबड्डत्त ।  
 सुरवरह शिकायइ,<sup>6</sup> पसरिय कायए, सह तंडत्त पारड्डत्त ॥२॥

(22)

वेउत्थि वि राक्खहिं सुरवारिद,  
 दीहर हट्ठिहिं हयचद सूर,  
 इदहु इदहु सह सिक्कु हत्थु,  
 भमि वारिय हट्ठिहिं बिलु पिय,<sup>8</sup>  
 शिसमइ<sup>9</sup> मेरु<sup>10</sup> बराहु<sup>11</sup> धुरुक्कहु,

पय सक्ख पाविय गिरिवारिद ।  
 कर धगुलि पाडिय जोइ पूर ।<sup>7</sup>  
 दीहत्तिण लविय दिसहु सत्थु ।  
 भारें सत्त वि भुक्काइ कपिय ।  
 कुम्भ करोडि मुडइ फणि लुक्काइ ।

1 क धभव

3 ग. विस्सत्तूव

5 क. जीवह

7 ज्योतिषी देवा

9 क शिसमइ

11. =सुकश्चलति चपलो भवति

2. क. शिहुय

4. घ कामद

6 क. शिकायइ

8. क विलु विय

10 =वेदयति मेरु

दिग्गय दत्त पडहिं महिं डुल्लइ,  
 सायर सत्त वि महियलु रिंल्लहिं,  
 भुवण भड उत्तरडि डलक्कइ,<sup>2</sup>  
 गयणु विण सक्कच्छवि पुट्टइ,  
 भइ वेण सुरिद भमता,  
 विभय भय हरिसं जगु पूरिउ,  
 ता अयसय सर जलिहिं<sup>4</sup> रिणुक्कउ,

कुल गिरि मूल बंधु दिठ हल्लइ ।  
 वेलघर<sup>1</sup> धाइ बि जलु पिंल्लहिं ।  
 दिसि चक्कु बि रिणय ठियहिं सलक्कइ ।  
 बायबलय वधुवि ए तुट्टइ ।  
 तिहुवण चक्कु व रिण फेरता ।  
 दिसिपालहिं<sup>3</sup> किर जाम विसूरिउ ।  
 सुरवर रिणच्च बि रिणच्चल थक्कउ ।

धत्ता—तडउ रिणच्चतह, हरिसु बहतह, जो रसु तहिं सजायउ ।

सो एहु\* वण्णतह, सुरह कहतह, रिणय हिययम्मि समायउ ॥22॥

(23)

ता कीरोवहिं तलु रिणज्जलेवि,  
 णदणवणु रिणम्मि बि डालसेसु,  
 कप्पूर घुसिण आकर पण्ण,  
 पूऊ वरणइ<sup>6</sup> थोवइ ठियाइ  
 हिययइ<sup>7</sup> लहु भइ<sup>8</sup> भइसकडाइ  
 हरिसइ थोवइ बहु भत्तिमारु,  
 विभउ थोवउ<sup>9</sup> जिण गुण अणत,  
 ना कहवि कहवि सोहम्मणाहु,  
 मिल्लिवि विभिय मुच्छा विसेस,  
 गिण्हइ<sup>11</sup> करकमलहिं जिण वरिडु,

मलयाचलु सिल सेसउ करेवि ।  
 अगहो वणु कारिवि जय पण्णु ।  
 ते सच्चि वि कारवि<sup>5</sup> एणमसेस ।  
 देवह चित्तइ भइ वित्थराइ ।  
 हरिसइ भइविच्छर लपडाइ ।  
 भत्तिहिं विभउ भइवहुपयारु ।  
 ता पिच्छिवि<sup>10</sup> पिच्छिवि तण्हवत ।  
 रिणय करिवर कर सारिच्छवाहु ।  
 आलोइ बि सयल बि सुरवरस ।  
 आरोहइ लीलइ करिणिडु ।

धत्ता—ता चल्लिय सुरवर, बहुडु दहिं सर, जिण शयरम्मि पत्ता ।

बहुमगल पुण्णउ, लच्छिरवण्णउ, रायहो घर सपत्ता ॥23॥

- 1 = देवा  
 3 = दिग्पालाः  
 \* = स्वामी  
 6 क. ० एइ  
 8 ग यइ, घ यइ  
 10. क विच्छिवि

- 2 ख डलक्कइ, क ख डलक्कहिं  
 4 = समुद्रवेलाजले  
 5 क कीरिवि, घ कीरवि  
 7. क यइ  
 9 क थोवइ, घ थोवउ  
 11 क गिण्हइ



(24)

अप्यि वि जिणु पियरह<sup>1</sup> लच्छिवतु,  
 चतु व पडिहासइ जेण धामु,  
 अक्खिवि पियरह<sup>2</sup> इय एणमु तामु,  
 दिणि दिणि परमेसर एणवतु,  
 वामकरहो भगुट्टउ चावइ,  
 माया पियरहो कि कुणइ<sup>4</sup> तामु,  
 अकलकउ चतु वि बिद्धिवतु,  
 ए धम्मवीय अकूर वतु,

आहरण किरण जालिहि फुरतु ।  
 चतुप्पट्ट ति ते कियउ<sup>3</sup> एणमु ।  
 सुरगण सगय गिय गिय अवासु ।  
 जग हरिसं सट्ट वट्टइ तुरतु ।  
 तहि पीऊसहो गिण्जइ पावइ ।  
 सुरवर दासत्तणु करहि जासु ।  
 ए कप्प विव कदलु लसंतु ।  
 ए एणकमल विस सरल कडु ।

वृत्ता—इय वट्टइ वालउ, गिरु सोमालउ, तिहुअण<sup>5</sup> जण मणहारउ ।  
 बट्टलक्खण वतउ, लच्छि महतउ, गुण गण सोहा सारउ ॥24॥

इति सिरि चदप्पहचरिए महाकइ जस किति  
 विरइए महा भव्वसिद्धपाल सबण भूसणे  
 जम्माहिसेउ एणम अट्टमो सची  
 परिच्छेउ समत्तो ॥8॥ अथ सख्या 264॥

1 क. एह

3 क. पियरह, घ पियरह

5 घ कि कुणहि

2 घ. त

4. क. तिहुयण

## रावमो संधि

( 1 )

आवि<sup>1</sup> बहु देवकुमार तिष्ठ,  
ता कमि कमि बल्लइ बालु एणहु,  
थिर कप तापइ दिनु भाइ,  
किवि कदुघ लीला<sup>5</sup> पायडति,  
किवि घतहो बालहो पुरउ बाइ<sup>6</sup>,  
किवि जलकीलतहो सहरमति,  
अह एिसु विविर्वाहि भोएहि सक्कु,  
परमेसर मेल्ह<sup>12</sup> बाल भाउ,  
एणवाइय अक्षर<sup>13</sup> सभरेइ,  
बहु भेयगय मणि वित्थरेइ  
बालु वि परमेसर तिजयणाहु<sup>15</sup>.

सिसु जिणु खिल्लावाहि<sup>2</sup> सुहकयएणु  
कोमल दीहर<sup>3</sup> विसकड बाहु ।  
अइ भर मेसहो<sup>4</sup> सकेइ एणइ ।  
किवि अम्मइ सिसु बाहण हवति ।  
किवि बड<sup>7</sup> सतउ<sup>8</sup> बइ सेविषाइ<sup>9</sup> ।  
एिय छाया<sup>10</sup> व सुर इय अणुमरति ।  
सेवतउ<sup>11</sup> एणउ कइया वि यक्कु ।  
परियाणइ फुडु बिज्जा सहाउ ।  
सहागम सयल वि परिचरेइ ।  
वउविज्जा<sup>14</sup> बहि पारुत्तरेइ ।  
वहु गिम्मल कलसोहासणाहु ।

बला ता िउ तरुणत्तणि, रजिय तियमणि, रुवहु रुउ वि जायउ ।

अह जुवणु<sup>16</sup> तारुणहो<sup>17</sup>, एणु सपुण्णहो, तेयहु तेउव आइउ<sup>18</sup> ॥ १ ॥

- |                                      |                         |
|--------------------------------------|-------------------------|
| 1 ल घ आइवि,                          | 2 ख खिल्लावाहि,         |
| 3 - बल्ला नाली अथवा कमलक नाली,       |                         |
| 4 घ सेसुवि = धरणेन्द्र शका करोति इव, |                         |
| 5 ग कडुय = कदुकदण्डी,                | 6 घ बाहि,               |
| 7 ख घ वय                             | 8 घ सतहु,               |
| 9 ख सेवितार्हि,                      | 10 = निज प्रतिबिम्ब इव, |
| 11 ख घ सिवतउ,                        | 12 ख घ मिलइ             |
| 13 = भोकारादि अक्षर,                 | 14 = प्रथमानुयोगादि,    |
| 15 ख घ तिजयणाहु,                     | 16. घ जोवण,             |
| 17 ग. तारुणहु,                       | 18 घ आयउ,               |

## ( 2 )

विबरम्मुह सिरि कुंतल कलाउ,  
चित्तु व अइ बित्थर भासु तासु,  
कुट्टि व सरली शासा विहाइ,  
सिण्जती<sup>4</sup> मायावत्ति शाइ,  
सिण्मल मइ वीउ व दसणाहीर<sup>5</sup>,  
हिययहु उग्गिण<sup>6</sup> वरायभाउ,  
तिहुअण<sup>7</sup> मण पासु व तासु कण्ण,  
धम्म हि व डालि व बाहुदड,  
धम्म हि व पत्तल शाइ हत्थ,  
केवल शाणु व अइ पिहुलवत्थु,  
ससार व सीणाउ तासु मज्झु,  
जस पसर व पिहुलउ शिरि शिण्णु,  
तिहुअण सिरि कमलु व चरणपोम,

अत्ता—इय अवयव रुक्कें, फुरिय सक्कें, सो लावण्यें पुण्णउ ।

सब्बहि गुणसारहि, महिमपयारहि, अत्तरेहि वि सो अण्णउ ॥2॥

एण जिण्णदिट्ठिहि ठिउ तम<sup>1</sup> कलाउ ।  
सुत्तु<sup>3</sup> व लोयण सिण्मलु पयासु ।  
मुह सोरह<sup>8</sup> कोहे एमिय शाइ ।  
तहु सिय वकिय भूवत्तिशाइ ।  
अइवहुल किरण अदिण गहीर ।  
बिवाहर इय सोहा सहाउ ।  
अह दय रव महि<sup>9</sup> डोलय रवण्ण ।  
अह शरणदार परिष व पयड ।  
अह सम सररत्तुप्पल पसत्त<sup>10</sup> ।  
अहवा शिण्णु अत्तण<sup>10</sup> सरित्तु<sup>11</sup> ।  
माहप्पु व उडउ<sup>12</sup> शाहि गुज्झु ॥  
कोमल परिणामु व ऊर विवु ।  
पय एह मदह<sup>13</sup> तहो अमल सोम ।

## ( 3 )

ता पिच्छिबि<sup>14</sup> ताय तरुण पुत्तु,  
कमलप्पह एामे रायकण्ण,  
परिणाडिउ शिरि उत्तमि<sup>15</sup> शिमिति,  
ए अदहो मेलिए बहुल कति,  
ए सुत बहो<sup>16</sup> जोडिय परम खति,

शिरुवम लावण कलापउत्तु ।  
शिरुवम सरुव सोहग पुण्ण ।  
परिपुण्ण उच्च सुहगह पविति ।  
ए कामहो अण्णिय बाणपति ।  
ए एाहहो<sup>17</sup> आणिय विमल सति

1 क. च. तल

3 क. सोरहो,

5. क. वीउवदसणाहीर

7. ग. तिहुअण,

9 क. पयत्थ,

11 ख. सरित्त,

13 क. ख. शवह = तस्य दीप्या शोभा भवा जाता ।

14 क. पिच्छि०, ख. पेच्छिबि ताए,

16 ख. च. सुतबहु,

2. ख. मुत्तुव = सिद्ध इव

4 = निजिता,

6 ख. च. उग्गिणु = निःसरित,

8 क. माहि

10 ग. यत्तण,

12 व. उडुवू = अगाधः,

12 व. उडुवू = अगाधः,

15 ख. उत्तमे

17 क. एाहहो

ए धम्महो ढोइय जीवरक्ख,  
ए सुगुणहु त्रिरइय भबल कित्ति,  
ए तक्कहो<sup>१</sup> धप्पिय धवण जुत्ति,  
ए सूअहो साहिय अमल बुद्धि,

ए विणायहो देसिय साहु सिक्ख ।  
ए णायहो सद्धिय सहल सत्ति ।  
ए विहवहो<sup>२</sup> दरसिय दाए उत्ति ।  
ए सिद्धहो भाविय अचल<sup>३</sup> सिद्धि ।

धत्ता—ता तहिं महिराए<sup>४</sup>, हरिस पराए, णिय<sup>५</sup> रज्जुम्मि परिट्ठित ।  
जो सक्कहिं मदिरि,<sup>६</sup> बहु सिरि सु दरि, तिहुयण पइसइ<sup>७</sup> सठिउ<sup>८</sup> ॥३॥

( 4 )

णिय बोद्धिणि बैसिउ सइ णिवेए,  
ठालिय जल ऊरिय कणयकु भ,  
गयणहो गधोवउ कुसुमविट्ठि,  
अइ णिम्मलु फुडु णहयलु पयासु,  
चउ भेयतूर सदिहिं रमासु<sup>१०</sup>,  
राए सइ लेविणु कणयडडु,  
कुल मतिहिं करि किय चमरछत्त,  
करि हरि सामिय अण्णेवि जेवि,  
बहु णायर जण पणमहि भरेण,  
अविहव<sup>१४</sup> गायहिं णच्चति तित्थु,

सो णिच्छतु<sup>९</sup> वि हरिसिय मणेण ।  
बहु मगल भेयहिं सिरि विषम ।  
मपण्णी ति जययहो हरिस पुट्ठि ।  
दिसि चक्कु पसण्णउ कय विलासु ।  
रायगणि बहु गेयहिं विसासु ।  
पण वाविउ णिवगणु गम्ब चउ ।  
इय सेवहिं सयल वि रायभत्त ।  
जोडिय कर अगइ<sup>१२</sup> हूअ<sup>१३</sup> तेवि ।  
लज्जजलि चल्तहिं णियकरेण ।  
णिव ढोयहिं<sup>१५</sup> पाहुउ सारवत्थु ।

धत्ता—तिहुयणु वि समामिउ<sup>१६</sup>, सिरिभर णामिउ, किं पुणु वव्वमि महिबलउ ।  
ज सामिउ पालइ, णाउ णिहालइ, धम्मलच्छि चदण तिलउ ॥४॥

- |                                     |                               |
|-------------------------------------|-------------------------------|
| १ क तहो                             | २ क ०बहु,                     |
| ३ ख. घ ग अचलसिद्धि=शरीररहित मुक्ति, |                               |
| ४ ख घ ०राइ,                         | ५ क णिय णिय रज्जुम्मि,        |
| ६ क घ. पइ पइ = त्रिभुवनपतोना पति,   |                               |
| ७ = इन्द्रैः मदिरै,                 | ८ क सिद्धउ,                   |
| ९ अवाछन् सन्                        | १० ग, ०रेमालु,                |
| ११ क लिबुणु,                        | १२ ग अगइ                      |
| १३ ग हूय,                           | १४ = पुत्रमर्तुं बती स्त्री,  |
| १५ क ठायहु, ख घ ढोवहिं,             | १६ = समस्तत्रिभुवनस्य स्वामी, |

## ( 5 )

ता भूयसि एसाहि सयलदोस,  
 धरावरिसहि चितउ भमयधार,  
 खर किरणु तवइ सुपयास मित्तु,  
 हिमकालु ए लोयह देइ दुक्खु,  
 दुक्कालु एसासु जमुपुरि पइट्ठु,  
 ईति वि मिल्लवि देसहो पएस,  
 तहि बोरिज्जइ जइ मणु जणोहि,  
 सण्हा गुरोमु तहि एरु जणाह,  
 धम्ममि मणोरह<sup>१</sup> एरु एराह,  
 नहि पावहो बीहइ सयलु लोउ,  
 गह पीडुप्पाइय जेवि केवि,

सपज्जहि सुक्खिहि पडरतोस ।  
 वायति वाय भइ सुहमचार<sup>१</sup> ।  
 ससि पुणु विलसइ<sup>२</sup> पसरिय पडुत्तु ।  
 सव्व वि सपज्जइ जणिय सुक्खु ।  
 रोयह गणु केण वि रोयदिट्ठु ।  
 अणाय सस्स भक्खहि असेस ।  
 अच्चरिय हेउ पयडिय गुरोहि ।  
 एहु पुणु विसाय वित्थर<sup>४</sup> मणाह ।  
 अवगणाय लच्छी सुहमराह<sup>६</sup> ।  
 एहु<sup>७</sup> अणहो कासुवि गलिय सोउ ।  
 सव्व वि विलयगय सुट्ठु तेवि ।

धत्ता—दालिहिहि मुक्कउ, दुक्खिहि चुक्कउ, चित्ताभर परिवज्जियउ ।

तहि जणु सुहि एवइ, सणु वि एवइ, जिण पइ गुणएण रजियउ ॥५॥

## ( 6 )

इय जा पालइ महि परमेसरु,  
 ता सोहम्मे<sup>१</sup> एणमणि चितउ,  
 इहु जिणु जीवइ दह पुब्बलक्ख,  
 परमेसरु माणिय केलि सुक्ख,  
 अहट्ठ तिण्ण ठिउ पुब्बलक्ख,  
 इतिउ पालिउ सत्तगरज्जु,  
 जाणिवि<sup>१२</sup> इण्हे<sup>१३</sup> बेरग्गकालु,  
 जइ कि पि वि किर बेरग्गहेउ,  
 ता उप्पायमि बेरग्ग मित्तु,

कुल किकर ठिय सयल सुरेसरु ।  
 तिहुयणजण उवयाह सुमतित ।  
 परमाउ गणणि जाणिय परिवत्त ।  
 अकलत्तु<sup>९</sup> अढाइय<sup>१०</sup> पुब्बलक्ख ।  
 चउवीस पुब्ब अगइ अदुक्ख ।  
 किह<sup>११</sup> अज्जवि ए करइ भविय कज्जु ।  
 मुत्तउ चरियावरणउ विसालु ।  
 पिच्छइ ता बुज्झइ परमदेउ ।  
 जह तव वरणहो जिणु करइ चित्तु ।

१ क मदचार,

३ ख घ मेल्लिवि,

५ ग मणोहर,

७ क एहु,

९ =कुमारकाल,

११ क ख. किह,

१३ ख इण्हि

२. ख विलेसइ,

४ ख विसएसु विधि०

६ क इय पत्ति नास्ति,

८ क सोहम्मि

१० ग अढाइ,

१२ जाणोवि

इय चितिवि ससिरुइ गामदेउ.

बुल्लाविउ रिणु पायडिय सेउ ।

घत्ता — चदउ रिहि जाइवि, जिणहरु पाइवि, करि कि पिबि त बेयर ।  
ज पिक्खिवि तक्खणि, चितिवि रिणमणि, पडिबुज्जइ सो  
जिणवर ॥ 6 ॥

( 7 )

ता ग्राइवि ससिरुइ रायदारि,  
होइवि ग्रइदुक्खरु<sup>2</sup> लट्ठि हत्थु<sup>3</sup>,  
पुक्कारइ सामिय रक्खि रक्खि,  
ता एाहे तहो रिणु रोवि सहु,  
हक्कारिवि पुच्छिउ तासु दुक्खु,  
जर रक्खसि महो भक्खेइ अणु,  
जम वग्घुवि इह घुर हरइ पासि,  
एवहि करि लहु रक्खणउ वाउ,  
त रिणुगिवि चिनाइ इहु<sup>4</sup> कयन्थु,  
अगहो रोय वि एाहु जाहि दूरि,  
कालु वि को रक्खइ ग्रावडु,  
अत्थउ किर एयहो तस्सियवत्त<sup>5</sup>,  
जमि<sup>6</sup> को एवि कासु वि रक्खवालु,

बहुभेय लक्खि सभारसारि ।  
अइ सिडिलु सिडिलु पहिरे विवत्थु ।  
हउ काले किज्जमि अप्पभक्खि ।  
पभणिउ कि भणइ एहु भहु ।  
सो भणइ एाहु तुह भवणचक्खु ।  
बहु<sup>4</sup> रोय चोर रिणु रोहि रगु ।  
इय पीडहि साभिय तुज्ज वामि ।  
जावहि<sup>5</sup> एाहु घुट्टहि मज्झु ग्राउ ।  
जर रक्खसि मारणि<sup>7</sup> को समत्थु ।  
लहरिउ एाहु फिट्टहि जलहु पूरि ।  
सउ एाउ गयण मडलु पडलु ।  
अम्हाणवि को करही परित्त ।  
सव्वह सामणु जि एइ कालु ।

घत्ता—इह<sup>10</sup> कियणिय कम्मे, सुहदुहधम्मे, सयलु वि जमि<sup>11</sup> उप्पज्जइ ।

अणु वि एाहु कारणु, विग्घ रिणवारणु, जीवहो<sup>12</sup> भवि सपज्जइ॥ 7 ॥

- 1 ख. घ वइयर, क. बेअर,
- 3 क म यत्थु,
- 5 ख जाबेहि,
- 7 ख वारणे, ग वारणि
- 9 क घ. जणि,
- 11 ख घ जणि

- 2 = अतिवृद्धः
- 4 = बहु रोगा एव चोरास्तै पीडिताग
- 6 ख पडु,
8. ग ंवत्त,
- 10 ख इय,
- 12 ख घ जीवहु,

( 8 )

ज अस्थि चराचर वस्तु रूढ,  
 धनु जोध्वणु जीविय तणु पवचु,  
 दिणि बद्धउ जसु सिरि रायपट्टु,  
 दिणि जो गाइज्जइ मगलेहि,  
 दिणि जो दिट्ठउ मयवरहो खधि,  
 दिणि जो दिट्ठउ धणयहु समाणु,  
 दिणि जे बधवहु णेहवत  
 जे पुग्गल चिरठिय सुक्खभाव,  
 जे पिड घडणि परमाणु ह्वति<sup>7</sup>,  
 फेणु व एिस्सारउ मणुय<sup>8</sup> जम्मु,  
 खणि बम्म भाउ खणि खयहो जाउ<sup>10</sup>,  
 जे पिय सुय जणणी जणण मिच्च,  
 कर सलिलु व जीविउ एिण अणिच्चु,

त सञ्जु वि खणमगुर सञ्जु ।  
 जलवुब्ब व<sup>1</sup> सण्णिहु<sup>2</sup> त अणिच्चु ।  
 एिसि तहो उप्परि किउ मरणु घट्टु<sup>3</sup> ।  
 एिसि सो रोइज्जइ तिय<sup>4</sup> कुलेहि ।  
 एिसि सो बधिउ एिण चोरबधि<sup>5</sup> ।  
 एिसि सो दीसइ मग्गत्तु खानु ।  
 तक्खणि सत्तु व दीसहि<sup>6</sup> हणत ।  
 ते खणि सपज्जहि दुह सहव ।  
 तहु<sup>9</sup> पिडहो खडणि ते हवति ।  
 खणि एासइ जह मयणयलि हम्म ।  
 खणि णेह भाउ खणि वेव पाउ<sup>11</sup> ।  
 ते सम्म वि तक्खणि इह अणिच्च ।  
 सञ्जु वि विण्णसिय बयणु सञ्जु ।

वत्ता—अण्णु वि इह असरणु, दीसइ तिहु यणि, सञ्जु वि इक समाणउ ।

जीवहु भवि यतहु,<sup>12</sup> दुक्खु सहतहु, एहु कुवि रक्खा ठाणहुउ ॥८॥

( 9 )

एहु कोवि<sup>13</sup> अस्थि सो पुरिसु इत्थु<sup>14</sup>,  
 इव वि शिवडहि हाहा भणत,

जो जमु लघिवि हूयउ कयत्थु ।  
 दिसिपाल वि पडिहहि बह्व कणत ।

- 1 क अ,
- 3 क ग घट्टु,
- 5 क मोर०,
- 7 ख. होति,
- 9 क मणुअ,
- 11 ख. पाइ व बाइ,
- 13 ख. कोइ,

- 2 क. ख. सणिहु
- 4 ख. एिय,
- 6 ख. ते एिसि दीसहि सत्तुव०
- 8 क एहु, ख तहो,
- 10 ख. व. जाइ,
- 12 ख. व. जीवमुहो भविद्यतहो,  
क जीवहु भविच्छतहु,
- 14 क. यच्छु,

अबरवि जे केईय बल पहाण,  
 अबरह एरकीडह को पमाणु,  
 जरि मूअइ<sup>3</sup> रिणु सीयति<sup>4</sup> मूठ,  
 जे सपुरिस कबलिय जमि ए इत्थु,  
 जम्मु जि कारणु मरणहु<sup>7</sup> रिहत्तु,  
 जे जायहु<sup>9</sup> जीवहो दिवस जति,  
 मरिण मतो सहि तावहि फुदति,  
 जणु<sup>11</sup> परहु मरणु पिच्छति हुतु  
 माणुसु सुमणोरह<sup>13</sup> विल्लिपूरु,  
 सासहुच्छलेण जीविउ रिरेइ,  
 जइ वज्जहो पजरि पइसरेइ<sup>14</sup>,

ते<sup>1</sup> असरण सवि मित्तति<sup>2</sup> पाणु ।  
 जमि रुद्ध सकु वि किमि समानु ।  
 अप्पाणउ एहु जम<sup>5</sup> वयणि छुड<sup>6</sup> ।  
 तह एाम वि जमि इह मति कित्थु ।  
 जो अणु भणइ सो मोहगुतु<sup>8</sup> ।  
 ते जमपुर पहरु<sup>10</sup> पयाणहुति ।  
 जावहि जमदक्का एहु भुणति ।  
 एहु अप्पउ<sup>12</sup> आसणु वि पडतु ।  
 जमु उच्चाइ वि बल्लेइ दूरु ।  
 खणि खणि मूडउ गहु सभरेइ ।  
 तो असुरणु जणु रिणयमे मरेइ ।

घत्ता—अणु वि भवसायरि, वहु दुइ दायरि, एहु कि पि वि त सारउ ।  
 ज किरइ इह लोयहो<sup>15</sup>, पयडिय मोयहो, रिमि सुविधिर  
 सुह कारउ ॥१॥

( 10 )

चउगइ भीमणु भवजलहु मज्झु,  
 जहि सकु मरिवि मलकीडु थाइ,

को सककइ वण्णण तासु गुज्झु ।  
 मलु<sup>16</sup> कीडु वि सककहो ठारि जाइ ।

- 1 ख त
- 2 ख मेल्लति
- 3 ख घ. मूवइ, ग मूवव जेने मृते सति ।
- 4 क घ सो अति०
- 5 ख जमि०,
- 6 -जना आत्मान यममुखे क्षिप्त न जानति,
- 7 क मरणहु, ग मरणह,
- 8 ख माह०,
- 9 य जायहु,
- 10 ग पह,
- 11 क ख जरा,
- 12 ख अप्पहो
- 13 क ख, घ समणोरह,
- 14 क पइसरे वि,
- 15 ख. लोयहु,

16 क. मणु०,



बभु वि<sup>1</sup> बडालहो सहइ जोणि,  
 भित्तु वि सपज्जइ इत्थु<sup>3</sup> सत्तु,  
 मायारि वि कत<sup>5</sup> कता वि माइ,  
 भवणाइइ एण्चतह विसालु,  
 माणुसु उप्पज्जइ जोणि मज्झि,  
 वालु वि तिय घण फसणु<sup>7</sup> करेण,  
 बहु दुक्ख विट्ठण पाव-भार,  
 भव भाव कालु दब्बेण सोइ,  
 त एत्थि दवु ज रोय जुत्तु,  
 सो एत्थि भउ ज रोय<sup>9</sup> जुत्तु,  
 कालु वि भतीदु मुत्तउ अणत्तु,

बडालु वि बभहो सरइ खोणि<sup>2</sup> ।  
 सत्तु वि सपज्जइ<sup>4</sup> अचलु भित्तु ।  
 बप्पो वि पुत्तु सुउ जणणु बाइ ।  
 जीवह सजाउ अणत्तकालु<sup>6</sup> ।  
 विलसत्तु ए लज्जइ तासु गुज्झि ।  
 तह अभासैं तरुण वि भरेण<sup>8</sup> ।  
 इत्तिउ कहियउ ससार सार ।  
 खित्ते महु पच्चपयार होइ ।  
 त एत्थि खित्तु ज रोय खित्तु ।  
 सो भउ ए भत्थि जहि रोय खुत्तु ।  
 इय सहिउ दुक्खु दुक्खिहि महत्तु ।

वत्ता—अणु<sup>10</sup> वि इक्कल्लउ, पीड सहिल्लउ, इह भु जइ एयि कम्मफणो ।  
 बहु जोणि सरतहु चउगइ घतहु, कामु वि किपि वि रोयवलु ॥10॥

( 11 )

इक्कक्किउ<sup>11</sup> वधइ विविहकम्म,  
 इक्कु जि वडतएणिहि पियइ एणी,  
 इक्कु जि तिरियत्तणि महइ दुक्खु,  
 इक्कु जि पीडा परवसु करेइ,  
 परिवारहेउ वधेइ पाउ,  
 इक्कु जि जम्मइ इक्कु जि मरेइ,  
 इह रत्ति वि जइ<sup>14</sup> दुहु महइ इक्कु,

इक्कु जि अणुहु जइ परम सभ्भु ।  
 इक्कु जि उप्पज्जइ सूरसरीर ।  
 इक्कु जि विलसइ महिरज्जु सुक्खु ।  
 इक्कु जि<sup>12</sup> रमणीरय रसु मुण्णेइ ।  
 इक्कु जि अणुहु जइ तासु साउ<sup>13</sup> ।  
 इक्कु जि भवसायरि ससरेइ ।  
 तहो परभवि सुहइहु फल गुरुक्कु ।

1 = विप्रोऽपि,

3 ख एच्छु,

5 क माइरि कता,

7 ख फसइ

9 ख. रोअ,

11 क ख ग इक्काकिउ,

13. ग जह,

2 बडावोऽपि विप्रस्य योनि लभते

4 ख सज्जइ

6 क. सजायउ एत कालु,

8. = वालाभ्यासेन सयौवना स्त्री मूनान्  
 स्पर्शयति ।

10 एकत्वानुप्रेक्षा कथयति,

12 एक्कु जि,

14 = स्वाद

जह रिएसि बायस तरुनलि मिलति,  
 एियकजिज मिलइ सबो विलोउ,  
 पर अण्पा मणइ मूढ चित्तु,  
 इक्कु जि तोडइ चिरकम्मपासु

सिरिवनह तह परिवारुदुति ।  
 पुणु इक्कुजि मु जइ जीउ सोउ ।  
 रिएय परमभाउ सम्भाववत्तु ।  
 इक्कु जि पावइ सिव सिरि विलासु ।

धसा—इय मिण्णउ जीवहु, सुढ सक्कहु, सम्बुवि फुडु परिहासइ ।

पर अण्पु मुरगतउ<sup>1</sup>, अण्पु हुरगतउ, अण्पा मुज्झवि एासइ<sup>2</sup> ॥१॥

( 12 )

जीवहु अण्णु भाव रिएरु वेयणु  
 अण्पा अवलु अमुत्त अरिएदिउ<sup>3</sup>  
 जह जल जलएणह अण्णु भाउ,  
 देहु वि जहि जीवहो अवरु दिट्ठु,  
 भवि भवि अण्णएणइ पिय रहुति,  
 भवि भवि अण्णएणइ पुत्त मित्त,  
 चिरजम्महो सुअणइ तहि रुवति,  
 चिरजम्महो सुय पाडति गिडु,  
 चिरजम्महो पियविरहेण तत्त,  
 मूढउ जणु चिरभउ वीसरेइ,  
 जिह पडिय दूरि देसमि जति,  
 मसार घोर अडविहि भमति,  
 जइ वयइ कह वि इहु अण्णु बत्थु,

देह हु अण्णुजि पयडुवि वेयणु ।  
 देहु<sup>4</sup> समुत्तु सुबलु वहु इ दिउ ।  
 तह जीवहो देवहो पर सहाउ<sup>5</sup> ।  
 कह होही अण्णु अवरु इट्ठु ।  
 भवि भवि अण्णएणइ मायथति ।  
 भवि भवि अण्णएणइ चेडभत्त ।  
 इह जम्महो<sup>6</sup> वहु मगल कुराति ।  
 इह जम्महु हत्थहु लेहि खडु ।  
 इह जम्महो घाइवि कठि सत्त ।  
 इह जम्म मूक्कु मोहे करेइ ।  
 अण्णुए पयारिणिहि वीसमति ।  
 जीव वि भवि भवि इहवीसमति ।  
 रिएय भाव लीणु<sup>7</sup> ता द्दइ कयत्थु ।

1 = पर आत्मान मन्यते

3 ख मुरिदिउ

5. क जम्मह, ख. जम्महु

7 क जम्मह, ख जम्महु

2 = अन्यत्वानुप्रेक्षा कथयति

4 क देहो

6 ~ अन्यस्वभाव

8. 1 ०लीणु

घस्ता—मण्णु वि इह देहदु<sup>1</sup>, असुइहि नेहदु<sup>2</sup>, पूयगव विलसावणउ ।

एव वारिहि विट्ठलु, बहमल पुट्ठलु मज्झुरोय<sup>3</sup> नीसावणउ ॥12॥

( 13 )

मलवीउ एह माणुसहो देह,  
सव्वह मल गवह देह जोणि,  
अइ मल्लिण सत्त घाउहि दुग्घु,  
अइ मज्झु कह वि बाहिरउ होइ,  
मण्णु वि ज किं वि वि मल्लिणु होइ,  
कु कुम कत्थरी पमुह दव्व,  
मलि कीडु व सुद्धप्पा सरीरि,  
अइ बहु चम्म डकिउ ए हउ,  
एिच्चु वि सव्वह रोयाह वासु,  
एिच्चु वि जममुहि पडिणक्कसीलु,  
देहहो कारण जणु करइ पाउ,  
एारी सरीरि जणु करइ रगु,  
वस तेयहो तहो लायण्णु एामु,  
अइ तियवउ पिच्छइ सत्त भाउ,  
दुद्धरतवयरणे एहु सार,

तह गम्भासउ मलमड गेहु ।  
सव्वह मलदारह देह खोणि ।  
अइ माहु गाहु मल पिडु बधु ।  
देहहो ता पिच्छइ एेण कोइ ।  
त सयल बत्थ खणि<sup>4</sup> देहि जोइ ।  
छुहु देहि लग्ग ता मल्लिण सव्व ।  
तहु मज्झु लीणु बह दुह गहीरि ।  
ता मच्छय कायह को अवतु ।  
एिच्चु वि एवदारिहि मलपयासु ।  
एिच्चु वि पच्चैदिय<sup>5</sup> विसयसीलु<sup>6</sup> ।  
तहो देहहो दीसइ इहु सहाउ ।  
आण तुवि एा मुणइ<sup>7</sup> तासु भउ ।  
मलरस सिदणु सोहमग थामु ।  
ता जणइ माणुसु तहो सहाउ<sup>8</sup> ।  
एएहो फलु अण्णह दुप्पण यार<sup>9</sup>

घस्ता—मिच्छामइ एिअणिहि, तणु मणवयणिहि<sup>10</sup> जीउ कसाइहि रत्तउ ।

आसवइ सहावे, हयसुह भावे, मणु<sup>11</sup> अविरइ ससत्तउ ॥13॥

1 ल देहु

3. ल, रोय सोय०

5. ल पच्चिदिय

7 माणुसु ता आणइ तासु भउ

9. ल ०मणव्व०

2, ल गेहु

4 क वणि

6 ल व. ०लीलु

8 ल. दुह पवार

10 ग. मलु

( 14 )

जह<sup>1</sup> जलहि मज्जि ठिउ जाणवत्तु,  
तह<sup>2</sup> भवि सायरि जीउ वि भमतु,  
सुह असुह रूप आसउ दुभेउ,  
अण्णु वि जम राण्य मिहि उवसमेहि,  
इय भाविहि सुह आसउ मिलेइ,  
मिच्छत्तु<sup>3</sup> पमुह आसवहो<sup>4</sup> ठाणु,  
दीहरिहि कनायहि बढमूलु,  
इय असुहासउ वट्ठु तुरु

छिद्दिहि सलिले भरियइ गिरुत्तु ।  
जोयहि कम्मु वि ठिउ आसवतु ।  
सुह जोयहि सुह पयउय विवेउ ।  
बेरग तच्च भावण कएहि ।  
विवरीयहि असुहु जि समिलेइ ।  
तह अवरइ गिरु वट्ठुण विहाणु ।  
जोयहि पुणु भवभावहि<sup>5</sup> कुसूलु ।  
भवजलहि तेण गज्जइ महत्तु ।

धत्ता—आसवहु<sup>6</sup> गिरुहणु<sup>7</sup>, चिरमलसोहणु, सबर बहुगुण सारउ ।

दो भेयहि दिट्ठउ, मुणिमण इट्ठउ दब्बभाव सुपयारउ ॥14॥

( 15 )

आसव गिरुह मदर पउत्तु,  
जो कम्मु पुगला दारण छेउ,  
जो भवकारणकिरियाणिवित्ति,  
सजम वम्म जो पिहिय गत्त,  
जो जस्स सत्थु सो तेण हणइ  
खम सत्थे गिरुहणइ कोहवीरु,  
माया डायणि<sup>10</sup> मरलत्त ठोण,  
लोहू वि गिरु सग वि वज्जणेण,

सो दब्बभाव दोभेय जुत्तु ।  
सो दब्बह सबर सुक्ख हेउ ।  
सो भावहो सबर समहो<sup>8</sup> जूत्ति ।  
तसु आसव सर बिहलहि<sup>9</sup> गिरुत्त ।  
जो सबर दुबिहु वि करण मुग्गइ  
महविण माणु दिइ गब्ब धीरु ।  
मण चवलत्तणु धीरत्तणण ।  
मोहू वि जिण्णणु समज्जणेण ।

1 ग तह

2 ग तह

3 क मिच्छत्तु ख मिच्छत्त

4 क आसवोहो ख आसवहु

5 क भावह

6 क य आसवहो

7 क गेहणु, ख रोहणु ।

8 ख सबइ

9 = आश्रववाण निष्कला, ख राउवि

10 घ डाइणि

रागु वि दोसु वि समभावसेण  
मिच्छत्तु वि सम्म दससेण,  
मयणु वि बड<sup>1</sup> तच्च सिहालसेण,  
अण्णु वि जो असु पडिक्कल भाउ,  
इय विहिणा जे सबर कुणति,

सेह वि शिम्मम समावसेण ।  
अत्र भाउ वि मुत्ति सिहससेण ।  
परिसह वि राउय सभालसेण ।  
त तेण हएइ<sup>2</sup> सबर सहाउ ।  
आमव अर लीलइ ते हएति ।

वर्ता—ता किज्जइ शिज्जर, बहु दुह शिज्जर, कम्ममंठि दिठ दारिणिय ।

रय मल परकालिणि, गुणगण मालिणि, मोक्ख कक्ख जल  
सारिणिय ॥15॥

( 16 )

साणिज्जर भासिय कुडु बुभेय,  
सा होसइ<sup>3</sup> कामा<sup>4</sup> मुणिवराह,  
अण्णह जीवह बीया अकाम,  
जह आमफलइ दडजलणपक्क<sup>5</sup>,  
तह हठि<sup>6</sup> धाणि वि भु जेइ कम्मु,  
सइ भु जि<sup>7</sup> कम्मु परिणामि जइ,  
जलणावत्तिउ<sup>8</sup> मुज्झइ सुवण्णु,  
बारह विह विरतव ताव तत्तु,  
वावीस परीसह चिर सहत्तु,  
बहु उत्तरगुण सभारमुत्तु,

अण्णह मल शासिणि जा अभेय ।  
अइ चोर वीर तथा दुद्धराह ।  
अडगइ दुहभावहि जणिण धाम ।  
अण्णइ पक्कइ कोलेण<sup>9</sup> धक्क ।  
मुणिवर सकाम शिज्जरहि हम्म<sup>10</sup> ।  
त पुण अकामशिज्जरहि धाइ ।  
तह जीउ वि शिज्जर भर पवण्णु ।  
खणि खणि परमप्पा ह्वइ पक्खि ।  
शिज्जरइ कम्मु चोर वि महत्तु ।  
अप्पाहइ मल पडलहि विजुत्तु ।

वर्ता—अण्णु वि इह तिहु अणु, पभएइ बहु जणु<sup>10</sup>, अउवह रज्जु  
पमाणउ<sup>11</sup> ।

कत्ताइ<sup>12</sup> वि अज्जउ<sup>13</sup>, ययणि समज्जउ, अह<sup>14</sup> दक्खह शिर  
णासउ ॥16॥

- |                                  |                           |
|----------------------------------|---------------------------|
| 1 ख वय                           | 2 ख. हवइ                  |
| 3 ख. ता होइ सकामा                | 4 क जएण                   |
| 5 क कोलेण                        | 6 क हठि, ख. हवि           |
| 7 =अधर्म,                        | 8 क. अजि                  |
| 9 ख ०वत्तिउ                      | 10 ख बुद्धयणु             |
| 11 ख स                           | 12 य. कत्ताइ              |
| 13. =ब्रह्मादि कर्तृनाशरक्षणरहित | 14 क ०अह + = सकामनिर्जेरा |

( 17 )

जहि राहु पएसि ठिय पच दब्ब,  
 सो चउदह रज्जू तु गु होइ,  
 कहि किउ<sup>1</sup> हत्थिउ जारिसउ गोहु,  
 तलि सस रज्जू पिहुलत्तणेरा,  
 पच वि रज्जू ठिउ सग ठाणु,  
 तिहि वायहि बेडिउ भइषणेहि,  
 राहु आइ<sup>2</sup> भाउ भवसाणु तामु  
 सो तलि वित्तासणु सरिसुभाइ<sup>3</sup>,  
 महुल सरिच्छु उपरि एसणु,  
 ठिउ जीवाजीविहि<sup>4</sup> गाढ पुणु,

त लोउ भराहि जिहा समय कब्ब ।  
 पिडेरा सत्त रजूपलोइ ।  
 इहुतिहु भणु तह आकार सोहु ।  
 एक्क जि रज्जू महि वित्थरेण ।  
 ठिउ एक्कु रज्जू पिहु<sup>5</sup> सिरपमाणु ।  
 अयवेय महाबल सधणेहि ।  
 सइ सिद्ध मुक्क कारण पयासु ।  
 भल्लरि एहिहु बहलु मज्झि डाइ ।  
 इय आचारिहि तिहु भणुर बणु ।  
 जम्मत धुब्बु<sup>+</sup> धम्मिहि पवणु ॥

धत्ता—इय धम्मु जि दुल्लहु, बुहजरा<sup>6</sup> बल्लहु, जिणणाहेरा पउत्तउ ।

ते<sup>7</sup> विणु मणायत्तणु, अहहु, बुहत्तणु<sup>8</sup>, रयणु व जलहि पछित्तउ ॥ 17 ॥

( 18 )

दह<sup>9</sup> लक्खणु त जिणवर<sup>10</sup> कहति,  
 जिणधम्मु ति जय जरा कप्परुक्खु,  
 जिणधम्मु सयलु दुक्खह पठासु,

ज<sup>11</sup> लम्भ भविय भउ उत्तरति ।  
 जिणधम्मु ति जय जणि देइ सुक्खु ।  
 जिणधम्मु सयलु आवइ विणासु ।

1 घ किय

2 क. ख पहु,

4 ख सउभाइ,

6 क. बहुजरा,

8. क बूहत्तणु,

10 जिणवर,

+ . = उत्पादव्यय औभ्य युक्त-

3 = आदि-अत रहित

5. क.जीवाजेविहि,

7 ख त,

9 ख य दस,

11 क जे,

जिएधम्म ति जव रक्खण समत्थु,  
 कूर वि धम्मेण हवति संत,  
 धम्मेण मेहवरिसहि अयालि,  
 धम्मे गयणहु हइ रयण विट्ठि,  
 धम्मे हवति तित्थयर देव,  
 धम्मे अइसय गुण सभवति,  
 धम्मे पूरिज्जइ<sup>1</sup> सयल काम,  
 धम्मे गिणहु गिणज्जइ सयल दुक्खु,

धम्म जि पीयूसहु तारवत्थु ।  
 धम्मेण जलण बक्कहि जलत ।  
 धम्मेण होइ घरि करण पालि ।  
 धम्मे उप्पज्जइ सगगसिद्धि ।  
 धम्मे इहरि सुर जणिअ सेव ।  
 धम्मे सव्वज्जवि विजय हति ।  
 धम्मे एारवर बहु<sup>2</sup> भत्तुल धाम ।  
 धम्मे कमि कमि फुडु होइ मोक्खु

अत्ता - इय दुल्लहु जाएहि, गिय मणि माराहि, बोहिरयणु अइ गिम्मलु ।

ति लद्धइ लद्धउ, सिवसुहुसिद्धउ, अण्णु वि जायउ जम्मफलु ॥18॥

( 19 )

बहु थावर जावहि सवरतु,  
 ता कहवि कहवि विय लक्खजोगि,  
 अइदुल्लहु तत्थवि मणुय जम्म,  
 बोहिहि हवति बहु अंतराय,  
 मणुयसणि एहु हइ दीहु आउ<sup>3</sup>,  
 एीरोयत्तणु अइदुल्लहु तित्थु,  
 आणतु वि एहु हइ सतु चित्तु,  
 भत्तु वि बेरग्गहो एोइ जाइ,

जिउउ हिइ भवसायरि भमतु ।  
 तत्थवि दुक्खे पचक्ख खोरि ।  
 तत्थवि अइदुल्लह<sup>4</sup> जिण<sup>5</sup> सुधम्म ।  
 बहुकम्म सुहुउ किय सपराभ ।  
 तत्थ वि एहु हइ धम्महि<sup>6</sup> उवाउ ।  
 तत्थवि एउ जाएइ जिणहु भुत्तु<sup>7</sup> ।  
 सतु वि एहु हइ भुणि एाह भत्तु ।  
 बेरिग्गउ एहु चिइ कासु पाइ ।

1. ख. घ. पूरिज्जहि,

3. ख. दुल्लहउ,

5. क. अऊ,

7. ख सत्थु,

2. क. अइ,

4. ख. जिवर,

6. क धम्महो,

कुवि लहि विबोह<sup>1</sup> जइ पुणु बमेइ<sup>2</sup>,      सो सिवि पइ सेंविणु रिणक्कमेइ ।  
 हा<sup>3</sup> ते मणि जलसिंहि जलि सिवति,      कप्प<sup>4</sup> चिउ<sup>5</sup> जालि बि हिमु ह्हाति ।  
 पीऊसिंहि<sup>6</sup> ते घोवति वोर ,      माणिक्कहि ठवसु कुणति वोर ।  
 हा लढउ बोहि<sup>7</sup> पलाइ जासु,      हाहा इह<sup>8</sup> को उबमाणु तासु ।

घसा—इय घविणय चडिहि, बहु पासडिहि, सयसु वि जगु विट्टालियउ<sup>9</sup> ।

परमप्पहु<sup>10</sup> सोहिहि, दुल्लहवोहिहि, मूठउ जणु रिण टालियउ ॥19॥

( 20 )

इय बारह भामण भवयतु,      जा अक्खइ भावदुह ससरतु ।  
 वर चदहु पुत्तहो रज्जु बितु<sup>10</sup>,      महि भार सयसु मतिहि रिणसतु ।  
 अप्पहु दुद्धर तउ चित्तवतु,      ————— ।  
 ता आइय तहि लोयत देव,      बहु भत्ति करणि पायडिय सेव ।  
 ते पभरिय मामिष तिजयदीव,      उद्धरिय सयल पइ भवजीव ।  
 बहु दुक्खमलिलबेला रउह,      पइ विणु जगु बोसइ भवसमुह ।  
 जगु<sup>11</sup> पडइ खरइ मोहवयारि,      खासिय सट्ठसण वइ पयारि ।  
 जय खाणदिवायक जिहाबग्गिदु      एहु भासइ तिहुयणु<sup>12</sup> कम्मवडु<sup>13</sup> ।  
 करि लहु आणिय<sup>14</sup> पारड कज्जु,      तुम्हारिसु जन उद्धरसि सज्जु ।

- |   |                  |
|---|------------------|
| 1 ल. बिबोहि, घ. बिक्कम्मु,                  | 2 ल हो,          |
| 3 क कप्प,                                   | 4 ल हिउ,         |
| 5. क. पीयूसिणि,                             | 6 क वोरि,        |
| 7 क हाडहु,                                  | 8 ख बिट्टालियउ , |
| 9 ख. परमप्पा,                               | 10 ल बितु रज्जु, |
| 11 ल जइगु,                                  | 12 ल तिहुवणु,    |
| 13 ग ते परहु,                               |                  |
| 14. क. ज रिणय + . = मोझे प्रविश्य निस्सरति, |                  |



उग्धाहहि पट्टु सिवणयर वार,  
धम्मामय सट्ठिउ सयल लोउ,  
बहु विणाय भाव पायडि पसेव,

तित्थय रत्तणि इह कुडउ सार ।  
करि सामिब लहु केवल पलोउ ।  
इय जर्पाहि जा तहि बभदेव ।

धत्ता—ता तिय सुर कलयलि, दह दिसिणहयलि, दु दहि सर सजायउ ।

अइ हरिस गहिल्लउ, भावर सिल्लउ<sup>1</sup>, सुरवर गण तहि प्रायउ ॥20॥

( 21 )

ता आइवि तहि पणमति<sup>2</sup> सक्क,  
जा मउलिय कर सधुवहि तित्थु,  
आरुडउ सिविया जाणि भत्ति,  
सोहम्मी साणहि दिण्णु खडु,  
तह अगइ सिविया चवसूर,  
तहि<sup>3</sup> अगइ ठिय भवणामरिद,  
तह<sup>4</sup> अगइ बितर पट्टु हवति<sup>5</sup>,  
दु दहि सरवहि रिउ मुवणामडु,  
सब्बत्थवि सुरगण बहु गाठति,  
सब्बत्थवि मायहि देवमत्थ,  
सब्बत्थवि धयवड उल्लसति,  
सब्बत्थवि मगल हत्थणारि,  
सब्बत्थवि रांदण चवणाइ ,

बहु भत्ति भार सभार बक्क ।  
ता उट्ठिउ जिणवर समकयत्थु ।  
विमला णामए<sup>6</sup> सुरजणिय भत्ति ।  
कइवय पयाइ दिवभत्ति बधु ।  
उब्बहहि<sup>6</sup> पद रिसिय भत्ति पूर ।  
उब्बहहि विणायभारेण रुद ।  
णिय देवत्तणु णिरु सहलयति ।  
फुट्टण मणु ठिउ ण पक्क अडु ।  
सब्बत्थवि सुअ कुसुमइ पडति ।  
सब्बत्थवि आणिय देववत्थ ।  
सब्बत्थवि सुरबीणा रसति ।  
सब्बत्थवि सुरतिय माल धारि ।  
सब्बत्थवि सुरकिय बंदणाइ ।

1. ख, घ. वे इव हिल्लउ

3. ख. णामए

5. ख. तहे

7. ख. वहति

2. ख. पणवति

4. =शिविकानि

6. ख. तह

घत्ता—समसिरि परमेस<sup>१</sup>, तातहि जिणवर, अइवणवरि सपत्तउ ।

जा सुरहं बिरत्तिय, बहु गुण जुत्तिय, तहि तव सिरिहि

सुसत्तउ ॥21॥

( 22 )

सयसुत्तय एामे त वणतु,

ज केलि करजिहि करवरेहि,

क किलि कय बिहि कबलेहि,

करहाउ कवट्ट<sup>२</sup> कप्पूर एहि,

को सु तिहि कास कपास एहि,

चपय चदरा वूयह चरेहि,

तम्मालिहि ताली ताडिएहि,

षव चम्मण धाहुडि षाड एहि,

लवली लवण लवा उलेहि,

पिच्छइ परमेसर गुणमहतु ।

करवीरिहि कयरिहि किमुएहि ।

कुडयहि कच्छुरिहि<sup>१</sup> काकवेहि ।

ककोल कउह कणियार एहि ।

खज्जुरिहि खयरिहि खरकरेहि ।

जूही जायहि जा सबण एहि ।

दीहर दाडिम दुम दमण एहि ।

णारंग णिवालिहि णिब एहि ।

वावल<sup>२</sup> ववूलिहि बहु फलेहि ।

घत्ता—इय बहु तरु भेयहि, हयरवि तेयहि, गाठु गाठु सच्छणउ ॥

तव वतह जोमाउ, हय उवसमाउ, णिम्मल सिलहि रवणउ ॥22॥

( 23 )

त वणु पेक्खवि तरु जालरुडु,

णिम्मल पासुय सिलतलि वइट्ठु,

पोसट्ठु एयारसि कसिण पक्खि,

जाणट्ठु उत्तरियउ जिणवरिडु ।

वियसिय तिहुवण णयणेहि दिट्ठु ।

समहिय दिक्ख तिहुयण समक्खि ।

1. ख कच्छुरिहि

2. ख. वाउल

2 ग कबिट्ठु

सिद्धाह रामोदय भणिवि मतु,  
उम्पाडिय केसह<sup>१</sup> मुट्टि पच,  
मणपत्तु भरिउ इ देण ताहुं,  
उत्तारिय कु डल रयण वित्त,  
हार वि तोडिउ बहु मणि पयासु,  
मुक्कइ केयूरय ककणाइ,  
कडि सुत्तु वि तोडिउ दूरिवत्तु,  
एउर<sup>२</sup> परिसेसिय रयण देह,  
मुक्कइ देहहो एण सुहमवास,  
इय भवर विबहु घाहरण जाइ

सच्चित्ति वि बहु संसार<sup>३</sup> अ तु ।  
ए भव पायव मूलह पवंच ।  
तिहुवरण सामिय सिरिवासु जाह ।  
ए कामरहहो चक्काइ चत्त ।  
ए कठहो दीहर<sup>४</sup> मोहपासु ।  
ए भवणिव कर मुदागणाइ<sup>५</sup> ।  
ए कामधनुह जीवाहि<sup>६</sup> सुत्तु ।  
ए पुत्तकलताइय सण्णह ।  
ए चरणवरणिय भिनिय फास ।  
परि मुक्कइ भववधणाइ ताइ<sup>७</sup> ॥

धत्ता — ता ठिउ थिर भाणें, वियलिय माणें किरिवाकम्म  
विबज्जियउ ।

एणच्चल ठियचित्ते<sup>८</sup>, चितावत्ते, एण चरणेण समज्जियउ ॥२३॥

### ( 3 )

सुरवर सजाया हरिसवत,  
पियरवि अम्भुय विभइ ए जुत्तु,  
मायरि केवल सोएण मुत्त,  
हरिसैं सो एण वि सुयण दक्ख,  
विभिय सोएण वि अहुह लोय,  
अतेउर अइ विरहेण तत्तु,  
चिता सोएण वि पुत्तु वालु,

पुलइय हरिस सुय जलवहत ।  
पभणइ को जाणइ जिणह सुत्त ।  
अइ दुम्मण सोय सुय पसित्त ।  
सजाया पुलइय सुह वि<sup>९</sup> लक्ख ।  
वियसिय लोयण सुहि ठिय ससोय ।  
कोवि दुक्खेण वि अइवि गुत्तु ।  
जायउ एणच्चल लोयण करालु ।

- 1 ल घ. ससार
- 3 ल. दीहहा
- 5 ल. ज उर
- 7 ल धिरसणें

9 ल मुहवि

- 2 ल. केसेह
- 4 ल. ०मुदाघ० घ. मुदायणाइ
- 6 ल. एणाइ
- 8 ग. ०चित्तें
- + घ. = प्रपञ्चा

दह<sup>1</sup> सय सखिहि राएहि दिक्ख,  
 खीरोवहि जलि धित्ताइ केस,  
 तहि गाइ वि राखि वि तिय सणाह,  
 सगहिय मुखिय राहहो<sup>2</sup> परिक्ख ।  
 सुरवइ<sup>3</sup> राणिय हत्थें असेस ।  
 पूया थुइ बहु भत्तिय<sup>4</sup> सणाह ।

घत्ता—णिय णिय आवासहो, जणिय विलासहो, ता सपत्ता सयल सुरा ।  
 दुक्खेण मुवता<sup>5</sup>, थिर पयविता, तहि पुरि पत्ता सुयण शरा ॥24॥

इय सिरि चदप्पह चरिए महाकइ जसकित्ति विरइए  
 महाभव्व सिद्धपाल सवण भूसणे जिए णिक्खवण  
 कत्ताणो णाम णवमो सधी परिच्छेउ  
 समत्तो ॥9॥ (ग्रन्थ 234)

- 1 ख घ, दस
- 3 क. ख. सुरवय
5. क. सुवता

2. ख राहहो
4. ख. भत्तिए

## दहमो संधि

( 1 )

पंच महव्वय भार धुरधर,  
पचेदिय दारह कय सबर,  
छावासय विहि एहिमे पालइ,  
अण्हाणत्तणु तिविह दक्खइ,  
दत्तवणु<sup>1</sup> बि तिविहेण विषज्जइ,  
गय भत्तु गिय मुवि परिहावइ,  
उत्तरगुण बहु भेयइ पोमइ,  
बारह विहतवयरणइ सेवइ  
णिच्चलु गिमणु गिग्गय वल्लउ,  
सत्तु वि मित्तु बि सो समुवण्णइ,  
रउ रयणु बि समभावें पिक्खइ,  
सक्कु बि रक बि तहो सम तुल्लउ  
पाउ बि पुण्णु बि तुल्लइ तोलइ,  
लक्खि बि भिक्ख बि सरसी भावइ,

पंचसमिदि परिपालइ तप्पर ।  
लोय परीसहु विसहइ खरतर ।  
अच्चेलत्तहु ए बि मणु चालइ ।  
खिदि सिज्जाहर चारु परिक्खइ ।  
सुद्धउ ठिदि भोयणु बि समज्जइ ।  
भूलसुण्णइ इय गिम्मल भावइ ।  
कम्मवधु सुद्धर अइ सोसइ ।  
इय गिम्मल चारित्तिहि देवइ ।  
किय समभावणु हणिय वुणु छउ ।  
तिणु तवणु बि तुल्लउ अवगण्णइ ।  
सुक्खु बि दुक्खु बि समउ समिक्खइ ।  
अप्पगत्तु परगत्तु बि भल्लउ ।  
रज्जु बि चरणु बि समु मणि बोल्लइ ।  
भव पुरु सिवपुरु सम परिभावइ ।

धत्ता—इय भावणवतउ<sup>2</sup>, तवसमवतउ, सो दो दिवसइ थक्कउ ।

आहारहो कारणि, दोसणिवारणि, चल्लिउ मुक्ख बि मुक्कउ ॥1॥

( 2 )

चितइ जिणवर एसणहि सुद्धि,  
आहारु बि णवकोडी विसुद्ध,  
सच्चित्तो मीसिउ जसु धाउ,

सज्जम परिपालण जणिय बुद्धि ।  
मुणि देसिवि जो<sup>4</sup> किरणोय रद्ध ।  
सच्चित्त बडि तह उवरि ठाउ ।

1 ख दत्तवणु बि

2 ख ध भावतउ

2 ख. अवगण्णह

4 ख जे

छेपालीसिहि दोसेहि<sup>1</sup> मुक्क,  
तह बत्तीस बि ते अतराय  
अग्गइ पाछइ<sup>2</sup> दायारषत्तु  
पासडि लिगि बज्जे बि दाणु,  
वेसा णिद्धम्मह दोसि गेह,  
बलि चरु<sup>4</sup> लाहण, कप्पिय भोगण,  
ए दोसइ मेल्लि बि मु जिब्बउ,  
णिण्णराउ ज परहो णिमत्ते,  
पाणिपत्ति ति परिकलइ दिट्ठउ,  
सज्जम जुत्ति मित्तु कवलेब्बउ,  
सुक्खउ आरणाएल सजुत्तउ,

चउदह मलदोसिहि दूरि थक्कु ।  
ते पानिब्बा भोगण अपाय ।  
बज्जेवीजाणि बि सयल जुत्ति ।  
आकिट्ठि सत्तु यारु बि अमाणु<sup>3</sup> ।  
बज्जि बि तह दिट्ठिहि कुट्ठवेह ।  
परभय भावें पिड पढीयए ।  
सरसा सरसु ए कि पि गणिब्बउ ।  
लद्धउ सुद्धउ समइ<sup>5</sup> भमते ।  
पुव्वसुरि चरि आगमि सिट्ठउ ।  
रसणिदिय लउ लत्तु<sup>6</sup> दलेब्बउ ।  
दाणारायभत्तह चरिप्पत्तउ ।

प्रस्ता—तह लोय बिरुद्धउ दोसिहि बद्धउ, भोगणि मुणिवर बज्जइ ।

आयमि ज भणियउ, चिर जिणधुणियउ, त किर कवलु समज्जइ ॥2॥

( 3 )

दय चित्तिवि जिणवर ति जयणाहु,  
सच्चलित्तु किय जुगमित्त दिट्ठि,  
छडतु अडइ बहुवण बिसेस,  
बिसिय एय सिहि लोएहि दिट्ठु  
सो जतु जतु सपत्तु तित्थु,  
हिडइ घरि घरि अगण ति भाउ,  
जा णायर णर तहि सभमति,  
ता पट्टु सपत्तहु रायगेहि,  
ता धायउ एरवइ सोमदत्तु,  
जय जय पभणिवि वदइ त्ति वारु,

सुरवर करिकर सारित्थ वाहु ।  
अइमदु<sup>7</sup> महु किय चरण पुट्ठि ।  
मिल्लतु सच्चित्तइ घरपएस ।  
ए कित्ति भम्म पिडेए सिट्ठु ।  
णामेण णलिणपुरु णयर जित्थु ।  
घरि उच्च णिच्चि बिरु देइ पाउ ।  
अग्गइ पच्छइ हरि सिय भमति ।  
बहु पच्चवण्ण धयवड सुतोहि ।  
सियबत्थ जयलु मडिय सुगत्तु ।  
ठाहुत्ति भणइ बहुभत्ति सारु ।

1 ख घ आयम दोसहि सयलेहि

2 क पाच्छय, ख पछइ

3 = बलिबिधानादिसत्तु कार निमित्त

4 ग चरु

5 = मध्यान्हकाले

6 लोलन्व

7 ख महु महु

8 ख. घ मेल्लतु

दिक्कालइ कासुध जलहं ठाणु,

ढोवइ सिंघासणु सुहसिहाणु ।

घत्ता—ता जिरायइ चरणाइ, सिंघ सुहकरणाइ, अट्ठ विहारें पुज्जिय ।  
तिहुयण ह्रम एतइ, बहूसिरिकतइ, पुण्णाइ चारु समज्जिय ॥३॥

( 4 )

ता जिणु सम्मावइ सिद्धमत्ति,  
राहयलि उट्ठिउ हुहुहि गिरणाउ,  
गयणाहो सजायइ रयण विट्ठि,  
बहु कुसुम वरिस सख्खण मेहु,  
भु जिवि परमेसरु जलु गहे वि,  
अक्खइदाणु भराइ भुरिण रुवें,  
ता हुइ भोयणु तहि चरि अक्खउ,  
पुणु जिणपय पुज्जइ सोमदत्तु,  
गधोवइ पयडइ तिण्णिधार,  
पुण्णकुर णिह तपुल खिवेइ,  
खोवज्जइ<sup>६</sup> खोवइ<sup>७</sup> मह मह<sup>८</sup>,  
अण्णाण तमो हइ या हणुतु,  
फलभारु वि ढोवइ महरसार,

खीरणु खिवइ खिउ पालिपत्ति ।  
सक्खत्थ वि सुरयणु साहुवाउ ।  
गधोवय वरिसणि जिराय पुट्ठि ।  
तिहुयणु जणु जायउ पुलउ देहु ।  
लोयह चरियागमु<sup>१</sup> पायडेवि<sup>२</sup> ।  
सजलमेह गभीर लुसहें ।  
जो भावइ सो आविवि भक्खउ ।  
अट ठगपुज्ज पायडइ भत्तु ।  
चदणरस चल्लइ चुसिणसर ।  
सियकुसुमिहि रिण<sup>४</sup> पुज्जणु करेइ ।  
दीवय उत्तारह विप्फुरतु<sup>५</sup> ।  
धूवइ सधूवइ गधवतु ।  
पुप्फजलि आमइ इय पसार ।

घत्ता—इय पयपुज्जेविणु करमउलेविणु शुत्ति करण पारभइ ।  
चिरभयसय बद्धइ कम्मह खघइ, लीलइ राउ रिणु भइ ॥४॥

( 5 )

सुहु परमेसरु तिज्जइक्क गाहु,  
पइ तिहुयण सयलु वि किउ पवुत्तु,  
पइ धणु पुणु किउ सयल लोउ,  
पइ सुपसिद्धउ किउ तच्च गामु,

परउवयारइ वडिक्क गाहु ।  
पुणु सविसेसैं महो धरु णिरुत्तु ।  
पुणु सविसेसि हउ गलिय सोउ ।  
अणु वि महुकुलु ससि लिहिय णामु ।

1 क चरियायमु

2 क पायडेवि

3 अक्खयदाण

4 ख रिण

5 ग, घ खोवज्जइ

6 ग ढोयइ

7 ख घ महतु

8 ख ० रतु

पइ भव्हह फेळिउ<sup>1</sup> पक भार,  
 सा धण्णुभूमि जहि देहि पाउ,  
 जे सहण बि पइ लीलइ दिट्ठ,  
 जहि णिमि सुवि तुह सलीणु ठाणि,  
 तुह<sup>4</sup> परमप्पउ परमप्पयारु<sup>5</sup>,  
 तुह सुक्खाह<sup>7</sup> बि सजणहि सुक्खु,  
 को सक्कइ तुह गुण युणण सानि,

अण्णु बि महु खयरहा वोस साभे<sup>2</sup> ।  
 कह पसरइ जहि तुह अगवाउ ।  
 ते तित्थ भणेवि<sup>3</sup> लोएहि सिट्ठ ।  
 सम्मु बि मोक्खु बि त देइ जाणि ।  
 तुह णिम्मल केवल कप्पसारु<sup>6</sup> ।  
 तुह णिह णहि जीवह परमदुक्खु ।  
 सक्कु बि सुव मक्कइ महिय णाणि ।

धत्ता—इय जासो जपिवि, विणउ पय पि बि, मोणें णिउ सजामउ ।

ता दिक्ख व णतरि, सुतरु णिरतरि, जिणवरु जाणे परायउ ॥5॥

( 6 )

णिव गेहहो चलिउ महु महु,  
 सपत्तउ तित्थ जि दिक्ख ठाणि,  
 वादीस परीसह सो सहेइ,  
 तरु मूनि पडिच्छइ मेह णीरु,  
 धणतम अघारइ रवणि मज्झि,  
 धण गज्जिउ बहिरिय कण्णदारु,  
 सो विसहइ<sup>10</sup> विज्जुल किय भडप्प,  
 चच्चरि ठिउ विसहइ अइ<sup>12</sup> तुसारु,  
 हेमतवाय सोसिय सरीरु,  
 गिरि सिरि ठिउ विसहइ गिम्हयानु,  
 अइ ताव जलिय दावाणलेसु  
 णिउ धप्प भाणु मुह रत्त पवीणु,

इरिया समिदी पालण अतदु ।  
 तव णिब्बाहणि जाणिय पमाणि ।  
 बारह बिह तवयरणइ बहेइ ।  
 आसार<sup>8</sup> पसरदूमिय सरीरु ।  
 बहुदस मसय तण जाल गुच्छि ।  
 सो विसहइ<sup>9</sup> वहु दुक्खह पयारु ।  
 धणवाय लहरि किय काय कप<sup>11</sup> ।  
 हिमदद्ध<sup>13</sup> सयल दलदुम पसारु ।  
 इह इहु तणु समु मण्णेइ धीरु ।  
 खरकिरणपसर किय पलय कालु ।  
 आतावणु विसहइ<sup>10</sup> गिरि तडेसु ।  
 णहु दुहु वेयइ वेरम्मा<sup>14</sup> लीणु ।

- 1 ख फेरिउ
- 3 क ० भविण, ख तित्थरु णणवि
- 5 ख ध परमप्पयाणु
- 7 क सुक्खहेवि, ख सुक्खाहवि
- 9 ख विहसइ
- 11 ख पव
13. हिमदत्त

- 2 = नाश
- 4 क तुह
- 6 ख ० क्खु
- 8 धारा मपात आसार = मेव
- 10 ख विहसइ
- 12 ख अतुसारु
- 14 ख ० वरग



घसा—इव तउ पालंतहु, वणि गिवसतहु, जाइ कालु सुह भाणें ।  
इ दियइ जिणंतहु<sup>१</sup>, कम्महु णतहु, रक्खिय जीव सुपणें ॥६॥

( 7 )

ता जायक्ख<sup>२</sup> तलि तहि वणति,  
आरभिउ तहि एणु सुक्क भाणु,  
ज आयम सहण<sup>३</sup> णाड थाइ,  
ज खयमोहह<sup>४</sup> बिप्फुरइ भक्ति,  
चउ भेउ त जि ठिउ सुक्क<sup>५</sup> भाणु,  
अग्गिम दो भेयउ केवलीण,  
दुहु पढमह लवणु सुत्त अत्थु,  
पढभेउ सविनक्कउ सवियारउ,  
वीयउ सविनक्कउ अवियारउ  
जो यत्ताय जुत्ताह पढम भेउ,

बज्जासणि सठिउ पिहु सिलति<sup>६</sup> ।  
ज मोह महातम पलय भाणु ।  
ज फुब्बघरह णिरु सिद्धि जाइ ।  
ज केवल<sup>७</sup> णाणह<sup>८</sup> जम्मसत्ति ।  
धम्मह<sup>९</sup> दो भेयउ सो पहाणु ।  
जायक्खइ पयडण वहु<sup>१०</sup> बलीण ।  
अवरह दुहु लवणु णत्थि वत्थु ।  
पित्थक्कत्तणि पयडिय णिसारउ ।  
पक्कत्तणि समुणिय पयारउ ।  
वीयउ जोगिक्कह हुइ अछेउ ।

घसा—इय वीयहो भाणहो, मुक्ख पयाणहो, सो धरत्ति सलीणउ ।  
चिर काले वढउ बहुभक्क सिद्धउ, जाइ चउक्कउ खीणउ ॥७॥

( 8 )

पयडिय तिसट्ठि तोडिय तडत्ति,  
ता केवलु णिम्मलु फुरिउ णाणु,  
ज णिक्कलु णिक्कारणु महतु,  
ज सव्वोदउ ज णियपवासु,  
ज परमपय भावेण थक्कु,  
ज रयणत्ताय परिणामसाह,  
ज इक्क समय सयलु वि मुणेइ,

जह केवल इ अणि फुरइ सत्ति ।  
ज वत्थु पयासण पयडु भाणु ।  
ज णिच्च गिरजणु गुण अणतु ।  
ज छेय विवज्जिउ सुह बियासु ।  
ज भव भावण भावेहि मुक्क ।  
ज ण तव उट्ठय ठिदि पयाह ।  
ज कालत्ताय पसरणु कुणेइ ।

1 ख जिततहु

3 = विशीर्ण शिलोपरि

5 ख मुक्क

7 = शुक्क रघ्घान

9 क ख वनहु

2 = नागवृक्षतलि

4. = ब्रह्मवृक्षभनाराच सहनन

6. ख ० णाणहो

8 ख व खम्मच्छह

भू उवि भविसु<sup>1</sup> वे जसु बट्टमाणु,  
ज णतह दव्वह पज्जयाह,  
जुगवज्जाणणि पयडियउ सहाउ,

पच्चक्खु फुरइ अमुणिय वमाणु ।  
कालत्ताय<sup>2</sup> वित्थर-सठियाह ।  
नेण<sup>3</sup> जि णणिज्जइ तहोव<sup>4</sup> पहाउ ।

अस्ता—ता तहि परमेसरु, इयवम्मीसरु, दव्वजाउ णिरु पेक्खइ ।

कर ठिउ सुत्ताहुलु, णाइ सु णिम्मलु, सयल वि फुडउ समिक्खइ ॥8॥

( 9 )

ता कपिय इ दह आसणाइ,  
घटा टकारिहि बहिर कप्प,  
जोइन धरि उट्ठिय सिहणाय,  
पडु पडह सइ वितर धरेसु,  
भुवणह धरि वज्जहि बहुध सख<sup>5</sup>,  
ता सोहम्मे णाणे चित्तिउ,  
अइ हरिसपूर पिल्लिय मणेण,  
आइ वि सो तहि जोडे वि हरव,  
ता भणइ सक्कु करि धम्म कज्जु,  
उप्प णणउ देवहो परमणाणु,  
न सुणि वि धणउ पभणइ सुजाणु,

मणि किरणधारभा भूसणाइ ।  
जाया सुरगण विभिय वियप्प ।  
दिग्गयमय सोसण किय<sup>6</sup> महाय ।  
सइ जाया विभिय वितरेसु ।  
विभिय भुवणांमर बहु असख ।  
णाणु जिणेसहु इय मणि मतउ ।  
जरकेसर चित्तिउ तक्खणेण ।  
आइए सहि<sup>7</sup> भणइ सामिय कयत्थ ।  
जिण समयुज्जो वणि<sup>8</sup> होहि सज्जु ।  
करि समवसरणु जुत्ताउ पहाणु ।  
इहु करमि सामि आइसु वमाणु ।

अस्ता—ता णिय परिवारे, बहुय पयारे,<sup>9</sup> सहु जक्खेइ<sup>10</sup> परावउ ।

जिणुणाहुण वेप्पिणु, विणय धुणिप्पणु<sup>11</sup>, णिम्मइ सह सिरि रायउ ॥9॥

( 10 )

समवसरणु णिप्पायउ जक्खे

कम्म पयट्ठिय<sup>12</sup> परियर लक्खे ।

1 क भविसु, ख भविस्सु

3 = केवलज्ञानेन

5 ख कय

7 = आदेश देहि

9 क. पराए

11 • विणु

2 कालुत्तय •

4 = केवलज्ञानस्य

6 ग व बहुयसख

8 = जिनमतोद्योते

10 ख जक्खिहु ग जक्खहु

12. = कार्ये परिहित परिकरलक्षेण

सद्य मद्दठ जोयण कय वित्थर,  
 पच्च सहास धणुहु घर मिल्लिवि<sup>१</sup>,  
 णोलिहि बढउ तहि तल महियलु,  
 पच्चवण मणि रेणु सुसिद्धउ,  
 सोहवि कत्थवि मरसय वण्णउ,  
 कत्थ<sup>२</sup> वि माहणी लेहिर वण्णउ,  
 कत्थ वि च्चदकति सच्चडियउ,  
 बहु सोहा जुत्ताउ धूलिसालु,  
 चउदारिहि चउपोलिहि जुत्ताउ,  
 नहि बाहिरि णिम्मिउ मणि वावेउ,  
 माणसमु अइ तु ग मणीहर,  
 चउ सालिहि चउ पोलिहि मडिय,  
 तहि सरवर पोमिणि सच्छण्णउ,

मेलिद<sup>३</sup> पच्चवण मणि पत्थर ।  
 भारभिय सह णहयणु पित्सवि ।  
 ण हरि अकुर<sup>४</sup> छण्णउ सिम्मलु ।  
 धूलि सामु यट्ठेण सणिद्धउ ।  
 कत्थ वि पोमराय सच्छण्णउ ।  
 कत्थ वि दित्त कण्ण णिप्पण्णउ ।  
 कत्थ वि कक्केयण सज्जडियउ<sup>५</sup> ।  
 अइमु सिप्पण्णउ अइ<sup>६</sup> विसालु ।  
 मणिमयतारण तेम दित्तउ ।  
 णिम्मल जल कल्लोल पराइउ ।  
 तिहुयण माणदलण अइ बुद्धर ।  
 चउदिसि चउ जिण पडिम पयडिय ।  
 ठिउ बहु सुरपक्खेहि रवण्णउ ।

धत्ता—परिहा जल णिम्मल, विय सिय सयदल, तहो तलि पिहपडिहासइ ।  
 तह तडि जिणगेहह, मणिमयदेहह, घरह वि सेणी दीसइ ॥१०॥

( 11 )

परिहा परितडि बल्ली बियाणु,  
 तहु अग्गइ दीसइ कणय सालु,  
 तहु अग्गइ उववणु अइ महंतु,  
 तहो अग्गइ वेई<sup>७</sup> रयणसार,  
 तहो अग्गइ पायार सु णिम्मलु,  
 तहो अग्गइ सुरतर वर थक्क,  
 तहो अग्गइ वेईय रुइ रम्मिय,  
 तहो अग्गइ सुरहरसुक्खधाम,  
 तहो अग्गइ सालु वि सालु इट्ठु

फल फुल्लपवर पल्लव पहाणु ।  
 अइ तु ग सयल सोहा रमालु ।  
 पुण्णाइय तरुवर थर सहतु ।  
 तहो अग्गइ धयठिय बहु पयार ।  
 णिम्मिउ हीरावलि रुइ पविडलु ।  
 चित्ता रुक्ख पडिमहि णिलुक्क ।  
 बहु पयार रयणेहि विणिम्मिय ।  
 जहि णच्चहि बहु देवाह राम ।  
 मणि किरण जाण संभार पुट्ठु ।

1 = समहृत्य

3 ख यकुर

5 ख घ सच्चडियउ

7 ख ०बइ०

2 ख मेल्लिवि

4 ख. कहवि

6 अह

तहु अगइ मणि फलहेहि बढ,  
अगइ पीवत्तउ रयणसार,

बारह भित्तिहि अंगरि गिरुद्ध ।  
उण्परि असोउ बहु लच्छि भार ।

घत्ता—तहोतलि सिंहासणु, भणिभाभूसणु<sup>1</sup>, गघकुटी परिवारियउ ।  
विय सिय मदारिहि, बहुय पहारिहि, मालिहि भिर सभारियउ ॥11॥

( 12 )

चउ सालिहि तहि वेइय पचहि,  
सालि सालि तहि पोलि पसिइय,  
चउ दिसु बीस सहस सोवाणिहि,  
पडम पोलि तहि वितर रक्खिहि,  
बीय पोलि<sup>3</sup> ठिय णाय सुरेसर,  
णव गिहाण तहि सठिय दीसहि,  
तहि बहु भगल दम्बइ णियहिइ,  
पह उह दिसि दो णाडयसालउ,  
ठामि ठामि तहिं धूव धडुल्ला,  
ठामि ठामि कीडागिरि<sup>6</sup> सु दर,  
ठामि ठामि भणिरासिउ भासहि,  
ठामि ठामि चित्तिहि<sup>7</sup> व णिमिय,

मडिउ समवसरणु मणि सचिहि ।  
पोलि पोलि मणि तोरण रिद्धिय ।  
मडिउ इच्छु किककु पमाणिहि ।  
भम्बु लोअ भावतु<sup>2</sup> समिक्खहि ।  
मुग्गर कुलिस पास सठियकर ।  
मणि दित्तिहि जे दुच्छइ भीमहि<sup>4</sup> ।  
अट्टुत्तरु सउ सल्लामहियइ ।  
ठामि ठामि मडियउ विसालउ ।  
अयणिसु<sup>5</sup> सुरहि धूम भरभल्ला ।  
सेवागय सठिय ण मदर ।  
तमु दालिद्वि दूरिहि णासहि ।  
जिण पडिमकिय<sup>8</sup> उरि ण धम्मिय ।

घत्ता—तहि पोलिसु तिज्जिय, रयण समज्जिय, रक्खिय जोइ सदेवहि ।  
करि किय बहु सछिहि, सार समत्तिहि, पयडिय जिण पयसेवहि ॥12॥

( 13 )

ता पोलि चउत्थिय फलिहसाल,  
तहो अगइ<sup>9</sup> वेई धवल वण्ण,  
तहो अगइ पीडतउ रवण्णु,

तहि भितर बारह गण विसाल ।  
चउदाररयण पयडिहि रवण्ण ।  
बहुभेय रयण किरणेहि छण्णु ।

1 क भणि भामणु, ख घ भणिभाभूसणु

2 ख पडलि,

4 ग भीसही,

6 ख ग कीलागिरि,

8 = अनिमा सहित चैत्यवृक्ष

3. = धवलोकयन्ति

5 ख ग अह

7 चैत्यवृक्ष

9 ग अगल

पढमहो पीढहो<sup>१</sup> सिरिषम्मु चक्कु,  
बीयहु पीढहो सिरि भट्ठकेय,  
तइयहो पीढहो सिरिदेव सिट्ठ,  
तहि उरि सिहासणु खणसार,  
तहो बित्थरि सठिउ पोमजाणु,  
तहो तलि परमेसरु णिरबल्लु,  
सिहासणु बाहिरि गणगेहु,  
सुरचदण सिचिय सयल खोणि,  
सब्बत्थवि णिवडइ कुसुम बिट्ठि,  
अण्णु वि ज तिहुयणि सारवत्थु,  
छुडुसमव सरणु णि पुण्णु पुणु,

सहु सारिहि<sup>२</sup> चुत्तउ पुरउ थक्कु ।  
देवणिहि सबिय भट्ठ भेय ।  
सठिय बहु<sup>३</sup>सिरि पडिहेर भट्ठ ।  
अक्किहि बुद्धिहि<sup>३</sup> णिम्भय पयारु ।  
तहो उप्परि छत्तसउ पहाणु ।  
चउसठि<sup>४</sup> चमर वीजिउ सुबिबु ।  
बहुदेव कुसुम सपुण्ण देहु ।  
महमहइ गब कप्पूर जोणि ।  
मुत्तिय रमावलि जम्भिय सिट्ठि ।  
त किउ जक्खे णिर सुल्लु इत्थु ।  
ता सक्कविडु आदण पवण्णु ।

अन्ता—ता दु'डुहि वज्जइ, तिहुअण गज्जइ, चउणिकाव सचल्लिय ।  
जय जय पवणता, पुलउ बहता, हरिसभाव परिपेल्लिय ॥13॥

( 14 )

एरावणि आरुडउ सुरिडु,  
दिशिपाल सबल चल्लिय महत्त,  
दु दुहिरव गज्जइ गहु समुद्,  
बहु धवल विमाणिहि केण जुत्तु,  
सुरकाय कति तोइ<sup>५</sup> विसालु,  
तहि बिद्दुअ रमणइ बिद्दुअ मति,  
बहु धूव धूम भडलु विहाइ,  
तहि सखहि सजाया सुसख,  
सेवालइ सिक्किरि<sup>६</sup> सयसमूह,  
बाडव जलणा अइ सूरु तित्थु,

बहु अक्खर ढालिय चमर विडु ।  
णिय बाहण णिय परिवारवत्त ।  
अयवड कल्लोत्तिहि हुउ रउद्दु ।  
सुदबाहण जलयर कोडि भुत्तु ।  
सिय छरा कमल खडहि रमालु ।  
मुत्ताहरणइ मुत्ताहलति ।  
जलयाणहि उट्ठिउ भेहुणाइ ।  
जलसिय<sup>७</sup> पक्खहि चमरहि<sup>८</sup> असख ।  
जलसप्पइ मणितोरणइ वूढु ।  
एरावड मदर तुल्ल जित्थु<sup>१०</sup> ।

1 ग सारहि,

2 क. बीढहो,

3 क. बुद्धि + = चैत्यवृक्ष \* = प्रतिमा सहित चैत्यवृक्ष

+ = आरा 1000 धर्मचक्र, \* = श्री ह्रीष्टुतिकीर्ति बुद्धि लक्ष्मी = पूजा

4 = भवणवासी 20 व्यंत्तर 16, कल्पवासी 24, सूर्य, 1, चन्द्र 1

5 क दुडु,

6 ग तोए

7 = समूह

8 = श्वेत पक्ष ख. च चमरइ

9 = छत्री

10. ख ध, जित्थु

घत्ता—वायतु<sup>१</sup> णडतउ, मेउ भणनउ, देवसत्थु तहिं आयउ ।  
जहिं ठिउ परमेसर, परमु जिणेसर, परमणाण मपायउ ॥ १४ ॥

( 15 )

सह मज्झट्ठिउ दिट्ठउ<sup>२</sup> जिणिदु,  
धाइक्खपदह् अइसयहिं जुतु,  
जहिं जहिं विहरइ तहिं तहिं सुमिक्खु,  
गयण गमणु जीवह् सयल रक्ख,  
छाया वज्जिउ चउमुहउ रूउ,  
सजायउ विज्जा सयल णाहु,  
इय भवसय दह् णिम्मल हवति,  
मिली सव्वह् जीवाह् जाय,  
घर णिम्मल दप्पण पडिमदिट्ठ,  
मारुय सुरघर णिम्मल करेहिं,  
घण सुरवरि<sup>३</sup> सहिं गधोउ तित्थु,  
मगल अट्ठइ अणु धम्मचक्कु,  
भवरुप्पर सुरसह्णु कुणति,  
अट्ठारस घणइ घर हवति,

मडल मज्झट्ठिउ<sup>३</sup> णाह् चहु ।  
परमेसर हुउ केवल पवित्तु ।  
चउदिसि सय सय योयण परिकखु ।  
उवसग्ग मुत्ति वज्जण समिक्ख ।  
अप्फदु जाउ लोयण सरूउ ।  
णह् केसर विद्धि वज्जण सणाहु ।  
जगि तित्थयरहो णिक्खलइ यति ।  
सव्वरा कुसुम फलदल सुखाय ।  
मीयल समीर सचरण सिट्ठ ।  
तिणकीडय कटपक सरैहिं ।  
णह् दिनि मडलु णिम्मलउ जित्थु ।  
माणहिं भासा सह् अइ गुरुक्कु ।  
णिरु पोमजाणु अग्गइ ठवति ।  
इय पनुइ देवेहिं तासु भति ।

घत्ता—इय अयसयवतउ, णाण महनउ, देवहिं तहिं जिणु दिट्ठउ ।  
जय जय पमणे विणु, पुरउ सरे विणु पणमिउ भावपघुट्ठउ ।

( 16 )

आइवि तहिं<sup>४</sup> ति पयाहिणु करेवि,  
जोडेवि हत्थ सयुवण नग्गु,  
जय जय परमेसर अप्परूअ,  
पइ वुज्झिउ अप्पह्णु फुडु सहाउ,  
तुह्णु मु जहिं खाणामय<sup>५</sup> सुसाउ,  
तुह्णु परमप्पउ तुह्णु परमदेउ,

बहुभन्ति भारविणए णमेवि ।  
चउगइ भवभमसमारभग्गु ।  
जय भाविय रयणनय सक्ख ।  
पइ मुक्कउ परदव्वाह् भाउ ।  
पइ उज्झिउ<sup>६</sup> भवभावह् कसाउ ।  
पइ दिट्ठउ खाणाणाण भेउ ।

१ = वाद्यानि बादन

२ ग ०ठिउ

३ ख तेहि

४ = तेजित

२ ग दिठउ

४ क ०वर०

६ = जानामृतस्य

तुह एककूउ रिगमुक्कूरुध,  
 तुह सीयलु सतउ सिवसहाउ,  
 पइ कारक<sup>१</sup> रिगयर वि दूरि चित्तु<sup>२</sup>,  
 ज दब्बजाउ पजजायजुत्तु,  
 जे तिहुयणि वट्टहि जीवभव्व,  
 तुह भवर<sup>३</sup> तुज्ज गुरा जो धुणेइ,  
 जो मणवयणिहि तुह गराह धुत्ति,  
 तुह बाहिर भसु वि मुणिउ जेहि,

तुह सब्वह पररुग्रह<sup>४</sup> भरुध ।  
 तुह परमपरापर पर पहाउ ।  
 को भण्णु संदु, पइ एाह छित्तु ।  
 तं तुह एाणी वहि लविरा<sup>५</sup> सितु ।  
 ते तुह भसेहुध सुद्धदब्ब ।  
 सो<sup>६</sup> एाहु<sup>७</sup> कइ भगुल इय गणेइ ।  
 त मण्णउ कवलहि गयणमुत्ति ।  
 दुक्खह सलिल जलि विण्णु तेहि ।

वत्ता—इय धुणिवि सुरेसर, सिरि सठियकर, हरिसपूर पर परमट्ठा ।

किय उवसम भावें, साहु सहावें, णिय णिय कोठि बइट्ठा ॥16॥

( 17 )

पढमइ कुट्ठइ मुणियर बइट्ठ,  
 नीअइ अज्जिय सठिय सुलील,  
 वितरतिय पचमि सपवण्ण,  
 सत्तमि भुवणामर तेय पुट्ठ,  
 एाव मइ जोइम बहु तेयर द,  
 एयारह मइ सगय मणुस,  
 अवरुप्पर जह चिर वेर भाउ,  
 बग्गी धणि धावइ तित्थु वच्छु,  
 णउलहु मुहु चु बई तित्थु सप्पु,  
 तहि मरणु एा कासु वि णेय जम्मु,  
 णहु एाह रोय कदप्प भाव,

वीयइ कप्पामर एारि सिट्ठ ।  
 तुरियइ जोइस एारिउ सुलील ।  
 छट्ठइ एायइ रिग बहु कुलिउ सण्ण ।  
 अट्ठमि वितर सयल वि पयट्ठ ।  
 दहमइ उवविट्ठा कप्प इ द ।  
 बारह मइ तिरिअच भतामस<sup>८</sup>  
 ताह वि सपायउ सम सहाउ ।  
 भूमउ भज्जारिहि छिबइ वच्छु ।  
 हरि करि वि दोवि भिल्लनि दप्पु ।  
 एाहु भुक्ख तण्ह एाहु कूरकम्मु ।  
 एाहु पीडा भव दुट्ठा सहाव ।

वत्ता—इय तहि बहु भवियण, णिइ णिम्मल मण, बारह कुट्ठय सट्ठिया ।

णिय उरि जोडिय कर, धम्मायरवर, ण लिप्पेण परिट्ठिया ॥17॥

इय सिरि चदप्पचरिए महाकइए महाभव्वसिद्ध

पाल सवणभूसणे केवलणाण उप्पत्ती णाम

दहमो सधि परिच्छेउ समत्तो ॥10॥

ग्रन्थ सख्या—192, प्रश्नर 19

1 ख रुव्हं

3 ग चतु

5 क भवर

7 आकाश,

2 = कर्ताकर्म क्रियादि

4 = लवणवाणी, 'एकत्र' आत्मा

6 = कवि

8 क्रोधरहित

# एयारहमो संधि

( 1 )

वत्ता-भविष्यण सुमण सबण वरिपीणण, अमथ<sup>१</sup> सहाव सगया ।

ता जिणणणण जलहि<sup>२</sup> गलगज्जिय, माचहवाणि<sup>३</sup> रिणग्गया ।

कुवई-मेहहु गज्जिव फुडु वण्णु चुक्क,

णिय णिय भासा भेएण याइ,

वित्थेय साम<sup>४</sup> वज्जिय अगव्व,

निणवइ गणहर वित्थरहि वारिण,

परमेसर भामइ सत्ततच्च,

जोउ अजीउ आमब विबंणु,

इय सत्त वि तच्चइ फुडु कहेइ,

दो भेउ पडमु इह जीव दव्वु,

ससारिउ पुणु दो भेउ दिट्ठु,

चउ भेयहि तहि तस फुडु हवति,

अण्ण वि थावर दो भेय उत्त,

तस थावर पुणु दो भेय ह्वति,

जोयण मारिण वित्थरणि थक्क ।

सुरणर तिरियह परिणामि जाइ ।

जुगव<sup>५</sup> पयडिय पज्जाय दव्व ।

संगह विचार णिय णिय पमाणि ।

ते वणिणाय भगुप्पाय रिक्क<sup>६</sup> ।

सवर रिण्णर मुक्खु वि अवधु ।

भवयह सवेहह भवहरेइ ।

ससारि सिद्ध भावेण सच्चु ।

तस थावर भेए सो विसुद्धु ।

पचहि भेयहि थावर सहति ।

सुह मइ वायर क्वेण जुत्त ।

पज्जाए दर भावेण वति ।

वत्ता-पढमउ तस वण्णणु, भेय रिणवण्णणु, चउगइ जाणिहि वज्जरइ ।

भविष्यह मणि थक्कइ, मोहणि लुक्कइ, जिणवक्क सत्तवु<sup>७</sup> ससरइ ॥१॥

( 2 )

वे इ दिय पमुहा समुम<sup>८</sup> उत्त,

ते इदिय धारें सह हवति,

ते फास रसण इंदियहि जुत्त ।

चउरिदिप णयत्तइ परिणत्ति<sup>९</sup> ।

१ = अमृत

३ = मागधी भाषा = प्राकृत

५ = युगपत्

७ खा ससउ

९ ख घ परिगहति

२ = मेघ

४ = श्वासोच्छ्वासरहित वाणी

६ = उत्पादव्यय ध्रोव्य युक्त सत् ।

८ व तसए



पचिदिय सवणहिं सद्दु लिति,  
जोयण बारह दुइ सख भ भु,  
भमरहो जोयणु इक्कु<sup>१</sup> जि पमाणु,  
इहु तसहो उक्किट्टुउ काय माणु,  
वियल्लिदिय वियडिय जोणि ह्वति,  
एयह भण्णु वि सीअणह<sup>२</sup> जोणि,  
वेइदिय बारह बरिस भाउ,  
एव चालीस दिवस फुडु तिक्खह,  
मच्छह पुव्वकोडी जीवेव्वउ,

ताह वि केह वि सप्पणी<sup>३</sup> हवति ।  
कोसत्तऊ सज्जुरय पसगु ।  
जोयण सहासु मच्छह पमाणु ।  
जेहुउ भासइ केवलु सराणु ।  
गम्मुभब सपुड वियडि वति ।  
भण्णु वि तह भिस्सा कम्म खोणि ।  
उक्किट्टुउ फुडु जीविय सहाउ ।  
उत्तउ छम्मासइ षउ अक्खइ ।  
अवरह अवह अवह णाइव्वउ ।

वत्ता-पक्खिहिं ठिउ भाउसु, इहु परमाणसु, बरिस सहस्स बाहत्तरि ।  
सप्पाहु सुणिज्जहु, भति म किज्जहु, तहि चालीस वु उत्तरि ॥२॥

( 3 )

बहु आयारिहिं इह होइ फासु,  
पोमहु<sup>४</sup> पत्तु व जीहा विहाइ,  
वट्टलिय मसूरिय<sup>५</sup> पडिमु चक्खु,  
अप्पुट्टउ विदइ एयणरूउ,  
पुट्ठापुट्टउ सेता<sup>६</sup> मुरांति,  
फासहो गधहो रसहु गिरुत्तउ,  
सवणहो<sup>७</sup> जोयण बारह दिट्टउ,  
भण्णु जि जोयण दुसय दिसट्टउ,

जव णाणु व ठिउ सबणहं पयासु ।  
षाणु जि अइवत्तहु<sup>८</sup> फुल्लुणाइ<sup>९</sup> ।  
इय पडिमइ<sup>१०</sup> भासइ विस्स चक्खु ।  
सवणु जि पुट्टउ सहहु<sup>११</sup> सरूउ ।  
इय इदिय गहणाइ जिरण अणति ।  
एव-एव<sup>१२</sup> जोयण विसउ पउत्तउ ।  
सत्त चाल सहसइ एयणिट्टउ ।  
चक्खवट्ठि लोयण<sup>१३</sup> परिमट्टउ ।

- १ क. सन्नी
- २ ख घ सीउण्ह
- ३ = अतिभुक्त पुष्पनाली तिल्ल फुल्लाकार,
- ४ ख मसूरी
- ५ क सहउ, ख सहहो
- ६ ग एउ एउ
- ७ = नेत्रविषय

- ८ घ = एककु
- ९ ख पोमह
- १० ख फुल्लुणाइ
- ११ = आकाराश्चक्षुषाम्
- १२ = शरीर नाभाजिह्वा
- १३ = विषय

मणु पुणु दो भेएहि पउत्तउ,  
दव्व चित्तु हिययम्मि वड्डुउ,  
भाउ<sup>1</sup> जि पुणु सो अप्पयहो भाउ,  
ईसीसि पयहु जो अप्पदेसु,

दव्व भाय भेरण्ण गिरुत्तउ ।  
अटुवत्त कमलुव्व विसिट्ठउ ।  
को वण्णएण सक्कइ तहो सहाउ ।  
सो इदिय भेय द्दुअ असेसु ।

घत्ता—जे तिहुयणि गिणवसहि, कम्मे विलसहि, ते पच्चदिय गिरु भणइ ।  
सुरणर एणरइयह, गिय भवि तवियह, ताह विठाणइ सगणइ ।।3।।

( 4 )

पढमे इह वण्णइ एणय ठाणु,  
एणउ पढमु<sup>2</sup> तेरह पत्थडयहि,  
पढमइ पत्थडि एणयइ हवति,  
विदिसि-विदिसि अट्टय चालीसहि,  
हिट्ठिम पत्थडयह सेणबद्ध,  
दिमि विदि<sup>3</sup> सतरि जे पुर हवति,  
सक्कर धर इ दय एयारह,  
पक्कप्पहि इ द जि सत्त<sup>4</sup> ठिय,  
तह पहि पच्छड तिण्ण जि भणति,  
रयणप्पह<sup>5</sup> इ दय पुर माणउ,  
सत्तम एणय मज्झि पुर वित्थह,

ज रज्जु सत्त ठिउ<sup>2</sup> उट्टमाणु ।  
उवरि उवरि परिमडिय षडयहि<sup>4</sup> ।  
निसि दिसि एउण पण्णस अति ।  
सेणीबद्धहि ई दिय<sup>5</sup> दीसहि ।  
एक्केक्की<sup>6</sup> हीणा ते गिरुद्ध ।  
ते कुसुममह पयरन बहलस ।  
बालुअ धर नव ट्ठिय दुहसारह ।  
धूमग्गहि ते पच्च परिट्ठिय ।  
तम तम पहि एक्कु जि जिण कहति ।  
दिट्ठउ माणुस रिक्त पमाणउ  
जोयण लक्ख पमाणु सुट्ठवर ।

घत्ता—रयण अट्ट तीसहि, पुणु पणवीसहि, तइयउ पणरहि परियरिउ ।  
जम्मण विललक्खह, दुक्खसमिक्खह, वहेहि अउ छउ परिसरयउ ।।4।।

1 = भावमन ;

3 = प्रथम नरके

5 ग इ दय

7 = दिग्बिदिन् मध्ये पुष्प प्रकीर्णका

सति,

9 रत्नप्रभ मध्ये प्रमाण योजन 4500000

2 ग जिउठ०

4 ग षडयैहि

6 घ एक्केक्के

8 ग 3,

( 5 )

पचमु तिहि लक्खेहि सु दिट्ठउ<sup>१</sup>,  
 अइ बहु दुक्ख कोळि सतत्ती,  
 सत्तहि<sup>२</sup> एरयह बिलगणु घुट्ठउ,  
 वरिस सहास दसिहि उहीविउ,  
 गणियहि वरिसहि एउअ<sup>३</sup> सहासहि,  
 वरिसहि आउ जहणु पग्गिट्ठउ,  
 तइ अइ एउ जहणु मुदिट्ठउ,  
 आउ असखह बहु दुहगव्वह,  
 गाढु-गाढु बहु दुक्खह भरियह,  
 तहि<sup>४</sup> परमाउ सुएहि शिरुत्तउ,  
 तेरह मइ ठिउ सायर जायहि,  
 सायर सत्तय ठिय बालुप्पहि<sup>५</sup>,  
 छट्ठइ सत्तमि अहिउ पउबमि<sup>६</sup>,  
 ए परमाउस भणिय एि क्त्ता,

पचऊण लक्खिक्के छट्ठउ<sup>७</sup> ।  
 सत्तमि पचहि विलहि शिरुत्ती ।  
 पढम एरय पढमिदय जीविउ ।  
 परमाउसु तित्थु जिणु भासइ ।  
 बीयइ इ दइ एव लक्खिहि शिउ<sup>८</sup> ।  
 एउ अहि लक्खहि तित्थु व किट्ठउ ।

.. ....

उक्किट्ठ उ पुणु कोळी पुव्वह ।  
 एउ जहणएउ जीविउ तुरियइ ।  
 दहमु अ सुसायरहो पउत्तउ ।  
 बट्ठइ अहिउ अहिउ इय तावहि ।  
 तिणिए जि सायर तहि<sup>९</sup> सक्कर पहि ।  
 वइ सत्तारस तुरियइ पचमि ।  
 बाबीसहि तेंतीसहि जुत्ता ।

पत्ता—पढमइ अ दिट्ठउ आउ उक्किट्ठउ, टिट्ठलि जहणएउ ।

इय कमिठिउ सव्वह, अइ दुहदव्वह, एरयह आउपत्तउ ॥५॥

१ घ ०दिट्ठी

३ ग सत्तहि

५ क तित्थु किट्ठउ

७ तह

९ क पउबमि, ख घ पवबमि,

२ घ छट्ठी,

४ ख घ एवइ, ग एवइ

६ ग तेहि

८ ख घ बालुपपहि

पठमुइ इदइ देहु वि तिहुत्तु,  
 तहि अहिउ अहिउ इय देसु होइ,  
 तहण्हत्थ<sup>5</sup> तहि अनुसइ छप्पि,  
 तह विउणु विउणु<sup>6</sup> तल मेयणीसु,  
 तह सत्तमि वणुहइ सयइ पच्च,  
 गयणप्पहि हुइ बिबरीउ एणु,  
 अद्ध कोसु इय राहु हीणु,  
 एारउ मरेवि पच्चखु जाइ,  
 सण्णी पज्जत्तउ कम्मखोणि<sup>7</sup>,  
 सत्तम पुडविहि पुणु पसु जि होइ,  
 एारइउ ए हरि बल चक्कि अम्मु,  
 तुरियहो एारयहु एउ<sup>11</sup> तित्थु एाहु,  
 पच्चम एारयहो एाहु चरम देहु,  
 सावउ<sup>12</sup> सत्तमयहो एोय दिट्ठु,

उदए उप्पज्जइ सुट्ठु<sup>1</sup> बुत्थु ।  
 तिरह<sup>2</sup> मइ वणुहइ सत्त जोइ ।  
 परमेसरु जपइ फुड विअप्पि ।  
 उदएण अणु हुइ दुहधणीसु ।  
 तु मेण हु ति पावह पवच्च ।  
 चउकोस खित्त जाणएण पमाणु ।  
 जह कोसुइक्कु सत्तमइ लीणु ।  
 तिरियचु हवइ माणुसउ थाइ ।  
 एाहु वियलिविय<sup>9</sup> गहु देव जोणि<sup>9</sup> ।  
 एाहु मणुयत्तणि सच्चइ कोइ ।  
 एारयहो आइउ पावइ अहम्मु<sup>10</sup> ।  
 उप्पज्जइ बहु अइसइ मएाहु ।  
 छट्ठउ एाहु मुणि सज्जमहो गेहु ।  
 तिरियचु घोर कम्मेण दुट्ठु ।

घत्ता—इय सत्तह एारयह, बहु दुहधरयह, जीउ वि मरि<sup>13</sup> उप्पज्जइ ।

अइ पावइ<sup>14</sup> माणइ, अणु ए याणइ, घोरइ कम्मइ अज्जइ ॥ 6 ॥

1 घ उदय (अहस्तेन दीर्घा),

2 ग सुख

3 = अतिशयेन दुःखी

4 ख ग तेरह,

5 य ते हेत्थ, घ ते हत्थ

6 क. विवणु विवणु,

7 = कर्मभूमे सती पर्याप्तो भवति,

8. नारकी मृत्वा विकलत्रये

9. = देवो न भवति,

10. = अधर्म,

11 क ए

12 = व्रतधारीन्

13. = मृत्वा

14. = अतिपापानि मानयति ।

( 7 )

सण्या बज्जित<sup>१</sup> पढमिल्लि जाइ,  
 पम्लि तइअइ<sup>२</sup> जाइ उप्पज्जइ,  
 पंचमि केसरि णारिउ छट्ठइ,  
 पढमिल्लि एरइ इइ अट्ठवार,  
 इक्कक्कउ ए<sup>३</sup> इयरेसु जाणि,  
 पढम तर चउवीस मुहुत्तुइ<sup>४</sup>,  
 तइयइ पक्खु जि भासु चउत्तइ,  
 अट्ठ वरिसु सत्तमि दुइ पुट्ठइ,  
 केवल एणो जेम सयासिउ,  
 तिय एरयहि छह सहएणि जाइ,  
 छट्ठइ चउ सहएणोहि जुत्तु,  
 एरइ यह एणु सहएणु कोइ,  
 सव्वह एरइवह लइ लिणु.

अरगोहा<sup>२</sup> पमुह बीइ वाइ ।  
 सम्पु चउज्जइ एरयहो बज्जइ ।  
 सत्तमि तिथि एर अइअइ कट्ठइ ।  
 एियमेणु शिरतर दुह पवार ।  
 जह दुष्णिवार सत्तमइ एणि ।  
 बीयइ दिवसइ सत्त एणत्तइ ।  
 पंचमि भास दुष्णि चउ छट्ठइ ।  
 \* \* ..... \* \* ..... \* \* ,  
 इय एरयहं जणुएणु तर भासिउ ।  
 तल एरय जुअलि पंचेहि<sup>७</sup> भाइ ।  
 सत्तमि आइउ सहएणि पत्तु ।  
 संठाणु हंडु पुणु तह बि होइ ।  
 सपज्जइ वह पीडा पसणु ।

अन्ता—दुहु पचपयारहु, पीडा सारउ, अहिउ अहिउ एरयह हवइ ।

जगि ताव पहावें, कम्म सहावें, धम्मि<sup>६</sup> विणु सो तहि हवइ ॥ १ ॥

( 8 )

अउएरय भूमि अइ तावत्त,  
 पचम सुअणु छट्ठी सत्तमि,

तहं तिहि असिहि पचमि पलित ।  
 तह सीयत्तणु कहहुअं वण्णमि ।

१ = असजी,

३ ग तइयइ च तइए

५ ल पढमि,

७ पचमहि

२ = किरकंटिय विश्वभरादि

४ क. ए

६ = प्रथम भूमी अनुविशति मुहुत्तं  
 नारकाणामुत्पत्ति नास्ति

८ ल व. धम्मि ।

एरइयह असुईय जम्म ठाण<sup>1</sup>,  
 तिमिर पूइ कटेहि सुसइ<sup>3</sup>,  
 किण्ह एील कापोय सुलेसिय<sup>5</sup>,  
 एय मुहुत्ति<sup>6</sup> परिपुण्ण वेह,  
 असि पत्ति खित्ति रिणवड तितिच्छु<sup>7</sup>,  
 अइ सुइ तिक्खइ तहि तिणाइ<sup>9</sup>,  
 पूई किमि पूरिय जलणिहाण,  
 सव्वु वि तहि दीसइ कूरसत्तु,  
 ज भक्खइ ा गरल समाणउ<sup>11</sup>,  
 ज आयण्णइ त कण्ण सूल,  
 ज पिक्खइ त त हण्णइ जक्कु,

हिट्टामुह<sup>2</sup> किय भच्छय समाणु ।  
 तेसु हवति जीव कम्मु भड<sup>4</sup> ।  
 वड घोर कम्मेण जि पेसिय ।  
 हिट्टामुह रिणवड पाव गेह ।  
 बहु पहरण लक्खइ तिक्ख जिच्छु<sup>8</sup> ।  
 आइस गुक्खइ<sup>10</sup> सक्कर घणाइ ।  
 अह ताविय लवय रसहु ठाण ।  
 सव्वु वि दीसइ मारणह पत्तु ।  
 ज सु षइ, त फोडइ बाणउ ।  
 ज करि फसइ त दुक्ख भूलु ।  
 मव्वरय वि तहि सभवइ दुक्खु ।

धत्ता—इय<sup>12</sup> लक्खणु कित्तहु, असुह रिमित्तहु सलेवेण पडत्तउ ।

विस्सरि पुणु वण्णण, रिणय मणि मण्णण, जिणवरु देव  
 पडत्तउ ॥ 8 ॥

( 9 )

ताह सरीर दुक्खु जइ वण्णइ,  
 पच कोडि अडसट्ठिय लक्खइ,  
 पचसयइ चउरासी अहियइ,  
 अगुलु अगुलु बहु गय<sup>14</sup> विट्ठउ,

सुय देविवि अण्णउ जइ मण्णइ ।  
 सहसइ एव एव दीयसु सखइ ।  
 इक्क अग्नि इय मदइ<sup>13</sup> कहियइ ।  
 एार पिडु एम रिणु सिद्धउ ।

9 ग ठाणु,

3 = सुसघट्टसयुक्ता,

5 क क कायो अ सुलेसिय

7 ग तितेच्छु,

9 = नरके तीक्ष्णसूची समानतृणानि विखन्ते,

10 = लोहमय शोरव,

12 ख इय,

14 = व्याधि ।

2. = अघोमुखी भावुडी समाना,

4 = कर्मोद्भटा,

6. ख घ. मुहुत्तो,

8 ख. घ. जेच्छु,

11 = विषममान भक्ष्यवस्तु,

13 = व्याधि,

खणि खणि ताहं ए बल्लइ दुक्खइ,  
 धण्णु वि माणस दुमिलहि तप्पहि<sup>१</sup>,  
 हउ हरि पडि हरि हउ चक्कवट्टि,  
 भू खेवइ<sup>२</sup> तहि मइ जणिय राय,  
 धण्णु वि धम्मुरिहि पुणु बोइज्जइ,  
 पुहु कारणि सगरि मारिउ,  
 बग्गि तुहु हरिणुत्तइ लद्धउ,  
 इय पमुहह वेरइ सभारिय,

णिमि सुधि एहु<sup>३</sup> लहति तहि सुक्खइ ।  
 चिरमव दुक्खइ<sup>४</sup> समणि विवप्पहि ।  
 हउ<sup>५</sup> रायहि बद्धि रायवट्टि<sup>६</sup> ।  
 एवहि बिसहमि मुग्गरह धाय ।  
 चिर मव वेरइ सभारिज्जइ ।  
 सीहें<sup>७</sup> नयवह तुहु<sup>८</sup> संहारिउ ।  
 तसवरेण तुहु तक्ककव बद्धउ ।  
 अणिलें जलणु व ते सभारिय ।

बला—तुहु पियल केसउ, मल मसि<sup>९</sup> बेसउ, बीह इतु भीसावणउ ।

करि किय दिउ पहरणु, तहि मग्गिय रणु बावइ हण्णु रोसावणउ ॥ ९ ॥

( 10 )

बहु पहरणि चूरि वि कियउ कुण्णु,  
 पुणु खिलउ तत्तय तिल्ल मज्झि,  
 पुणु पुणु सो खणि हुइ पुण्णु देहु,  
 पमणइ<sup>१०</sup> सुव नावइ मसगासु,  
 तं वउ पावहि महु महु भणोवि,  
 लांहहु पुत्तलि तावि वि सुत्त,  
 इह रुअ दिमिल तुहु रत्तणाइ,

पुणु ज त मज्झि बट्टण पवण्णु ।  
 पुणु तिअ खार कुंठयहु पुज्झि<sup>११</sup> ।  
 बावहि<sup>१२</sup> खारय गणु लेहु लेहु ।  
 चम्पुक्केलि<sup>१३</sup> वि बुहि धिवहि तामु ।  
 अजाल हेहि उवर<sup>१४</sup> गणो वि ।  
 धालियावहि पिय परकलत्त ।  
 पीखल्लणि पिहलणिय व भाइ ।

बला—इय पव पमारउ, बहु दुहसारउ, शरयह को किर चण्णइ ।

ज मणि चित्तउ रिउणु गणतउ, अण्णउ दुहि ठिउ मण्णइ ॥ १० ॥

- |   |                 |
|---|-----------------|
| १. ख. व तहि,                                      | २. क. म. तप्पइ, |
| ३. ब. सुक्खइ,                                     | ४. = राजवट्टे,  |
| ५. = नया भूक्षेपेन राजा जिता विजयवर भूमि व राजिता |                 |
| ६. ख. सीहि,                                       | ७. ख. समि,      |
| ८. ग. लज्झि,                                      | ९. क. बावहि     |
| १०. ख. धम्मदीव,                                   | ११. = १६००,     |
| १२. = वज्रघातकी द्वीपे                            |                 |

( 11 )

सखेवे उत्तउ एरयचार,  
 ते भवणवामि सुरदह पयार,  
 घर पक बहुलि असुराह ठाणु,  
 असुरह जीविउ सायर एिरुत्तु,  
 गरुडह आडाइम<sup>2</sup> पल्ल आउ,  
 सेसह सह जाइहि सद्ध पल्लु<sup>3</sup>,  
 परावीस वणुह असुराह देहु  
 कसिए असुर अहिड अहि सुसेय<sup>5</sup>,  
 विज्जु अग्नि दीवय हरि वण्णा,  
 पक्खिवक्के असुरा ऊस सति,  
 अहि गरुड दीव तेरह मुहुत्त,  
 तेरहि दिवसिहि सट्टेहि<sup>9</sup> मुत्ति,

एवहि भासइ भवरह विचार ।  
 खरभाइ वसहि एव भेयसार ।  
 ताह अक्खमि जीविय देह माणु ।  
 रायह<sup>1</sup> पल्लोवम तिणिए वुत्तु ।  
 दीवह पल्लह दुठ ठिउ पराउ ।  
 राहु चुक्कइ जिणवर एाह बुल्लु ।  
 सेसह वह<sup>4</sup> वणु इह धाम गेहु ।  
 गडुरुच्छणि य<sup>6</sup> दिसि<sup>7</sup> कुमरमुणीय ।  
 वायकुमार सुसक्कर वण्णा ।  
 वरिसह सहसे एिय असणु लिति ।  
 सट्टइ<sup>8</sup> अच्छिवि ऊस सण पत्त ।  
 इय भासिय भोगण सास जुत्ति ।

धत्ता—अवरह तिहि बारिहि, सुद्ध पयारिहि, पाणायामु मुहुत्तिहि ।

बारहि दिण माणिहि, समय पमाणिहि भोगण होइ

उपत्तिहि ॥ 11 ॥

( 12 )

अतिम तिहि जाइहि होइ सासु,  
 दिण सत्तिहि सट्टहि असणचित्त,

माहुत्त सत्त रुट्टहि पयासु ।  
 मणइच्छा भोगणि धुम्र समत्त ।

1 = सुवर्ण द्वीपे,

3 क भू ,

5. = व्यतराणा दिसि पक्खपुराणि प्रत्येक जम्बूद्वीप प्रमाणानि,

6 ग कल

8 ल सद्ध,

2 ल यहो उरय,

4 ग पितापय,

7 ल देस,

9 साट्टइहि



असुरह उक्किट्टुअ अवहिंखाणु,  
 सेसस एवहि सम वितराह,  
 असुरह भुवणइ चउसट्टिलक्ख,  
 बाहत्तरि लक्खइ गइइ गेह,  
 अग्गिम छइ जाइहि भुवण<sup>१</sup> इति,  
 वायह गेहइ छाणवइ लक्ख,  
 पडि भुवणि भुवणि जिण विवु विट्ठु,

गय संल कोडि जोयण पमाणु ।  
 सहसाइ असखइ खाणु ताह ।  
 खाणह चउगसी तेसु सख ।  
 बहु वण्ण रयण सचडिय देह ।  
 छाहत्तरि<sup>२</sup> लक्खइ जिण कहति ।  
 शिय शिय वणिह जाणिय परिल्ल  
 बहु भुवण मउइ पय चट्ठु वीठु<sup>३</sup> ।

वत्ता—वणिणाय भुवणामर, मिल्लिय वित्थर, ले सुदसि पुहवि तलि ।

इह वण्णमि वितर, महि बहु ठिय घर, अणु सठिय जे उवहि

जलि ॥ 12 ॥

( 13 )

भेयहि अट्ठहि वितर हवति,  
 सेसह छह भेयह पवरदीवि<sup>४</sup>,  
 चउदह सहमइ भूयाह वास,  
 अजणि किदीवि किण्णर वसंति,  
 सोवणि<sup>५</sup> महोरग<sup>६</sup> वासुल्लिंति,  
 मणिस्सिलकि वसहि गघव एाह,  
 रजयम्मि दीवि ठिय रक्खसिद,  
 हरिदालि व सहि ते बहु पिसाय,<sup>१०</sup>  
 चउ<sup>११</sup> निसि एयह सठाण इति,

दो भेय पक बहुलमि ठति ।  
 ठिदि एिच्छल रवि ससि कय पईव ।  
 रक्खह सोलह<sup>५</sup> विप्फुरिय भास ।  
 कि पुरिस वज्जचादकि<sup>६</sup> सहति ।

वज्ज जि जक्खाहि व सिरि सणाह ।  
 हिगुलकि भूय<sup>७</sup> सामियह विद ।  
 अवण्णरु सिरि वसण कसाय ।  
 दिसि-दिसि पुर पच जि जिण कहति ।

1. क भुअण०

2. क बाहत्तरि

3 = भवनवासिदेवानां मुकुटं अष्टपादा

4 ख. अंगदीव,

5. = 1600

6. वज्रघातकीद्वीपे ।

7. सुवर्ण द्वीपे

8 ख महो उरय,

9. ख देस,

10. न० पिशाचव,

11 = व्यतराणां दिशि दिशि पच पुराणि प्रत्येकं जम्बूद्वीपं प्रमाणानि

ते सग्वे जन्मदीवमाण,  
जे भवर पवर वितर असल,  
सग्व वि वित बह<sup>२</sup> षणुह तु ग,  
किपुससरकल<sup>४</sup> ते घबल हुति,  
परमि<sup>६</sup> पल्लु जि वितर जियति,

जगणिय जिणिए कहियइ पमाण ।  
बहु दीव जलहि सवास कल<sup>१</sup> ।  
अणु वि किण्णर ठिय पीय<sup>३</sup> भग ।  
सेसा वितर सामल सहति ।  
वासह दह सह मइ अहमु<sup>५</sup> ठति ।

बला—इय कहियइ वितर, पुहवि गिरतर, एवहि जोइस गणु कहमि ।

जे ठियइ असखइ गयण समिक्खइ, विक्खइ तुक्खु वि नहु

बहमि ॥ 13 ॥

( 14 )

चदाइय<sup>७</sup> जोइस पण पयार,  
दा दो ससि रवि पढमिल्लि गणि,  
वारह वारह भादकि<sup>९</sup> हवति,  
पुक्करि वाहत्तरि ते भमति,  
पुक्कर पर घटा घिर हवति,  
इक्कहु<sup>११</sup> चदहु परिवार<sup>१२</sup> उत्तु,  
अट्ठावीस जि रक्खइ हवति,  
एव सय हत्तरि इय पठत्त,  
दीहत्तरि वउ<sup>१५</sup> षणु होइ सत्त,

रवि रिक्ख पइणिएहि<sup>८</sup> गहहि सार ।  
चउ चउ लक्खणोवहि जलि पमाण ।  
कालोयहि<sup>१०</sup> बायालीस धति ।  
तहो अगइ तेअर अहिय हुति ।  
इय अहिअ अहिअ अगइ हवति ।  
अउसीदो गह सत्ता गिरत्त ।  
छासट्टि<sup>१३</sup> सहस्सइ तहि गणति ।  
वारह<sup>१४</sup> कोडा कोडिउ गिरत्त ।  
जोइस सग्वह माणइ पठत्त ।

बला—चदाह विमाणइ, जोयण माणइ, कित्तू एइ ते जिण गणिय ।

को सत्तउ अहियउ, तह जिण कहियउ, सग्वह सूरह

अणिय ॥ 14 ॥

1. ज कल
- 3 = पीतच्छरीर वर्ण
- 5 ग परमे,
- 6 = जघन्य,
- 8 क. पयाणिएहि, ख पयणिएहि,
- 10 ग ०अहि,
12. क परिवार,
14. ग. तारह,

2. ख देस
4. कि पुरुषराजसंभवला,
7. = चन्द्रादिव्योतिष्क पञ्च प्रकारा,
9. ग चादयिह,
11. ग. इक्कहु,
- 13 = 6697500000000000000
15. = क्षरीर

( 15 )

को सिक्कु होइ मुक्कहो विमाणु,  
 बुध<sup>1</sup> धारहो<sup>1</sup> मदहो भइ<sup>2</sup> कोसु,  
 को सहु तुरियउ भाउ लहु तारह,  
 चदहो जीविउ पल्लु जि सलक्कु,  
 मुक्कह पल्लु सएण वउत्तउ,  
 बहु मदहो धारह पल्लु भइ<sup>3</sup>,  
 भण्णु जि जोइसह जहुण्णु धाउ,  
 ज जोइस पभण्णु परम धाउ,  
 इनवीसे पारस<sup>3</sup> सब पमाण,  
 मेरुह जोयस गण सचरति,

पाउणु कोसु जीवहो पमाण ।  
 तम रिद्धु<sup>1</sup> ससिपर समसिसेसु ।  
 भइ कोसु अहिउ ठिउ भवरह ।  
 सुरह पल्लु जि सहसें समिक्कु ।  
 जीवहो पल्लु जि एक्कु शिरुत्तउ ।  
 तारह तुरियउ वल्ल सुसिउ ।  
 ठिउ पल्लोवम भट्ट भउ भाउ ।  
 त ताह तियउ<sup>2</sup> भइउ भाउ ।  
 जोयण मिस्सिजि आयास ठाण ।  
 ते एण<sup>4</sup> सहाबें एहि भमति ।

धत्ता—चउ सुर शिक्कायह, लप्पि सरायह, जे तिहुवणि<sup>5</sup> मणि गेह ठिय ।  
 ते शिणवम महिमह, जिएवर पडिमह, सुभवठाण परिद्विय ॥ 15 ॥

( 16 )

पचासी लक्खइ<sup>6</sup> सुरविमाण,  
 भण्णु जि विमाण ते बीस तित्थु,  
 बारह कप्पिहि बारह सुरिद,  
 भतरि अट्ठिहि चउ इ व हुति,  
 गहु उप्परि सम्भ वि इ दलोउ<sup>9</sup>,  
 वत्तीस<sup>10</sup> लक्ख सोहमि गेह,  
 साणकुमार बारह वि हु ति,  
 बभहो वभुत्तरि गेह लक्ख,

तिहि<sup>7</sup> सहसिउ<sup>8</sup> एण तेय ठाण ।  
 जिणणाह भणइ केवल कयत्थु ।  
 तल चउकप्पहि चउमेय व ।  
 उवरिम चउक्कि चउ सल्लवति ।  
 एणु तहि कुजि किकर बहु विवेउ ।  
 भइवीस बीय सम्भहो शिरेह ।  
 भट्टे व लक्ख माहि व पु ति ।  
 जुयलि<sup>11</sup> वि चउरो जाणिय परिवल ।

1. = बृहस्पति, मंगल, राहु

2. ग. तिवा, व तियाह ठिउ भइ भाउ (= स्त्रीणा)

3. क. यारहसे,

4. ज. शिव एण

5. क. ०भणि,

6. = 8497023

7. क. तहि

8. सहसेउ एण, ज. सेहसई

9. = अहमिन्द्र लोकः

10. 3200000,	2800000,	1200000,	800000,
400000,	50000,	6000,	700,
91,	9,	5,	111, 107,
11. ग जुयलि			

सतविका पिढ्हो जे विमाणु,  
 सुकहो जुबलुदलइ बीस दुण्णि,  
 सायारि सहस्सारिवि गिरुत्त,  
 घ्राणदि पाणदि<sup>१</sup> आरणि अचुवि  
 पढमहो गेवेयहु पढम तिविक,  
 म उभल्लि ति विक सउ सत्त जुत्तु,  
 एव एव एवाह अणुदिसाह,  
 विहु सगह तु गत्तणि विमाण ।  
 बीयह दुह पणमय जोयणाइ,  
 तुरियह दुह चउसय तु ग हति ।  
 छट्ठह दुह तिण्ण सयाइ दिट्ठ,  
 तु गत्तणु गेहह पढम तिविक  
 बीयहो तइ यहु तिविकहो पउत्त,  
 पचासण वाह अणुदिसाह<sup>३</sup>,

पंचास सहस ते गिरु पमाणु ।  
 सहसह वेमाणह सारवणि<sup>१</sup> ।  
 सहसहि छहि वेमाणय पउत्त ।  
 सब्बह सत्तस सयाइ सुसच्च वि ।  
 एयारह उत्तर सउ वित्तिकि ।  
 एयाणवदी अत्तिमे पउत्तु ।  
 पचह पचेव अणुत्तराह ।  
 पढमह छह सय जोयण पमाण ।  
 तइयह दुह चउसह कयाइ ।  
 पचमि दुहु ते घाट्ठ पति ।  
 उवरिम चउविक अट्ठाइ इट्ठ ।  
 दोसयजोयण गेहह वियिकि ।  
 सउ सहु एक्कु सउ हुउ गिरुत्तु ।  
 पणवीस जि होइ अणुत्तराह ।

अत्ता—गिय गिय विमाणहो, कहिय पमाणहो, जोययदइ परिट्टियउ ।

नहु सीमाण्णणउ, अबहि पमाणउ, सब्बह ताह पहिट्ठियउ । १६॥

( 17 )

पढमह दो कप्पह अवहिण्णणु,  
 उवरि दुक्कप्पह सक्करहि जाम,  
 उवरिम चउ सगह फुरइ णाणु,  
 उवरिल्ल<sup>१</sup> चउक्कह त पउत्ति,  
 अत्तिल्ल सग जे चउ हवति,  
 गेवेइय तम पुढवी उवति,  
 जे बहु अवहि किर होइ जाइ,

तलि रयणप्पह सीमा पमाणु ।  
 विक्किरिया सत्ति वि फुरइ ताम ।  
 वालुय<sup>२</sup> पुढवी सीमा समाणु ।  
 पक्कप्पह पुढवी सीम जुत्ति ।  
 धूमप्पह जामइ ते मृणत्ति ।  
 उरिवम सुरतल सब्बु वि मृणत्ति ।  
 विक्किरिय वि फुडु ते बहु ताह ।

१ ग ०मणिण्ण,

३ ग ०दिसाह

५ क. उवरि

२ ल घाण्णइ पाणइ,

३ क. बीलुष,

अणुसंतर तहं मरणंतराइ,  
उवरि दोह बि ठिउ पक्खु एककु,  
उवरि चउक्कि मासिक्कु दिट्ठु,  
तहो उप्परि चउमासउ चउक्कि,  
सोहम्मी साणइ हत्थ सत्त,

दो पढम कप्पि सत्त जि दिशाई ।  
उक्किट्ठउ अतर एहु बक्कु ।  
उप्परि चउक्कि दो मासु इट्ठु ।  
सेसह अहमास तव वित्तिकि ।  
तु गत्तणि सठिय सुरणिउत्त ।

धत्ता—जे उवरि समग्गहं, बिहव समग्गह<sup>1</sup>, छह जि हत्थ परिसठिय ।  
पण ठिय कर चउ तुरह, चउकर अवरहं, सग्गह माण परिट्ठिय ॥17॥

( 18 )

अग्गिम दुहइय अाहुट्ठ पाणि,  
तिहु तिक्किउ हत्थह अउ अउ,  
दो सत्त दह जि चउदह गिरुत्त,  
चउ जुयलिहि दो दो विद्धिताम,  
इक्किक्कु चउइ उवरिम गावाह,  
तित्तीस जे पणह अणुत्तराह,  
पण पत्त अउ<sup>3</sup> गिरु अत्थराह,  
दो दो पत्तइ बट्ट ति ताम,  
उवरिम चउक्कि सत्तेहि विद्धि,  
बिहमग्गिहि अण्णर जम्मु जिति,  
दो कप्पह पढमह काय बार,  
कवे पविचारउ चउ सग्गिह,  
मण पविचार उवरि चउक्कह,

उवरिम कुवलुक्खइ लीणि जाणि ।  
तह अवरह कर एक्कु जि पत्तिउ ।  
मायर चउ जुयलिहि अउत्त ।  
सग्गह सायर बावीस जाम ।  
वत्तीस गावाह अणु दिसाहं ।  
सकहियइ गिरवम सुहवराह<sup>2</sup> ।  
सो हम्मि सग्गि रइ रस धराह ।  
ठिय सत्तबीस सहसारि जाम ।  
जहि अण्णुइ पचावण्ण सिद्धि ।  
उवरिम सग्गेहि गिण्य देव गिति ।  
उवरि दुहु सिद्धउ फरस बार ।  
सहो उवरिम चउ सुरवम्माह ।  
सेसह राहु कुबि सुक्ख गुरुक्कह ।

धत्ता—अ सुहु अहमिदह, सुहमण रु दह, पविचारेण विवज्जियउ ।  
तं राहु सुराणाहह, तियगण राहाह, असु वि पुण्ण समज्जियउ ॥18॥

1. क समयहं

2. = निर्मलसुत्तधरे

3. = सोचमदेवी, आयुषत्व 5/7/9/11/13/14/17/19/21/23 25/  
27/34/41/48/55 अण्णुते ।

4. क. सग्गहं

( 19 )

सखाविणु दीव समुद्रं हृति,  
 जलरुक्मि किलदीपं तित्थु,  
 सुद सणु तमु मज्झिमु भाइ,  
 सुदु<sup>२</sup> दक्षिण सठिउ भरह खितु,  
 जोयण सय पचहि भरह माणु,  
 भरहहु हिमगिरि वित्थर विउणउ  
 हेमवतु तहु विउणउ वित्थरि,  
 मह हिमवतु तहो<sup>३</sup> विउणउ गिरिवरु,  
 एणवदु महीरहु तहु विउणउ<sup>४</sup> ठिउ,  
 एणु वि हुउ तह एणवबहो समानु,  
 रुक्मि वि गिरिमह हिमवणु बिसालु,  
 सिरवरि वि हिमसेतहो मणु सरेइ,

ते विउणर बलएण<sup>१</sup> भति ।  
 जोयण लक्षिकिक वित्थर जित्तु ।  
 दिवसरण कणय मउ बभु एणइ ।  
 एणवउ उत्तर ठाण पत्तु ।  
 तहं ज्जहीसहिं ज्ज कलाह ठाणु ।  
 जोयण सय तु गत्त पहाणउ ।  
 जत्थि वित्तु<sup>५</sup> विउणयरि<sup>६</sup> सपरि ।  
 हरि जित्तु वि तहो विउ एणय वित्थरु ।  
 तह विउणउ रुम्मउ विवेहु परिट्ठिउ ।  
 रुक्कु वि<sup>७</sup> सुजित्तु ठिउ हरि पमाणु ।  
 हेरणु<sup>८</sup> हेमवतु वि रमालु ।  
 एणवउ भरहो कमु सरेइ ।

वृत्ता—खित्त बउगुणु, खित्तु तह सेलाह वि सेलु ठिउ ।

वीहत्तणु सम्बह दो जलरासिहि सीम किउ ॥१९॥

( 20 )

हिमगिरि मज्झइ पोमु महा दहु<sup>१</sup>,  
 जोयण सहसु एक्कु वीहत्तणि,  
 जोयणु पोमु कोसु तह कण्णिय,  
 महपोमहो तं विउ एउ सव्वु वि,  
 उत्तर पोम वि इय कमि हवति,  
 पहिलउ पव्वउ हुइ हेमवणु,

जोयण सय पंच जि वित्थरु तहो ।  
 दह जोयणि संठिउ उट्टतणि ।  
 तहि सिरिदेवि पल्ल ठिदि बण्णिय ।  
 तिग्गि छिहि महु<sup>२</sup> पुज्जइ पुत्तु वि ।  
 हरि विदि छाइय देविण वलति ।  
 वीयउ चट्ठजलु सहर वणु ।

१ ग बलएव, क. बलयेण

३. ख. जेतु,

३. ग तहा,

७. ग रुम्मउ,

९. क. महवेहु

२. क तहो

४. ख. पयडिय सिरि,

६. क. विणउ,

८. ग हेरणु,

१०. = महापद्मात्, द्विगुणविस्तारादिति ।

तद्वयं पुणु पदमहुं अणुहरेइ,  
पचमु चवलउ पीलउ छट्टउ,  
गमा सिधु राइहि ज परियह,  
पुव्वविदेहि सोलह सेतइ<sup>१</sup>,  
खित्ति खित्ति<sup>२</sup> वेयदु पहाणउं,  
घादिगि<sup>३</sup> खडिबि दो मेरु हुति,  
मेरु मेरु खित्तइं पडिवड्डइइ,

सुरियउ वेरुसिउउ विण्णुरेइ ।  
कुल पण्हं बण्णु इहु सिद्धउ ।  
विउणु<sup>१</sup> विउणु त खइयह वित्तवर ।  
तित्तिम<sup>२</sup> अवर विदेहि खिल्लइ ।  
सव्वह सेतह अरहु पमाणउ ।  
पुक्कर अडिबि तहं दोहवति ।  
अउतीसइं सत्तासु समिद्धइं ।

अत्ता—जे पच वि मंदर, सुरमण सुंदर, तहं बहु सुक्ख समिद्धिय ।

अहं अहं इकिक्किहु, महिमगुरुक्कहु, भोयह भूमि सुसिद्धिय ॥२०॥

( 21 )

तहं छण्णवइ कुभोय महीयल,  
कुलगिरि महणइ जलसिहि पवेसि,  
तहिं सककुलिकण्ण सूपकण्ण,  
सूरर मुह हरि मुह पक्खि मुह,  
हुहु भोयभूमि जलइय हवति,  
जे पुणु तीस सुभोय महीयल,  
सा हवि उत्तिम भण्णिम अहण्ण,  
बहु मूसण भूसिय सिरिरवण्ण,  
इह<sup>१</sup> पयार तहिं कप्प महीण्ह,  
इक्कु दुण्णि तिय पल्लहि जीवहि,  
जे पुणु पण इह<sup>२</sup> कम्मवरायल,  
जे बम्मा बम्मह राहु मुण्णति,

लबल्लकाण जलसिहि उरि पवि उल ।  
ठिब भोय वरायल बीबि वेसि ।  
अइलविय कण्ण पिट्ठल कण्ण ।  
सेरह मुह बोमुह बण्णमुह ।  
पल्लोवम जीवित्त भवण हुंति ।  
कुलपण्णव अतरि ते अविचल ।  
तहि रत्त चवल कण्णमाह वण्ण ।  
उपज्जहि माणुस पुण्ण पुण्ण ।  
दिति भोय ते अण्णहि बहि अहि<sup>३</sup> ।  
पण्णा कण्णवास सिरि सेवहि ।  
अज्ज मिण्णलोयहि ते सकुल ।  
ते बहु अण्ण मिण्णह<sup>४</sup> हवति ।

१. क विणुउ विणुउ,
३. ख. ब. तेषिय,
५. ख. पावइ,
७. ख. दस
८. ख. मिण्णइ

२. ख. ब. सेइं,
४. ख. ब. सेत्ति सेत्ति,
६. क. अहं अहं

अज्ज लोय दो भेयहि पउत्त,  
ते सट्ठि सजाया पमुह लोय,  
पच सयइ अहियइ तु गत्ते<sup>1</sup>,  
एणिकट्ठेण कुहत्थ पउत्ता,

इट्ठिवि वज्जिय इट्ठिमहि जुत्त ।  
ते इट्ठिवत्त पयडिअ असोय ।  
अणु हइ ते हवति एणिय गत्ते ।  
हत्थु एक्कु कालेण एणत्ता ।

अत्ता—तहि जीविउ उत्तउ, एहु एणत्तउ, पुब्बकोडि उक्किट्ठउ ।

अह शिय एणिय काले, परिणय<sup>1</sup> साले अजर अवत्त एणक्कट्ठउ ॥2॥

( 22 )

वाहत्तरि वरिसइ जिण जयति,  
सहसा हिउ जीवइ सार हत्थु,  
इहु एह्य जीविउ एणिकट्ठउ,  
पढम यालि<sup>5</sup> तिय दिअहि भोयणु,  
तइयइ दिवसत्तरि होइ मुत्ति,  
पचमइ<sup>9</sup> दिवसिके<sup>10</sup> बुष्णिअवार,  
पचम कालि अत्त विवसुत्तइ,  
वीइ<sup>12</sup> पहरि एणवइ तहि एणसइ,  
तहि माणुस एणद्धम्म एणणम्म,  
छट्ठउ कालहु अत्तिसु सिट्ठी,  
सत्त सत्त विस खारह वरिसणु,  
इय अवसप्पिणि कालुपयट्ठइ,

अहमेण हरिवि सहसिककु ठत्ति ।  
सय सत्तइ चक्काउहु<sup>3</sup> कयत्थु ।  
अउरासी लक्ख पुब्ब<sup>4</sup> उक्किट्ठउ ।  
वीयइ दो दिणेहि<sup>6</sup> छुह मोहणु ।  
तुरियए<sup>7</sup> पडि दिणु भोयणहु जुत्ति<sup>8</sup> ।  
छट्ठइ भोयणु हइ बहुअवार<sup>11</sup> ।  
अम्मणासु हइ पहरि पहिल्लइ ।  
एणवइ एणसे जलणु पणासइ ।  
विलवासिय मच्छा<sup>13</sup> मिस लग्ग ।  
सत्त दिणाइ सीय अर विट्ठी ।  
सत्त सत्त रय अग्गिय वरिसणु ।  
पच्छइ उवसप्पिणि विपलुट्ठइ ।

1 क तु यम्मे

3 ख चक्को

5 ख ०कानि

7 ख तुरियए

9 ख पचमिति

11 क बहु अवार, ख बहुअवार

12 ग बीए

13. ख मच्छ

2 ख परिणइ

4 ख पुब्बह

6 क दो दिणेहि

8. क युत्ति

10 क दिवसके



घत्ता—इय किउ तस वण्णणु, भेवणि वण्णणु, सखेवेण रिणुत्तउ ।

धावरह समज्जमि<sup>1</sup>, वित्थर वज्जमि, वण्णणु ज जिण<sup>2</sup> उत्तउ ॥22॥

( 23 )

ते धावर पच पयार हु ति,  
भूकाय मसूराबार बिट्ठ,  
भणि कणाय तार त बाइ भाउ,  
खर मउ पुढवी जा पचवण्ण<sup>3</sup>,  
वारह बावीस सहास बरिस,  
जलकाय वि कुस<sup>4</sup> धायार हुति,  
सरि सरि हिम ऊसा पमुह एरीर,  
ते सयल वि जल काइय मयाइ,  
तहि धाउ वरिस सहसाइ सति,  
सूई<sup>5</sup> सचय सम धग्गिकाम,  
कुलिसाणल<sup>6</sup> विज्जुल सूरकति,  
अगार पमुह जे धग्गिभेय,  
पसरिव धयवउ<sup>7</sup> रिणु वाय वेहु,  
उक्कलिगुजा मडल वाइय,

घर जल ते आग्हिस<sup>8</sup> बखुइ मलि ।  
ते सुर एर खारख सुबणि सिट्ठ ।  
बहु दीव समुई<sup>9</sup> अट्टिभेउ<sup>4</sup> ।  
ते पुढवि काय सयल वि पवण्ण ।  
धाउसु मिउलरह बिबिगय हरिस<sup>10</sup> ।  
ते सयलह जल ठाण हवति ।  
जे फिर असख जलणिहि गहीर ।  
जिणवर केवलणारो कयाइ<sup>8</sup> ।  
केवलणारिणय जिणवर कहति<sup>9</sup> ।  
बहु भेय जलण बिप्पुरिय छाय ।  
रविकति कुलिगम<sup>11</sup> जालपति ।  
ते धग्गिकाय बिप्पुरिय तेय ।  
रिणय वाय बलय सठविय गेहु ।  
अवरस सद्य किय पडिघाइय ।

1. ल पर्वचमि

2 ल. जो जिण एाहें

3 ग धाणिण

4 = पृष्ठीभेद

5 = कृष्ण-पीत-हरित-श्वेत-रक्त

6 क ग. घ. पुत्तकेसुदास्ति पंक्तिरीयम्

7 = दमभिजलाकार

8 = कवितानि

9 क. घ. पुच्छकयो नास्ति पक्तिरियम्

10 = सूक्ष्मप्राकार

11. = वज्राग्नि, विद्युत्तग्नि, सूर्यकांतमणि

12. = सूर्यकांतकुलिगपंक्ति

13. = पवनप्रेरिता ध्वजाकारा

दिसि भेए माख्य बहु हवति,  
 चउ भेय वणप्फय<sup>१</sup> काय हु ति;  
 दस सहस वरिस भ्राउसु कहति;  
 इय जिण उत्तउ गणहर कहति,  
 सव्वह अतरह मुहुत्तु भ्राउ,  
 बारह सहसहि खर पुढिबि भ्राउ,  
 सतह सहसहि जलकाइ मरहि,

ते वाय काय जिसवर अणति ।  
 पच्चगाहि तर<sup>२</sup> जाई हवति ।  
 उच्छेहु सहस जोयण नमंति<sup>३</sup> ।  
 -----  
 अणुलह असलह जाउ काउ ।<sup>४</sup>  
 बावीस सहस मिउ पुढबि काउ<sup>५</sup> ।  
 दस सहस वण्णफइ जीउघरहि<sup>६</sup> ॥

अन्ता—जलणह पउत्तउ, एहु गिरुत्तउ, चउवीसहि पहरेंहि ठिय ।

माख्य सुपयासह वरिस सहासह, सव्वउ तिण्णि परिट्ठिय ॥२३॥

( 24 )

जीउ दब्बु सवेबें उत्तउ,  
 होई अजीउ जि पच पयारउ,  
 बम्मु धहम्मु कालु भ्राहासु वि,  
 बम्मु धमुत्तु अल्लहु पयासिउ,  
 पयह ठिवि कारण हुइ अहम्मु,  
 पुगल परिणामहो ज एमिउ.  
 सो बवहारें हुइ तिण्णि भेउ,  
 जं गयणहो एक्किक्कइ पएसि,  
 तेरय एरासि सण्णिह हवति,

पहु अजीउ भएइ गिरुत्तउ ।  
 गिय गिय गुण पज्जयह<sup>१</sup> सारउ ।  
 पक्कमु पुगलु पयह पयासु वि  
 पुगल जीवह गमणें भासिउ ।  
 सो विहु बम्मुहो<sup>२</sup> गिरु सरिसु बम्मु ।  
 त काल दब्बु भण्णइ गिरुत्तु ।  
 परमत्वे गिच्चलु गिरु अमेउ ।  
 कालाणुरहिय तिहुयणहु देसि ।  
 यिरगिच्चकाल सम्भा लहति ।

1. क. वणप्फइ

2. = वृक्ष-विटपि-मुल्ल-वल्ली-तृण

3. क. ग. पुस्तकयो नास्ति पक्तिरियम्

4. क. ग. पुस्तकयो नास्ति पक्तिरियम् ।

5. क. ख. पुस्तकयो न स्त. ।

6. ग. पज्जाय

7. = यथा धर्मः तथा धर्म असह्य प्रदेशः

अम्माअम्माहो जीवहु पएउ,  
 आयास पएसाखंत इति,  
 पुग्गलु जियेहिं अम्मेयं चिट्ठं,  
 महियलु तमु गच्छ कम्माणु जाइ,  
 भइ भूलु भूलु महियलु पणुदिठ्ठं,  
 भूलु सुहमु तमु जुण्हा<sup>१</sup> भासइ,  
 सुहमु कम्मु भइ सुहमा सिट्ठउ<sup>२</sup>,

संजातीय एयह असेस ।  
 ते अम्भिकाय सिक्कासं संति ।  
 रस वच्च वञ्जरव कास सिट्ठं ।  
 अणुयणु<sup>३</sup> चउ इ विय विसउ जाइ ।  
 भूलु जि विसणुणहं सज्जितु दिट्ठं ।  
 सुहमु भूलु गच्छाअय सीसइ ।  
 पुण्यलु इम मेण्हि परिट्ठिउ ।

अन्ता—सो समयलु जि पुग्गलु, एय गुरु सिक्कलु, कहु अउ देलु जिट्ठिउ ।  
 तहो अउ पएसउ, सिक्कलव<sup>४</sup> सेसउ, अणुय विभाउ परिट्ठिउ ॥२४॥

( 25 )

कम्मह पबेसु<sup>५</sup> भासउ कहति,  
 चउ भेउ वच्च भासइ जियेसु,  
 भासव एणोहु सबर पउत्तु,  
 मुक्ख जि अण्णहो ज समयल मुक्खु,  
 पडिवाहइ तिहु अणु अण्व सणु,  
 तहो गणहुर तिरावइ सजाया,  
 पुण्वधरह दोसहसइ<sup>६</sup> दिट्ठा,  
 अवहिणाय वर अट्ठ हहासइ,  
 विनिकरिया हट्ठिय तहि वक्का,  
 अट्ठसहस मणपण्वय एणहं,

त पुणु दो भेयहिं वञ्जरति ।  
 पडिट्ठिदि अणुभाइय पएसु ।  
 एण्वर वचहु ज हवण सत्तु ।  
 इय तण्वइ भासइ एणव चक्खु ।  
 सिण्णसासइ तम अरु अणु कुल्लु ।  
 तिहु अणु अणु संदेह सिण्णया ।  
 विउसय दो वक्काइ<sup>७</sup> जुणि सिट्ठा ।  
 इह सहसइ<sup>८</sup> केवसि सुहु<sup>९</sup> भासइ ।  
 सहसि जि चउवह दोस विमुक्का ।  
 सुहमु वराचर तण्व सुजाणह ।

१. =नेत्ररहित चतुरिन्ध्रिय-विषय

३. अ. सिट्ठिउ

५. अ. पएसु

७. अ. तहि

२. क. जुण्हा

४. क. तव

६. अ. कुहु

भट्ट सहासय दोसय ऊणा,  
असिय सहस लक्खाहिय अज्जय,  
तहि एणिय साविय जण पचलक्ख,

तहि वाइय जिण वयण पवीणा ।  
तिणिण लक्ख सावयह समज्जिब ।  
चउमेय देवतहि ठिय असल ।

धत्ता—इय सघे जुत्तउ, कलिमल चत्तउ, तिहुयण कमल दिणोसर ।

महि मङ्गलु बिहरइ, तबभरु पहरइ, केवल किरणु जिणोसर ॥25॥

( 26 )

आसिके जाणिवि घाउ छेउ,  
बम्मोवदेसु अणु समवसरणु,  
दढ कवाड पयर जय पूरणु,  
आउ कम्म सम कम्मइ कीरइ,  
जे दहरज्जु<sup>१</sup> सारिच्छ कम्म,  
भइवयहो सत्तमि सुक्ख पक्खि,  
दह पुब्बलक्ख जीवियहु एासि,  
एाण भट्टकम्म सजोय मुक्कु,  
ज दिट्ठउ वेहहु इह पमणु,

समेदसेलि सपत्तु देउ ।  
मिल्लिवि पारंभिउ भाण करणु ।  
तहि जिणु कुणइ<sup>१</sup> कम्म भउ<sup>२</sup> सूइणु ।  
सुहम किरिय भाणम्मि सुधीरइ ।  
ते चारि वि एिहाएि वि भवल बम्म ।  
पडिमाजोए ठिउ परम सुक्खि ।  
सुरियहु सुक्कहु भाणहो पयासि ।  
सच्चेमणु गयगुव तित्थु चक्कु ।  
किंनू णु तित्थ ठिउ तासु माणु ।

धत्ता—तिहु अणसिरि सठिउ, मुक्खु परिट्ठिउ, तेअय एाहु परमेसर ।

ज मुह सोमाणइ त परियाणइ, सुज्जि देउ सूरकेसरि ॥26॥

( 27 )

इक्कि समइ सयलु वि सो जाणइ,  
पयणे विणु<sup>१</sup> सो रुबे पिच्छइ,

एत दब्ब पज्जाय पमाणइ ।  
सवग्गे विणु सदइइ शिय सुम्मइ ।

1 ख करइ

2. ख भर

3 = दग्धरज्जु

3 ख रुवइ

4 =वलरहित अवकर्म

5. =नेत्र दिना समस्त पदार्थान् अवलोकते

6 रुवइ

रसणें विणु सो रसु परियाणइ ,  
 घाणें विणु गघइ अणु हुजइ,  
 भुक्ख तिण्ह<sup>१</sup> एहिंवि सुवनासिय,  
 पुव्वभाव सयसेहि पमुक्खउ,  
 एणु वेहु एणु जि ठिउ चेयणु,  
 एणु सयणु एणु जि तहो कीलणु,  
 एणु सहाउ एणु तहो<sup>२</sup> अण्णउ,  
 एणोक्कणु तासु सुक्कुडु जाइउ,

फासें विणु फासइ<sup>३</sup> सजाणइ ।  
 चिन्तें विणु परसुहु बडु सजइ ।  
 रइ अरई वूरेस परासिअ ।  
 वसण एाण सहावें वक्खइ ।  
 एणु खेउ<sup>४</sup> एणु जि तहो भोयणु ।  
 एणु सुइ, तहो एयणउ मीलणु ।  
 एणु एणु एणु जि सवियप्पउ ।  
 एिय दव्वत्थ सहानें जामउ ॥

धत्ता—जो वण्णइ तासु, माणि उहयासु, फुहु सख्ख सम्भावें ।

सो सच्चउ बूडउ मोहै, बूडउ हास ठाणु ससह्वावें ॥२७॥

(28)

ता हरिस सोय सभार भुत्त,  
 एह रोभइ एाहंहुं अरणिपत्त,  
 भेलिवि<sup>५</sup> कालायर चंदणाइ,  
 ता जलण कुमारा तहिं एमति,  
 जालावलि जलियउ तहिं किसानु,  
 सुरणच्चहि गायहिं सोयभिण्ण,  
 चउविह सध जि तहिं समिसति,  
 सुरपभणहिं सामिय तिजयणाहु,  
 जय जय परमेसर सुक्खघामु,  
 जय जय पाविय सिअ मुह् एिहाअ,

तह<sup>६</sup> सुरणिकाय परिवार जुत्त ।  
 एिक्खि वि विमिय रसभावत्त ।  
 घणसार पमुहुं दव्वइ अणाइ ।  
 मउडयि बुरकंतइ जलति ।  
 सोरहि<sup>६</sup> महमहिउ एह वियाणु ।  
 बहुअट्टमेय अण्ण पवण ।  
 जिण एिअणाह<sup>७</sup> किरिया कुणति ।  
 वइ विणु लीव विहू मउ अणाहु ।  
 जय अमय हुंहुं सारित्थ एाम ।  
 जय जय परमेसर अकल एाअ ।

1. ग तण्ह,
3. ख. तहिं,
- 5 क. मलिवि,
7. ख.० एहिं,

2. क. खेऊ,
4. ख. बहो,
6. = सुइतिक्खी,

जय वर मुक्क संसार बंध,  
जय जय पर भगल भगलाहूँ,

घत्ता—इय सयल वि सुरवर, जिण समुद्र वर, नतिनेष भरसत्ता ।  
पक्कम कत्थाएहो, सुक्क<sup>१</sup> सिहाएहो, करिवि ठाए संपत्ता ॥२८॥

( 29 )

ज सुद्धं असुद्धं गय चारु,  
ज जिणबाली समउ सव्वु,  
जे परमेसर जाएहि अपार,  
मुणि जणु पडिय मेल्लि वि कसाउ,  
गुज्जरदेसह उम्मत्त गामु,  
सिद्धउ तहो एदणु मव्ववंधु,  
तह<sup>१</sup> सुप्प जिट्ठउ बहु<sup>२</sup> देवभव्वु,  
तह लह जाउ सिरि कुमारसिह,  
तहो सुउ संजायउ सिद्धपालु<sup>३</sup>,  
तहो उप्परोहि<sup>४</sup> इह कियउ वंधु,

जं सार<sup>५</sup> असारउ बहु<sup>६</sup> पयार ।  
महु कवि गहि लहो बिलसिउ भगव्वु ।  
ते सोहि वि सोहि वि कुलहु<sup>७</sup> सार ।  
सोहसु मुणिवि इह मुह<sup>८</sup> पसाउ ।  
तहि छड्डा सुउ हुउ दोण गामु ।  
जिणवम्म भारि ज दिणु लघु ।  
जि वम्म कज्जि विक्कलित उव्वु ।  
कलिकाल करिदहो हणए सीह ।  
जिणपुज्जवाए गुण गुण रमालु ।  
हउ गामु गामु गामि कि पि वि सत्थुगथु ।

घत्ता—जा चंदविवायर, सव्ववि सायर, जा कुलपव्वय भूबलउ ।

ता एहु पयट्टउ डियइ चहुट्टउ, सरसइ वेविहि मुहि तिलउ ॥२९॥

इय सिरिचदप्पहवरिए महाकइ जसकित्तिविरइए

महाभव्व सिद्धपाल सबणभूसणे चदप्पह

सामि एण्व्वाणो गाम एवारहमो संवी

परिच्छेउ सम्मतो ॥ इति चदप्रभ चरित्र समाप्त ।

ग्रन्थ सख्या 300

श्लोक सख्या-2406<sup>11</sup>

1 ल. कयाह,

2 ल. सोक्क,

4 क बहु,

6 ल. महु.

7. = दोणस्य,

9 = श्री कुमारस्य सिद्धपालपुत्रः

11 य श्लोक सख्या-2306

3 ल. सार,

5 ल. कुणहो,

8. = पुत्र

10. य. उवरोहं,

# प्रथम संधि

## संक्षिप्त भावानुवाच

( 1 )

विमल केवल ज्ञान को प्राप्त करने वाले, लोकालोक को जानने वाले चन्द्रप्रभ तीर्थंकर को प्रणामकर तथा त्रिकालवर्ती पंच परमेष्ठियों की वदनाकर मन-वचन-काय से शुद्ध होकर मैं चन्द्रप्रभ स्वामी के चरित्र का आख्यान करूँगा । जिन कपी गिरिशुहा से निर्गत, शिवपथ की ओर जाने वाली, शाश्वत सुख की कारणभूत सभी द्वारा प्रशंसित, गणेश्वर द्वारा वसित और त्रिभुवनवर्ती लोगों के मन को हरने वाली सरस्वती मुझ पर प्रसन्न होवे ।

हुबड़ कुलभूषण कुमारसिंह के पुत्र सिद्धपाल जो, निर्मल गुणों से युक्त है, के अनुरोध पर यश कीर्ति विद्वान ने प्राकृत (अपभ्रंश) भाषा में इस ग्रन्थ की रचना की । जिन वचनामृत को फलाने वाले केवलज्ञानी गणेश्वरों ने तथा कुन्दकुन्द जैसे महान् आचार्यों ने जिनकी वन्दना की है उनके चरित्र का वर्णन दूसरा कौन कर सकता है ? एक लगड़ा व्यक्ति क्या चाद को पकड़ सकता है ? फिर भी चूँकि बड़े-बड़े आचार्यों ने वाणी-बिलास किया ही है, इस लिए मैं भी प्रयास कर रहा हूँ ।

पूरणिमा के चन्द्र के समान अत्यन्त निर्मल चरित्र वाले समन्तभद्र मुनि को प्रणाम करता हूँ जिनके प्रणाम से क्रोधाविष्ट शिवकोटि की शिव-पिण्डि फूटकर उसमें से तीर्थंकर चन्द्रप्रभ की मनोज्ञ प्रतिमा प्रकट हुई । इसी तरह अकलंकदेव की भी वदना करता हूँ जिन्होंने तारा देवी का मानमर्दनकर बौद्धों को शास्त्रार्थ में पराजित किया था । श्री देवनन्द मुनि, जिनसेन, सिद्धसेन आदि जैसे आचार्यों को भी प्रणाम करता हूँ जिन्होंने परवादियों के दर्प का भजन किया है ॥ 1 ॥

(2-3)

ससार-समुद्र से पार होने के लिए धर्मध्यान किया जाता है । सज्जन दूसरों के सदगुणों की प्रशंसा करते हैं और उनके ग्रहण करने का उपदेश या आग्रह भी करते हैं । पर दुर्जन दूसरों के दोषों का ही आख्यान करता है । ठीक भी है ।

चन्द्र भी राहू के द्वारा निगल लिया जाता है। इसी तरह दूसरी ओर चन्दन अपनी सुगंध से दूसरों को सुवासित कर देता है। दुर्जन निष्कारण शत्रु और निंदक बन जाता है पर सज्जन मित्र और गुणप्रशंसक तथा गुणग्राही रहता है ॥2-3॥

#### (4-5)

यहाँ जम्बूद्वीप में दो सूर्य और दो चन्द्रमा हैं। उसके बीच विशाल भुमेरु पर्वत है जो सुगन्धित पुष्प और वृक्षों से सुशोभित है। उसका ऊपरी भाग सुनहरे रंग का है। उसके पूर्व में पूर्वविदेह है जहाँ शुक्ल ध्यानी तपस्वी सम्यक् तप और आचरण में लीन रहते हुए रत्नत्रय का पालन करते हैं। वहाँ बगलाबत्ती नाम का एक देश है जो दिव्य वेश से स्वर्ग के समान शोभित हो रहा है। सरोवरों के भ्रमृत कुण्ड मनभावन हैं। कल्पद्रुम वृक्ष पशुओं को फल प्रदान करते हैं, धान्य की खेती अधिक मात्रा में होती है, सरोवरों में हंस पक्षियाँ ऐसी चलती हैं कि पनिहारनों की मन्त्र गति को भी मात कर देती हैं और कृषक अपने खेतों के काम में व्यस्त हैं। ॥4-5॥

#### ( 6 )

जहाँ धान्य की खेती अधिक होती है, गृहपति लक्ष्मीसंपन्न हैं, सिंह और महिषी एक साथ पानी पीते हैं, गावों के बाहर खलिहानों में धान्य राशियाँ इतनी ऊँची लगी हुई हैं कि लगता है, उनकी ओर देखने के बहाने कुलाचल ही चले आये हों। चन्द्रकाल मणिमय भवनो से रात्रिकाल में चन्द्रमा का स्पर्श पाते ही जल का प्रवाह बढ जाता है। फलतः भीष्मकाल में भी नदियों का प्रवाह अपने दोनों किनारों से टकराते हुए बहता है। वहाँ रत्नसन्ध्या नामका एक नगर है। उस नगर के बाजारों में मणियों के ढेर लगे रहते हैं इसलिए वह नगर सार्धक नाम वाला है ॥6॥

#### ( 7 )

जहाँ गगन के समान ऊँचे धान्य के ढेर लगे हुए हैं जिनके ऊपर सूर्य का रथ दौड लगाता है। जहाँ के भवनो की छतों पर बैठी स्त्रियों के मुल चन्द्र को देखकर राहु ग्रहने का प्रयत्न करता है पर प्रतिचन्द्र होने के कारण उस नहीं पाता। जहाँ के प्रामादों में अक्रिन् चित्रकला इतनी सजीव है कि नववधु पर-पुरुषों की उपस्थिति के भ्रम से अपने पति के साथ गाढ आलिंगन नहीं कर पाती तथा सौतो के उपस्थिति की भ्रम से मुग्धा संयोग के समय अपने नेत्र बंद कर लेती है। जहाँ प्रफुल्लित भरविन्द पत्ति से आकाशमग्न में सुरभित वायु संचरित होती है ॥ 7 ॥

#### ( 8 )

जहाँ कालाग्रह का धुआँ गगन में अधकार व्याप्त कर देता है। लगता है, सूर्य उसी के ऊपर चल रहा हो। जहाँ की तरुणियों के कपोल तल इतने निर्मल हैं



कि उनमें चन्द्रमा का प्रतिबिम्ब झलकने लगता है। उनके कपोल मण्डल वाले मुखकमल तथा चन्द्रमण्डल के बीच चन्द्र की पहचान केवल उसकी कलक रेखा से हो पाती है। जहाँ के सज्जनों का दान देने का भाव अपूर्ण है। जहाँ के महलों पर स्वच्छ वस्त्र सूर्य के टुकड़ों के समान लटक रहे हैं ॥ 8 ॥

(9-10)

उस रत्नसञ्चयपुर नगर का राजा कनकप्रभ था जिसे देखकर सुरपति भी ईर्ष्यालु हो जाता था। उसकी कीर्ति चतुर्दिक् फैली हुई थी। ऐसा जगता था जैसे ससार में घूमते-घूमते कीर्ति बूझा जैसी थक गई हो और इस राजा के घर में स्थिर हो गई हो। जिसमें तेज समुद्र के जल के समान स्थिर हो गया था। सूर्य भी जिसके तेज से कप गया था। उसका रूप काम देव से भी अधिक सुन्दर था। उसके नयनोत्पल में शोभा का निवास था। उसके वनुष के सामने कोई टिक नहीं सकता था। बहुत गुणवान था। उसके मुख में मानो सरस्वती का वास था। तीनो लोकों में उसका प्रतिद्वन्दी कोई दिखता नहीं था। उस कनकप्रभ राजा की कनकमाला नाम की महाराज्ञी थी जो पूर्ण लावण्यवती, गुणवती और शीलवती थी। हर भग-प्रत्यय भग्न का रूप लिये हुए थे। वदन और नयन क्रमशः चन्द्र और सारंग जैसे थे ॥ 9-10 ॥

( 11 )

कनकप्रभ और कनकमाला दोनों का हृदय परस्पर प्रेम से भरा हुआ था। पंचेन्द्रिय सुखों का उपभोग कर रहे थे। सासारिक सुखों में डूबे हुए अपना समय यापन कर रहे थे। एक दिन कनकमाला में गर्म के लक्षण दिखाई दिये। उसका शरीर झालस्य से भरा था, पीलापन लिए हुए था, चूचुको में कालापन छा गया था। दोहद पूर्ण होते हुए उसके नव मास पूरे हो गये और उसने पुत्र को जन्म दिया। पुत्र का सारा शरीर लक्षणों और अनुव्यञ्जनों से स्फुटित था। धर्म, धर्म्य और काम का घर था, कुल का सूरज था। उस पुत्र का नाम रखा गया पद्मनाभ। पद्मनाभ चन्द्र के समान बढ़ने लगा। कालक्रम से तरुण हुआ। तरुणावस्था में उसके रूप ने रूपगर्विले लोगों को हतप्रभ कर दिया था। वह अत्यन्त गुणवान था ॥ 11 ॥

( 12 )

एक दिन राजा कनकप्रभ अपने प्रासाद पर बैठे-बैठे राजधानी की शोभा देख रहे थे। इसी बीच उसकी दृष्टि एक ऐसे छोटे सरोवर पर पड़ी जहाँ से पानी पीकर बैलों का एक झुण्ड वापिस आ रहा था। समीप में ही दुर्दम कीचड़ में क्षीण काय वाला एक बैल फस गया। उसमें से बह निकल नहीं सका और उसका वही प्राणान्त

हो गया। उसे भरते हुए देख कर राजा को वैराग्य हो गया और वह सोचने लगा कि ससारियों की यह बुद्धि क्या है। वे लोग वस्तु हैं जो मोक्ष को प्राप्त कर चुके हैं। यह ससारी जीव विषय भोगों से कभी तृप्त नहीं हुआ। अपने कर्मों से बंधा हुआ है ॥12॥

( 13 )

ससार में सुख कहीं नहीं है। यह जीव देव, मनुष्य, तिर्यच और नरक गतियों में घूमता रहता है। अणु भर में यह आसक्त होता है, अणु भर में विरक्त होता है। कभी स्वर्ग और कभी असुरकीड़ा करता है, कभी बनवान् होता है, कभी दरिद्र होता है, कभी रूपवान् होता है, कभी कुरूप होता है, कभी दयं करता है, कभी दीन बनता है, कभी वीर होता है कभी भीरु होता है, कभी दानी होता है कभी भिलागी बनता है, कभी सुखी और कभी दुःखी होता है, कभी यश पता है, कभी अपयश हाथ आता है, कभी मधुरभाषी होता है, कभी कटु बोलता है, कभी इष्ट सयोग होता है, कभी इष्ट वियोग होता है, कभी जीतता है कभी पराजित होता है। इस तरह ससार में प्राणी के लिए एक जैसी स्थिति कभी नहीं मिलती। उसे इष्ट-अनिष्ट की व्यवस्थाओं में सदैव घूमना पड़ता है ॥13॥

( 14 )

ससारी प्राणी दुःखों से मुक्त होने और सुख पाने के लिए सचेष्ट रहता है। पर उसे अन्ततः दुःख ही मिलता है उसी तरह जिस तरह खाज का रोगी अणु भर के सुख के लिए भाग तापता है पर बाद में उसे दारुण दुःख भोगना पड़ता है। ज्ञान के स्वभाव का न जानता हुआ धर्मवक्षुओं के आस्थादन का मोहवश मान लेता है। जो वर्जनीय होता है उसे करणीय मानता है और जो करणीय होता है उसे छोड़ देता है। वह वस्तुतः शक्कर की आभा में बालु-मिट्टी इकट्ठा करता है। धीरे-धीरे उसकी आधुन्य होती जाती है और वह मरणोन्मुख हो जाता है। मर जाने पर लोग शोक मनाते हैं, रोते हैं और श्मशानघाट पहुँचा देते हैं। वे दुःख भोगने में सहभागी नहीं होते। सब तो यह है कि सुख धर्म के बिना नहीं मिलता। मोहासक्त व्यक्ति इस तथ्य को नहीं समझ पाता और वह पाप कार्य करता रहता है। फलतः नये नये जन्मों को कारण करता रहता है। इसलिए इस अवचक्र को समाप्त करने के लिए जिन वचनों पर श्रद्धा करनी चाहिए और दयावत् होकर सम्यक् चरित्र का पालन करना चाहिए ॥14॥

( 15 )

यह विचारकर राजाने पद्मनाभ पुत्र को राज्य भार सौंपने का निश्चय किया और उसे बुलाया। सामन्तों और मंत्रियों को भी बुलाकर अपना मन्तव्य

व्यक्त किया नगर सजाया गया, मणि तोरण लगाये गये। यह सब देखकर पद्मनाभ के भासो से आसू बहने लगे। राजा ने स्वयं उन अनुभूतों को अपने हाथ से पोछा और ससार की स्थिति समझाई। एक मन्त्री ने कहा—हे स्वामी ! मेरी बातों पर भी विचार कीजिए। जीव देह से पृथक् नहीं है। जीव और देह में कोई भेद भी नहीं है। राजा ने यह सुनकर कहा कि देह और जीव दोनों पृथक् पृथक् हैं। जीव जानवान है। जीव का अस्तित्व हमारे सुख दुःख के वेदन से होता है। तप का आचरण और व्रत-धारण ससार से मुक्त होने का कारण है और घर में रहना दुःख और भव-अमरण का कारण है ॥15॥

( 16 )

इस प्रकार उस मन्त्री को निरुत्तरकर राजा जयल की ओर चला गया। वहाँ चारित्र्य के आधारका धीवर नामक मुनि विराजमान थे। उनके चरण कमलों में प्रणामकर उसने जिनदीक्षा ले ली। इस नरपति पद्मनाभ पिता के जाने से शोकाकुल हो गया, पर मन्त्रियों के प्रतिबोध से वह स्वस्थ हो गया। जो जानवान होता है वह पर पदार्थों के मोह से दूर हो जाता है पर जो अज्ञानी होता है वह मोहासक्त बना रहता है जो शोक-दुःख का कारण होता है। पृथ्वीपालन क्षत्रिय धर्म है। यह सोचकर पद्मनाभ प्रजा के पालन में लग गया। आन्वीक्षिकी, वार्ता, दण्डनीति से मुक्त होकर, षट्गुणो (परिवार संरक्षण, विवेकपूर्वक कार्य संचालन, स्वरक्षण, प्रजासंरक्षण, दुष्टनिग्रह और शिष्ट-पुरस्कार) के आधार पर शासन करने लगा। प्रभुशक्ति, उत्साहशक्ति और मन्त्रशक्ति से युक्त होकर, सचि, विग्रह, यान, आसन द्वेष और सश्वय का का आधार लेकर प्रजापालन में दक्षिण हो गया। फलतः उसका कोई शत्रु नहीं रहा। स्वामी, अमात्य, जनपद, दुर्ग, कोष, दण्ड, मित्र ये राज्य के सात अंग होते हैं जिनके माध्यम से वह शासन करता रहा। शासन करते हुए भी जो उसमें आसक्त नहीं होता वह निश्चित रूप से मोह को नष्ट कर देता है ॥16॥

इस प्रकार महाकवि यशःकीर्ति द्वारा विरचित श्री चन्द्रप्रभ चरित्र में महाशब्द सिद्धपाल आचक्रवर्ण श्री पद्मनाभ राज्याभिषेक नामक प्रथम सवि समाप्त हुई।

## द्वितीय संधि

( 1 )

जिन वचन रूपी कमल की सुगंध से वासित, पूर्वों द्वारा प्राप्त, गणधरो द्वारा संग्रहीत (स्वीकृत) ग्रामम सरस्वती प्रसन्न हो । जिनभक्त और गुणारक्त राजा पद्मनाभ एक दिन राजसभा में बैठे हुए थे कि वृष्णकवण्ड लिए पिंजर जरीरवान् द्वारपाल ने द्वार पर वनपाल के आने की सूचना दी । राजा ने उसे अन्दर लाने की आज्ञा दी, उसने हाथ जोड़कर प्रणामकर कहा कि आपके सुरभित वन (उद्यान) में श्रीधर नामक मुनिराज पधारें हैं । वे अत्यन्त ज्ञानी-ध्यानी हैं । उनके दर्शन मात्र से प्रसन्नता आ जाती है । वे निर्दोष आचरण, तप और सयम के धारक हैं । उनके गुणों का वर्णन करना नेरी शक्ति के बाहर है । उनके प्रभाव से समय के बिना भी वसन्त ऋतु दिखाई देने लगी । वनपालन के इस मनोहारी सदेश को सुनकर राजा पद्मनाभ ने प्रसन्न होकर उसे अपने कीमती आभरण उतारकर दे दिये ॥ १ ॥

( 2 )

इसके बाद राजा पद्मनाभ हर्ष विभोर होकर सिंहासन से उतरा और जिस दिशा में मुनिराज विराजे थे उस दिशा में सात कदम आगे चलकर प्रणाम किया । अमनसर नगर में आनन्द भरी बजवा दी और जनता को मुनिराज के दर्शनार्थ चलने के लिए प्रेरित दिया । इस समाचार को सुनते ही सारा नगर परिकर इकट्ठा हो गया और राजा धर्माचरण पूर्वक मुनिराज की वन्दना के लिए चल पड़ा । उस समय उद्यान की शोभा ही निगली थी । बिना वसन्त ऋतु के केसर वृक्ष पुष्पित हो रहे थे मानो मुनिराज को नमस्कार कर रहे हों । स्त्रियों के पादाघात को सहे बिना अशोक वृक्ष प्रफुल्लित हो रहे थे । मौलिसिरी वृक्ष तरुणियों के भण्ड कुरलो की ध्रुवहेलना कर विकसित हो रहे थे । आम्र वृक्षों में शीघ्र ही मौसम लग गये मानो वे मुनि दर्शन के लिए सवेष्ट हो रहे हों । इस प्रकार सारा वातावरण मुनि के दर्शन के लिए रोमांचित-सा हो रहा था । राजा ने सारे रात्रकीय पवित्रेश को छोड़कर पैदल ही मुनिराज के दर्शन करने निकल पड़ा । थोड़ी दूर उमने उन्हें वृक्ष के नीचे एक निर्मल शिनाथल पर बैठे हुए देखा ॥ 2 ॥

## ( 3 )

फिर पद्मनाभ ने मुनिराज की तीन बार प्रदक्षिणा की और पंचांगो से तीन बार प्रणाम कर स्तुति की। हे मुनिवर ! आपके दर्शन से मेरा जन्म कृतार्थ हो गया। जिन वचन में आस्था और दृढ़ हो गई, मोक्ष मार्ग प्राप्त हो गया, घर भी स्वर्ग जैसा दिखने लगा, कर्म का बन्धन ढीला हो गया, ससरण नष्ट हो गया, ससारी जीवों को जैसे कल्पवृक्ष मिल गया, वे आसक्त अभ्य हो गये। और क्या कहूँ, जितने उपमान दित रहे हैं वे सब वृणवत् अभ्य हो रहे हैं। असह्य किरणों वाला सूर्य आपके तेज के सामने कुछ नहीं, कल्पवृक्ष, कामधेनु, चिन्तामणि आदि भी आपके सामने निरर्थक हो जाते हैं। आपके दर्शन से तो वस्तुतः रत्नत्रय हाथ आ गया है। तब मुनिवर श्रीचर ने पद्मनाभ को आशीर्वाद दिया और धर्मवृद्धि कही ॥ 3 ॥

## ( 4 )

इसके बाद पद्मनाभ ने श्रीचर मुनिराज से प्रार्थना की कि उसे धर्म की व्याख्या समझा दें। मुनिराज ने उसके इस निवेदन को स्वीकार किया और समयोचित आश्चर्य (सागर-धर्म) का आख्यान किया। उन्होंने कहा कि सर्वप्रथम व्यक्ति को जीव-रक्षा (अहिंसा) करनी चाहिए। यह व्रत बहु सुख का कारण है। नरक और तिर्यञ्च गति के द्वार को बन्द करने वाला है, स्वर्ग और मोक्ष के द्वार को उद्घाटित करने वाला है, सकल सुख का कारणभूत तथा मंगलकारी है। विजयदायी है, अशुभ-तिमिर को मिटाने में सूर्य है। दूसरा व्रत है सत्य बोलना। जो भी बोलो, सत्य बोलो। यह व्रत पाप की प्रकर्षता को कम करता है, साधुत्व का कारण है, विजय प्राप्ति का साधन है, सकल लब्धियों का द्वार है, जन्म-मरण की प्रक्रिया के लिए अर्गला है, सकल ज्ञान की उत्पत्ति का कारण है। तृतीय अणुव्रत है अस्तेय (चोरी न करना) जो सुख-रक्षक है, पापकर्मों के रोकने के लिए अज्जदण्ड है, दोष-विषम्वर को रोकने के लिए करण्डु है। चतुर्थ अणुव्रत है ब्रह्मचर्य अर्थात् शुभ चरित का पालन करना और परस्त्री सेवन से दूर रहना। यह व्रत ससरण से मुक्त होने का कारण है ॥ 4 ॥

## ( 5 )

पंचम अणुव्रत नरक गति का कारण है सकल दुष्कर्मों की जड़ है, कर्त्तव्य का जनक है, बहुधा के बीच शत्रुता पैदा करने वाला है, भीषण के लिए कृशकारी है, निर्मल बलिष्ठ देह को शक्तिहीन और निस्तेज करने वाला है, कीर्ति का क्षयकारी

है। पचम अणुव्रत है परिग्रह परमाणुव्रत जो वृष्णा की तरंगों के लिए प्रलयभानु है। सतोष के बिना वृष्णा महासमुद्र है, लोभ रक के समान है, वह वस्तुतः भुजंग है। जो इन पचाणुव्रतों का पालन करता है वह भोक्ष लक्ष्मी को प्राप्त कर लेता है।

( 6 )

इन पचाणुव्रतों के अतिरिक्त तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रतों का भी पालन करना चाहिए। दिम्ब्रत में देश-विदेश गमन की सीमा कर लेने से अधर्म से बच जाते हैं। द्वितीय गुणव्रत भोगोपभोग परिमाणु तथा तृतीय गुणव्रत अनर्थदण्डव्रत है। चार शिक्षाव्रतों में प्रथम सामाधिक है जो प्रातः, दोपहर और सायंकाल की जानी चाहिए। द्वितीय प्रोषक है जो अष्टमी और चतुर्दशी को किया जाना चाहिए। तृतीय शिक्षाव्रत है दान जो सत्पात्र में दिया जाना चाहिए और चतुर्थ है सल्लेखना जिसका शरण मरण काल में लिया जाता है। इन चारह व्रतों का परिपालन निरतिशय पूर्वक किया जाना चाहिए। उन्हें पच्चीस दोषों से मुक्त होना चाहिए। अष्ट मूलगुणों का भी पालन किया जाना चाहिए इन व्रतों के साथ। यह श्रावक क्रिया है जिसके पालने से मुक्ति-पथ प्रगट हो जाता है। राजा ने यह उपदेश सावधानतापूर्वक सुना और उसकी अनुश्रुति की।

( 7 )

इनके बाद राजा ने अपने पूर्व भव और अविष्य भव के सदम में जिज्ञासा व्यक्त की। तब मुनिराज ने उसका वर्णन किया—हे राजन् ! तीसरे द्वीप का नाम पुष्करार्थ है। उसके पूर्व में मेघ पर्वत है जिसके पश्चिम विदेह में शीतोदा नदी के उत्तरी तट पर एक सुगन्धि नाम का देश है। उसका हर प्रान्त कमलों की गंध से सुगन्धित है। इसलिए उसका नाम सार्थक है। वहाँ नागवल्ली जैसी सुन्दर लताएँ हैं, फलभार से झुके हुए सुपारी के वृक्ष हैं, थल कमलों की भी अपनी निराली शोभा है।

( 8-9 )

उस सुगन्धि देश में श्रीपुर नाम का एक नगर है। मणि जटित प्रासादों से वह सुशोभित है, कामिनियों के मुख-चन्द्र से प्रकाशित है, चन्द्रकान्त मणियों से निकलने वाली जलधारा में मानो चन्द्र ही अवभासित होता हो, हर घर के शिखर रंगे हुए हैं इसलिए वे ऐसे दिखते हैं जैसे उनके ऊपर रविका कलक लगे गये हों। उसी श्रीपुर में श्रीवैष्णव नामका राजा राज्य करता था। वह क्षत्रियधर्म को पौरुष

का प्रतीक समझना था। दान में कर्तुं था। सकल विद्याएँ साक्षात् उसमें एकत्रित हो गई थीं। वह ग्रहकार से दूर था, समूह के समान यमीर और विशाल था, पर्वत के समान ऊँचा, चन्द्र के समान सुन्दर, बृहस्पति के समान बुद्धिमान था, विरक्त था, इन्द्र की कीर्ति को प्राप्त था, उज्ज्वल कुराँ से युक्त था, निर्मल मनोज्ञ शरीरवान था, शत्रु रपी ध्वजकार के लिए सूर्य था, विद्याधियों के लिए कल्पवृक्ष था, कामिनीयों के लिए धमृत था। इस प्रकार वह वृक्षवान राजा अपनी प्रजा का पालन बड़े मनोयोग से कर रहा था।

( 10-11 )

उस राजा की कीर्ति धमृतरस के समान निर्मल और मुक्ति के समान कल्याणकारी था। उसका एकलव्य राज्य था। श्रीकांता नाम की उसकी महाराज्ञी थी जो धर्मन्त रूपवती थी। राजा का मुख चन्द्र के समान था, स्तन बत्सलता से भरे पीबूष कुम्भ थे, कटि भाग पतला था, ऊँह युगल स्थूल थे, सारे अंग रक्त कमल के समान कोमल थे। वह ज्ञान में शक्ति के समान, सुर में कति के समान, तर्क में युक्ति के समान, सिद्धि में मुक्ति के समान, धर्म में ज्ञान्ति के समान, शील में शान्ति के समान दान में कीर्ति के समान, धर्म में युक्ति के समान थी। एक दिन वह खेद-क्षिप्त हो गई। जब अन्त-युर में राजा आया तो उसने देखा कि उसके भालों से आँसू बह रहे हैं। उसने कहा—प्रिये ! बताओ, किसने तुमसे अपराध किया है, किसने तुम्हारा अपमान किया है। तिलोक को जीतने वाले मेरे रहते हुए शत्रु भी तुम्हारा कुछ नहीं कर सकता। अतः स्पष्ट कहो, किस कारण से तुम दुःखी हो राजा के बार-बार पूछने पर वह लज्जावश कुछ नहीं बोली और सखि की ओर लीला कुर्बं देखने लगी।

( 12-13 )

सखि बोली—हे स्वामिन् ! आपके रहते हुए इसे विवाद का कारण क्या हो सकता है। सब तो यह है कि सबके ऊपर कर्म है, भाग्य है। बात यह है कि आज वह मेरे साथ नगर की शोभा देखने क्षत पर गई थी। वहाँ से इसने बच्चों को खेलते हुए देखा जो हाथ की बपकी दे देकर बैठ खेल रहे थे। उन्हें देखकर इसका मन विषादमय हो गया और सोचने लगी—पुत्र के बिना भी कोई जिन्दगी है ? शोक का मूल कारण वही है। राजा वह चुनकर चिन्तित हो गया और सोचने लगा कि सब कुछ होते हुए भी पुत्र के बिना जीवन अधूरा है। बिना किरणों के सूर्य की शोभा ही क्या ? पुत्र के बिना राज्य का फल क्या ? पुत्र के बिना पुरुष के बल की सार्थकता

क्या ? पुत्र के बिना कुल की गति कैसे हो सकती है ? पुत्र के बिना शोभा ही क्या ? पुत्र के बिना तप भी निर्मल नहीं हो सकता । पर यह सब कर्माधीन है । उसने कहा—प्रिये । पुत्र होना कठिन नहीं है । यदि भाग्य सर्वथा प्रतिकूल न रहा तो तुम्हारी यह इच्छा अवश्य पूरी होगी । तुम्हारा शोक मुझे सतप्त कर रहा है और मेरा सतप्त होना सारी प्रजा और राजाओं के शोक का कारण बन जाता है । अतः इस शोक को छोड़ो । अभी तीर्थ सुपाश्वर्नाथ के तीर्थ में समस्त पदार्थों को गुप्त देखने वाले मुनिराज विराजमान है । उनके पास चलकर कारण पूछेंगे । रानी यह सुनकर प्रमत्त चित्त हो गई । एक दिन वनमाली ने आकर राजा से निवेदन किया ।

( 14 )

हे देव ! वसत आ गया है । चारो दिशाओं में आस्र मजरिया सुरभित हो रही है, कोयल मधुर स्वर में गा रही हैं, उपवन में मदनराज बठा हुआ है, मलयानिल बह रही है, हम पक्षियों आकाश में उड़ रही हैं, अलि पक्षियों भी इधर-उधर दौड़ रही है, कामिनियाँ भ्रूवलिनियों रूपी धनुषों को खींचे हुए हैं, उनसे वे तीले बाण चला रही है । वनपाल की यह सूचना पाकर राजा उद्यान की शोभा का आस्वादन करने चल पड़ा । वहाँ उसने देखा कि बहुविध पुष्पों से रसान शोभित हो रहे हैं, अमर पक्षियों चारो ओर घूम रही हैं, कोयल मधुर स्वर में गा रही है और मधुर फल खा रही है, शीतल मलयानिल लीला पूरक बह रहा है । पंचेन्द्रिय विषयों से सित्त वसन्त ऋतु का विशेषताओं को देखकर राजा सतुष्ट हुआ और विषाद छोड़कर उद्यान में बिहार करने लगा । इसी बीच दहा चारण ऋद्धिधारी मुनि आ पहुँचे । वे तप के प्रभाव से तेजस्वी और जन्म-मरण से मुक्ति देने वाले थे । अवधि ज्ञानी थे ।

( 15 )

अस्नान परिषह से उनका शरीर मलीन लगता था जैसे ध्यान के प्रभाव से धूम का लेप लगा लिया हो । बारह महाव्रतों के पालन से उनका शरीर कृश हो गया था । वे मुक्ति-नारि से भी विरक्त थे । राजा ने उनके चरणों में प्रणामकर बहु विध भक्ति की और कहा कि मैं आपके दर्शन से पवित्र हो गया हूँ, मुझे आपका चरणलाभ हो गया है उबने निर्मुक्त होकर मैं भवगाहन कर रहा हूँ, फिर भी मेरा मन विरक्त क्यों नहीं हो रहा है ? राजा के ये वचन सुनकर मुनिराज ने उसकी आन्तरिक वेदना को समझा और बोले—राजन ! जब तक तुम्हें पुत्र की प्राप्ति नहीं होगी तब तक यह चिन्ता मिट नहीं सकती । पुत्र जन्म के अतिशेष का कारण क्या है, इसे भी समझ लेना चाहिए । इस कारण का



सम्बन्ध पूर्व जन्म से है। तुम्हारी महाराज्ञी यह श्रीकांता पिछले जन्म में इसी नगर में उत्पन्न हुई थी। उसके पिता देवांगद बड़े धन संपन्न व्यापारी थे। उनकी पत्नी का नाम श्री था जिसकी कुक्षि से सुनन्दा नाम की रूप लावण्य सम्पन्न पुत्री हुई। वह श्रावक व्रतों का परियालन करती थी। सुनन्दा ने एक दिन यौवन के प्रारम्भ में एक गर्म-भार से पीड़ित महिला को देखा और निदान बाधा कि जन्मान्तर में भी मैं युवावस्था में इस जैसी न होऊँ। निदान बाध लेने के बाद उसने धार्मिक जीवन गृहस्थ धर्म का पालन किया और अन्त में मरकर सौम्य में देव हुई। वहाँ से ज्मुत होकर शेष पुण्य के फल से दुर्योधन की पुत्री और आपकी पत्नी हुई।

( 16 )

आपकी इस पत्नी ने पूर्वभूव के निदान के कारण ही अभी तक का अपना नवयौवन बिना सन्तान के व्यतीत किया है। अब थोड़े दिनों बाद ही निदान-दोष के शान्त होते ही अतुल बलशाली पुत्र होगा। बाद में उसे तुम राज्याभिषिक्त करके दिगम्बर दीक्षा ग्रहण कर लोगे और मुक्ति प्राप्त करोगे। राजा यह सब सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुआ। फलत उसने अतिचार रहित बारह अणुव्रतों के परिपालन का प्रण लिया, छेदन, बन्धन, घात-प्रतिघात आदि से मुक्त हुआ, असत्यवादन, कूटलेख-क्रिया, न्यासापहरण आदि छोड़ दिया, अचोर्यव्रत का पालनकर राजविरुद्ध कर चोरी तथा हीनाधिक मानोन्मान, तदाहुताशन को त्याग दिया। इसी प्रकार पर-विवाहकरण, अनगक्रीडा आदि अतिचारों के साथ परस्त्रीसेवन का वर्जन किया और परिग्रह परमाणुव्रत का पालन किया तथा धन-धायादि के अतिक्रमण को छोड़ दिया। इस प्रकार पञ्चाणुव्रतों का निरतिचार पूर्णक पालन करने लगा।

(17)

ऊर्ध्व, अधो, तिर्यक् दिशा की सीमा का व्यतिक्रमण सख्याकृत क्षेत्र सीमा का विस्मरण (स्मृत्यन्तर्धान), क्षेत्रवृद्धि ये प्रथम गुणव्रत के अतिचार हैं। रागयुक्त असम्यक्चन बोलना, सचेष्ट क्रियाओं सहित असम्यक्चन बोलना, असबद्ध प्रलाप, बिना विचार के निष्प्रयोजन क्रिया करना (असमीक्ष्याधिकरण), तथा भोग या उपभोग रूप वस्तुओं का जितना प्रसाध किया है उसकी सीमा के भीतर ही, पर आवश्यकता से अधिक संग्रह करना (उपभोगाधिकत्व) ये पांच अतिचार द्वितीय गुणव्रत (अनर्थदण्डव्रत) के हैं। विषयो की इच्छा करना, पूर्वानुभूत विषय भोगों का स्मरण करना, अतिलुब्धता, अनितृष्णा आदि पांच अतिचार भोगोपभोग परिमाण व्रत के हैं। शिक्षाव्रतो में प्रथम सामायिकव्रत, द्वितीय प्रोषधोपवासव्रत, तृतीय दान-

व्रत और चतुर्थ सल्लेखना व्रतो का भी निरतिषार पूर्वक पालन करने का विधान है । राजा ने इनके परिपालन करने की प्रतिज्ञा की ।

(18)

राजा का समय सागरधर्माचरण, जिनाभिक्षेक, जिनपूजा, दान, धर्मध्यान आदि क्रियाओं में बीतने लगा । इसके बाद नदीश्वर आष्टान्तिक पर्व आया जिसे उसने सोत्साह सपन्न किया । कुछ दिनों बाद रानी गर्भवती हो गई । उसका शरीर सफेद हो गया, स्तनों का झमला भाग काला और शेष भाग सफेद हो गया । इससे उसने चन्द्रमा की शोभा को भी मात कर दिया । जमुहाई चिर सखी की तरह निरन्तर निकटवर्तिनी हो गई । सम्मित्र के समान भालस उसके पास से नहीं भागता, लज्जा के साथ उदर बढ़ गया उसकी तीन बलियों के साथ स्फूर्ति लुप्त हो गई । दोनों नेत्र सफेद हो गये । मुनिवाणी के समान वह निश्चल हो गई । राजा ने उसका दोहद भी पूरा किया । इस तरह शुभ भावों पूर्वक धर्माश्रयना सहित उसका गर्भकाल परिपक्व होता गया ।

(19)

इसके बाद शुभ दिन और, शुभ ग्रहों ने श्रीकान्ता ने पुत्र को जन्म दिया । पुत्र तेजस्वी था । सारा अन्त पुर रोमांचित हो उठा, सभी तरह के वाद्य बज उठे कारागृह से बंदियों को मुक्त कर दिया, गया, और याचकों को अपने समान बनाकर दिया गया । इस तरह मांगलिक पुत्रोत्सव मनाया गया और फिर दसवें दिन पुत्र का नाम श्री धर्म रखा गया । पुत्र अहर्निश बढने लगा और समस्त शत्रुओं के मनोरथों को भङ्ग करने लगा । उसने सारी कलाएँ सीखली, सारी विद्याएँ अधिष्ठित कर ली । इसके बाद उसने राजकन्या शीलवती प्रभावती के साथ विवाह किया । तदनन्तर शीघ्रेण ने उसे राज्याभिषिक्त कर दिया ।

## तृतीय संधि

(1)

एक दिन राजा श्रीबेणु राज्यसुख का पान करता हुआ राजमहल में बैठा था, कामकेलि में मस्त था। उसी समय उसने आकाश से गिरती हुई उसका देखी। उसकी अलम्बगुरता देखकर उसे बेराग्य हो गया। वह सोचने लगा—यह मनुष्य जन्म फेन के समान निस्सार है यदि उसमें धर्म का पालन न किया जाये। बस, शरीर तो फिर मल की उत्पत्ति का कारण है, दुर्गन्ध और दुःख का घर है। यदि ऐसे दुःख दायी नारियो के शरीर में मोहित रहा जाय तो अमृत-सुविधा से व्यक्ति बर्धित रह जायेगा। इस शरीर को विविध नषों से सेवा फिर भी वह अशुचि दुर्गन्धों का घर बना रहा।

(2)

जिस मुह को चन्द्र की उपमा दी जाती है वह कफ के पिण्ड के अतिरिक्त और क्या है? जिन्हे कामधल्लि कहा गया है वे नितम्ब कुक्षित मलद्वार हैं, जिन अक्षरों को अमृत का घर कहा जाता है वे घूक जैसे मल के निधान हैं, जिन स्तनों को अमृत-कुम्भ माना जाता है वे मांस मांस के लोचने हैं, जिस दम्भ शक्ति में सौभाग्य देखते हैं उसे वस्तुतः हाथ से कौन स्पर्श करता है? सारी पृथ्वी को जीतने की कोशिश की जाती है जबकि चार हाथ जमीन ही खोने के लिए पर्याप्त है, मोह के कारण व्यक्ति इतना अधिक धान्य पैदा करता है जबकि उसे भरण-पोषण के लिए थोड़े से ही भनाज की आवश्यकता होती है वह सब दूसरे के लिए किया जाता है। तब यह पाप स्वयं क्यों किया जाये? पुत्र-कलत्र धारि भी सभी स्वार्थी तत्त्व ही हैं। यह सोचकर राजा श्रीबेणु को संसार से बेराग्य हो गया और उसने अपना धागे

का मार्ग तय कर लिया। फिर अपने हुल के आभूषण स्वरूप युवराज को बुलाया।

( 3 )

युवराज ने तुरन्त आकर प्रणाम किया और खड़ा हो गया। धीरेण की दृष्टि में अब मोह नहीं था। उसने कहा-पुत्र। आज तुम मेरी बात सुनो। जिस प्रकार आधी फूस की भकभोर डालती है उसी तरह जब तक मेरे इस शरीर को वृद्धावस्था आकर भकभोर नहीं देती, जब तक तिमिर-नेत्र रोग मेरी देखने की शक्ति को नष्ट नहीं कर देते, साधु-श्रवण मे और धर्म कथाओं के श्रवण मे मेरे कान जब तक काल के प्रभाव से बधिर नहीं होते, तीर्थ यात्रा करने मे प्रवीण मेरे पैर जब तक अपने गमन-सामर्थ्य को नहीं छोड़ते, जब तक कार्य अकार्य करने का विवेक समाप्त नहीं होता तब तक मैं सौसारिक खन्बनों को छोड़कर दिगंबर दीक्षा ग्रहण करना चाहता हूँ। भोगों की मेरी वृष्टि समाप्त हो गई है, रोगों का आना प्रारम्भ हो गया है, भगो मे कपन आदि भी शुरू हो गया है।

( 4 )

काम-भोगों की शक्ति समाप्त हो गई है। सूखी हड्डी चबाने मे मग्न जिस प्रकार कुत्ता अपने मुह से निकले खून को पीकर ही सतुष्ट होता है उसी तरह वृद्धावस्था मे विषय भोगों की स्थिति होती है। उपभोग करने की शक्ति बचती नहीं, पैर थक कर पगु हो जाने है, सिर गड़ा हो जाने के कारण ताम्र पात्र के समान दिखाई देने लगता है दन्त पक्ति विकीर्ण हो जाती है पद मचालन कम हो जाता है जैसे काल ने वह शक्ति हर ली है, जरा-देबी के आने पर आठों अंगों मे कपन प्रारम्भ हो जाता है ऐसा लगने लगता है जैसे कोई अपराध के कारण कप रहा हो, अंग गलित हो जाते है, शरीर रोगों से आक्रान्त हो जाता है, व्यक्ति निलंबज और कुरूप बन जाता है।"

( 5 )

अतः अब मैं अपना कार्य शीघ्र संपन्न करता हूँ अर्थात् दीक्षा लेता हूँ। तुम सप्तांग वाले राज्य का परिपालन अलीबाति करना। आत्मीय जनो का कभी अपमान न करना। दुर्जनों को कभी शरण नहीं देना और सज्जनों के गुणों को कभी छिपाना नहीं। कभी अभिमान नहीं करना। कोई ऐसे काम नहीं करना जिससे अपयश हो। पापियों द्वारा अर्जित सम्पत्ति की भी कभी आकांक्षा नहीं करना। दान

दिये बिना कभी लक्ष्मी का उपभोग नहीं करना, सन्निभ अथवा उपदेष्टा को दूर नहीं छोड़ना । शत्रुओं पर विजय-प्राप्ति को कर्म पर नहीं छोड़ना अर्थात् पुरुषार्थ पूर्वक उन पर विजय पाना । हृदय चातक वाली नहीं बोलना । किसी पाप-चरित का आचरण नहीं करना । अनुभवी मन्त्रियों की सलाह लिये बिना कोई काम नहीं करना । धर्म को त्याग कर सुख का अनुभव नहीं करना । अर्थ, काम और तृष्णा को कभी सिर नहीं उठाने देना । प्रजा पर करो का बोझ अधिक नहीं डालना । इस प्रकार राज्य करते हुए, पृथ्वी पालते हुए, लक्ष्मी का सुख प्राप्त करते हुए कीर्ति का अर्जन करी और पुण्य संपादन करो, मुक्ति को प्राप्त करो । यही सकल मनोरथ सिद्धि के लिए कल्पतरु होगा ।

( 6 )

श्रीधरेण ने अपने पुत्र को इस प्रकार शिक्षा देकर उसे राज्य का भार सौंप दिया और अपने वृद्ध लोगों से अनुमति लेकर श्रीव्रज मुनिराज के समक्ष जिन वीक्षा ग्रहण कर ली । कालांतर में दुर्धर तपस्या कर निर्वाण सुख को प्राप्त किया । इस राजा श्रीधर्म पिता के वियोग से कुछ समय तो शोक विह्वल रहा बाद में मन्त्रियों और परिंकर जनों से प्रतिबोधित होने पर उसका शोक दूर हुआ । तदन्तर दिग्विजय के लिए प्रस्थान किया । चारों प्रकार की दुर्जय सेना उसके पास थी । उसने सग्राम भेरी बजवा दी । उसकी आवाज सुनकर शत्रुओं के दिल धडक उठे । प्रस्थान करते समय अनुकूल वायु चल रही थी । ध्वजाएँ लहरा रही थी । उन ध्वजाओं ने सूर्य के साथ ही शत्रुओं के यश को भी आच्छादित कर लिया । चतुरगिणी सेना बल से शत्रु कपित हो उठे और उनका दर्प चूर-चूर हो गया । मार्ग में रस्तादि से भरे बाँखों से नागरिकों ने भी उसका अभिनन्दन किया ।

( 7-8 )

शत्रु वर्ग में श्रीधर्म के दिग्विजय प्रस्थान से एक खलखली मच गई । वे उसी तरह से भयभीत हो उठे जैसे गरुड के आने से सर्प हलप्रभ हो जाते हैं । उनमें कुछ स्तम्भित हो गये, कुछ उपहार आदि लेकर उसके समक्ष आ गये, कुछ जंगल में भाग गये, कुछ यममुख में समा गये, कुछ पिता के मरने पर अपने गले में कुठार लगा कर शरण में आ पहुँचे । कुछ दाँतो वाले अंगुलि दबाने लगे, कुछ पुत्र-कलत्र आदि परिवार को छोड़कर अपने प्राणों को बचाने की दृष्टि से दुःख पर चढ़ गये, कुछ ने अपनी सम्पदा को डोकर दम्ब वृक्षों में रख दी, कुछ ने अपने मुख को गोद में डाल लिया आनी अपने कलक को छिपा रहे हो, कुछ अपनी आया की दीक्षा मानकर

दुर्धर तपस्या करने निकल पड़े, कुछ ने यह सोचा कि श्रीधर्म सारे राज्यों का ध्वंस-हरण नहीं करेंगे इसलिए अपने राज्य समर्पित कर दिखे। इस प्रकार शत्रुघ्नो की स्थिति देखकर उनके प्रणाम आदि प्रक्रिया से श्रीधर्म सन्तुष्ट हो गया और क्षत्रियो-चित्त धर्म का उनके साथ आचरण किया।

जैसे ही सश्रम में उसने शत्रुघ्नो का बिनाश किया जैसे ही उस राजा का प्रताप और बढ़ गया। इसको देखते ही शत्रुघ्नो की पत्नियाँ विरहाग्नि में जलने लगती थीं। शत्रु कुल देवता की पूजा से भी निराश हो गये। मूल में तृण दबाकर अपने जीवन की रक्षा करने की आज्ञा करने लगे। उसके अनुल पराक्रम को देखकर कुछ जीवन मृत हो गये। कुछ कुहाड़क को कंधे पर रखकर युद्ध करने का विचार करने लगे। कुछ धर्म के लगने से सतप्त हो गये, कुछ ने पादागुलि को दातो के भीतर डाल ली, कुछ राजा के हाथी के कुभस्थल को देखकर भयभीत हो गये, कुछ उसकी तलवार देखकर इतने अधिक त्रस्त हो गये कि सुरतिकाल में पत्नी की वेशि को भी देखकर कपित हो गये। कुछ ने उसके अनुप में इतनी बकना बंली कि उस बकता का विलास भ्रूसता में नहीं था, तीक्ष्णता को स्त्रियो के कटाक्ष में भी नहीं देखा जा सका। इस प्रकार चारों दिशाओं को जीतकर राजा ने अपने नगर की ओर प्रस्थान किया।

(9)

शत्रुघ्नो से प्राप्त धन को याचको में वितरित कर दिया गया और सभी राजा गए राजा श्रीधर्म को छोड़कर अपने-अपने नगर लौट गये। दिग्विजयकर लौटे हुए अपने राजा को अपने नगर में पाकर पुरजन अत्यन्त प्रसन्न हुए और वे धर्म लेकर उसका आदर-सम्मान करने निकल पड़े। पौराणनाम्नो ने उसे लज्जा रूपी भ्रजुलियो में ग्रहण किया। नगर की शोभा दर्शनीय थी। जित प्रतिमा को देखकर वह प्रसन्न हुआ। अपने प्रासाद में पहुँचकर वह पञ्चेन्द्रिय सुखों का उपभोग करने लगा। इसके बाद उसने एक दिन अरत्कालीन मेघ को देखा जो उत्पन्न होते ही नष्ट हो गया था। उसकी यह अवस्था देखकर राजा का वैराग्य हो गया और श्रीकान्त पुत्र को राज्य सौंप-कर स्वयं श्रीधर्म नामक मुनीन्द्र के चरणों में पहुँच गये। वहाँ उसने दिगम्बर दीक्षा ग्रहण कर तेरह प्रकार के चारित्र का आचरण कर अन्त में सौधर्म स्वर्ग में श्रीधर नाम का देव हुआ। देवागनाएँ उसकी सेवा में उपस्थित रहती थीं। उसकी भ्रातृ दो शानर प्रमाण थी। बहा रहते हुए उसने अपार सुख भोगा।

(10)

यहाँ से श्रीधर्म से सम्बद्ध कथा का प्रारम्भ होता है। घातकी खण्ड नाम का दूसरा द्वीप है। उसकी दक्षिण दिशा में एक पहाड़ है जो हणुकार नाम से

विख्यात है। उसके शिखरो पर देव लोग विचरण करते हैं। उसके पूर्वभाग में अलका नाम का देश है। वहा चारो ओर स्थल कमलिनी लगी हुई है जिनके मकरन्द से ओर पके कमलो की सुगन्ध से देश का हर कौना सुवासित हो रहा है। कामुक जन उसका पानकर मानो आसव पान से उन्मत्त हो रहे हैं, उस देश के मध्य में सुन्दर नदियां बहती हैं, जो प्रिय की गोद में बैठी हुई पत्नी के समान प्रतीत होती हैं। उसका मध्य भाग मकर रूरी नामि से विशेष अलंकृत है, पत्नी जैसे सुन्दर स्तनो से मनोहारिणी लगा करती है उसी तरह नदियों का जल भी मधुर है, कमल मानों उसके नेत्र हैं, विहगाबलि उसकी मेखला की शोभा है। उस देश में कोशला नाम की नगरी है जो सभी तरह के के मुख, सौन्दर्य और गुणो से विशिष्ट है। वहां आगन में रत्नो के फर्श लगे हुए हैं जिनमें रात्रि के समय गृह-नक्षत्र आदि प्रतिबिम्बित होने लगते हैं। उन्हें देखकर नव बधुएँ अपने पतियों के अलिंगन को लज्जावश छोड़ देती हैं। पति उस स्थिति को स्पष्ट करते हैं और हसकर उसका चुबन ले लेते हैं। वहां अमि-सारिकाएँ कृष्ण पत्र की रात्रि में जब संचरण करती हैं तो उन्हीं का मुख-चन्द्र अपनी मुसकान की चादनी में तुरन्त दिखाई पड़ जाता है। वहां के प्रासादो के शिखरो में लगी जालियो से निकलने वाले कालागरु धूम से मानो चन्द्रमा मेकालापन घा गया। उसी समय से चन्द्रमा में यह कलक लगा हुआ है। उस नगरी में अजितंजय नाम का राजा राज्य करता था ॥१०॥

( 11 )

वह राजा अपने सद्गुणों से प्रसिद्ध था। उन गुणो से ही लोगो को प्रकाश मिला था। “इस ससार में मेरे प्रताप को कौन जीत सकता है” यह सोचकर सूर्य सुबह बड़े गर्व के साथ उदित होता है पर शाम को राजा के प्रताप से लज्जित होकर मानो अस्त हो जाता है और करदुवत् दिखाई देने लगता है। उसके गम्भीरता गुण से लज्जित होकर ही मानो लवण समुद्र काला पड़ गया और सूर्य अस्त हो गया। मानो उसकी भीषणता सूकर में पहुँच गई और उसकी भूकुलदेवी उसकी भुजा में प्रविष्ट हो गई। उस राजा अजितंजय की अखिल सेना नाम की महाराज्ञी थी जो कुल, शील, गुण और सौन्दर्य से समृद्ध थी। उसके रूप से इन्द्राणी का भी रूप हीन पड़ गया था। राजा उसके साथ रति-क्रीडा करता हुआ पञ्चेन्द्रिय सुखो का

उपभोग करता रहा। श्रीवर देव सौधमें स्वर्ग से चयकर उनके यहाँ पुत्र के रूप में उत्पन्न हुआ ॥11॥

( 12 )

पुत्र का नाम अजितसेन रखा गया। वह शत्रुघो रूपी चिड़ो के जिए प्रवण्ड घातक था। बाल्यावस्था में ही उसने गुरु रूपी सूर्य के तेज को प्राप्त कर लिया था। बाल्यावस्था में ही उसने समस्त आगमों का ज्ञान पा लिया था। बाल्यावस्था में ही उसने बूढ़ों के अनुभव को हासिल कर लिया था और नीति विमोचन बन चुका था। बाल्यावस्था में ही कुल का भार धारण करने में धीर हो गया था और शत्रुओं के दलन में निपुण बन गया था। बाल्यावस्था में ही धर्म से सुसंस्कारित हो गया था और जनता के लिए शिक्षा देने के योग्य बन गया था। बाद में राजा ने अपने पुत्र की सरुवाई को देखा और उसके गुणों की ओर विचार किया। सोचने लगा—हम धन्य है कि इतना गुरुवान् पुत्र हमने पाया। यह पुत्र बिरकाल तक हमारे कुल की कीर्ति को बढ़ायेगा। गुरुवान और रूपवान पुत्र दुर्लभ होता है। वह बड़े पुण्य से मिलता है। गुरुवान पुत्र से जो सुख मिलता है वह अमृत के स्नान से भी नहीं मिल पाता। यह सोचकर अपने बृद्ध मंत्रियों से उसे युवराज पद देने के सदर्भ में विचार-विमर्श किया। बाद में बुधजनों, परिजनों और अन्य मंत्रियों की सलाह के अनुसार मांगलिक विधि से उसे युवराज पद पर अभिषिक्त किया ॥12॥

( 13 )

इस मांगलिक अवसर पर पुरजान और परिजन अत्यन्त हर्षित हुए। इसके बाद एक दिन की रात है कि राजा अजितसेन युवराज के साथ रत्नाभूषणों से युक्त सिंहासन पर बैठा था। इसी अवसर पर माण्डलीक राजाघो का मण्डल उत्तमोत्तम उपहार लेकर उससे मिलने के लिए वहाँ आया कि अचानक ऋण्डरुषि नामक जो पूर्वजन्म का वैरी था, वहाँ आया और उसे देखने मात्र से वह क्रोधित हो उठा। तुरन्त उसने सारी सभा को समोहितकर राजकुमार का अपहरण करके ले गया। एक क्षण के लिए उस मोहिनी विद्या के प्रभाव से राणा भी मूर्छित हो गया। उस विद्या की शक्ति जैसे ही कम हुई कि राजा सचेत हो गया। उसने बड़ा देखा कि सभागार राजकुमार से जून्य है। सन्नमित होकर चारों ओर उसने गौर से देखा और निःस्वार्थ छोड़कर सोचने



लगा—क्या यह मोह है अथवा इन्द्रजाल, स्वप्नदर्शन है अथवा मतिभ्रम कि पास में बैठे हुए भी पुत्र का नहीं देख पा रहा हूँ। यह सोचता हुआ शोक करने लगा—हाँ देव ! मेरा मनोरथ बीच में ही टूट गया। हे पुत्र ! तुम जहाँ भी हो, तुरन्त आ जाओ। तुम यह वचन दो कि इस तरह कभी भ्रमण नहीं होओगे। इसे प्रकार विलाप करते हुए, रोते हुए मूर्छित हो गया। परिजन भी हाहाकार करने लगा ॥13॥

( 14 )

अज्ञितसेन ने राजा को मूर्छित होते हुए देखा हरिचन्दन धादि के छिड़कने से, चामर की हवा से राजा की मूर्छा दूर हुई। फिर वह निश्वास छोड़कर पुनः विलाप करने लगा। हे पुत्र ! तुम्हारे बिना यह जीवन भी क्या ! देव ने मुझसे मणि छीन लिया और मैं अब बिलकुल भिखारी—सा बन गया हूँ। मुझे अमृत मिला पर अक्षरो पर लगते ही पात्र टूट गया। अबे को धाँसेँ मिलीं पर देव ने तुरन्त उन्हें कोढ़ दिया। इन्द्र ने अपना राज्य दिया पर देव ने उसे छुड़ाकर भिखारी बना दिया। रत्नत्रय से पापों से मुक्ति मिलती है पर गुणश्रेणि से प्राणी पतित हो जाता है। मुझे कितना भी सुख मिले, पुत्र के बिना उसका कोई महत्व नहीं। पुत्र के बिना कुल अघेरे में चला जायेगा। कुल को आगे बढ़ाने वाला राजा कौन होगा ? इस प्रकार राजा बार-बार मूर्छित होता रहा। बीर हो या कायर हो, देव इनमें कोई भेद नहीं करता ॥14॥

( 15 )

पुरजन और परिजन राजा के साथ शोक मग्न थे ही कि इसी बीच तपोभूषण नामक चारण ऋद्धिधारी मुनि आकाश से उतरते हुए दिखे। वे निर्मल चन्द्रमा के समान दृष्टिगोचर हो रहे थे। सारी सभा गर्दन उठाकर ऊपर देखने लगी। उनका तेज मण्डल आकर्षक था। ऐसा लग रहा था कि कहीं करुणाग्र होकर सूर्य का बिम्ब तो नहीं उतर रहा हो वे। करुणा से शीतल, मेघबाहु, रत्नत्रयधारी, गुणाधिपति थे। जैसे ही मुनिराज ने पृथ्वी पर पैर रखा कि राजा ने उठकर उनकी चरण वन्दना की। अपने हाथ से आसन बिछाया और सन्तोष व्यक्त किया। हर्षित होकर अस्रु मिश्रित जल से उनके पैर धोये जो सभी के तारक हैं। और अपने हाथ से ऊँचा आसन दिया जिस पर वे बैठ गये। तब राजा ने कहा—हे नाथ ! आप मेरे घर आयेयह बड़े आनन्द की बात है, पर यह समझ में नहीं आया कि आप जानबूझकर यहाँ आये, हैं या मार्ग भूत गये हैं। जो भी हो, जिस तरह दुर्भाग्यवती विरही स्त्रियों को

उनके पति के साथ समागम होने से मुरति मुल मिल जाता है उसी तरह आपके दर्शन से मुझे शिव-सुख मिल गया । हमारे दुःख को आपने हर लिया ॥15॥

( 16 )

राजा के इन स्नेहिल वचनों को सुनकर मुनिराज ने आशीर्वाद दिया और हर्षित होकर कहा कि तुम्हें शोक सतप्त जानकर मैं प्रतिबोधन देने आया हूँ । तुम गुणवान हो और गुणियों पर अनुराग करने का मैं पक्षधर हूँ । तुम्हारे जैसा शुद्ध भाव वाला व्यक्ति कहां मिलेगा ? यह सब जानते हुए भी शोक क्यों करते हो ? सभी ससारी प्राणियों के इष्ट वियोग और अनिष्ट संयोग समान रूप से लगे हुए हैं । बुद्धिमान व्यक्ति ऐसे प्रसंगों में विषाद से खेद-स्निग्ध नहीं होता । इसलिए तुम्हें शोक नहीं करना चाहिए । तुम्हारे पुत्र को असुर हर ले गया । कुछ दिनों में ही वह स्वक्रवती बनकर विपुल संपदा के साथ वापिस आ जायेगा । राजा यह सुनकर हर्षित हो गया और पुलकित होकर उसने मुनिराज की वदना की । मुनिराज भी उठकर अपने इष्ट स्थान की ओर प्रस्थान कर गये । मुनिराज के वचनों पर राजा को विश्वास हो गया और विषाद छोड़कर सतोष पूर्वक रहने लगा ॥16॥

## चतुर्थ संधि

( 1 )

इसके बाद **अच्छरुचि** नामक कोपाविष्ट उस भ्रसुर ने राजकुमार अजितसेन को दोनों हाथों से चारों ओर घुमाकर फेंक दिया । तब राजकुमार मनोरम नाम के गहन सरोवर में गिरा । वहाँ गिरते ही मगर-मच्छ आदि जन्तुओं ने उसके ऊपर आक्रमण कर दिया जिसे उसने अपने शक्तिशाली मुक्कों और पैरों से मार-मारकर निरस्त कर दिया और अपने बाहुओं से तैरकर शंवाल की बिलोरता हुप्पा किनारे पहुँच गया । वहाँ उसे सामने **पक्ष्वा** नामक अटवी दिल्ली जिसमें सुई जैसा नुकीला कास लगा हुप्पा था । सिंहीं द्वारा विदारित हाथियों के गण्डस्थलों से निर्गत मुक्ताएँ फैली पड़ी थी जिन पर दुष्टिपात करने से ऐसा लगता था मानो वहाँ के उन्नत वृक्ष शाखाओं की रंगड से आकाश से तारामडल टूटकर बिलरा पड़ा हो । सघनता के कारण निबिड भ्रमकार था मानो भुभने के भय से ही सूर्य अपनी किरण वहाँ नहीं फेंक पाता हो । कटक वृक्षों से आच्छादित होने के कारण राजकुमार को प्रारंभ में दिशाभ्रम हो गया, पर थोड़ी ही देर बाद भीलो का एक मार्ग दिखा और उसी मार्ग से निर्भय होकर चल पड़ा । सामने ही उसे तुरन्त एक पहाड़ दिखाई दिया ॥१॥

( 2 )

पहाड़ के सम्मुख पहुँचते ही उसे मधुर शीतल पवन का सुख मिला और वह ऊपर चढ़ गया । उस अजनगिरि पर उसे शिखर के समान एक क्रोधाविष्ट पुरुष दिखाई दिया । वह अत्यन्त बलशाली था, उसके नेत्र आमिष पिण्ड के समान लाल थे, रंग मेघ के समान काला था और हाथ में प्रचण्ड मुद्गर को घुमा रहा था । राजकुमार के सामने आकर उसने कठोर वचन कहे—“तू यहाँ कैसे आ गया ? इस उपवन की रक्षा मैं करता हूँ । मेरी आज्ञा के बिना यहाँ वेबेन्द्र भी नहीं आ सकता । तू मेरी आज्ञा के बिना आया है । जयता है, तुझे अपने भुजबल का गर्व है । अब मैं तुझ पर अमरासुर का वूरण करने वाले इस मुद्गर से प्रहार कर तुझे शिक्षा देता हूँ ।” इस प्रकार की गर्वीली बातें सुनकर राजकुमार ने अकुटि बढ़ाकर क्रोध से स्पष्ट शब्दों में उससे कहा ॥२॥

( 3 )

तुम कौन हो ? यदि तुम्हें मे कोई पौरुष है तो वचनो से भयभीत क्यों करते हो ? मैं सुरो और असुरो को दलन करने वाला योद्धा हूँ। यदि तुम्हें शक्ति हो तो आगे आओ और प्रहार करो। मैं वज्र मुष्टि के प्रहार से तुम्हें यो ही समाप्त कर दूँगा। यह सुनकर उस असुर ने बड़े क्रोध से मुद्गर से प्रहार किया। राजकुमार ने उसे निरस्त कर बाहुओं से दबोच लिया। दोनों एक दूसरे पर हाथों पैरों से प्रहार करते रहे। दोनों मल्लो में घनघोर युद्ध होता रहा। कोई भी पीछे नहीं हटा। तब राजकुमार ने अपनी मुजाहरो से उठाकर उसे नीचे पटक दिया। असुर ने प्रसन्न होकर अपना दिव्य रूप प्रकट किया और प्रणाम कर बोला ॥३॥

( 4 )

मैं भवनवासी हिरण्य नाम का देव हूँ। सुमेरु पर्वत पर जिन मंदिरों की वन्दना करने गया था। वहाँ से यहाँ क्रीडा करने आ गया। तुम्हें देखकर मैंने कृत्रिम वेश धारण कर तुम्हारी परीक्षा ली है। मैं तुम्हारे साहस से सतुष्ट हूँ। हे वीर, मुझे यह कहने का साहस नहीं हो रहा है कि अक्सर आने पर तुम मुझे स्मरण कर लेना। जिसने तुम्हारा हरण किया वह तुम्हारा शत्रु है और मैं तुम्हारा चिरकाल से मित्र हूँ। मैं तुम्हारे पूर्व जन्म का वृत्तान्त सुनाता हूँ। पिछले तीसरे जन्म में तुम मुगन्ध नामक देश में श्रीपुर नगर के राजा थे। उस नगर में शशि और सूर्य नाम के दो गृहस्थ रहते थे। एक दिन शशि सूर्य के घर गया और उसकी सारी संपत्ति सेंध लगाकर चुरा ली। वास्तविकता जानकर तुमने शशि को पकड़कर उससे सूर्य की संपत्ति वापिस करा दी और उसे फामा की सजा दी। वही शशि षण्डकशि नाम का असुर हुआ और मैं हिरण्य नाम का देव हुआ। यह कहकर हिरण्य प्रदृश्य हो गया। राजकुमार भी उसके प्रभाव से क्षणभर में ही त्रटयी से बाहिर हो गया। इसके पश्चात् वह उस देश में पहुँचा जहाँ ग्राम, नगर लगातार बसे हुए थे। वहाँ उसने देखा कि लोग भयभीत अवस्था में डबड़-डबड़ भाग रहे हैं। सब कुछ नष्ट हो रहा है। यह देखकर उसे आश्चर्य हुआ ॥४॥

( 5 )

राजकुमार ने एक बड़े मादे भयभीत पुरुष से पूछा—सभी लोग यहाँ से क्यों भाग रहे हैं ? राजकुमार के इस प्रश्न को सुनकर वह पुरुष क्रोधित और दुःखित होकर बोला—क्या तुम्हें यह वृत्तान्त ज्ञात नहीं है जो तुम बार-बार पूछ रहे हो ? यह अरिजय नामक देश है। इसमें श्री सपन्न बिपुल नामक नगर है जिसमें जयचर्मा नाम का राजा राज्य करता है। उसका विवाह जयश्री के साथ हुआ। उनके शशिप्रभा

नाम की कुभी हुई जो सबीन सुन्दरी है। इसके बाद महेन्द्र नामक राजा ने जयवर्मा से उस कन्या के साथ पाणिग्रहण का प्रस्ताव रखा। पर चू कि नैमित्तिकों ने महेन्द्र को श्रत्पायुवान् बताया इसलिये राजा उसे स्वीकार नहीं कर सका। महेन्द्र ने अपनी मनोरथ की सिद्धि न होते देख अपने पक्ष के सभी राजाओं से मिलकर जयवर्मा के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी और जयवर्मा को मारकर नगर को घेर लिया। नगर के बहुत से प्रदेश उजाड़ दिये। इसलिये भयभीत होकर लोग यहाँ से भाग रहे हैं। राजकुमार अजितसेन यह सुनकर हसा और प्रसन्न होकर विपुल नगरी की ओर प्रस्थान किया। मार्ग में महेन्द्र की सेना ने उसे रोका पर वह भागे बढ़ता ही गया ॥5॥

( 6 )

सेना द्वारा रोके जाने पर भी राजकुमार को बढ़ते देख सैनिकों ने उससे अपमानजनक शब्द कहे और कहा कि राजा महेन्द्र धाशा का उल्लंघन करने वाले अपने पुत्र को भी नहीं छोड़ता। तब राजकुमार ने उसकी चतुरगिणी सेना को भी तृणवत् मानकर उनमें से किसी एक के हाथ से धनुष छीन लिया। बस, युद्ध प्रारम्भ हो गया ॥6॥

( 7 )

दोनों ओर से बाण वर्षा प्रारम्भ हो गई। कुछ सैनिक हकाल मात्र से गिर गये, कुछ मुष्टिका प्रहार से हत हो गये। वस्तुतः सेना रूपी समुद्र के लिए राजकुमार मदरा-चल था, सैनिक रूपी जहरीले फणिकुलों के लिये गरुण था, नभ मण्डल के लिये सूर्य था, तृण समूह के लिए स्फुलिंग था, कुजरगणों के लिए सिंह था। इस तरह सेना को ध्वस्त कर वह राजा महेन्द्र की ओर दौड़ा। दोनों में घमासान युद्ध हुआ। अतः मे राजकुमार के बाण से उसकी मृत्यु हो गई। इसके बाद राजा जयवर्मा ने जय-दुर्दुभि बजवाई, कुमार का श्राद्धगण किया और वहाँ से सभी बाहर निकल गये ॥7॥

( 8 )

तुम मेरे प्रकारखबन्धु हो गये। निर्मल ब्रह्म वाले तुमने मेरी सहायता की। भयकर काबानल लग जाने पर जिस तरह मेघ भी जाते हैं उसी तरह तुमने मेरा दुःख हरण किया। ठीक ही है—पृथ्वी संसार का लम्बीन सहेती है, तरुण अपने फलों का भार सहते हैं। इनके सारे उद्योग परोपकार के लिए होते हैं। बदले में इन्हें क्या मिलता है? राजकुमार ने कहा—यह सब पुण्य विपाक है। बाद में दोनों कुसुम रथ पर चढ़े और राजपथ पर चलते हुए नगर में प्रवेश किया। नगर खूब

सजाया गया। नगर बन्धुओं की नयन-कमल पत्तियाँ लगातार राजकुमार के ऊपर गिरती रहीं, मगलाचार किये उन्होंने और अपने मन-मदिर में सहर्ष उसे प्रतिष्ठित किया। राजकुमार जयवर्मा के साथ कुछ दिन वहीं रहा ॥८॥

( 9 )

एक दिन की बात है, शशिप्रभा की एक सखी जो अतरंग के भावों को समझने में दक्ष थी, महादेवी के प्रासाद गयी और वहाँ राजा जयवर्मा से विनम्रता पूर्वक नमस्कार कर कहा—हे राजन् ! जब से आपकी पुत्री शशिप्रभा ने महेन्द्र को मारने वाले युवक अजितसेन को देखा तभी से उसके मदन ज्वर के लक्षण दिखाई देने लगे। उसने चन्दन का लेप छोड़ दिया है। मौक्तिक मणिमाला गिर गयी है, भोजन से अरुचि हुई है, अध्रुखण्ड सीने पर गिरकर तत्क्षण खीलने लगते हैं, मुख पर मड़राने वाले भौरे धुएँ से लगने लगे हैं, हिम-पिण्ड भी तप्त लगने लगा है, सारे शीतल उपकरण जलने लगे हैं, “इसने मुझ की शोभा से मेरी शोभा चुरा ली है मानो यह सोचकर चन्द्रमा क्रुद्ध हो गया है, कोकिल शब्द भी कष्टकारी हो गये हैं, नीलोत्पल भी दुःखदायी बन गये हैं। सुकुमार राजकुमारी राजकुमार के कारण ही जीवित है। उसी के रूप को चित्राकार करती रहती है। इसलिये इस विषय में यथोचित कार्य कीजिये ॥९॥

( 10 )

शशिप्रभा की सखी के ये वचन सुनकर राजा जयवर्मा पुलकित हो गया। अजितसेन भी कामाग्नि से दग्ध हो गया। जयवर्मा ने तुरन्त नैमित्तिक को बुलाया और शुभ दिन में वाग्दान (सगाई) कर दिया। अजितसेन भी विवाह के दिन गिनने लगा। इसके बाद एक दूसरी घटना घटी। दक्षिण दिशा में एक विजयाध पर्वत है जिस पर रविपुर (आदित्यपुर) नामक एक मनोरम नगर है। उसमें भरणीध्वज नामक राजा राज्य करता था। वह विद्याधरो का स्वामी था। उसने विपक्षी विद्याधर राजाओं को अपने वक्ष में कर लिया था। एक दिन अचानक प्रियधर्मा नामक ब्रह्मचारी (क्षुल्लक) गगन मार्ग से आये। वे होपीन वस्त्रधारी थे, उनका शिर मुण्डित था और दिगम्बर साधु के चिन्हों से चिन्हित थे। राजा ने सिंहासन से उठकर उनका पूरा आदर-सत्कार किया। उन ब्रह्मचारी ने कहा—हे राजन् ! मैं व्रतसेवी हूँ, घर-परिवार, बहुजनों को छोड़कर साधु हुआ हूँ। फिर भी न जाने क्यों, मन में तुम से बहुत अधिक स्नेह है, मोह है। इसलिये सुषर्मा नामक मुनि से तुम्हारे विषय में जो कुछ सुना है उसे तुम्हारे हित में कह देना उचित समझता हूँ। अरिजय नामक देश में एक विपुल नाम का नगर है जिसमें जयवर्मा नामका राजा राज्य करता है।

उसकी शशिप्रभा नाम की एक कन्या है, जो लावण्य से परिपूर्ण है। उसका जो भी पति होगा वह तुम्हें मारकर भारत का चक्रवर्ती होगा। इस बात को सुनकर धरणीध्वज सतप्त हो गया। उसने ब्रह्मचारी को बिदाकर अपने सामन्तो को बुलाया और विचार-विमर्श कर विपुल नगरी पहुँच गया ॥10॥

( 11 )

सारा गगन मार्ग मणिमेललाघो से भूषित विमानों से आच्छादित हो गया। विद्याधर पति धरणीध्वज ने तब वचनकला में निष्णात उद्धत नामक दूत को बुलाया और सब समझाकर उसे जयवर्मा के पास भेजा। जयवर्मा नृपति के पास पहुँचकर प्रारम्भ में सुन्दर शब्दों में उसकी प्रशंसा की और बाद में अपना मनोभाव व्यक्त किया। उसने कहा—हे राजन् ! मैं धरणीध्वज राजा का दूत हूँ। उनका सन्देश देने आपके पास आया हूँ। आपने अपनी शशिप्रभा नामकी पुत्री को ऐसे व्यक्ति के साथ विवाह करने का निश्चय किया है जिसकी जाति और कुल अज्ञात है, परदेशी है। अतः अपना हठ त्याग कर उसे विद्याधरपति धरणीध्वज के साथ विवाहित कर दें।” जयवर्मा ने दूत के वचन सुनकर कहा—तुम कुशन दूत हो, दूत का भारना उचित नहीं। तुम अपने स्वामी अजितसेन से जाकर कह दो कि निर्याय अपरिवर्तनीय है। उसमें यदि हठात् ग्रहण करने की शक्ति है तो शीघ्र चला आये। विचार क्यों कर रहा है? बाद में यह बात जयवर्मा ने अजितसेन को बता दी ॥11॥

( 12 )

जयवर्मा को सुनकर दूत अपने स्थान पर चला गया। इधर जयवर्मा ने राजकुमार से कहा कि यह बात तुम्हें अच्छी तरह समझ लेनी चाहिये कि तुम्हारे पास भुजबल है जबकि प्रतिपक्षी विद्याधर से बलिष्ठ है। सन्नाम में उसे जीतना अत्यन्त कष्टसाध्य है। यह सुनकर अजितसेन ने हिरण्य नामक देव का स्मरण किया। स्मरण करते ही वह देव दिव्यास्त्रों से सज्जन रथ लेकर आ पहुँचा। राजकुमार उसमें सवार हो गया और हिरण्य सारथी बनकर उसमें बैठ गया। हिरण्य ने कहा—आप चिन्ता न करें। वे भले ही विद्याधर हो पर हम उन्हें समाप्त कर देंगे। राजकुमार रथ लेकर प्रचण्ड बाण वर्षा करता हुआ आगे बढ़ता गया। सारे असंख्य विद्याधर बाण, चक्र, भाले आदि अस्त्रों से राजकुमार पर आक्रमण करने लगे। पर राजकुमार की अदृश्य बाण-वर्षा देखकर वे आश्चर्यचकित रह गये ॥12॥

( 13-14 )

विद्याधर की सेना और राजकुमार अजितसेन के बीच प्रमासान युद्ध चलता रहा। राजकुमार की तीव्र बाण वर्षा के सामने कोई टिक नहीं सका। विद्याधर

की सेना लगभग समाप्त हो गई। तब धरणीध्वज कोपाविष्ट होकर युद्ध करने आगे बढ़ा। अपनी सेना को मरते हुए देखकर धरणीध्वज को बड़ी चिन्ता हुई। उसने दिव्यास्त्रों को समेट कर ताम्र अस्त्र छोड़ा जिससे अन्धकार व्याप्त हो जाता है। उसको निवारणार्थ राजकुमार ने सूर्यास्त्र का प्रयोग किया। इसके बाद अर्जितसेन ने धरणीध्वज द्वारा प्रयुक्त भुजगास्त्र को अपने गरुणास्त्र से, आग्नेयास्त्र को मेघास्त्र से, पर्वतास्त्र को वज्रास्त्र से रोका। इस तरह धरणीध्वज के सभी अस्त्र अर्जितसेन ने व्यर्थ कर दिये। तब उसे तीव्र क्रोध आया और म्यान में तलवार निकालकर अर्जितसेन की ओर भपटा। अर्जितसेन ने अमोघास्त्र से उसे निरस्त कर राजा की जीवन-लीला समाप्त कर दी। राजा के मरते ही विद्याधर भाग गये। इसके बाद हिरण्य का विदाई देकर वह बिपुलपुर वापिस आ गया। नगरी राजकुमार के स्वागत में खूब सजाई गई, जयध्वनि की गई, चमर हुलाये गये, मंगलाचार किया गया और फिर उसे नगर में प्रवेश कराया गया। बाद में जयवर्मा ने बड़े धूमधाम के साथ शुभ मुहूर्त में अपनी कन्या अग्निप्रभा के साथ राजकुमार का विवाह कर दिया। कुछ दिन वह वहा रहा और बाद में अपनी नगरी को प्रस्थान किया ॥१४॥

( 15-16 )

पुत्रागमन के समाचार सुनकर हर्षित-रोमांचित होकर पिता अपने परिजनो के साथ नगर के बाहर अर्जितसेन से भेंट करने आया और उत्सव पूर्वक अपने राज्य पर प्रतिष्ठित किया। इसके बाद पूर्वं पुण्य कर्म के प्रभाव से चक्रवर्ती अर्जितसेन के यहाँ शत्रुओं को दमन करने वाले चौदहरत्न उत्पन्न हुए। उनमें चक्रवर्त्त आदि रत्न हजारों यन्त्रों द्वारा रक्षित था, ज्येष्ठ मास के सूर्य के समान तेजस्वी था। खड्गरत्न शत्रुओं के लिए महाकाल सर्प था। वह तिमिर विनाशक था, अमरुह किरणों वाला था, वस्तु प्रकाशक था और अमोघ था। इसके बाद अर्जितसेन के यहाँ विष्णु रत्न प्रगट हुआ जो बारह योजन तक जलधर्म को रोकता है। चर्मरत्न पैदा हुआ जो शरीर समुद्र जल के तैरने आदि में उपयोगी होता है। चूडारत्न पैदा हुआ जो काले और गाढ़े अन्धकार को दूर करने में समर्थ होता है। शत्रुरत्न प्रगट हुआ जो सुमेरु जैसा था और जिससे मदजन का प्रवाह बन्द रहा था। दत्तरत्न ऐसा था जिससे हंसने पर भरण जैसी कान्ति स्फुटित होती थी। अश्वरत्न उत्पन्न हुआ जिसका वायु के समान प्रचण्ड वेग था, तेज था। दण्डरत्न कुनिशवत् था और वज्रशिला को भेदने वाला था। फिर बहु विद्याएं उत्पन्न हुई जो सभी तरह के विघ्नो का विनाश करने वाली थीं। सेनापतिरत्न प्रवर पराक्रम और गुणों का परिचायक था। स्त्रीरत्न स्त्री गुणों से भूषित तथा भोगासक्त मनुष्यों को मन भावन था। शिन्पिरत्न प्रासाद निर्माण में दक्ष था। शृङ्गतिरत्न आप-व्यय रखने में तथा घर के कार्यों में दक्ष था। इस तरह चक्रवर्ती अर्जितसेन को



चौदह रत्नों की प्राप्ति हुई। इसी तरह उन्हें नव निधिया भी उपलब्ध हुई जो यथेच्छ वस्तु प्रदान करती थी ॥16॥

( 17 )

इन ती निधियों में पाण्डुक निधि सभी प्रकार के धान्यों की पूर्ति करती थी। पिङ्गल निधि सुन्दर आभूषणों को प्रदान करती थी। काल निधि से छोटी ऋतुओं में उत्पन्न होने वाले फल चक्रवर्ती को यथेच्छ मिला करते थे। शस्त्र निधि के माध्यम से मृदंग, वीणा आदि चारों प्रकार के बाद्य उपलब्ध हो जाते थे। पद्म निधि सभी समयों के अनुकूल सूक्ष्म और सुंदर वस्त्र प्रदान करती थी। महाकाल निधि मणि, स्वर्ण आदि से निर्मित मनोहर बर्तन देती थी। माणव निधि से शत्रुओं का वध करने वाले सभी प्रकार के अस्त्र मिल जाते थे। नैसर्ग निधि शयनासन की व्यवस्था करती थी। सर्वरत्न निधि रत्नों और मणियों से आकाश में इन्द्रधनुष की शोभा फैलाया करती थी। इन निधियों से चक्रवर्ती की चिन्ता दूर हो गई। उनकी 96 हजार रानिया थी। 32 हजार कुशल सामन्त थे जिनसे शुक्र भी भयभीत होता था। 360 सूयार, 3 करोड़ नौकर, 84 लाख हाथी, इससे तिगुने रथ, 18 करोड़ घोड़े, तीन करोड़ गायें और 32 हजार मण्डल थे। इतनी सारी संपत्ति होने के बावजूद चक्रवर्ती में किसी प्रकार का दर्प नहीं था। वह भलीभांति शासन करता रहा ॥17॥

(18-19)

चक्रवर्ती अजितसेन के पिता अजितजय ने राजा महाराजाओं की उपस्थिति में अपने चक्रवर्ती पुत्र का पट्टाभिषेक किया। सारी प्रजा अत्यन्त हर्षित हुई। इसके बाद अजितजय पुत्र अजितसेन चक्रवर्ती के साथ बड़े हर्ष पूर्वक स्वर्णप्रभ तीर्थंकर की वन्दना करने चल पड़े। समवशरण में तीर्थंकर जिनेन्द्र को देखकर भक्ति पूर्वक वन्दना की, त्रिप्रक्षिणा की और पञ्चांग प्रणाम किया। बाद में हाथ जोड़कर विनय भाव में उसने प्रश्न किया।

हे भगवान् ! यह ससारी जीव भीषण भव प्रपञ्च में पड़ा हुआ है। वह शुद्धावस्था कैसे प्राप्त कर सकता है ? जीव कर्म से स्पष्टतः बंध जाता है। तब उसका सगम भिन्न गुणों के साथ कैसे हो जाता है ? बंध अवस्था में उसे सुख कैसे मिल सकता है ? विशुद्ध स्थिति कैसे पायी जा सकती है ? आप परमेष्ठी हैं, सर्वज्ञ हैं। इन सदेहों को कृपया दूर करें। स्वयंप्रभ तीर्थंकर ने कहा। बोलते समय उनका अक्षर स्पन्दन रहित था और उनकी वाणी एक योजन पर्यन्त सुनाई पड़ रही थी। मिथ्यात्व, अवरति, प्रमाद, कपाय, और योग ये पाच कर्मबन्ध के कारण हैं।

आत्मा इनमे जल्दी बंध जाता है। आत्मा मूलतः निर्मल है, विशुद्ध है, पर आश्रय के कारण उसका यह स्वभाव आवृत हो जाता है और वह पीड़ा पाता है ॥ 19 ॥

( 20 )

पञ्चीस कथायो मे आसक्त यह जीव कर्म से बंध जाता है। चार कथायो (क्रोध, मान, माया, लोभ) तथा पन्द्रह योगो के कारण वह भव भ्रमण करता रहता है। इस प्रकार कर्म से बंधा यह शुद्ध जीव खन्व-बिन्व न्याय से बड़ी मुश्किल से नर जन्म पाता है। खन्वाट बेल वृक्ष के नीचे जाय और बेल उसके शिर पर गिरे यह बहुत कम होता है। इसी तरह नर जन्म भी दुर्लभ होता है। उसके भी आर्य खण्ड मे जन्म मिलना और फिर शुभ कुल, जाति पाना और भी कठिन है। इसके मिलने पर भी जीव सासारिक बंधनो मे बंधा रहता है। काल-लब्धि आने पर, कर्म ग्रन्थि भेदने पर सम्यक्त्व प्राप्त हो जाने पर शुद्ध अवस्था मिल पाती है। सम्यक्त्व कभी कभार ही मिल पाता है ॥ 20 ॥

( 21 )

जैसे-जैसे कर्मपाश टूटता चला जाता है आत्मा की विशुद्ध अवस्था वापिस छाती जाती है। एक समय ऐसा आता है कि जीव कर्मों से पूर्णतः मुक्त हो जाता है और केवल ज्ञान प्राप्त कर लेता है। इस प्रकार जीव ससार के दुःखो का नाश कर परम पद प्राप्त करता है। स्वयंप्रभ तीर्थंकर का यह उपदेश सुनकर अजितजय राजा ससार मे विरक्त हो गया, पुत्र, कलत्र आदि कामोह छोड़ दिया, मन निर्बंद को प्राप्त हो गया, और उसे यह समझ मे आ गया कि ससार के दुःखो से विमुक्त होने का उपाय है जिनेन्द्र भगवान के चरणो मे पड़ुच जाना। यह सोचकर अजितजय ने तेरह प्रकार का चरित्र ग्रहण किया बारह व्रतो और तप प्रकारो का पालन किया। इस प्रकार अजितजय ने कर्म बन्धनो से मुक्ति पा ली। इधर अजितसेन ने आबक के बारह व्रतो को धारण किया और धायिक सम्यक्त्व प्राप्त किया। इसके बाद वे अपने नगर वापिस आ गये ॥ 21 ॥

## पंचम संधि

( 1-2 )

इसके बाद अजितसेन चक्रवर्ती समस्त सेना के साथ दिग्विजय के लिए निकल पड़ा। सर्वप्रथम वह पूर्व दिशा की ओर बढ़ा। दुर्गुमी के शब्द से सभी भयभीत हो रहे थे। सेना के सबसे आगे चक्ररत्न था। उसके बाद अश्वसेना चल रही थी। बढ़ते-बढ़ते वह समुद्र तट पर पहुँचा। वहाँ प्रभास देव ने उसका आदर-सत्कार किया। वहाँ से चौबीस योजन पर मागध देश का शासन था। वहाँ चक्रवर्ती ने बारह योजन में अपनी सेना फैला दी और बारह योजन दूर बाण वर्षा प्रारंभ कर दी। मागध ने नामांकित बाण देखकर भयभीत होकर अपने मंत्रियों से परामर्श किया और विचित्र रत्नों का उपहार देकर स्वागत किया। मागध को विनीतकर फिर चक्रवर्ती दक्षिण दिशा में गया जहाँ वरुण देव ने उसकी उपासना की। इसके बाद अजितसेन ने पश्चिम और वायव्य दिशाओं में भी दिग्विजय प्राप्त की। वहाँ के विद्याधरो और देवो को वश में किया। उनकी सेना को प्राप्त कर उसने अपना बल और बढ़ा लिया। सारे आर्य और म्लेच्छ लण्ड को जीत लिया जिसमें उसकी सेना को कोई हानि नहीं उठानी पड़ी। इसके बाद वह अपने नगर अयोध्या वापिस आ गया ॥ 1-2 ॥

( 3 )

इस तरह पाँच म्लेच्छ लण्ड और एक आर्य लण्ड अर्थात् छ लण्ड वाले भयक्षेत्र को जीतकर अजितसेन ने चक्रवर्ती पद पाया और अयोध्या प्राप्त की। इस बीच वसंत ऋतु था गई जो विरहिणियों के हृदय को विदीर्ण करने वाली थी। हिम वन्य सकल उपवनो में हेमन्त ऋतु का प्रभाव भी होने लगा। सर्वत्र मदन के बाणों की वर्षा होने लगी। सरोवर में सुंदर कमल विकसित हो गये, निष्कल हो गये। आन्न मन्त्रियों को देखकर विरही जन मरणोन्मुख हो गये। कोयल की कूक सुनकर मानिनी दुस्सह काम की शक्ति को समझ गई। सर्वत्र मलयानिल का संचरण हो गया। स्त्री के पाद-प्रहार से अशोक विकसित होता है पर कामिणियों ने सभी को शोक रहित कर दिया और अशोक यों ही विकसित हो गया। बहुल वृक्ष

स्त्री के गण्डूष से पुष्पित होता है पर इस समय उसने भी उस नियम का पालन नहीं किया। सर्वत्र मधुमास ने विषमी जनों को सतप्त कर दिया। चारों ओर पुष्प प्रफुल्लित हो उठे और भ्रमर गुञ्जित होने लगे ॥3॥

( 4-5 )

इसके बाद राजा केनिवन में चला गया। वहाँ देखा कि कुछ स्त्रियाँ अपने पदरज से वन को धवलित कर रही हैं, कुछ वनमाला को अपने वक्षस्थल पर डाल रही हैं मानो काम प्रवेश के लिए तोरण द्वार बना रही हों। जैसे ही कामाग्नि से पीड़ा हुई कि मानियो का मान भग्न शीघ्र होने लगा। कुछ स्त्रियाँ चपकमाला को शिर पर लगाये हुए थी माँगे काम ताप से बह जल गया हो। इस प्रकार वन में बिहार करते हुए केलि करते हुए राजा बड़ा आनन्दित हुआ। बाद में वह सरोवर के पान पहुँचा जहाँ मधु मनया-निल बह रही थी। वहाँ घनसेल के भाग से कुछ अवलाज न पथ पर चलते हुए खीझने लगी। कुछ की रसना रास्ते में चलते हुए बीच में ही डीली हो गई जिसे ठीक करने के लिए उन्हें खड़ा होना पड़ा। पहले जो अदर नग्नावस्था में थी उसने दोड़कर पति का आलिंगन किया। जैसे ही उन्होंने वहाँ पुरुष को देखा कि वे विचित्र हो उठी। जब में उनके स्नन-कुण्डों का विस्तार देख कर चक्र-युगल जन छोड़ कर बाहर निकल पड़े। उनकी सलील गति देखकर हंसो ने सरोवर छोड़ दिया। बहुधनसेल से वह सरोवर मुगधित हो गया। वहाँ फेन ऐसा दिखा जैसे हास ही बिखेर रहा हो। उन्होंने जल से नयनों का अञ्जन धोया जो ऐसा लगा जैसे कमल मानो अपनी काँति छोड़ रहे हो। उनके चलने पर पैर से महावर धरती पर लग गया जो ऐसा लगा जैसे रक्तकमल सौरभ लिए उठ खड़ा हो। इस तरह नारियों के माथ जल-क्रीड़ा करते हुए राजा का समूचा दिन निकल गया और सूर्य अस्त हो गया ॥4-5॥

( 6 )

इसके बाद जल-क्रीड़ा से निवृत्त होकर राजा प्रासाद में गया जहाँ उसे कामिनियों ने घेर लिया। प्रतापी सूर्य को भी जब अस्त हो जाना पड़ना है तो फिर गर्व करना निरी भूलता है। रवि-रथ का तुरग प्रस्थान करते ही रात्रि का मुख खुलने लगा। नभ तल पर रुधिर-सा आच्छादित हो गया जिसे सध्या कहा जाता है। सूर्य समुद्र में छिप गया। तुरन्त नारायण प्रकट हो गये। मानो विविध उपकारों का स्मरण कर दिन सूर्य के साथ ही अस्त हो गया हो। चक्रवाक पक्षियों के जोड़े दुखी होने लगे। चन्द्र की बलत्ता से भयभीत होकर अन्धकार छिप गया। दीपक ने मानो अन्धकार को पीकर अपने हृदय में छिपा लिया हो और उसे कज्जल के बहाने धीरे-

धीरे छोड़ रहा हो। अपने प्रिय के विरह से कमलों ने नेत्र बन्द कर लिए। हृदय में कामाग्नि का सताप बढ़ने से स्वेरिणी अपने प्रिय के घर सुविधा पूर्वक जाने लगी ॥6॥

### ( 7 )

पहले जिस नायिका ने अपने प्रिय से गाढाँलगन किया वही बाद में किसी प्रसंग पर कोपाविष्ट होकर आलिंगन मुक्त हो गई। शशि कामियों की ईर्ष्या को जान कर ही मानो नभ-तल से जल में संभरण करने लगा। निर्मल चन्द्र ने नभ का भक्षण कर हृदय में छिपा लिया जो उसके लाछन के रूप में अभिव्यक्त हो रहा है। चन्द्र नारियों के मुख से मधु उड़ेलता है यही सोचकर अन्धकार में उसे आच्छादित कर लिया। कामाग्नि से सतप्त होने पर नायिका जब अचेत हो गई तो उसकी मूर्छा दूर करने के लिए उसकी पीठ पर चन्दन का लेप लगाया गया। चन्द्रमा ने यह देखकर कुसुम के छल से किरणें बिखेर दी। उद्यान में भ्रमर भुनभुन आवाज करते हैं। चन्द्र मानो अपने अन्धकार रूपी बन्धु के मष्ट होने पर सदन कर रहा है। सकल भुवन में चन्द्र की ध्वनि किरणें फैली हुई है। लगता है, हर्षित होकर मदन अपना हास बिखेर रहा हो। बटाओ से निकले तीखे बाणों को चन्द्र ने मानो अमृत कुम्भ में भर लिया है। किरणों के माध्यम से उसका अमृत भर रहा है। स्त्री के मान रूपी पर्वत को चन्द्र ने वज्रानल से पूर्ण-चूर्ण कर दिया। इस प्रकार चन्द्र को विविध आधामो से देखकर आनन्दित होकर कामिनियों ने अपने प्रियतम के मन को बेध डाला ॥7॥

### ( 8 )

कोई नायिकाएँ हरिचंदन से अंग लेप कर रही थी मानो अमृत ने प्रवेश कर लिया हो। कोई हारावनी को अपने गले में डाल रही थी लगता था, मुख चन्द्र तार-भक्ति को ग्रहण कर रहा हो। कोई कणयुगल में कुण्डल धारण कर रही थी मानो मंदन के मुखरथ में चक्क लगा रही हो। कुछ कमर में मेखला को धारण कर रही थी मानो काम के मंदिर में तुंगसाल लगा रही हो। कुछ स्वच्छ वस्त्र पहने हुए थी जिनसे शरीर सुरभित हो रहा था। कहीं कालागुरु धूप जल रही थी उसके धूम के छल से, लगता था, विरह के दुःख से मृत नायिक को ज्ञापित किया जा रहा हो। राजा नायिकाओं के इस विलास को देखकर प्रफुल्लित हो गया। बाद में वह घर गया और शशिप्रभा के साथ संभोग किया। इस तरह सारे समय काम वासनाओं की तृप्ति करते-करते बुढ़ावस्था आ गई। बाल पक गये फिर भी पंचेन्द्रिय सुखों के उपभोग को उसने नहीं छोड़ा। सुरति का आनंद लेते हुए राजा को गहरी नींद आ गई और बाद में दीपक को कपित करने वाला शिशिरानल प्रबाहित होने लगा ॥8॥

( 9 )

प्रभात होते ही मागलिक वाद्य बजे और फिर स्तुति पाठको ने शीघ्र ही अन्दर प्रवेश कर राजा को रात्रि समाप्त होने की सूचना इस प्रकार दी । हे राजन् । अपनी प्रिया के बाहुपाश से निकलकर शय्या को छोड़ो । बाहर आकर देखो - जो और रात्रि में बंद हो गये थे, खिप गये थे वे उन कमलों से दुःख त्याग करते हुए बाहर आ रहे हैं मानो अन्धकार को वेच कर रहे हों । भुगों की आवाज सुनकर ऐसा लग रहा है जैसे वह कह रहे हैं कि चित्त की कलुषता छोड़ो और कोमलता धारण करो । नल रूपी तस्करको नष्ट कर पूर्वांचल में सूर्य की किरणें निकलने लगी । वन के विद्रुम ऐसे लग रहे हैं जैसे सूर्य-बिम्ब के पके फलों को ही वे धारण कर रहे हों । रतिधर के गवाक्षों से सूर्य की किरणें प्रवेश करने लगीं मानो सतप्त मदन प्रीणित हो रहा हो । घर का हर भाग सूर्य के प्रकाश से जगमगा उठा । उसी समय मंगल वाद्यों से राजा की निद्रा टूटी और वह जाग उठा । दैनिक क्रियाओं से निवृत्त होकर उसने जिन पूजा की और दानमयी सिंहासन पर जा बैठा । तब लोगों को ऐसा लगा जैसे मण्डप में चन्द्र आ गया हो । उसी समय सामन्तों, मंत्रियों, आदि ने आकर प्रणाम किया और मुमधुर वचनों से वदनाकर सर्वावसर नामक मन्त्र मण्डप में बैठ गये ॥९॥

( 10 )

तदनन्तर अजितसेन ने अपनी सेवा के निमित्त आये एक गजराज को देखा । वह गजराज अत्यन्त बलवान था । राजा ने उससे क्रीडा करने के लिए अपने वीरों को सकेत किया । राजा की आज्ञानुसार एक ने उस गजराज की सूँड पर मुक्के का कठोर प्रहार किया, दूसरे ने दूमरी और से आरी चुभा दी, किसी ने लोढ़ा मार दिया । इस तरह ये वीर पुरुष उस गजराज को युद्ध की शिक्षा दे रहे थे । गजराज क्रुद्ध हो उठा था । इसी बीच एक व्यक्ति बीच में आ गया । हाथी ने आगे सूँड फैलाकर उसे पकड़ लिया और धरती पर पटक दिया । गिरते ही उसके अंग प्रत्यग चूर-चूर हो गये, हड्डियां टूट-टूटकर बिखर गई ॥१०॥

( 11 )

उस पुरुष को मृत्यु-मुख में जाते हुए देखकर राजा सतप्त हो गया और वैराग्यभाव से सोचने लगा—यह ससार-समुद्र बड़ा भीषण है । यहाँ कोई भी वस्तु शाश्वत नहीं है । मरण अवश्यम्भावी है । जो उत्पन्न होता है वह मरता अवश्य है और फिर अव-भ्रमण करता है । ससारी व्यक्ति इस क्षण भगुर देह को भी अपना

मानकर उसमे आसक्त रहता है। नारी के रूप-सौन्दर्य को देखकर काम बाण से बिद्ध होता है और उसका संयोग पाकर अपने आपकी सुखी मानता है। इसलिए धन मैं संसरण के सभी मूल कारणों को समाप्त करूंगा। यह सोचकर विचार करने लगा और कषायों का उपशम करने लगा। इसी बीच द्वारपाल ने सूचना दी ॥11॥

## ( 12 )

हे देवाधिदेव ! क्याति सपन्न गुणप्रभ नामक मुनिराज अपने सच सहित शिवकर नामक उद्यान में पधारे हुए हैं। वे पञ्चमहाव्रतों को धारण करने वाले हैं। उन्होंने पचेन्द्रिय विषय-द्वारों का सबर किया है। उनके पञ्च ज्ञानों से मानो दिनकर प्रकाशित हो रहा है। पञ्च निर्गन्धों में वे श्रेष्ठ हैं। पञ्च परमेष्ठियों की आराधना करने में व्यस्त हैं। पञ्च प्रकार के शरीरों को धारण करने वाले हैं। पाँचों भवों के स्वरूप को उन्होंने अच्छी तरह जान लिया है। पाँचों मिथ्यात्वों का उन्होंने विनाश कर दिया पञ्च स्वाध्यायों का वे परिपोषण कर रहे हैं। पञ्च समितियों का परिपालन कर रहे हैं। पञ्चास्तिकायों का उन्हें अच्छा ज्ञान है। पाँचों जीवसमासों का वे रक्षण करते हैं। पञ्चाश्रवों के स्वरूप को जानकर चिंतन करते हैं। पाँचों आचरणों का पालन करते हैं। पाँचों बाणों का सहार करते हैं। पञ्चमेवग्रों की वदना करते हैं। पञ्चम गति को सुख रस कह अनुभव करते हैं। पञ्च अनुस्तर वासियों द्वारा पूजित हैं। पञ्च मिथ्यात्वों से वजित हैं। पञ्च स्थावर से जीवों पर दया करते हैं और पञ्च निद्राग्रों को उन्होंने जीत लिया है। राजा ने उसकी इस बात को सुनकर प्रसन्नतापूर्वक वनमाली को सम्मानित किया ॥12॥

## ( 13 )

राजा उद्यान में पहुँचा और वहाँ मुनिवृंद को देखा कि वे राग-द्वेष से मुक्त थे, गुणों से महान थे, अन्तर-बाह्य से निर्मल थे, बाह्य अश्वत्तर तप से उनका गात्र कृष्ण हो गया था, पुण्य-पाप बंधों से मुक्त थे सविपाक-अविपाक निर्जरा से कर्मों की निर्जरा की थी, इन्द्रिय-प्राण संघम के माध्यम से परम धर्म का पालन कर रहे थे, नरक तिर्यञ्च गतियों से मुक्त थे, उच्च-नीचगोत्र कर्म को भी उन्होंने नष्ट कर दिया था, स्कन्ध-परमाणु के भेद से पुद्गल के स्वरूप को जानते थे, सकल-निकल सिद्धों की वदना करते थे, साता-असाता वेदनीय कर्मों का उन्होंने क्षय कर लिया था, वे आत्म स्वभाव को अलीभाति जानते थे, सम्यक्त्व को भी पहचानते थे, मन-वचन-काय सबर से हृष्ट थे, स्त्री-पु-नपु सक वेदों से दूर हो गये थे, त्रिगुप्तियों का परिपालन करते थे, त्रिमूढ़ताग्रों से दूर थे, तीनों गुणव्रतों से मुक्त थे, तीनों कालों और लोकों का प्रत्याख्यान कर दिया था, रस-ऋद्धि-तप की गौरव छाया से मुक्त थे, तीनों

शल्यो को भी उन्होंने छोड़ दिया था, तीनों दड़ों से भी वे मुक्त थे और तीनों शुद्धियो से उन्होंने आत्मस्वभाव को शुद्ध किया था। इस प्रकार मुनिवर को देखकर उनके गुणों से आकृष्ट होकर राजा ने उनकी चरणवदना की और आत्मस्वभाव का भावन किया, पापों से मुक्त हुआ और गुण-श्रेणी चढ़ गया ॥13॥

( 14 )

राजा ने निवेदन किया-हे मुनिवर ! हमारे पापकर्मों का विनाश कीजिए। हमारे नेत्रों को सफल बनाइए और मनोरथ पूर्ण कीजिए। आज हमारे मनुष्य जन्म को सफल बनाइए, हमारे घोर कर्मों का विनाश कीजिए, हमने आज जो चित्तामणि पाया है वह व्यर्थ न चला जाये। इसलिए हे स्वामिन ! इस समार-सागर के दुखों से मुक्त कीजिए और जिनदीक्षा देकर प्रसन्न होइए। आप कृपा सागर और गुणमहान् हैं। राजा की यह बात सुनकर मुनिवर ने राजा के मन की परीक्षा करने की दृष्टि से पूछा-हे राजन् ! कमल पत्र किसी तरह का कठोर भार नहीं सह सकता। तम्हारा शरीर सुकुमाल है। अभी तक तुमने कभी ककड-मिट्टी को नहीं सहा है। शिरष कुसुम-सा यह तुम्हारा सुकुमाल देह जिनदीक्षा जैसे दुखद और कठोर तप को कैसे सहन कर सकेगा ? जो शरीर हरि चंदन का लेप लेना रहा हो वह रज का भार कैसे ग्रहण कर सकेगा ? जो हम-तूल के पलग पर सोया हो उसका चित्त कठोर तल पर कैसे लगेगा ? अभी तक तुमने सुबाहु भोजन किया उसी में सुख माना अब दुखों का घर, देखने में अमृदर जिनदीक्षा को क्या ग्रहण करने की इच्छा कर रहे हो ? ॥14॥

( 15 )

राजा ने मुनिवर की बातें सुनकर कहा कि हे मुनिवर ! इस जैनैन्द्री कठोर तप का आचरण करने के लिए मैं कटिबद्ध हूँ। मैंने अभी तक सकल सुखों का उपभोग किया है पर नरक के दुख भी भोगे हैं। कभी चंदन का लेप किया तो कभी दुर्गंध में अबगाहन किया, कभी चामर हुंसे तो कभी तप्त मुद्गर पड़, कभी रत्नासन पर बैठे तो कभी हाथी का सूल देखा, कभी हरिणनेत्रियों का आलिंगन किया तो कभी डायनों से पाला पड़ा, कभी हाथी पर चढ़ा तो कभी गधे की सवारी की, कभी सुकवियों के प्रशंसा वाक्य सुने तो कभी हाहाकर भी सुना, कभी रूप में अनग को जीता तो कभी कुष्ठ रोग से अग सड़-गले। इस प्रकार विविध रूपों से ससार में भ्रमण किया और कमबधनों से जकड़ा जाता रहा। इस प्रकार कहकर राजा ने अपने कठ से हार उतारा और राज्य-भार पुत्र को सोपा। केशों का लुचन किया, आभरण और वस्त्र, छोड़कर तप और आचरण को स्वीकार किया। इसके बाद मुनिवर द्वारा प्रदत्त शिक्षा को विनय पूर्वक ग्रहण किया ॥15॥



( 16 )

फिर राजा ने बारह प्रकार का दुर्बल तप किया, बारह अविरति से दूर रहा, बारह अनुप्रेक्षाओं का चिंतन किया, बारह प्रायश्चित्तों का मथन किया, बारह अंगों का अध्ययन किया, बारह सिद्धान्तानुपयोग का पठन किया, बारह उपयोगों को मन में धारण किया, श्रावक के बारह व्रतों को छोड़कर महाव्रतों को अंगीकार किया, तेरह प्रकार के निर्मल चरित्र को ग्रहण किया, तेरह कषायों को दूर किया, चौदह पूर्वों और प्रकीर्णकों का ज्ञान प्राप्त किया, चौदह प्रकार के परिग्रहों को छोड़ा, पिण्डघेषणा को मन में धारण किया, चौदह भलों का विसर्जन किया और चौदह गुण-श्रेणियों पर क्रमशः चढ़ता गया । इस प्रकार बहुत काल तक तपस्या कर अच्युत स्वर्ग में इन्द्र हुआ । बाईस सागर तक वहां के दिव्य सुख भोगे ॥१६॥

---

## षष्ठ संधि

( १ )

आयु समाप्त कर तुम अच्युत स्वर्ग से च्युत होकर रत्नसचयपुर में कनकप्रभ राजा के घर अवतरित हुए और पद्मनाभ राजा के नाम से विश्रुत हुए। इस प्रकार मुनि ने पद्मनाभ के पूर्व भावान्तरो का वर्णन किया जिसे राजा ने अजुलि भाव से ग्रहण किया। उसे सुनकर उसका मन पुलकित हो गया और हर्ष विभोर होकर मुनिराज से कहा—हे मुनिवर ! आपने मेरी पूर्वजन्म कथा तो बता दी। अब आप कोई ऐसी विश्वासजनक बात बताये जिससे मेरी सशय बुद्धि दूर हो सके। यह सुन कर मुनिराज ने पुन कहा—आज से ठीक दसवें दिन एक मदोन्मत्त हाथी—वनकेलि अपने झुण्ड को छोड़कर तुम्हारे नगर में आयेगा। उसे देखकर तुम्हें मेरी कही हुई सारी बातें स्पष्ट हो जायेंगी। यह सुनकर राजा को सतोष हुआ और वह मुनिराज को प्रणाम कर अपने नगर वापस आ गया। घर पहुँचकर राजा ने सुल-साता पूर्वक काल यापन किया और मुनिराज द्वारा निदिष्ट दिनों की गणना करता रहा। ठीक दसवें दिन पूरजन एक हाथी का पीछा करते हुए सुताई पडे। बून ने आकर पद्मनाभ से कहा।

( २ )

हे राजन ! कहीं से एक हाथी आ बमका है मानी वह प्रलयमेष हो। उसके गण्डस्थल से मदजल बह रहा है, सभी लोगों को वह नष्ट कर रहा है। अपने कर-सीकर से सिंचित सूर्य-चन्द्र भी पल भर में नीचे आते-से दिख रहे हैं। प्रत्यक्ष रूप में आप देखिये वह प्रलय काल ही है। राजा यह सुनकर उठा और तुरन्त गजराज के सामने पहुँच गया। गजराज अपनी सूँड उठाकर प्रचण्ड वेग से प्रलय दण्ड सा लेकर राजा की ओर दौड़ा। राजा ने सामने दौड़ते हुए उस हाथी के मुख पर हथिनी की पेशाब से सिञ्चित कपड़ा फेंक दिया। हाथी उस कपड़े में जैसे ही आमक्त हुआ, पद्मनाभ ने उसकी बगल में जाकर डण्डे का प्रहार किया। उस प्रहार से

जैसे ही वह उस ओर भुड़ा कि राजा क्रूसरी ओर हो गया। इसी तरह वह उसके चारो ओर घूमता रहा। हाथी जब बिलकुल पस्त पड़ गया तो पद्मनाभ उसके कुम्भस्थल पर पड़ गया। इस तरह उस अनुल पराक्रम वाले हाथी को राजा पद्मनाभ ने अपने बख में कर लिया और फिर वह अपने स्थान वापिस आ गया। इसके पश्चात् एक दिन की बात है कि राजा पद्मनाभ जब सभागार में बैठा हुआ था कि एक दूत पृथ्वीपाल का संदेश लेकर आ पहुँचा।

( 3 )

हाथ जोड़कर उस दूत ने कहा—हे राजन ! आपका विनय व्यवहार सर्वत्र प्रसिद्ध है। परन्तु मेरे राजा पृथ्वीपाल ने यह कहा है कि आपने उनके प्रति बड़ी अभद्रता, अविवेकता का प्रदर्शन किया है। मेरा हाथी उनके नगर में आया और उसे आपने पकड़कर अपने अधिकार में कर लिया। यह अविवेकता, घृण्यता कौन सह सकेगा ? पृथ्वीपाल का कहना है कि उसे आप शीघ्र ही वापिस कर दें और राजा की भक्ति करें। असत् भी उसकी दासता स्वीकार करते हैं। गृह्यक्रम भी दीर्घवास लेकर उसके चारो ओर सक्रमण करते हैं। दुर्निमित्त भी उसके साथ मित्रता किये हुए हैं। जो अवसर को पहचानते हैं वे लोक में वाञ्छित फल प्राप्त करते हैं। लोक में जो भी कोई दुष्ट है वे सब उसकी दासता स्वीकार करते हैं : इसलिए आप राजा पृथ्वीपाल का हाथी वापिस कर दें और उसकी चरणी बन्दना कर उससे स्वयं मिल लें। यह सुनकर राजा ने युवराज सुवर्णनाभ को बोलने के लिए सकेत किया।

( 4 )

युवराज स्वर्णनाभ ने कहा—हे दूत ! तुम्हें जीवित रहना है या टुकड़े-टुकड़े होना है। राजा पद्मनाभ के कारण तुम जीवित हो कि नहीं तुम्हारा विनय भंग असहनीय है। गजराज जैसी वस्तु पुण्यवान को ही प्राप्त होती है। गजराज स्वयं यहां आया है। उसे बलात् कोई छीन ले, वह कैसे हो सकता है ? यदि वह कृपा पूर्वक हमसे हाथी की याचना करना चाहता है तो वह ले सकता है पर भय दिखाकर नहीं ? अविवेक प्रदर्शन से जीवित रहना भी कठिन होगा। तुम्हारा राजा पृथ्वीपाल जो निष्कटक राज्य भोग रहा है वह राजा पद्मनाभ की कृपा से भोग रहा है। अब तुम यदि अपना भला चाहते हो तो यहां से चले जाओ अन्यथा अपने मुण्ड लुपी कमलों से सग्राम भूमि की अर्चना करनी पड़ेगी। दूत यह सुनकर क्रुपित हो गया

और पुन कुछ अपमान जनक बातें कही जिन्हें सुनकर राज दरबार के योद्धा संतर्पित हो गये और कोप से कपित हो गये ।

( 5 )

राजा पद्मनाभ ने युवराज तथा सारी सभा को समझाया कि व्रत से कुपित होना व्यर्थ है । वह तो अपने स्वामी की बात को ही दुहराता है । जो जिसका छःयेगा वह उसका भत्रायेगा ही । फिर वून स कहा कि तुम ने इसका फल जाने बिना ही यह सब कह डाला । तुम व्रत हो इस लिए क्षमा किया जाता है । अब तुम जाओ । इसका निर्णय सभाम में ही होगा । राजा की बात सुन कर व्रत अपने नगर वापिस आया । इधर पद्मनाभ सभी सभामदों के साथ मन्त्रणा घर में पहुँचा । जो कुछ अनुभवों और नीतिकुशल मन्त्री थे, शास्त्रज्ञ और सभाम के धीरे वीर योद्धा थे, विवेकवान थे, उन सभी से विचार-विमर्श किया । युवराज स्वर्णनाभ भी वही था ।

( 6 )

सभामदों में ज्येष्ठ मन्त्री पुरुमूति बोला—हे स्वामिन् ! आप विशेष नीतिज्ञ हैं । आपके प्रागे मैं क्या बोलूँ । फिर भी—साहम कर रहा हूँ । जो सूर मात्र भाव से सन्तप्त होते हैं, नीति मार्गज्ञ नहीं होते जैसे मिह्रादि, वे भी शिक्षारियों द्वारा समाप्त कर दिये जाते हैं । इसलिये नयहीन पराक्रम सफलतादायक नहीं होता । पतंग के साथ दीपक भी निष्कारण बुझ जाता है उसी तरह क्रोध में व्यक्ति छिन्न-भिन्न हो जाता है । भस्म (धूलि) भी दण्ड में उसकीरे जाने पर शिर पर लगती है । जैसे प्रबोध शिशु जलते हुए काष्ठ को अपनी ओर खींचने पर जल जाता है उसी तरह नीति से अनभिज्ञ व्यक्ति स्वयं दुःखी हो जाता है । अतएव साम से ही काम किया जाना चाहिए । वही सुख का स्थान है । माम से ही तिर्यञ्च भी अनुकूल हो जाते हैं । पर यदि उम्हे दण्ड का भय दिखाया जाये तो वे काष्ठित होकर प्राणलेवा बन जाते हैं । हे राजन् ! अमृत के समान साम के रस का पान करने वाला बेबी द्वारा भी बदनीय होता है । इसके बाद युवराज स्वर्णनाभ जोशीले शब्दों में बोला ।

( 7 )

हुंष्ट व्यक्ति के साथ साम नीति का पालन कैसे संभव है ? दूसरी की वृद्धि देखकर ईर्ष्या करने वालों के साथ साम कैसा ? साम का प्रयोग उसके योग्य व्यक्ति के साथ ही किया जा सकता है । वज्र से तोड़ने योग्य पहाड़ पर लोहे का हथियार काम नहीं कर सकता । तप लोहे पर शीतल जल डाला जायेगा तो वह और उद्दीप्त

हो जायेगा। दुष्ट का भी यही स्वभाव होता है। जिसने सारे गांव को भयकपित कर दिया है। ऐसे सिंह के साथ साम का व्यवहार कैसा? गुरु इती जैसे व्यक्तियों के साथ तो वितथ वृत्ति ठीक है पर दुष्ट के साथ उसका प्रयोग विपरीत ही होगा। यह सुनकर पुरुभूति मन्त्री (अन्यत्र भवभूति मन्त्री) पुन बोला— राजन! यदि युद्ध करना है तो पहले गुप्तचरो के माध्यम से उसकी स्थिति का पता लगा लेना चाहिए। बिना गुप्तचरो से उसकी वास्तविक शक्ति आदि का पता लगाये युद्ध करना उचित नहीं होगा। पुरुभूति की बात सुनकर पद्मनाभ ने कहा—हाँ, पुरुभूति का का कथन ठीक है। गुप्तचरो से उसके बल का पता लगाया जाय। पश्चात् युद्ध के विषय में निश्चय किया जाये। इस तरह मन्त्रणाकर गुप्तचरो का उपयोग कर पृथ्वीपाल के बल की स्थिति को समझा और फिर सामन्तो तथा मित्र राजाओं के साथ पृथ्वीपाल से युद्ध करने का निश्चय कर लिया।

( 8-9 )

राजा ने नगर में युद्ध भेगी बजवा दी और शुभ दिवस में युद्ध करने चल पड़ा, मानो शत्रु के लिए प्रलय-बाल ही हो। लोग हाथी पर सवार राजा की वदना करते चले जा रहे थे। उसकी गज, अश्व, रथ और पदाति सेना ने चारों ओर घूम मचा दी। घोड़ों की टापी से उत्थित धूल से आकाश आच्छादित हो गया। डिण्डिम की आवाज सुनकर लोग रास्ते से हटत चले जा रहे थे। राजा पद्मनाभ की शोभा देखने के लिए लोग कौतुहलवश अपने घरों से निकल पड़े। जिस मार्ग से लोग चल रहे थे उस पर कोलाहल बढ़ रहा था जिसे सुनकर कुछ लोग भयभीत हो रहे थे। हाथी को देखकर ऊट डर गया और बोझ गिराकर ऐसा भागा कि लोग ठहाका मार कर हसने लगे। हाथी की सूङ में निकले 'कू' शब्द को सुनकर बेल डर गये और उनके भागने से गाड़ियां टूट गईं जिनमें रत्ना हुआ सामान गिर गया। एक स्त्रालिन दत्तनी घबडा गई कि उसके सिर पर रत्ना दही का घड़ा गिर गया। कुछ समय वह शोक करती रही, बाद में लौट कर अपने घर चली गई। 'हटो, रास्ता छोड़ो' की आवाज से लोग भयभीत-से हो रहे थे। इस तरह राजा ने सेना के साथ नगर से प्रयाण किया और जम्बावहनी नदी के किनारे पहुंचा।

( 10-11 )

इसके बाद राजा पद्मनाभ मणिकूर नामक पर्वत पर पहुंचा और वहाँ सेना को ठहरा दिया। उस पर्वत की गुफाओं में देवलोभ अपनी देवियों के साथ श्रीडा करते थे। मघ उन गुफाओं में सूर्य-चन्द्र की किरणों को जाने से रोक देते थे पर

विद्युत्प्रभा से उन देवियों की मुल-श्री अंधकार में भी दिख जाती थी । मेघ पर्वत के चारों ओर संचरण करते थे जिससे वन-विचरण रोमांचक हो रहा था । कहीं साधु भूमितल पर लोट रहे थे, कहीं प्रकृति की शोभा से पर्वत की शोभा द्विगुणित हो रही थी । इतने सुंदर पर्वत पर सामन्तो ने भी डेरा डाल लिया । इस बीच सूर्यस्त हो गया । इसके बाद उनमें रमरेलिया प्रारंभ हो गई । जोड़े बाहुबद्ध हो गये । किसी ने सप्तकर्ण पुष्प को तोड़कर उसे प्रिया का कुण्डल बना दिया, किसी ने मदजल से प्रिया को शीतल किया । इस तरह विविध कामकेलियाँ करते हुए रात बीन गई ॥10-11॥

( 12 )

प्रातः काल हुआ और सूर्य ने अपना प्रकाश फैलाया । सैनिकों ने अपने बाहुदण्ड पनारे । युद्ध की तैयारी प्रारंभ हो गई । युद्ध के उत्साह में किसी का शरीर रोमांचित हो गया और फलतः दूसरा कवच फैल गया । किसी ने शिर में वीरपट बांधा वह ऐसा लगा मानो शत्रु के शिर में रक्तघट बांध रहा हो । किसी के नेत्र शत्रुओं के प्रति क्रोध से लाल हो रहे थे जिससे उसका कवच भी लाल दिखने लगा । कोई सन्नाम में पृथ्वीपाल के प्राण हरण की प्रतिज्ञा कर रहा था । इस तरह योद्धा सन्नाम में जाने की तैयारी करने लगे । उस समय ऐसा लग रहा था जैसे शत्रु पृथ्वीपाल का मृत्यु-काल आ गया है ॥12॥

( 13 )

राजा पद्मनाभ रणभेरी बजवाकर युद्ध के लिए चल पड़ा मानो समुद्र के लिए झुबड़ कर दिया हो । काक, खर, उलूक आदि पक्षी दायें होकर मधुरवाणी का उच्चारण करने लगे । हाथी मदोन्मत्त हो गये । सारंग, नकुल दायीं ओर से चलने लगे । वायु का प्रवाह अनुकूल हो गया । राजा की दायीं भुजा फड़कने लगी । पद्मनाभ के लिए ये शत्रु शत्रुन थे । पद्मनाभ की यह तैयारी सुनकर पृथ्वीपाल भी युद्ध के लिए निकल पड़ा । उसके निकलते ही साप रास्ता काट गया, हाथ से तलवार गिर पड़ी, वाया हाथ फड़क उठा, बार-बार छीकें भाने लगी, आग लग गई । पृथ्वीपाल के क्रोध ने इन अपशकुनों की अवमानना कर सेना को आगे बढ़ने के आदेश दिये और वह पद्मनाभ की छावनी के पास अपनी सेना के साथ पहुंच गया । तुरंत ब्रज उठे । योद्धा इधर-उधर दौड़ पड़े । ऐसा लगा जैसे प्रलय आ गया हो और दो समुद्र भिड़ गये हों ॥13॥

( 14-15 )

धूलि से सारा गगन आच्छादित हो गया मानो काल-रात्रि आ गई हो और सूर्य नष्ट हो गया हो। वनस्पति की टकार से युद्ध का पता चलता था। घोड़े हिनहिना रहे थे, हाथी चिंघाड़ रहे थे, रथचक्र चिक्कार रहे थे, योद्धा एक दूसरे के बल को तोल रहे थे, आकाश बाणों से आच्छादित हो गया, सूर्य का प्रकाश मन्द पड़ गया, योद्धा परस्पर वचन-युद्ध कर रहे थे, कोई अपने कृपाण में शत्रु का शिर काट रहा था, किसी का शिर कृपाण से कट जाने पर ऊपर उछलता जिसे बरती पर गिरने के पूर्व ही पक्षी कुतर डालते थे। कोई स्वामी का कार्य मानकर लाया हाथ कट जाने पर बाये हाथ से शत्रु के शिर को काट रहा था। योद्धा अस्त्रों के समाप्त हो जाने पर हाथों-पैरों से युद्ध करते थे। इस प्रकार दोनों सेनाएँ युद्ध में जुटी-हुई थीं ॥14-15॥

( 16 )

दुर्धर बाण वर्षा जब योद्धा मरने लगे तो पृथ्वीपाल विषधर के समान आगे बढ़ा। वह प्रतिपक्षी योद्धाओं को समाप्त करने के लिए दृढ़प्रतिज्ञ था। यह देख पद्मनाभ भी अपने हाथी पर सवार होकर उसकी ओर बढ़ा। दोनों में घमासान युद्ध प्रारम्भ हो गया। पृथ्वीपाल कोपाविष्ट होकर निश्वास छोड़कर पद्मनाभ से कहता है कि मैं अभी अपने बाणों से तुम्हारा रथ चूर-चूर किये देता हूँ। पद्मनाभ ने कहा-क्यों व्यर्थ मे प्रलाप कर रहे हो। तुम्हारी सेना तो पहले ही बहुत कुछ समाप्त हो गई। अब तुम क्या करोगे मैं अभी तुम्हें मृत्यु लोक में पहुँचाता हूँ। यह सुनकर पृथ्वीपाल राजा प्रलयकाल जैसा युद्ध में जुट गया। परन्तु पद्मनाभ ने उसकी बाण वर्षा को निष्फल कर दिया। दोनों योद्धा गिरिवर के समान थे। उनका अपरिमाण बल था। दोनों समुद्र के समान गभीर थे, योद्धा था। दोनों के लिए विजयश्री मानो कुछ अन्तर से खड़ी हुई थे। तब पद्मनाभ ने वनस्पति को सट्टाला और क्रोधानल से दग्ध होते हुए पृथ्वीपाल की ओर बढ़ा। पृथ्वीपाल के बाण लक्ष्य तक पहुँचने के पहले ही पद्मनाभ उन्हें बीच में ही अर्ध-बन्धाकार बाणों से काट डालता था ॥16॥

( 17 )

पद्मनाभ ने बाणवर्षा से पृथ्वीपाल को अधिक समय तक नहीं टिकने दिया पृथ्वीपाल ने बाद में चक्र, शक्ति और परशु का भी उपयोग किया जिन्हें पद्मनाभ ने क्रमशः मुद्गर, गदा तथा वज्रमुष्टि का प्रयोग कर उसे निरस्त कर दिया। बाद में पद्मनाभ ने अपने चक्र से पृथ्वीपाल का शिर काट दिया। फलतः विजयश्री पद्मनाभ के हाथ लगी। पृथ्वीपाल का पतन देखकर उसकी सेना भाग खड़ी हुई। जय मुन्दुभी बज उठी। मृत योद्धाओं का दाह तस्कार किया गया। बाद में किसी सेवक ने पृथ्वीपाल का कटा शिर पद्मनाभ के सामने रख दिया जिसे देखकर उसके मन में वैराग्य पैदा हो गया।

वह सोचने लगा कि मोह कितना प्रबल रहता है। यह शरीर मल-मूत्र जैसे प्रशुचि तत्वों का घर है फिर भी व्यक्ति उसमें आसक्त रहता है। बाणों की वर्षा से प्रतिपक्षी का मस्तक काट देता है। जो हाथी पर सवार होकर युद्ध करने निकलते हैं वे रणस्थल में ही मार दिये जाते हैं ॥17॥

( 18 )

आज जिसे मैंने क्रोध से मार डाला अगले जन्म में वह मुझे मारेगा। इन चर्मचक्षुओं के विषयो से कौन बचना चाहेगा जो जन्म-जन्मास्तर तक नरक के दुखों का कारण बने। कोप से ही हमने पापकर्म संचित किये और कोप से ही सारा धर्म नष्ट किया। कोप के कारण ही हमने गुण नष्ट किये। कोप से ही चारों वर्गों का अय हुआ, कोप से ही चिरकाल में किया गया तप समाप्त हो गया। कोप से ही लोग अपनी कीर्ति ध्वस्त कर देते हैं, नारी के समान धैर्य खो देते हैं, विवेक विलीन हो जाता है, आसन में पतन हो जाता है, स्नेह-बन्धन टूट जाता है, सपत्ति नष्ट हो जाती है, कोप हर तरह की निन्दा का कारण बनता है, कोप से ही गुण धूल में मिल जाते हैं, व्यक्ति आत्मघात कर लेता है, निगोद में जन्म ग्रहण करता है, कोप के समान और कोई दूसरा भीषण शत्रु नहीं है। कोपाग्नि से प्रदीप्त व्यक्ति शम, दम में दूर हटकर कृष्णलेण्या के रंग में रंग जाता है, स्वयं दुःख भोगता है, कभी सुख नहीं पाता और विषय कपायो में बंधा रहता है ॥18॥

( 19 )

मान कपाय एक पिशाच है जो कष्टी नमता नहीं भले ही शूल पर चढ़ना पसन्द कर लेगा। मानी व्यक्ति स्वयं निर्गुण रहते हुए भी गुणवानों की निन्दा करेगा, स्वयं पापी रहते हुए भी महान लोगों के पापों को खोजता रहेगा। उन पर रोष व्यक्त कर स्वयं को गुणवान् मानेगा। यानी किसी से भी शिक्षा ग्रहण नहीं कर सकता। वह वस्तुतः लोक में उपहास का पात्र बन जाना है। मानियों के गुण नष्ट हो जाते हैं और मित्र भी शत्रु बन जाते हैं अथवा घर भी नरक बन जाता है, सभी के अनादर का कारण बनते हैं। मान पाप की बेल है, क्रोध का कारण है, सभी के हृदय का सूत है, मिथ्यात्व का बीज है, माया सर्पिणी है, दम्भ का कारण है, जिसके हृदय में वह रहेगी उसे नष्ट कर देगी और उसके धर्म का शुभ फल भी समाप्त हो जायेगा ॥19॥



## ( 20 )

माया शीलघन का पाश है, दुष्कृत कर्मों का घर है, दुःख जनक है, गुण रूपी पर्वत के लिये वज्राघात है, संसार समुद्र रूपी सर्प का अमृतप्रास है, दुष्कीर्ति का जनक है, तिर्यञ्च गति का मार्ग है, यश-बल्ली के लिए कृपाण स्वरूप है, शुभ गति के लिए किवाड़ है। मानी प्रथमतः स्वयं की वञ्चना करता है। बाद में बाधक, प्रियजनो व माता-पिता की वचना करता है। वह दोषो का पिण्ड है, अशुचि का घर है गूढ़ स्वभावी होता है, नीरस होता है, सुधर्म को छोड़ने वाला होता है। इसी तरह लोभ भी मोह का विस्तारक है, हम जैसे लोगों को संसार बाधने वाला है, संसार-सागर में गिराने वाला है, बहु दुःख देने वाला है ॥20॥

## ( 21 )

लोभ सकल कुकर्मों का निधान है, पापों की उत्पत्ति का कारण है, सभी दोषों का घर है, अविरति रूपी पहाड़ी नदी के लिए मेघ है, कुमुदों के लिए सूर्य है, दुर्भाग्य का जनक है, अपाप का कारण है, लज्जा और चातुर्य का विनाशक है, माया का स्थान है, भोगेच्छाओं का वर्धक है, नरक का मार्ग है। इस प्रकार इन मूल कपायों से प्रमाद उत्पन्न हुआ जिससे हम चतुर्गतियों में भ्रमण करते रहे। इसलिए अब सामारिक सुखों को छोड़कर जिनेन्द्र द्वारा प्रोक्त तप और आचरण का पालन करना चाहिए ॥21॥

## ( 22 )

इस प्रकार राजा पद्मनाभ ने संसार की दुर्दशा पर विचार कर युवराज सुवर्णनाभ को बुलाया और उसे राज्याभिषिक्त कर दिया। साथ ही पृथ्वीपाल के शोकाकुल पुत्र धर्मपाल को उसी के राज्य पर प्रतिष्ठित कर यह कहा कि अब तुम सुवर्णनाभ की आज्ञा का पालन करते रहो। चरणों में भुंके हुए शोकाकुल सामन्तों को भी घर जाने की अनुमति दी और स्वयं जहा श्रीधर मुनिराज वहा पहुंचे। तपोतेज से उनका शरीर दीप्त था, कर्म रूपी सुभट के निर्दलन में अद्भुत वीर थे, संसार-समुद्र के लिए मानी अगस्त्य ऋषि थे, गुण-श्रेणी पर आरूढ़ थे, निर्मल शील के आवास रूप थे, भोगों को अनिष्टकारी मानकर उन्होंने उन्हें छोड़ दिया था, मुर मंदिर के मूलदेव थे, शान्ति संपन्न थे, मोह-शत्रु को नष्ट करने में जुटे हुए थे, मिथ्यात्व रूपी मयकर वन को पार करने वाले थे, प्रत्यक्ष रूप में शुद्ध ज्ञानी थे। ऐसे उन ज्ञानी-ध्यानी श्रीधर महाराज के चरणों में प्रणाम कर नतमस्तक होकर राजा पद्मनाभ ने कहा—हे मुनिवर। मेरे कर्म-फल का विनाश कीजिए ॥22॥

( 23 )

आप प्राणियों को शिव-सुख प्रदाता है, दुःख रूपी दावानल के विनाशक है, ससार से भयभीत रहने वाले लोगों के लिए भ्रकारण बधु हैं, पाप-लिप्त लोगों के लिए निर्मल सागर हैं, चिंतामणियों में चिंतामणि हैं, कामधेनुओं में कामधेनु हैं, कल्पवृक्षों में कल्पवृक्ष हैं, मनोरथों का फल देने वाले हैं, ससार रूप कानन में अमृत कुण्ड है, गुणरत्नों के रत्नाकर हैं, चिंता-तृण के लिए प्रलयाग्नि हैं, ज्ञान-लक्ष्मी सपन्न हैं, आशा-कील को निकाल फेंकने वाले हैं, भान विरहित हैं, इच्छा रहित हैं। लोगों को आपका पादमूल मिला है पर आप जगल में रहते हैं। आप कुरुशाद्र हैं। इसलिए आप कृपया मुझे जिनदीक्षा प्रदान कीजिए। इस प्रकार कहकर रहस्य को प्रकाशित कर राजा ने केश लुञ्चन किया और जिनदीक्षा ले ली ॥23॥

( 24 )

वस्त्रालकरण उतार कर जिनदीक्षा ग्रहण करते ही पद्मनाभ को तीर्थंकर नामकर्म का बध हो गया। उन्होंने सोलह कारण भावनाएँ माना प्रारंभ किया—(1) शका आदि पञ्चीस दोषों से विरहित सम्यक्त्व की विमुक्ति दणन विमुक्ति है। (2) गुरु, तप, परमागम के विषय में विनय रखना विनयसम्पन्नता है, (3) अहिंसा आदि व्रतों और क्रोध आदि परित्याग रूप शीलों को निरन्तर पूर्वक पालन करना शीलव्रतानतिचार है। (4) निरन्तर ज्ञानाभ्यास करना अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग है। (5) ससार के घनघोर दुःखों से भयभीत होना सवेग है। (6) अभयदान आदि प्रमुख दानों का यथाशक्ति दान करना शक्तितस्त्याग है। (7) यथाशक्ति बारह व्रतों का तप करना, जीवों की रक्षा करना शक्तितस्तप है। (8) रत्नमय की रक्षा करना साधु समाधि है। (9) गुणी पुरुषों की सेवा-सुष्रूषा करना वैभावृत्य है, (10-13) अग्निहोत, आचार्यों, बहुश्रुत विद्वानों अर्थात् उपाध्याय परमेष्ठियों तथा श्रुत-प्रवचन के विषय में वात्सल्य रखना, अहंभक्ति, आचार्यभक्ति, बहुश्रुत भक्ति और प्रवचन भक्ति है। (14) अप्रमादी होकर पडावश्यक क्रियाओं का पालन करना आवश्यक-परिहारिण है। (15) ज्ञान और तप आदि विविध गुणों के कारणों से सन्मार्ग की प्रभावना करना मार्गप्रभावना है। (16) सधर्मा से स्नेह रखना प्रवचन वात्सल्य है। इस प्रकार सोलह कारण भावनाओं को माँते हुए पद्मनाभ ने तीर्थंकर प्रकृति कर्म का बध कर लिया ॥24॥

( 25-26 )

इस प्रकार पद्मनाभ ने कुर्बं तप किया, इन्द्रियबल से कर्म निर्जरा की, हृदय से शल्य को निकाल फेंका, मोह रूपी महाभट को जीता, क्रोधवि कषायों का विनाश

किया, धार्त-रौद्रध्यान से मुक्त होकर शुक्लध्यान को मन में स्थिर किया, कठोर परिषद् को सहा, अपने सच से क्षमापना की, सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र्य और तप की धारापना की, गुण द्वारा प्रवृत्त शिक्षा को मन में धारण किया, सासारिक दुःखों से उन्मुक्त हुआ, अपनी अन्तरंग-शिला पर अर्हन्त अक्षरो को उकेरा, शुद्ध स्वरूप का आचरण किया, कल्पश्रुत का भावन किया, शुद्धात्म रसायन को प्रसृत किया, शिव सुख की छाया रूप फल को धारण किया और निश्चल पण्डित मरण से मरण प्राप्त किया । इस प्रकार राजा शुभयोग प्राप्त कर, पापों से मुक्त होकर अनुत्तर वैजयन्त नामक स्वर्ग चले गये । सोलह स्वर्ग, नवग्रन्थेयक और नव अनुविद्धों के ऊपर पाँच अनुत्तर विमान हैं । वैजयन्त उन्हीं में से एक है जिसे पद्मनाभ ने प्राप्त किया । वही पद्मनाभ ने निरुपम तेजस्विता को प्राप्त किया, निरुपम देवावधि को प्राप्त किया, निरुपम सासारिक सुखों को पूर्ण किया, निरुपम शुक्ल-लेख्या को प्राप्त किया, और उपशान्तभाव पाया ब्रह्मचर्य व्रत का पालन किया, और अहमिन्द्र हुआ । उसकी आयु त्रेतीस सागर प्रमाण थी । पुण्य कर्मों के प्रताप में दिव्य भोगों को भोगने लगा और सतोषामृत रस में मग्न करने लगा ॥ 25-26 ॥



## सप्तम संधि

( 1-2 )

चंद्रप्रभ स्वामी के पूर्वभव का वर्णन करने के बाद अब उनके गर्भादिक कल्याणको का निरूपण किया जावेगा। भरत क्षेत्र जहा गया, सिन्धु जैसी पवित्र जलवाली नदियां हैं, मे एक सर्वोत्तम पूर्वदेश है। वहा धान्य और इक्षु के खेतों मे समीर सुरभित हो रहा है, जिसके पर्वतों के नीचे सुन्दर स्नान लहलहा रहे हैं, गोपाल बालक भीत गा रहे हैं, स्वर्ग के समान वह शोभा से अपूर है, सुन्दर ग्रामों और नगरों से भरपूर है, सुखों का घर है, जहा दुखों का उपशमन हो गया है, जहा के भव्य जीव समवशरण मे पहुचते हैं, दुखदायी कर्मों का उपशमन करने के लिए जिनोक्त चर्चा का आचरण करते हैं, जिनराज के चरणों मे जाते हैं, जो ससार रूपी बत्ती के लिए कठोर किवाड़ है, जहां धर्म रूपी पुरुष के लिए सुरभित वसन खिला है, रोग, शोकादि के विनाश के उपक्रम चलते- रहते हैं, सभी प्रकार के सुख विद्यमान है उस देश मे चन्दपुरी नामक मनोहर नगरी है ॥1-2॥

( 3-4 )

वहां के खेतों मे धान्य की मनोहारी फसल होती है, समुद्र के बहाने परिखा विद्यमान है, जो पद्मगात्र मणियों का घर है, जहा के उच्च प्रासादों मे सूर्य भी अपना मार्ग खोजता है, जहा के रत्नों से बने घरों के शिखरों से उभ-मण्डल आच्छादित हो गया है, जहा चन्द्रकान्त मणियों के कारण घरों मे रात्रि मे प्रभु आ जाता है, जहा नीलमणियों के शिखरों से निकलने वाली किरणों के कारण गया नदी का जल भी नीला दिखाई देने लगा है, जहां के रत्नग्रेहों के दीर्घ शिखरों से स्वर्ण भी उद्भासित हो गया है, जो मोघ-भूमि के सुखों से व्याप्त है, धर्म-अर्थ-काम का निधान है, अनुपम भवसुखों का स्थान है, हेमगिरि को भी लज्जित करने वाला है, जिसके गर्भ मे अमृत कुण्ड भरे पड़े हैं, जो कल्पवृक्षों का घर है, चन्द्र-सूर्य की शोभा को भी

तिरस्कृत करने वाला है ऐसे उस मनोहर चन्द्रपुरी नगरी में महासेन नामक राजा राज्य करता था ॥3-4॥

( 5-6 )

वह प्रतापी और यशस्वी था । जयश्री उसके बाहुदण्ड में निवास करती थी, राजा उसके चरणों में नतमस्तक था, कृपाण नीलोत्पल का मानो खण्ड था, विविध आभूषणों से उसका शरीर सुसज्जित था, प्रतिपक्षी निर्बल हो चुके थे, शरीर की कान्ति लावण्यभरी थी, दैत्य भी उससे दूर रहा करते थे, मंगल भी उसकी सेवा करता था, महिमा भी उसकी छाया में रहकर अपने को कुतकृत्य मानती थी, कल्याण भी उसकी संगति में रहने की इच्छा करता था, सुख भी उसके मन के रस की इच्छा करता था, आशीर्वाद भी उसकी सेवा की अभिलाषा करता था, वरदान भी उसे 'देवदेव' कहकर पुकारता था, मुदास भी दासता को प्राप्त करता था, गुणगौरव भी चेटभक्त बन गया था, लक्ष्मी भी उसकी लक्ष्मी से शोभित होती थी, श्रुतदेवी भी उससे शिक्षा लेती थी, विवेक, सत्य, उदारता, सिद्धि, बुद्धि, ज्ञान, ध्यान, शक्ति आदि गुणों ने उसी के आश्रय से वास्तविकता पाई थी । रूप, बल और शील में भी वह राजा बेजोड़ था ॥5-6॥

( 7-8 )

राजा महासेन की लक्ष्मणा नाम की पट्टरानी थी जो गुण, शील और रूप में अनुपम थी । जैसे धनुष की सुषमा श्रेष्ठ बाण से होती है वैसे ही वह श्रेष्ठ वश में उत्पन्न हुई थी, उसके गुणों में कभी वक्रता नहीं थी, मुग्धि की बाणी के समान उसकी बाणी सुन्दर वार्णों से युक्त थी, सुन्दर वर्ण-रंग से युक्त थी, बहु गुणों की लीला मंदिर थी, कदपं का दर्प भी वहा बंध गया था, लावण्य का समुद्र था, तावण्य ने वहा परम सिद्धि पाई थी, रूप ने वहा परम रिद्धि प्राप्त की थी, अनुराग ने पट्टबंध बाधा था, । उसमें मलय का सौरभ और चन्द्र का प्रमृत था, हेम की किरणों से वह उज्ज्वल थी, लावण्य में वह चन्द्र और कमल से भी घाते थी, गभीरता में सागर जैसी थी, हंस जैसी प्रलस जाल थी, मुनिनाथ जैसा निर्मल शील था, करि कुंभ के समान पुष्पुल स्तन थे, कदपं के बाणों के लिए सुंदर आयास रूप था, सारे रसों का सार थी । ब्रह्मा ने इतना अच्छा रूप बनाया कि सारे उपमान अपना स्वरूप छोड़ चुके थे । उसका रूप अनुपम था ॥7-8॥

( 9-10 )

दोनों, महासेन और लक्ष्मणा स्नेहसिक्त होकर धर्म, धर्म्य काम का उपयोग करते रहे । पुण्य के प्रताप से इन्द्र की प्रेरणा से उनके घर कुबेर ने छह माह तक

प्रतिदिन बारह करोड़ निर्मल रत्नो की। वर्षा की पुण्य के रभाव से क्या नहीं होता ? रत्नाकर भी जलविरहित-सा दिखने लगा। महासेन को बड़ा आश्चर्य हुआ। इसी बीच आकाश से एक दिव्य तेज पृथ्वी पर गिरता हुआ दिखाई दिया। राजा के मन में अनेक वितर्क उठे। क्या कोई पुण्ययन्त्र तो नहीं आ गया, सूर्य से कुछ गिरा तो नहीं, दिन में तारा तो नहीं स्फुटित हुआ, कोई बिद्युत्पात तो नहीं हुआ ? इस प्रकार से राजा के मन में विविध सशय उठ खड़े हुए। धीरे धीरे यह स्पष्ट होने लगा। अम्बराएँ आयी। उनके स्थूल स्तनो का भार कम था। मुह की सुगन्ध से आकृष्ट होकर भ्रमर दौड़ने लगे। मदारमाला मकरन्द से लिप्त हो गई। हरि चदन से दशो दिशाएँ सुरभित हो गई। सारा नगर दिव्य कुसुमों की गंध से सुवासित हो गया। नूपुर बनने लगे। श्री, काति, कीर्ति, वृत्ति, बुद्धि, आदि लक्ष्मिया प्रगट हुई, अपने अपने बाहनों से देव लोग आये, शक्र आया और राजा को जय जयकार की। इन्द्र की आज्ञा से आठो दिक्कुमारियाँ महासेन नरेश के अन्तपुर में पहुँची। राजा ने पूछा- तुम लोगो ने स्वर्ग से घरा पर क्यों अवतरण किया ? ॥९-१०॥

( 11 )

उत्तर में उन्होंने कहा-हे राजन् ! आप धन्य हैं। आपके घर अष्टम नीर्यंकर चन्द्रप्रभ जन्म ले रहे हैं। इसीलिए छह माह से रत्नो की वर्षा हो रही है। यहाँ रहकर हम लोग महारानी की सेवा करेंगे और गर्भ की सुरक्षा रखेंगे। फिर वे महारानी के पास पहुँची। वहाँ देखा कि बहुत-सी राजमहिषी उनकी शुश्रूषा कर रही हैं। महारानी लक्ष्मणा का रूप देखकर उन्होंने अपना रूपमद्य छोड़ दिया। इतना सौन्दर्य उन्होंने कभी देखा नहीं था। महारानी के सौन्दर्य को देखकर इन्द्राणी भी दासी हो जायेगी। उसके सामने चन्द्रबिम्ब, अमृतकुण्ड, मदनदर्प, कमल लण्ड आदि की कोई गणना नहीं। रति विनास, चदन, कुसुमबास, स्वर्ग मुख आदि का भी कोई महारव नहीं ॥११॥

( 12-13 )

अपने आगमन का कारण बताकर दिक्कुमारियाँ महारानी की प्रारम्भिक सेवा में जुट गईं। कोई क्षीरोदधि से जल लाकर स्नान कराने लगी, कोई सुर चन्दन लगाने लगी और सुगन्धित तेल से मालिस करने लगी। किसी ने अंगश्लेष किया, किसी ने पारिजात मदारमाला को शिर में बाधा, किसी ने हार पहनाया, किसी ने किरीट लगाया, किसी ने केयूर पहनाया, और किसी ने कुण्डल पहनाये, किसी ने नूपुर और मुद्रिका पहनाई, किसी ने अन्य आभरण पहनाये, किसी ने वस्त्र पहनाये, किसी ने

प्रगरु धूप दी, कोई भोजन व्यजन ले आया, कोई दण्ड लेकर प्रतिहारी बनी, किसी ने महारानी के शिर पर धवल छत्र लगाया, किसी ने चमर डुराये, किसी ने उपानह पहनाये, कोई अग्ररक्षक बनी, कोई नाचने-गाने लगी, किसी ने चाटुकारिता की, किसी ने मङ्गल रास किया, किसी ने छह भाषाओं में काव्य किया, किसी ने इन्द्रजाल दिखाया, किसी ने देवी के शरीर का सवाहन किया। इस प्रकार अनेक रूप से देवियों ने जिनमाता की सेवा की और गर्भ-शोधन किया ॥12-:3॥

(14)

इसके बाद लक्ष्मणा देवी निश्चित होकर सो गई। रात्रि के पिछले भाग में उसने सोलह स्वप्न देखे—(1) उन्नत शुभ्र ऐरावत हाथी, (2) गर्जना करता हुआ श्रेष्ठ बल, (3) गजराजों के भुण्ड को भगाता हुआ सिंह, (4) हाथ में लीला कमल लिए लक्ष्मी, (5) दो मदारमालाएँ जिनके आसपास भीरें गुँजार रहे थे, (6) सघन ज्योत्सना से युक्त पूर्णमासी का चन्द्रमा, (7) अपने प्रकाश से सारी दिशाओं को प्रकाशित करता हुआ सूर्य, (8) एक दूसरे से किलोल करता हुआ मीना युगल, (9) कमलों से ढके हुए और जल से भरे हुए दो मंगल कलश, (10) जल में लहलहाते हुए सफेद कमलों से अलंकृत सरोवर, (11) आकाश को छूने वाली उत्ताल तरंगों से युक्त समुद्र, (12) सिंहों पर आश्रित सिंहासन, (13) देवों से सेवित दिव्य विमान, (14) नाग कन्याओं से सुन्दर नागभवन, (15) फैलते हुए तेजोमण्डल से युक्त रत्नराशि, और (16) घूमरहित होने से उज्ज्वल अग्नि। इन सोलह स्वप्नों को देखने के बाद जाग जाने पर उसने इन स्वप्नों का फल जानना चाहा ॥14॥

(15)

इसके बाद प्रभातकालीन नित्यकर्म करके और अन्य साधु धर्म संपादित करके शीघ्र ही अपने पतिदेव महासेन के पास पहुँची और स्वप्न बताये। राजा ने उन्हें सुनकर उनका फल बताया। हे देवी! ऐरावत हाथी तेरे पुत्र को तीनो लोको में मुख्य बतला रहा है, बल उसे गम्भीर, सिंह जैसा महान् पराक्रमी निर्भय और तेज सपन्न, और लक्ष्मी-इन्द्रों द्वारा अभिषेक करने योग्य सूचित कर रहा है, दो मालाओं को देखने से वह अनन्त कीर्ति वाला होगा, चन्द्रमा देखने से प्रजा की वृत्तिका हेतु, सूर्य देखने से मोह रूप अधकार को मिटाने वाला और मत्स्य युगल को देखने से वह सभी प्रकार के शोक से मुक्त होगा अर्थात् मुक्ति पायेगा, कलश देखने से उसके दिव्य देह में शुभलक्षण होंगे, सरोवर देखने से सृष्टि रूपी अग्नि को शान्त करने वाला होगा समुद्र देखने से विपल ज्ञान धारी होगा, अर्थात् केवली होगा। और स्वर्ण सिंहासन

देखने से मुक्ति पाने वाला होगा, देवों का विमान देखनेसे वह स्वर्ग से अवतरित होगा, नाग भवन देखने से धर्म तीर्थ का प्रवर्तक होगा, रत्नों की राशि देखने से समस्त गुणों का क्रीडापर्वत होगा और अग्नि देखने से उग्र कर्मों के जगल को जलाने वाला होगा । मुन्हारे पुण्य के प्रताप से शक्र भी दास हो जायेगा । लक्ष्मणा स्वप्नों के फल को सुनकर रोमांचित हो गई ॥15॥

( 16 )

इसके पश्चात् आयु के समाप्त होते ही उस अहमिन्द्र ने वैजयन्त नामक अनृत्तर विमान से अवतरित होकर चैत्र मास के कृष्ण पक्ष के पचमी दिन को लक्ष्मणा के गर्भ में प्रवेश किया । ऐसा लगा जैसे चन्द्र ने जल में प्रवेश किया हो या जल-विन्दु ने सीप में प्रवेश किया हो, चन्द्र सरोवर में प्रतिबिम्बित हो रहा हो, कमल दल तल पर खड़ा हो, सिद्ध-बुद्ध होकर मोक्ष में प्रवेश किया हो, परमात्मा को अपने अन्तरात्मा में छिपाया हो, सिद्धत्व को आत्मा में सजोया हो, जिनागम में द्रव्यज्ञान रखा हो, सम्यक् चारित्र्य में परम धर्मोदय हुआ हो, मुण्डिगणों के मुख में सत्य वचन निहित हो, व्यक्ति में सज्जनता प्रतिपन्न हुई हो, धर्मात्मा में सुख प्रतिष्ठित हुआ हो, गुणी-दानी में कीर्ति का प्रसार हुआ हो । भगवान् सुख पूर्वक यथासमय तक गम में रहे । देवों ने दुन्दुभि बजाई, सारे त्रिभुवन में उसकी आवाज पहुंची, देवगण हर्षित हुए और अपने अपने परिवार के साथ नगर की ओर उन्होंने प्रस्थान किया ॥16॥

( 17 )

कल्पामर के चौबीस इन्द्र, व्यतरो के बतीस स्वामी, भवनवासी देवों के चालीस दन्द्र, ज्योतिषी देवों के रवि-चन्द्र, ये सभी अपने-अपने बाहनों से भगवान् के दर्शन करने हर्ष विभोर होते हुए आये । कोड़ाकोड़ी अप्सराएँ अपनी श्रद्धा सहित आयी, वैक्रियक देव आये, बारह करोड़ तूरो के शब्द फँसे, गधोदक और पुष्पों की वृद्धि हुई सभी देवों ने आकर तीन प्रदक्षिणा की, लक्ष्मणा देवी की चरण वन्दना की, रत्नों से पूजा की, स्तुति की । महासेन की भी हाथ जोड़कर स्तुति की । और कहा कि आप दानों ही त्रिलोक के शोकापहारी हैं, अपने ही ससारियों के लिए नरक का द्वार बंद कर दिया है । इत्यादि प्रकार से उनकी स्तुति कर गर्मस्थित जिन की स्तुति की और हर्षित होते, नाचते, पुलकित होते हुए सुरलोक को वापिस चले गये ॥17॥



## अष्टम संधि

( 1-2 )

जैसे-जैसे भगवान का देह परिपूर्ण होता गया बैसे-बैसे नयी किरणों ने घर में प्रवेश किया। देवी लक्ष्मणा फलों से घटित होती रही, निर्मल पुण्य कार्यों से परिचारित रही, गर्म की धबल किरणों से कलित हुई। उसके उदर की त्रिवलियाँ भग्न हो गईं। कर्म के साथ उसके स्नान-युगल भी कुश हो गये, मोड़ के साथ उद्यम मन्द हो गया, क्रोध के साथ चरण कपित होने लगे अर्थात् भारी हो गये, मान के साथ स्वर क्षीण हो गया, ससार के साथ भोजन की मात्रा भी कम हो गई, कर्म के साथ व्यसन नष्ट हो गया निद्रा के साथ त्रिजग का पुण्य भ्रा गया, धर्म के साथ स्तनभाग ऊँचे हो गये, लोक के साथ भग्न निर्मल हो गये, भग्न के साथ सारा ससार निर्मल हो गया। इस प्रकार वह लक्ष्मणा गर्भालस लिए जिन पद की पूजा करती रही और शक्ति धर्म पालन करती रही। उसे दोहद भाव उत्पन्न हुआ। क्षीरोदधि के जल से उसे देवियों ने नहलाया, देवों ने प्रणाम किया। त्रिभुवन को उज्ज्वलित करने की उसकी अभिलाषा हुई। उसे लगा जैसे उसने कर्मभार को कम कर दिया हो, कामबाण को छोड़ दिया हो और पच ज्ञानों में अवगाहन किया हो। लक्ष्मणा ने जो भी मनोरथ किया, सुरपति ने उसकी पूर्ति की। वह भी जिनभक्ति पूर्वक समय यापन करने लगी ॥1-2॥

( 3-4 )

नव माह व्यतीत होने के बाद पीष-कृष्णा एकादशी के दिन देवी लक्ष्मणा ने शुभ लक्षण संपन्न धबल वर्ण वाले बालक को जन्म दिया। वह बालक समचतुरस्र मस्थान से युक्त था, प्रथम सहनन से उसका शरीर युक्त था। शरीर से निर्गत सौरभ फैल रही थी, उसका शोणित दुग्ध जैसा धबल था, मल से वह बजित था, भ्रतुल पराक्रम संपन्न था, रूपवान् था, ससारियों के लिए उसकी वाणी प्रिय और हितकारी थी, उससे सूर्य प्रकाशित हो रहा था। और फिर तत्काल सारा ससार भी उल्लसित

हो गया। ऐसा सगा मानो बाल सूर्य का उदय हुआ हो, अरुणि से अग्नि-स्फुलिंग निकल रहा हो, धर्म का शुभ फल हो। वह प्राणियों के लिए परमदानी था, ज्ञान से कर्मों का उपशमन करने वाला था, शिव-सुख का दायक था, निज रस के स्वभाव से आपूरित था, त्रिभुवन उसके समागम से प्रसन्न था, देव गए हर्ष से विभोर होकर नृत्य कर रहे थे। पृथ्वी से मणि ऊपर निकल पड़े, छहों ऋतुओं के पुष्प पुष्पित हो उठे, शीतल मलय पवन चलने लगी, गद्योदक की वृष्टि होने लगी, गगन मार्ग निर्मल हो गया दसों दिशाएं घबल हो गई, दिव्य पुष्पो की वर्षा होने लगी, इन्द्र का सिंहासन कम्पित हो उठा, कल्पवासी देवों की सभा में घण्टिया बिना हाथ लगाये ही बजने लगी, ज्योतिषी देवों के घरों में सिंहनाद होने लगा, व्यतर देवों के घरों में बिना बजाये ही दुन्दुभी बजने लगे और उनकी प्रतिध्वनि गूज उठी, भवनवासी देवों के घरों में गभीर मल्ल समूहों की ध्वनि सुनाई पड़ने लगी। पुण्य प्रताप से क्या-क्या नहीं होता ? ॥3-4॥

( 5-6 )

इन सब कारणों से सभी देवों को जिन भगवान के उत्पन्न होने का ज्ञान हो गया। फलतः सुरपति आदि सभी देव भक्ति सिक्त हो गये। अपने-अपने आसनो से उठकर मणि जटित आभूषणों से युक्त होकर उस दिशा में प्रस्थान किया जिस दिशा में भगवान का जन्म हुआ था। उस दिशा के भूतल को प्रणाम किया, दुन्दुभी बजवायी, देवियाँ निश्चल मन से आ गईं। सौधर्म स्वर्ग के इन्द्र ने मन में ही भक्ति की और मेरु पर्वत पर भगवान को अभिषेक के लिये ले जाने का निश्चय किया। मेरु पर्वत एक लाख योजन ऊँचा है। उसपर स्थित सरोवरो और कमलवृन्दों ने उसकी शोभा में चार चाद लगा दिये। वह मेरु पर्वत सभी पर्वतों में प्रधान है उसका कोई उपमान नहीं। एरावत हाथी पर सवार होकर वह सपरिकर चल पड़ा ॥5-6॥

( 7-8 )

परिकर की सख्या अपार थी। सभी हर्ष और भक्ति से आपूर थे, सभी कल्पवासी देव जिन भगवान की सेवा में चल पड़े, ज्योतिषी देवों ने भी प्रस्थान किया। व्यतरगण दर्पहीन होकर निकल पड़े, भवनवासी देवों ने भी उसी समय प्रयाण किया। विद्याधर भी दौड़ पड़े। सभी वेग से आगे बढ़ रहे थे। कभी कभी उनके रथ परस्पर सघर्षित हो जाते थे। कभी कभी हाथी अपना मार्ग छोड़ देते थे। सभी देवों आदि के हाथों में पूजा पात्र और मंगल द्रव्य थे जिसे वे भक्तिवश भगवान के पास ले जा रहे थे। सारा आकाश छत्रों के कारण घबल बरुण लगने लगा था

ऐसा लगता था मानो वह कोटा-कोटि चन्द्रमाओं के द्वारा आच्छादित हो । ब्रज-पताकाएँ मांगलिकता सर्वत्र बिखेर रही थी, नीलोत्पलो का समूह उत्पन्न हो गया था, इन्द्राणी का क्रीडा-स्थल बन गया था, स्वर्ण कुम्भों से सूर्य समूह को सकट उत्पन्न हो गया था, मरकत मणियों से यमुना नदी को सकट उत्पन्न हो गया था, चन्द्रकान्त मणियों से चन्द्र क्षेत्र को तथा वैदूर्य मणियों से हरितगुप्त को तिरस्कृत किया था, विद्रुभ मणियों का समूह सध्याकाल का भ्रम पैदा कर रहा था, मालाओं से नभ मण्डल आच्छादित हो गया था, विष्व कुसुम मालाओं तथा उनकी सुरभि से सारा क्षेत्र सुसज्जित तथा सुरभित हो रहा था, दुन्दुभी के शब्दों की पृथुल स्थिरता से गीति की लहरें उठ रही थी, सभी लोग हर्ष विभोर होकर नृत्य कर रहे थे, चारों निकाशों के देव एकत्रित हो गये थे, बाहनदेवों के द्वारा मानो सूर्य का मार्ग अवरोध हो गया था ॥7-8॥

( 9-10 )

कोई कह रहा था-शीघ्र ही मार्ग दो, मेरे सिंह से अपने हाथी को दूर हटाओ, कोई कह रहा था अपने सिंह को हटाओ अन्यथा वह अष्टापदों द्वारा मार दिया जायेगा, कोई कह रहा था अपने हरिण को मेरे पास मत आने दो, मेरा दुष्ट बाघ उसे नष्ट कर देगा, कोई कह रहा था हाथी को दूर रखो, अष्टापद उसे समाप्त कर देगा, कोई कह रहा था बल की चित्रक से दूर रखो, सर्प को नेबले से दूर रखो, गरुड से दूर रखो, हंस को मार्जार और भयूर को कुत्तों से अलग रखो । इस तरह से कहते हुए मुर-असुर अपने-अपने बाहनों से जिन भगवान के दर्शन करने बीड़ रहे थे । जैसे ही चन्द्रपुरी नगरी आई कि उन्होंने अपने बाहनों की गति भीमी की तथा गन्धोदक, पुष्प और रत्नों की वृष्टि की, दुन्दुभी बजाई, तूर वाद्य बजाया । बाद में इन्द्राणी ने स्वयं उतरकर अपने करणीय कार्य को ध्यान में रखा । उसने प्रसूतिग्रह में बड़े भक्ति भाव से प्रवेश किया, अपने हाथ से मगल किया और देखा कि लक्ष्मणा देवी अपने पुत्र के साथ लेटी हुई है । परमेश्वर त्रिभुवननाथ के दर्शन किये । उनका वरुण कर्पूर के समान बबल था । उसका सारा शरीर रोमाञ्चित हो गया । हृदय हर्ष से इतना पुलकित हो गया कि नेत्रों से आसू बह उठे । उसे इस बात का खेद हुआ कि काश उसके यदि हजार नेत्र होने तो वह भगवान के रूप को अधिक अच्छी तरह से देख पाती । इन्द्राणी ने फिर जिन माता की प्रशंसा की और मायोत्पन्न एक बालक को जो आकार-प्रकार में जिन भगवान के समान था उसकी गोद में रखकर जिन भगवान को उठा लाई ॥9-10॥

( 11 )

सब देवों ने मिलकर भगवान की स्तुति की, जय-जयकार किया, हाथ जोड़कर तीर्थंकर की वन्दना की। ससार में जिन दर्शन दुर्लभ होता है। देवों ने इन्द्र से कहा आपका सौभाग्य है कि आप अपने हजार नेत्रों से भगवान के दर्शन कर रहे हैं, धरणिन्द्र ने भी खूब जिनदर्शन किये फिर भी उसकी तृप्ति नहीं हुई। शक्र भगवान के लक्षणों को अनिमेष नेत्रों से देखते-देखते पूरी तरह थक गये। उन्होंने भगवान के गाय को कोमल वस्त्रों से ढका, ईसाण ने खवल छत्र लगाया, सानत्कुमार-माहेन्द्र ने चमर दुराये, और जो अन्य छोटे-मोटे देवता थे वे हाथ जोड़े भगवान की सेवा में खड़े थे। इसके बाद इन्द्र ने भगवान को ऐरावत हाथी पर बैठाकर आकाश मार्ग से मेरु की ओर प्रस्थान किया ॥1१॥

( 12 )

तब पय से देवों के चलने पर भूमण्डल ढक गया। गगन भी दिखाई नहीं दे रहा था। पृथ्वीतल से 180 योजन ऊपर ताराग्रों के विमान हैं, उनसे दस योजन ऊपर सूर्य का, उससे 80 योजन ऊपर चन्द्रमा का, उससे तीन योजन ऊपर नक्षत्रों का विमान, उससे भी तीन योजन ऊपर बुध का विमान, उससे तीन योजन ऊपर शुक्र का विमान, उससे तीन योजन ऊपर वृहस्पति का विमान, उससे भी चार योजन ऊपर मंगल का विमान और उससे भी चार योजन ऊपर शनि का विमान है। इस प्रकार सम्पूर्ण ज्योतिर्गंगा की ऊँचाई एक सौ दस योजन है। उसके आगे शुद्ध गगन प्रदेश है। इस गगन प्रदेश का विचरण करते हुए देवगण ने उसे पार किया और उसके बाद उन्हे मेरु पर्वत के दर्शन हुए ॥12॥

( 13-14 )

यह मेरु पर्वत मागिकय दीप्ति से दीप्त था। मणि झिलाग्रों के सिंहासन उसके पाय थे, चमरी पूछ से चमर दुलाती थी, वृक्ष वायु से आदोलित हो रहे थे मानो दसी बहाने वे झुक रहे हों, स्थल कमल नीचे सुशोभित थे, हाथी के द्वारा भक्त चदन के रम से वह सिञ्चित था, कल्पद्रुम वृक्षों को चीर के रूप में धारण किये हुए था, मदन वृक्षों की मुग्ध से सुवासित था, कायल की मधुर आवाज से गुंजित था, वायु की आवाज बासों में पूरित होकर शब्द करती थी, दुन्दुभी की प्रतिध्वनि करके मेरु मानो प्रतिहार का काम करता था। मेरु को देखकर सभी देव रोमाञ्चित हो गये। वह ऐसा लगता था जैसे पजरी का मध्यवर्ती प्रदेश हो जहाँ भ्रमर रुककर सतोप का अनुभव करते हैं भ्रमर का शोभावर्धक कनक कुंभ हो, आकाश गंगा का पूजापट्ट हो,

धर्म रूपी हाथी का स्वर्ण रतन हो, जहाँ रवि और शशि निर्ध्याज अथवा निर्मद होकर चमर डो रहे हो, मानो कह रहे हो कि हमें मोक्षमार्ग दो अथवा स्वर्गरोहण के लिए सोपान हो, क्योंकि गोरोचन पिण्ड के समान इसकी मध्यवर्ती त्रसनाली देख ली है, आकाश और पृथ्वी के पंजर में यह सुमेरु चक्रवाक के समान लगता है, अथवा कील के समान प्रतीत होता है, जिन भगवान के स्नान का सुवर्णपीठ अथवा स्वर्णपीठ है जो विविध भुक्ताभिरुचियों के रणों से युक्त है, कटिसूत्र का कनक खेल हो जहाँ तारागण के रूप में रत्न जड़े हुए हैं अथवा दस-दिशाओं में पिगल वर्णवाली गेंद है। इत्यादि प्रकार से देवों ने उस सुमेरु को देखकर उसके विषय में कल्पनाएँ कीं। इसके बाद वे जिन भगवान के स्नान के लिये सुगन्धित जल लै आये ॥13-14॥

( 15-16 )

सुमेरु पर्वत के ऊपर पाँच सौ योजन विशाल एक वाण्डुकवन है जिसकी चारों दिशाओं में चार शिनाएँ हैं। उनमें पाण्डुक शिला ईशान में है जो अर्ध चन्द्र के समान पीत वर्ण वाली है, सौ योजन लम्बी और पचास योजन चौड़ी है। उस पर जिन भगवान का मणिमय सिंहासन लगाया गया जो पाँच पाँच बनुष लम्बा चौड़ा था। उस पर जितेन्द्र देव को विस्तारा गया, सभी देवों ने स्तुति की, दुःकुभी बजायी और पूर्व जिनाभिषेक विधि से अभिषेक करने की योजना बनाई। वायुकुमार आदि सभी सपरिवार एकत्रित हो गये और हर्षित होकर अभिषेक की तैयारी में जुट गये। मेघकुमार ने गघोदक की वृष्टि की, भक्ति से कुकुम रस का लेप किया, वनदेवी ने पुष्प खिला दिये और उनमें रमावलियाँ भर दीं। इसके बाद इन्द्र ने ऐरावत हाथी से जितेन्द्र देव को उतारा मानो सकलक चन्द्र ही हो, सूक्ष्म वस्त्र को भ्रमण किया, सिंहासन के दायी और इन्द्र खड़े हुए, बायीं ओर ईशान इन्द्र खड़े हुए, कल्पवासी आदि अन्य देवों ने भगवान के ऊपर, छत्र, चमर आदि धारण किये वीणादिक वाद्य तथा विविध संगीत प्रारम्भ किया, भगवान के चरण-कमलों के पाम बैठकर। कोई-दिग्पालो ने प्रतिहार का काम किया, हाथ में स्वर्णदण्ड लेकर खड़े रहे, देवागनाओं ने मंगल गीत गाये जो चारों दिशाओं में प्रस्फुटित हो गये। अगुरु धूप के धुएँ से सारा क्षेत्र व्याप्त हो गया। और जो अन्य देवता थे वे पक्तिबद्ध खड़े रहे। फिर उन्होंने सुमेरु पर्वत से लेकर क्षीर सागर तक दो पक्तिया खड़ी करके क्षीर सागर का जल मगाया। इस प्रकार इन्द्रों ने मिलकर बड़े आनन्द और भक्तिभाव से जिनाभिषेक की तैयारी की ॥15-16॥

( 17 )

इसके बाद देवी ने स्वर्णकुंभ हाथ में लिए और हाथो हाथ क्षीरोदधि जल से भगवज्जिनेन्द्र का अभिषेक किया। दायीं श्रेणी में सौधर्म इन्द्र खड़े हुए थे और बायीं श्रेणी में ईशान इन्द्र। दोनों कल्पेश्वरों ने बड़े भक्ति भाव से अपने हाथ से एक लाख कलश से जिनेन्द्र भगवान का अभिषेक किया। क्षीरोदधि का जल क्षीर के समान था। उसमें जिनेन्द्र की कान्ति मिल जाने पर और तेजमय हो गया। उससे कैलाश पर्वत जैसा वह भेरु धवलवर्ण हो गया। ऐसा लगा कि सारा हिमाचल पर्वत मिलकर हिमवान् हो गया हो अथवा सारे ससार के मुक्ताफल एकत्रित हो गये हों। अथवा कर्पूर झकड़ा हो गया हो अथवा चन्द्रकान्त मणियों से जड़ दिया गया हो अथवा पारे से स्वर्ण-पण्ड लिप्त हो गया हो अथवा यज्ञ के खण्ड एकत्रित हो गये हों। मारा पर्वत निर्मल चन्द्र की ज्योत्सना से आकृत-रत्न हो गया और दीप्तिमय जिनपाद पुण्य से वह परियकित हो गया हो ॥17॥

( 18 )

देवी ने जय-जयकार किया और शुभ मन से गंधोदक लगाया जो सकल मसार-ताप को नष्ट करने वाला है, चिर-काल के जन्म-जन्मान्तर से लगे आये पाप-मैल को धोने वाला है, संचित रज-पटल को समाप्त करने वाला है सारे ससार का राज्य अभिषेक बराबर है, महासुख को देने वाला है, सकल लाघव्य का कारण है, सकल विजय स्थान का केतु रूप है, धर्म रूपी लता को पल्लवित करने के लिए मेघ है, निर्मल गुण समूह का केलिशृङ्ख है, स्वर्ग-लक्ष्मी के उपभोग का रत्नघन है, सकल धर्मों का दयास्थल है, सभी प्राणियों के साथ दयाभाव रखने के लिए विवेक स्वरूप है, सकल विवेक का जनक है, मिथ्यात्व विनाशक है, सुदृढ़ कर्मों का छेदक है, कर्मों की ग्रन्थि का भेदक है। ग्रन्थि भेद से काललब्धि होती है और काललब्धि से द्रव्यशुद्धि, है द्रव्यशुद्धि से भावशुद्धि और भावशुद्धि से आत्मशुद्धि होती है। इस तरह देवगण ने सुमेरु पर्वत पर जिनाभिषेक किया और गन्धोदक लगाकर कर्मनिर्जरा की। सभी आनन्दित हुए। उस समय अनेक अतिशय भी हुए ॥18॥

( 19-20 )

इसके बाद इन्द्र ने वज्रसूची से जिल बगवान के दोनों कानों का छेदन किया। उनमें मणिमय कुण्डल पहनाये इससे ऐसा लगा मानो शशि और रवि दोनों स्वयं भवगुदित हो गये हों। शिर पर रत्न जटित मुकुट बांधा मानो त्रिभुवन की समृद्धि

एक ही स्थान पर समेट दी हो। वस्त्रस्थल पर मणिमाला पहनाई मानो यज्ञोपवीत ही प्रतिबिम्बित हो रहा हो, करधनी में मणि किकिड़िया लगादी मानो मंदिर में गृहपति खड़ी हो गई हो। बाहु युगल में बाजूबन्द बाध दिया, अंगुलियों में अंगूठी पहना दी, पैरों में नूपुर बाध दिये। इन आभूषणों से जिनेन्द्र की शोभा अपूर्व हो गई। दिव्य वस्त्रों और पुष्पो से भी भगवान को विभूषित किया। इस तरह देवों ने जिनेन्द्र देव की विविध प्रकार से अर्चा की। ठीक ही है, भूषण भूषणों से हीं भूषित होता है, मोरभ सौरभों से ही सुरभित होता है, छत्र छत्र से ही धारण किया जाता है। इसी तरह इन आभूषणों आदि से भगवान विभूषित हुए। देवों ने उनकी सस्तुति की ॥19-20॥

( 21 )

हे परमेश्वर सिद्ध, बुद्ध, आपकी जय हो, आप परमात्मा हैं, परम शुद्ध हैं, स्वभाव को प्राप्त कर लिया है, निर्मल स्वभाव को जान लिया है, आप अप्रमेय हैं, सप्तभगियों के ज्ञाता हैं, परम बोधरूप हैं, समरस हैं, निजरसज्ञाता हैं, भमल हैं, अकलक देहवाले हैं, सकल कलाविद् हैं, अजय हैं, अजर हैं, अमर हैं, परम कला विशेषज्ञ हैं, अमय हैं, अभावरूप हैं, अभेद रूप हैं, द्रव्यस्थित स्वरूपज्ञ हैं, निरजन हैं, योगीनाथ हैं, ससार के दुखों को जलाने वाले हैं। हे परमब्रह्म। आपकी जय हो, आप ब्रह्मों के ब्रह्म हैं, मोहविजयी हैं, परम नित्य हैं, जीवाजीव तत्त्व को प्रगट करने वाले हैं, विश्वरूपज्ञ हैं, शुद्धाचार के ज्ञाता हैं, कारणातीतज्ञ हैं, रत्नत्रय के निधान हैं, परमतेजस्वी हैं, मिथ्यात्व भेदक हैं, परम ध्यानी हैं, मुक्तिदर्शक हैं, करुणा सागर हैं, महान् गुणवान् हैं, ससार के स्वामी हैं, और सहज सत हैं। इस प्रकार देवों ने जिनेन्द्र भगवान की स्तुति की ॥21॥

( 22-24 )

सौधर्मैन्द्र ने भगवान को अपने ऐरावत पर बैठाया। हर्षित होकर सभी देव देवेन्द्र नृत्य कर रहे थे। परस्पर एक दूसरे के हाथ पकड़े हुए चले जा रहे थे। इन्द्र बीच में था और सभी नृत्य करने वाले देव उसके चारों ओर। चन्द्रपुरी जाते समय उन्होंने इस तरह दिशाओं का लघन किया। दिग्गज वर्गैरह ने भी विविध प्रकार से हर्ष व्यक्त किया। सीरोदधि निर्जल हो गया, मलयान्नल पर्वत सेवा करने लगा, नदनवन डालशेष हो गया, अंगुस्वन का क्षय हो गया, कर्पूर की भी यही गति हुई। ये सभी नामशेष रह गये। यह देखकर देवों की अत्यन्त आश्चर्य हुआ। उनका मन

हर्षित हो गया। हर्ष कम और भक्तिभाव अधिक था। भक्तिभाव से विभ्रम हुआ। विभ्रम कम था और जिन गुण अनन्त थे जिसके लिए वे तृष्णालु हो गये। इस तरह हर्ष विभोर होते हुए उन्होंने चन्द्रपुरी नगरी में प्रवेश किया। बाद में सौधर्मेन्द्र ने भगवान को ऐरावत हाथी से उतारकर उनके माता-पिता को सौपा और अपने-अपने स्थान पर उत्सव मनाकर वापिस हो गये। भगवान चन्द्रमा के समान कान्ति से युक्त है इसलिए उनका नाम इन्द्रो ने चन्द्रप्रम रखा। भगवान चन्द्रप्रम ग्रहनिश वृद्धिगत होते गये। वे अपने हाथ की अंगुलियों को मुख से चूसा करते थे जिनमें इन्द्रो ने अमृत का लेप कर दिया था। अतएव उन्हें अपनी माँ के दूध की क्या आवश्यकता थी? सुरेन्द्र दास जैसे रहकर उनकी सेवा कर रहे थे। निष्कलक प्रतिपत्त चन्द्र के समान वे बढ रहे थे। ज्ञान कमल भी विकसित हो रहा था। इस प्रकार जिनन्द्र चन्द्रप्रम ने त्रिभुवन को अपने गुणों से मुग्ध कर दिया ॥22-24॥

---



## नवम संधि

( 1 )

अनेक देवकुमार शिशु चन्द्रप्रभ के पास आकर उन्हें गेंद आदि से विविध मनोरंजक खेल खिलाया करते थे । धीरे-धीरे उन्होंने चलना प्रारम्भ किया । कभी-कभी कपकर गिर जाते थे । जिससे पृथ्वी कप-सी जाती थी । उससे ऐसा लगता था कि भ्रति भार से शेषनाग कपित्त हो रहा है या घरणेन्द्र को कोई शका हो रही है । कभी नीला पूर्वक गेंद खेलते थे । कभी हाथी घोड़ों की सवारी करते थे । कभी जल-क्रीडा करते थे और अपनी छाया का अनुसरण करते थे । इस तरह वे दिव्य भोगों को भोगते हुए कभी थके नहीं । धीरे-धीरे जिनेन्द्र की वात्स्यावस्था व्यतीत हुई और विद्यार्जन काल आया । सभी ने यह अनुभव किया जैसे ओकारादि अक्षर सभी शब्दागमों से वे परिचित हो । पथमानुयोगादि चारों अनुयोग ग्रन्थों में वे पारंगत थे । इस प्रकार वे तरुणावस्था में पहुँचे ॥ 1 ॥

( 2 )

जिनेन्द्र देव का रूप अद्भुत था । उनके कुत्तल केशों ने मानों अज्ञान रूपी अश्वमार को बाँध लिया था । उनका ललाट चित्त के समान विस्तृत था, नेत्र सिद्ध के समान निर्मल थे, नासिका बुद्धि के समान सरल-सीधी थी, मुख सौरभ से युक्त था, भ्रूवन्ली ने मानों माया की वक्रता को जीत लिया था, दन्तपक्ति निर्मल बुद्धि के समान थी अथवा चन्द्रकिरणों के समान थी, विद्याधरो की ऐसी शोभा थी जिससे लगता था कि हृदय से दीनभाव निकल गया हो । बाहुदण्ड मानों धर्मदण्ड थे अथवा नरक-द्वार के लिए परिषद थे, वक्षस्थल केवलज्ञान के समान विस्तृत था अथवा आत्मा के समान था, अगाध नाभि ऐसी लगती थी जैसे ससार उसमें क्षीण हो गया हो, पृथुल नितम्ब ऐसे लगते थे जैसे उनमें उनका यश भर गया हो, ऊरु ऐसे लगते थे जैसे वे उनके कोमल परिणाम के प्रतीक हो । चरण कमलश्री को लिए हुए थे । उसकी कात्ति से शोभा ही मद हो गई । इस तरह भगवान के रूप लावण्य की महिमा थी ॥ 2 ॥

## ( 3 )

राजा ने अपने पुत्र के निरुपम लावण्य को देखकर कमलप्रभा नाम की सुन्दर राजकन्या के साथ विवाह सबध कर दिया । ऐसा लगता था, मानो चन्द्र ने अपनी कांति उन्हें छोड़ दी हो, काम ने अपनी वाण पक्ति अर्पित कर दी हो, आनम से आन्ति गुण आ गया हो, ज्ञान से निर्मल शान्ति आ गई हो, धर्म से जीवन रक्षा का भाव आया हो, विनय से उत्तम शिक्षा मिली हो, तर्क से युक्ति आई हो । सूर्य से निर्मल बुद्धि प्राप्त की हो और सिद्ध से अचल अथवा शरीर रहित सिद्धि (मुक्ति) की भावना आई हो । इसके बाद पिता महासेन ने सभी राजाओं के सामने सहर्ष चन्द्रप्रभ का सिंहासन पर बैठा कर उनका पट्टवध करने का उपक्रम किया ॥ 3 ॥

## ( 4 )

राजा स्वयं ही हर्ष विभार होकर पट्टवध उत्सव में सम्मिलित हुए । स्वर्ण-कुम्भ से स्नान कराया गया, भगल वाद्य बजाये गये, गगन से गंधोदक तथा पुष्पवृष्टि हुई, आकाश निमल हो गया, चारों प्रकार के वाद्यों के शब्दों से राजागण गुञ्जित हो गया, राजाओं ने स्वयं कनकदण्ड लेकर गर्वशून्य होकर प्रणाम किया, कुल मन्त्रियों ने चमरछत्र लगाए, इस प्रकार सभी राज सेवकों ने राजकुमार की सेवा की । और भी जा दूसरे थे उन सभीने हाथ जोड़कर अभिवादन किया । अन्य नागरिकों ने अपने हाथों से लाजाञ्जलि छोड़ी, सधवा स्त्रियों ने गायन और नृत्य किये ॥ 4 ॥

## ( 5 )

इसके बाद चन्द्रप्रभ के शासनकाल में पृथ्वी पर होने वाले सारे दोष समाप्त हो गये सभी सुखी रहे और सतुष्ट हुए, मेघ की अमृत वर्षा हुई, वायु ने अत्यन्त मन्द गति से संचार किया, सूर्य ने अपनी मन्द किरणों की प्रखरता को कम कर दिया, चन्द्र ने भी अपनी किरणों चारों ओर फैला दी, हिमकाल ने किसी को कष्ट नहीं दिया, सभी को सुख का अनुभव होता रहा, राज्य में कहीं अकालमरण नहीं हुआ, दुष्काल नहीं पड़ा, रोग नहीं फैला अनेक आश्चर्य हुए, प्रजा ने तृष्णा नहीं की विषाद नहीं था, विषयचाह नहीं थी, धर्म के प्रति अभिरुचि थी, पाप का भाव नहीं था, शोक गलित हो गया था, लोग दरिद्रता, दुःख और चिंता से मुक्त हो गये थे । तथा जिनेन्द्र के गुणों से अनुरजित थे ॥ 6 ॥

## ( 6 )

इस प्रकार परमेश्वर चन्द्रप्रभ अपनी पृथ्वी का पालन करने लगे । इसके बाद सीधर्मन्द्र ने मन में मोचा—जिनेन्द्रदेव न इतने पूर्व लक्ष काल तक कुमार काल

बिताया, सज्ज सुख भोगा, फिर भी अभी उन्हें वैराग्य जाग्रत नहीं हुआ। अब उन्हें वैराग्य का कारण प्रस्तुत किया जाना चाहिए जिससे वे तप और प्रचरण की ओर अपना चित्त लगा सकें। यह सोचकर शशिरुचि नामक देव को बुलाया और अपना भाव व्यक्त किया। शशिरुचि ने भी जिनेन्द्र को तदनुसार प्रतिबुद्ध करने का सकल्प किया ॥ 6 ॥

( 7 )

इसके बाद शशिरुचि राज द्वार में पहुँचा और भेष बदलकर अति वृद्ध का भेष धारण किया। उसके हाथ में लाठी थी, वस्त्र जीर्ण शीर्ण थे। धीरे-धीरे वह चन्द्रप्रभ की सभा में पहुँचा और जोर-जोर से पुकारने लगा—हे स्वामी! मेरी रक्षा कीजिए रक्षा कीजिए, आज रात्रि में मुझे मृत्यु अपना भक्षण बना लेगी। राजा ने उसकी आवाज सुनकर कहा—आप आइए यहाँ, कहिए क्या कहना चाहते हैं? दुःख है बताए। आकर समीप में उसने पुनः कहा—आप ससार के दुष्टा हैं जरा न मेरे भगों को शिथिल कर दिया है, अनेक रोग रूपी चोरो के द्वारा वे भग पीड़ित हैं, यम रूपी व्याघ्र अब प्राण-हরণ करने आ रहा है, आय यदि जग रक्षक है तो मुझे बचाइए। यह कहकर वह अदृश्य हो गया। उसकी बात सुनकर राजा विचारने लगा, मृत्यु से कौन बचा सकता है? बृद्धावस्था आने पर भगों से रोग कैसे दूर किये जा सकते हैं? जग में कोई किसी की रक्षा करने वाला नहीं है। काल सभी को लेकर जायेगा हो। एक-एक कर वह बारह अनुप्रेक्षाओं का वितन करने लगा ॥ 7 ॥

( 8 )

चराचर जगत में जो भी वस्तु रूप है वह सब क्षण भंगुर है। धन, यौवन, जीवन, तनु आदि सारा प्रपञ्च है और वह जल बुदबुद के समान क्षण भंगुर तथा अनित्य है। दिन में जिसके शिर पर राजपट्ट बधा, रात में उमी के शिर पर मरण घट रखा जाता है, दिन में जिसे मंगल-गीत सुनाया जाता है, रात में वही स्त्रियो द्वारा आरोपित होता है, दिन में जो गजपर पर बैठता है रात में वही चोरो द्वारा बाध दिया जाता है। दिन में जो धनिक लगता है, रात में वह कील दिखाई देता है, दिन में जो स्नेह सिक्त मिलता है, तुरन्त ही वही शत्रु के समान हन्ता का रूप लिए खड़ा हो जाता है, जो पुद्गल चिरकाल से सुख-भाव देने आये हैं वे तत्क्षण दुःखदायी बन जाते हैं, जिन परमाणुओं से पिण्ड बनता है उसी पिण्ड से परमाणु खण्ड-खण्ड होने लगते हैं। यह मनुष्य-जन्म फेन के समान निम्सार है। क्षण भर में नष्ट होने वाला है। क्षण भर में बर्षा भाव पैदा होता है,

क्षण भर में क्षय होता है, क्षण भर में स्नेह होता है तो क्षण भर में वैर हो जाता है। प्रिय पुत्र, सुत, जननी, जनक, मित्र आदि हैं वे सभी अनित्य हैं। जल बुद-बुद के समान उनका जीवन अनित्य है। सभी विनष्ट होने वाले हैं, यह बचन पूर्णतः सत्य है। तीनों भुवनों में कोई शरण दिखाई नहीं देती, मृत्यु सभी के लिए समान है, उससे कोई किसी की रक्षा नहीं कर सकता। यह अनित्यानुभूति है ॥ 8 ॥

### ( 9 )

कोई भी स्त्री-पुरुष ऐसा नहीं जो मृत्यु को लाप सका हो। मृत्यु के आने पर इन्द्र भी हाहाकार करता है, दिक्पाल की भी वही गति होती है और जो कोई भी शक्ति मय होने है, वे सभी निःशरण होकर प्राण छोड़ देते हैं। नर और कीटों की तो बात छोड़िये, शक्र भी यम के रूठ जाने पर बच नहीं पाता। ये मूढ़ अज्ञानी जीव मृत्यु के समीप पहुँच जाने पर भी अपने आपको मृत्यु भुव में क्षिप्त नहीं मानते। यदि कोई न कोई उसकी सूचना दे भी देता है तो वह मोह ग्रस्त हो जाता है। जो दिन में जन्म लेता है वह रात में मर जाता है। जब यम की आवाज सुनाई नहीं देती तो उससे बचने के लिए मणि मन्त्र आदि का उपयोग होने लगता है। यम की दूर मानकर लोग अपना मनोरथ मिट्ट करके ले जाते हैं, श्वासीच्छ्वास के छल से जीवा चलता है क्षण-क्षण में वह क्षीण होता चला जाता है मूढ़ उसे समझ नहीं पाता। एक दिन जजरित होकर वह मृत्यु भुव में समा जाता है। ससार सागर में और भी अनेक दुःख हैं जिन्हें यह जीव भोगता है पर दुःख के कारणों की ओर विचार नहीं करता। यह अशरणानुभूति है ॥ 9 ॥

### ( 10 )

भवजन्य के बीच चारों भोग्य गतिधो में यह जीव परिभ्रमण करता है और दुःख भोगता रहता है। यहाँ शक्र भी मरकर मल का क्रीडा होता है और मल का क्रीडा भी शक्र हो जाता है, ब्राह्मण भी चण्डाल जाति में पैदा होता है और चण्डाल भी ब्राह्मण हो जाता है, मित्र भी शत्रु हो जाता है और शत्रु भी मित्र बन जाता है, माता भी काना बन जाती है और काना भी माता-पिता हो जाती है, पिता पुत्र और पुत्र पिता हो जाता है। यह भवनाली बड़ी विशाल है। जहाँ जीव अनन्तकाल से घूम रहा है। मनुष्य योनि मिलने पर भी वह भोग विलास में ही लगा रहता है। बालाभ्यास से तरुणी स्त्री सूनो का स्पर्श करती है। पदार्थ विचार पाच प्रकार से होता है—द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव और भव। ये सभी श्रेय हैं। अतीत काल में अनन्त काल से इन्हीं भोगते आए हैं और महान दुःख सहते आये हैं।

यह सब अकेले किया है। अकेले ही कर्मफल को भोगा है और अकेले ही चतुर्गतियो में भ्रमण किया है। यह ससारानुप्रेक्षा है ॥ 10 ॥

### ( 11 )

यह जीवन अकेला ही विविध कर्म बाधता है, अकेला ही परमसुख का भोग करता है, अकेला ही वैतरिणी का जल पीता है और अकेले ही देवलोक के सुखों का उपभोग करता है, अकेले ही तिर्यञ्च गति के दुखों को सहता है और अकेले ही पृथ्वी के राज्य सुख को भोगता है, अकेले ही परदत्त पीडा को भेजता है और अकेले ही रमणीय रसों को पान करता है, परिवार के कारण पापों का बंध करता है और अकेले ही उसका स्वाद लेता है, अकेला ही जन्म लेता है, अकेला ही मरता है, अकेला ही भवसागर में समरण करता है, इहलोक में अकेले ही सुख-दुःख भोगता है और परलोक में भी अकेले ही सुख-दुःख भोगेगा। जिस प्रकार राजा में पक्षी एक वृक्ष के नीचे मिल जाते हैं उसी प्रकार परिवार के लोग भी कुछ समय के लिए एक हो जाते हैं फिर भी यह मूढ़ जीव आत्मचिंतन नहीं करता। पर को अपना मानता है। निज परम भाव ही तो स्वभाव है। यह जीवन अकेले ही कर्मपाश काटता है और अकेले ही शिव सुख पाता है। इस प्रकार देह और जीव भिन्न-भिन्न हैं। जीव का शुद्ध स्वरूप स्पष्ट है। फिर भी वह जीव द्रव्य को अपना मानकर स्वयं का हनन करता है। यह एकत्वानुप्रेक्षा है ॥ 11 ॥

### ( 12 )

जीव और देह पृथक्-पृथक् है। आत्मा अचल, अमूर्त और अनिन्द्रिय है जबकि देह समूर्त सचल और इन्द्रियवान् है। जिस प्रकार जल और जलत्व में अनन्य भाव है उसी प्रकार जीव और देह में पर स्वभाव है, अन्य स्वभाव है। जब देह और जीव अलग है तो उनमें एकात्मता कैसे हो सकती है? जन्म जन्मान्तर से यह जीव पुत्र मित्र आदि से मोह करता चला आया है जबकि वे बिल्कुल अलग हैं प्रियजनो के विप्राय से पहले भी वह सतप्त हुआ है। इस जन्म में भी सतप्त हो रहा है। चिरमवो की यह बात अज्ञानी जीव भूल गया है और इस जन्म में मोह करने लगा है। यह जीव ससार रूपी घोर अटबी में भ्रमण करता फिरता है इसी अज्ञानता के कारण यह देह अशुचि और दुर्गन्ध का घर है। नव द्वारों से इसमें मल भरता है। फिर भी जीव इसमें बिभोहित हो जाता है। यहाँ उसे जीव और देह की भिन्नता पर विचार करना चाहिए। यह अन्यत्वानुप्रेक्षा है ॥ 12 ॥

( 13 )

यह मानव देह मल का बीज है। गर्भाशय मल का घर है। यह देह सभी मलो और दुर्गन्धो का योनि-स्थल है। देह से अधिक घिनोना और कोई दूसरा पदार्थ नहीं है। कुकूम, कस्तूरी आदि द्रव्य उसे सुगन्धित बनाने के लिए लगाते हैं पर वस्तुतः वे स्वयं मलिन द्रव्य हैं। यदि यह देह चर्म से ढका हुआ न हो तो उसे कौन अपनाता है। यह सभी रोगों का घर है और इसके नव द्वारों से मल प्रवाहित होता रहता है। सारे पाप इसी देह से होते हैं, देह के कारण होते हैं। चिंतन करने पर यह समझ में आता है कि देह का यह स्वभाव है। नारी का शरीर सौन्दर्य का घर मान लिया जाता है पर उसमें जिनकी अपवित्रता है, वह अन्यत्र नहीं दिखाई देगी। परन्तु मिथ्या बुद्धि के कारण यह जीव उसमें रमण करना है। ऐसा चिंतन करना अशुचित्वाभुप्रेक्षा है ॥ 13 ॥

( 14 )

कर्मों के आने के मार्ग को आश्रव कहते हैं जैसे नाव में छेद से पानी आ जाता है। इसी आश्रव के कारण जीव समार में जन्म लेता है। उसके दो भेद हैं—शुभ योग और अशुभयोग। शुभ कर्मों से शुभोपयोग होता है। इससे हेयोपादेय ज्ञान रूप विवेक प्रगट होता है। इससे उपशम और वैराग्य भाव की प्राप्ति होती है। इसके विपरीत अशुभयोग योग है जो मिथ्यात्व, अविरात, प्रमाद, कषाय और योग से उत्पन्न होता है इन अभावों के कारणों पर चिंतन करना आश्रवानुप्रेक्षा है और इन आश्रवों को कैसे दूर किया जाय। यह सवरानुप्रेक्षा से स्पष्ट होगा ॥ 14 ॥

( 15 )

आश्रव के निरोध को सवर कहते हैं। उसके दो भेद हैं—द्रव्य संवर और भावसवर। दान आदि से कर्म पुद्गलों का जो सवर होता है वह द्रव्यसवर है और सुख का कारण है। जो भव के कारणों को दूर करता है वह भावसवर है। जो समयवारी होते हैं उनके ऊपर आश्रव के वाण निष्फल हो जाते हैं। जिसका जो शस्त्र होता है वह उसी से मरता है। सवर के कुछ शस्त्र हैं जिनसे आश्रव का निरोध किया जाता है। उदाहरणन अमा से क्रोध का, मार्दव से मान का, ऋजुता से माया का, धीरता से मन की चपलता का, परिग्रह के त्याग से लोभ का, जिन प्रोक्त धर्मध्यान से मोह का, सम भाव से राग-द्वेष का, निर्ममता से स्नेह का, सम्यग्दर्शन से मिथ्यात्व का, मुक्ति चिंतन से भवभाव का, तत्त्वचिंतन से मदन का, नरकचिंतन से परीष्ट का, निरोध किया जाता है। इसी तरह के और भी जो विपरीत भाव हैं उनका निरोध सवरानुप्रेक्षा से होता है। और इसी से वे फिर निर्जरानुप्रेक्षा का मार्ग प्रशस्त हो जाता है।

( 16 )

आत्मा के साथ लगे हुए पौद्गलिक कर्मों के आश्रित अथ को निर्जरा कहते हैं। इसके दो भेद होते हैं—अकामनिर्जरा या अनुद्विपूर्वक निर्जरा और सकाम निर्जरा अथवा कुशल मूलनिर्जरा। आत्मा के साथ बंधे हुए कर्म अपनी स्थिति को पूर्ण करके आत्मा से सबंध स्वयं ही छोड़ देते हैं। इसके लिए कोई विशेष प्रयत्न नहीं करना पड़ता। यह अकामनिर्जरा है। दूसरी जो सकाम निर्जरा है उसमें दुर्बल तप आदि करने पड़ते हैं। तप करने और परीषद्दी के जीतने से कर्मों की स्थिति पूर्ण होने के पहले ही निर्जरा हो जाती है। अतएव इसके निमित्त से जीव मोक्ष के मार्ग में अग्रसर हो जाता है। अकामनिर्जरा से चतुर्गुणियों में कुछ भोगना पड़ते हैं क्योंकि कर्म विपाक होने पर ही वे फल दे पाते हैं। मुनिगण सकामनिर्जरा किया करते हैं। बारह महाव्रतों का पालन भलीभांति कर बाईस परीषद्दी को सहन कर और उत्तर-गुणों को पालकर कर्मों की निर्जरा कर डालते हैं इससे आत्मा की पवित्रता प्रगट हो जाती है। यही निर्जरानुब्रंजा है। इसी से फिर लोकानुब्रंजा पर चिंतन किया जाता है ॥ 16 ॥

( 17 )

जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, और आकाश ये पांच अस्तिकाय जिसमें रहते हैं वह लोक है। उनकी कुल ऊँचाई चौदह राजू मानी जाती है। उसका आकार उसी प्रकार का है जिस प्रकार कमर पर दोनों हाथ रखकर पैर फैलाये पुरुष का आकार होता है। अधोलोक सात राजू प्रमाण नीचे है, एक राजू पृथ्वी का विस्तार, पांच राजू प्रमाण स्वर्ग स्थान और एक राजू प्रमाण उसके ऊपर का भाग है। अधोलोक में सात नारकीय भूमियाँ अवस्थित हैं। यह समूची पृथ्वी अनोदधि, घनवात और तनु वातबल्य के आधार पर टिकी हुई है। मध्य लोक में असंख्य द्वीप-समुद्र हैं। उनके बीच जम्बू द्वीप है फिर घातकी खण्ड और पुष्करार्थ द्वीप। इसी को अद्वाइ द्वीप कहते हैं। मनुष्य यही तक पहुँच सकता है। त्रन्म-मरण भी यही होता है। जम्बू द्वीप के बीच में मेरु पर्वत है जिसके ऊपर ऊर्ध्वलोक है जिसमें 16 स्वर्ग हैं जिनमें रहने वाले देव कल्पोपपन्न कहे जाते हैं। उनके ऊपर 9 कल्पातीत विमान (अंधेयक) होते हैं और फिर 5 अनुत्तर विमान (सर्वार्थ सिद्धि) होते हैं। उनके ऊपर सिद्धशिला है जहाँ मुक्तात्माएँ अनन्त काल तक रहती हैं। जिसके बाद अलोकाकाश आरम्भ हो जाता है। इसका चिन्तन करना लोकानुब्रंजा है इससे बोधिलुब्ध भावना की भूमिका बन जाती है ॥ 17 ॥

( 18 )

धर्म के उत्तम क्षमा मार्गद्वारा दस लक्षण बताये गये हैं जिनका पालन कर जीव भव-सागर के पार पहुँच जाता है। जिन धर्म वस्तुतः कल्पवृक्ष हैं। वह यथार्थ सुख देने वाला है, सकल दुःखों का विनाशक है, रक्षण करने में समर्थ है, अमृत सदृश है, मेघ वर्षा भी धर्म से होती है और धर्म से ही घर में संपत्ति आती है और रत्नवृष्टि होती है, स्वर्ग प्राप्त होता है, तीर्थंकरपद मिलता है, इन्द्रपद मिलता है, अतिशय गुण उत्पन्न होते हैं, सर्वत्र विजय होती है, सकल कार्य सिद्धि होती है, और अनुपम मोक्ष प्राप्ति होती है। इस प्रकार धर्म से प्राप्त होने वाले लाभों का चिन्तन करते हुए निर्मल बोधिरत्न प्राप्त कर जीवन सफल बनाना चाहिए। यही बोधिवृत्तभानुप्रज्ञा है ॥ 18 ॥

( 19 )

अनेक बार यह जीव स्थावर द्रुपद भव-सागर में भ्रमण किया, लाखों योनियों में भटक, पञ्चेन्द्रिय विषय भोगी का उपभोग किया। अत्यन्त दुर्लभता पूर्वक मनुज जन्म पाया, उसमें भी जिनधर्म पालने का अवसर मिला। बोधि प्राप्ति में भी बहुत विघ्न होते हैं। सुभट रूपी बर्मा ने सपराय किया मनुज जन्म में यदि लम्बी आयु मिला भी गई तो धर्म का मिलना कठिन होता है, फिर निरोगता की प्राप्ति और कठिन होती है, उससे भी कठिन होता है जिनधर्म की प्राप्ति। जिनधर्म की प्राप्ति हो भी गई तो चित्त का शांत होना कठिन होता है, उसमें भी मुनि के प्रति भक्ति और कठिन होती है। भक्ति होने पर वैराग्य हो और वह भी चिरकाल तक रहे यह और भी कठिन होता है। कभी बोधि मिल भी जाती है। पर वह छूट भी जाती है, मोक्ष में प्रवेश कर निकल भी जाती है, दुःख इस बात का है कि समुद्र से प्राप्त यह चिन्तामणि समुद्र में ही फँक दिया जाता है। ऐसे जीव अमृत से वञ्च होते हैं। हा 'प्राप्त बोधि हाथ से चली जाती है। इसकी किससे उपमा दी जाये। इस तरह से बह्वर्ण से अविनीत पालण्डी जंग में भ्रमण करते रहते हैं। वे परमात्मा का चिन्तन नहीं करते, दुर्लभ बोधि धर्म को प्राप्त नहीं करते ॥ 19 ॥

( 20 )

इस प्रकार बारह भावनाओं को भाते हुए चन्द्रप्रभ ने अपने पुत्र को राग्य देकर दुर्धर तप करने का निश्चय किया। इनने मे लौकान्तिक देव आये और उन्होंने भक्ति पूर्वक निवेदन किया कि हे त्रिजगदीप ! इन भव्य जीवों का उद्धार कीजिए। ये भव समुद्र में पड़े हुए हैं, अपार दुःख भोग रहे हैं, मोहान्धकार से ग्रसित हैं। सम्यग्दर्शन के प्रति रुचि नष्ट हो गई है। हे ज्ञान दिवाकर ! कर्म की अवधारणः को स्पष्ट



कीजिए। आप ही इस जग का उद्धार कर सकते हैं। शिव नगर के द्वारों को उद्घाटित कीजिए, तीर्थरत्न को प्रस्फुटित कीजिए, सकल लोक में धर्माभूत की वर्षा कीजिए। इस तरह ब्रह्मा देव ने बड़े विनय भाव से धर्चना की और दुन्दुभी बजाई। दसो दिशाओं में उसकी आवाज फैल गयी। फलतः हर्षित होकर देवगण वहाँ एकत्रित हो गये ॥ 20 ॥

### (21-22)

इसके उपरान्त इन्द्र वहाँ आया और बड़ी भक्ति पूर्वक स्तुति कर 'विमला' नाम की शिविका (पालकी) में बैठकर भगवान को सकलतुं नामक वन में ले गये। उस शिविका में सौधमैन्द्र ने अपना कषा दिया। शिविका के आगे चन्द्रसूर्य थे। सभी देवगण पालकी के चारों ओर नाच रहे थे। दिव्य पुष्प वृष्टि हो रही थी, गीत गा रहे थे, सुर कीणा बज रही थी, दिव्य वस्त्र ला रहे थे, मंगल मालाएँ लिए देवांगनाएँ हाथी पर सवार थी। इस तरह भक्ति भावपूर्वक सभी सकलतुं वन पहुँचे। वहाँ के समय असमय के सारे पुष्प और फल पुष्पित-फलित हो गये। किशुक, कर्वीर, ककोल, कास, कपास, खजूर, चपक, चंदन, अन्न, जूही, ताआलि, दाडिम, एारग, लवण आदि सभी वृक्ष खिल उठे ॥ 21-22 ॥

### (23-24)

सकलतुं वन पहुँचने पर भगवान को शिविका से उतारा और निर्मल शिलाताल पर बैठाया। वहाँ वरचन्द्र नामक अपने पुत्र को राज्य देकर सिद्ध परमेष्ठी को नमनकर पौष कृष्णा एकादशी के दिन अपने समार का अन्त करने के उद्देश्य से पंच मुष्टियों से केशों का लुब्धन किया। इन्द्र ने उन केशों की भक्ति भाव पूर्वक मणिपात्र में रसक और समुद्र में प्रवाहित कर दिया। फिर रत्नदीप्त कुण्डल उतारा मानो काम रथ का चक्र छोड़ दिया हो, कठ से मणिहार उतारा मानों मोहपाश काटा हो, केयूर उतारा मानो कर मुद्रा छोड़ी हो, कटि सूत्र तोड़ा मानों काम धनुष की प्रत्यक्षा सूत्र हो। इसी तरह नूपुर, सूकम वस्त्र आदि अन्य आभरण भी रथागे जो भववचन के परिचायक थे और इस तरह जैनेन्द्र दीक्षा ग्रहण की। सभी देव गण हर्षित और पुलकित हुए। परिवार के लोग भी यद्यपि सतप्त थे पर उन्हें भी प्रसन्नता हुई। अन्त पुर वियोग से तप्त हो गया, शोकमग्न हो गया, पुत्र भी शोक सतप्त हो गया। सभी ने उन्हें सन्तवना दी बाद में देवों ने भगवान की पूजा भक्ति की, स्तुति की और अपने-अपने स्थान चले गये ॥ 23-24 ॥

## दशम संधि

( 1 )

चन्द्रप्रभ ने पच नहावन और पच समितियों का परिपालन किया, पचेन्द्रिय द्वारों का सवर किया, षडानुष्यको का पालन करते हुए परीषहों को सहा, अचेलकता से मन चपल नहीं हुआ, अस्नान और वतधावन को छोड़ दिया, खड़े होकर भोजन करने लगे, मूल गुणों और उत्तर गुणों की भावना की, बारह प्रकार का तप किया । इस प्रकार उनका निर्मल और निश्चल चरित्र था । शत्रु और मित्र के प्रति समता भाव था, शक्र और रक तथा सुख और दुःख के प्रति समभाव था, पाप और पुण्य, रज्जु और चरण, भिक्षारी और धनी, ससारी और मुक्त सभी उनकी दृष्टि में बराबर थे । इस प्रकार भावन करते हुए दो उपवासों का नियम ले लिया ॥१॥

( 2-4 )

जिनवर ने एषणा शुद्धि का विचार किया, समय परिपालन में बुद्धि लगाई, चौदह मल दोषों और बत्तीस अतराय दोषों (कुल 46 दोषों) से मुक्त आहार किया । पाणिपात्र में आहार लेते थे रसनेन्द्रिय लोलुपी नहीं थे । इनके अतिरिक्त और भी जो नियम पूर्वाचार्यों ने चर्या के सर्वम में बनाये थे उन सबका भलीभाँति पालन करते हुए मुनिवर ने दुर्धर तप किया । बाद में उन्होंने वह वन प्रदेश छोड़ दिया । बिहार करते हुए नलिनपुर नगर आये । आहार चर्या के लिए वे घर-घर घूमते रहे । उनके आगे-पीछे लोग भी घूमते रहे । बाद में वे राजगृह पहुँचे जहाँ राजा सोमदत्त ने बड़े भक्तिभाव से पढ़गाकर उन्हें आहार देने का सकल्प व्यक्त किया । उसने प्रासुक जल से सिंहासन आदि को धोया । भगवान ने यथोचित आहार व्यवस्था देखकर पारणा ली । आकाश में दुन्दुभी बज उठी, सर्वत्र साधुवाद की आवाज गूँज उठी, गगन से रत्नदृष्टि, गन्धोदक दृष्टि और पुष्प दृष्टि होने लगी । विभुवन पुलकित हो गया । भोजन कर भगवान ने जल-ग्रहण किया । भगवान का आहार देखकर लोगों को आहारविधि समझ में आई । राजा सोमदत्त ने भगवान की पूजा की, अष्टागविधि

से भक्ति की, संघोदक लगाया, अक्षत चढ़ाये, धूप-पूजा की, नैवेद्य चढ़ाया, दीपक से भारती की, अज्ञान रूप तम का विनाश हो यह मानकर धूप खेई, पुष्पाञ्जलि की। इस प्रकार भगवान की चरणपूजा और भक्ति कर राजा ने अपना कर्मक्षय किया ॥2-4॥

( 5 )

हे भगवान् ! आप त्रिजगपति हैं, परोपकार के लिए आपने शरीर धारण किया है, तीनो लोको को प्रवृत्त किया है, धन्य किया है, विशेषत मैं शोक-दुःख से मुक्त हो गया हूँ। आपने सप्ततत्त्वों को समझा दिया है, अर्थों के कर्म-पक्ष को भी दिया है, दोषों को दूर करने वाला नय-रस्य प्रदान किया है, आपकी जो साधना भूमि है उसमें लोग अपने पापों को छोड़ देते हैं इसलिए उसे तीर्थ कहा जाता है। उसमें अवगाहन करने से साधकों को स्वर्ग और मोक्ष की उपलब्धि होती है। आप परमात्मा हैं, निर्मल हैं, कल्पवृक्ष हैं, सुखदाता हैं, दुःखमञ्जक हैं। आपके गुणों की स्तुति कौन कर सकता है ? इन्द्र भी इसमें समर्थ नहीं हैं। इस प्रकार राजा ने स्तुति की ॥5॥

( 6 )

बाद में जिनेन्द्र वहाँ से धीरे-धीरे आगे बढ़े और निरालस होकर ईर्ष्यामिति का पालन करते रहे। बिहार करते हुए वे उसी सकलतुं वन में पहुँचे जहाँ उन्होंने वीला ली थी। बाईस परीषदों को सहन करते हुए और बारह तपो का आचरण करते हुए वे एक वृक्ष के नीचे आसन लगाकर बैठ गये। घनघोर वर्षा होने लगी रात का साध्र अन्धकार चारों ओर फैल गया, डांस-मच्छरों ने शरीर को चीस डाला, कानों के परदों को फाड़ने वाली मेघ गर्जना होने लगी, बिजली चमकने लगी, शरीर को कपित करने वाली घनवात चलने लगी, कठोर हिमवात बहने लगी जिससे वृक्ष भी प्रभावित होने लगे। ग्रीष्मकाल आने पर सूर्य की प्रखर किरणें प्रलय काल का दृश्य उपस्थित करने लगी, दावानल में जल जलने लगे, गिरि तटों पर आतापन दुःखदायी हो गया। ऐसी विषमावस्था में जिनेन्द्र देव आत्मध्यान में लीन रहे, शुभ रस का पान करते रहे। उन्हें किञ्चित् भी दुःख की वेदना नहीं हुई और वे वैराग्य में लीन रहे। इस तरह तप का आचरण करते हुए शुभ ध्यान में लीन रहे ॥6॥

( 7 )

इसके बाद वे नागवृक्ष के नीचे वज्रासन लगाकर शिलातल पर बैठ गये और शुक्ल ध्यान में लीन हो गये जो मोह-महातम के लिए प्रलय भाजु हैं, वज्र-वृषभनाराच-

सहज रूप है पूर्वधरो के लिए सिद्धि-दायक रहा है, मोह को शीघ्र ही नष्ट करने वाला और शुक्ल ध्यान को शीघ्र ही प्रस्फुटित करने वाला है। उस शुक्ल ध्यान के चार भेद हैं—पृथक्त्ववितर्क, एकत्ववितर्क, सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति और व्युपरतक्रिया-निवृत्ति। जिन जीवों के मन-वचन-काय में तीनों योग रहते हैं उनके पहला शुक्ल-ध्यान पृथक्त्व वितर्क हो सकता है और जिन जीवों के इन तीनों में से एक ही योग पाया जाता है उनके दूसरा शुक्लध्यान एकत्ववितर्क हो सकता है। जो तीनों में से केवल कामयोग को ही धारण करने वाले हैं उनके तीसरा शुक्लध्यान होता है और जो तीनों ही योगों से रहित हैं उनके चौथा शुक्लध्यान हुआ करता है। पहला और दूसरा ध्यान सवितर्क होता है। पहला ध्यान विचार सहित भी होता है। दूसरा ध्यान वितर्क सहित पर विचार रहित होता है। ये दोनों ध्यान श्रुतकेवली के ही हुआ करते हैं। शेष दोनों अंतिम ध्यान केवली के होने हैं। यहाँ सभी की साधना में भगवान ने प्रथम दो ध्यान पा लिये ॥7॥

( 8 )

इसके बाद उन्हें केवलज्ञान प्राप्त हुआ जिसमें वस्तुतत्त्व हस्तामलकवत् दिखाई देने लगता है। यह ज्ञान निष्कलक है, निष्कारण है, महान है, नित्य और निरजन है अनंत गुणवान् है, सर्वज्ञेय प्रकाशक है, छेद विवर्जक है, परम सुखदाता है, परमात्म भाव से प्राप्त होने वाला है, भवभाव का विनाशक है। रत्नत्रय के परिणामो का प्रसारक है, युगपत् सर्व पदार्थों का भवभासक है, तीनों कालों तक उसकी पहुँच है, त्रिकालवर्ती पदार्थों के गुण-पर्यायों को एक साथ प्रत्यक्ष रूप से जानने वाला है ॥8॥

( 9 )

इसके बाद इन्द्र का आसन कपित हुआ, घटो में भ्रावाज निकली जिसे सुनकर भुरगगा आश्चर्यान्वित हो गये। ज्योतिषी देवों के घर मिहनाद हुआ। दिग्गजों ने कहा—आदेश दीजिए। व्यतर देवों के घरों में पटहनाद हुआ जिससे वे स्वय विस्मित हो गये। भवनवासी देवों के घरों में असह्य वाद्य बजे जिससे वे भी आश्चर्यचकित हो गये। इसके बाद सौधर्म इन्द्र (कुबेर) को ज्ञान हुआ कि चन्द्रप्रभ जिनेन्द्र को केवलज्ञान प्राप्त हो गया है। वह अत्यन्त हर्षित होकर तुरन्त हाथ जोड़कर शक्र के पास-पहुँचा और आदेश की याचना की। शक्र ने कहा—धर्मकार्य करो और जैनधर्म का उद्योतन करो। भगवान को केवलज्ञान उत्पन्न हो गया है। उनके पास जाकर उनके नमवशरण की रचना करो। कुबेर ने तुरन्त ही विनम्रतापूर्वक आदेश को स्वीकार किया और सपरिहर भगवान की सेवा में पहुँच गया ॥9॥

( 10 )

इन्द्र की आज्ञा से कुबेर ने सपरिहर जाकर समवशरण की रचना की। वह समवशरण साढ़े आठ योजन प्रमाण विस्तृत था। उसमें पंच वर्णों के मणि लगे थे, तल भाग नीले रंग का था। समवशरण के चारो ओर बलयाकार गोल धूलिसाल (पाचरगो के रत्नों की धूलिसे बना हुआ) प्राकार था। उसमें कहीं मरकतमणि, कहीं पद्मराजमणि, कहीं चन्द्रकांत मणि और कहीं कर्कराज लगे हुए थे। इस प्रकार धूलिसाल (चहारदीवारी) की शोभा मनोहारी थी। उसमें चार द्वार थे जो मणिमय तोरणों से सजे हुए थे। उनके बाहर मणि निर्मित बावड़ी थी जो निर्मल जन से भ्रापूर थी। दिशाओं में चार ऊँचे मान स्तम्भ थे जो त्रिभुवन के मान क्षम करने के प्रतीक थे। उनमें चारो दिशाओं में जिन प्रतिमा रखी हुई थी। उनके आगे पुष्पो से आच्छादित निर्मल जल से भरी परिखा थी ॥ 10 ॥

( 11-13 )

परिखा के तट पर अनेक प्रकार के फूलों से अलंकृत विशाल फूलबाड़ी थी, उसका चार दरवाजो से युक्त अत्यन्त ऊँचा शोभा सम्पन्न प्राकार था। उसके आगे एक बड़ा उपवन था जो विविध वृक्षों से भरा हुआ था, उसके आगे रतनसार वेदी फिर प्राकार उसके आगे देववृक्ष, फिर शाल वृक्ष, फिर रत्नसार और उनके ऊपर अशोक वृक्ष बनाये गये। उनके नीचे मणि जटित सिंहासन, गच कुटि और अनेक प्रकार की मालाओं से उनको शोभित किया गया। उनके बाद अनेक प्रकार के सभा मण्डप थे। उनमें पांच वेदियाँ और उनमें मण्डित मणि-रचित समवशरण था। उस मण्डप का हर पोल मणि तोरण से सज्जित था। चारो दिशाओं में बीस हजार सोपान थे। प्रथम पोल व्यन्तरो द्वारा और द्वितीय पोल नाग सुरेश्वर द्वारा रक्षित था। वहीं मणिदीप्त नवनिधान भग्न इव्यनिधिया आदि थी। प्राकार के भीतर दोनो भागों में दो-दो नृत्य शालाएँ थी जिनके आगे वेधों से व्याप्त चार वन थे। उन वनों में जिनबिम्बों से विराजित जिनप्रतिमा सहित चार चैत्य वृक्ष थे, मणिनिर्मित तटों से युक्त तीन-तीन वापिकाएँ थी अनेक प्रकार के सभा मण्डप थे जो अनेक कीड़ा पर्वतों से विभूषित थे। ये कीड़ा पर्वत जल की धारा बहाने वाले यन्त्रों तथा भीरों से व्याप्त लतामण्डपों से विभूषित थे। प्राकारों के भीतर विशाल बारह कोठे थे जिनके आगे मणि रचित चार तोरणों से विभूषित जवानावरण की वेदी थी। उसके आगे तीन पीठ थे जो अनेक प्रकार के रत्नों से विभूषित थे। प्रथम पीठ पर भी धर्मचक्र था जो एक हजार धारों से युक्त था, द्वितीय पीठ पर श्री अष्टकेतु और तृतीय पीठ पर श्री देवभेष्ठ विराजित थे। उसके बाद रत्नजटित सिंहासन और उसके ऊपर तीन छत्र शोभित थे। उसके नीचे निरवलम्ब परमेश्वर थे। वहीं जवानवासी 20, व्यन्तर 16, कल्पवासी 24, सूर्य और अम्ब इस तरह 64 देव चमर

हुला रहे थे। सिंहासन के बाहर गणगेह (गणकुटी) थे जो अनेक प्रकार के पुष्पो से सज्जित थे वहाँ सारी पृथ्वी चदन से सिञ्चित थी, सुवासित थी, सर्वत्र कुसुम ह्रष्टि हो रही थी, रगावलिया छोड़ी जा रही थी। और भी इसी तरह की अन्य वस्तुएं लाने में यक्ष जुटे हुए थे। इसके बाद दुन्दुभी बजाई गई, चारों निकायो के देव जय जयकार करते हुए चल पड़े।

( 14 )

सुरेन्द्र ऐरावत पर आरूढ़ था, दिग्पाल भी सपरिवार चल रहे थे। आकाश में दुन्दुभी का शब्द गजित हुआ जिससे समुद्र की लहरो जैसी तेज आवाज आई। जबल बरों के विमान समुद्र के फेन जैसे लग रहे थे जिसमें सुरवाहन जलचर का सदेह पैदा कर रहे थे। वही छत्र, कमल, विद्रुम, मुक्ता फल, घूम मण्डल की भी अनुपम शोभा थी। वहीं शस्त्र श्वेत पक्ष जैसे लग रहे थे। वाहवाग्नि ऐरावत जैसी प्रतीत हो रही थी। अनेक प्रकार के बाजे बज रहे थे। इस प्रकार बड़ी घूमघाम से नृत्य करते हुए देवगण केवली भगवान के पास पहुँचे।

( 15 )

सिंहासन के बीच भगवान चन्द्र के समान विराजमान थे। वे चार धातिया कर्मों के क्षय होने के कारण अतिशय और प्रातिहार्यों से युक्त थे। जहाँ-जहाँ वे विहार करते थे वहाँ-वहाँ सौ-सौ योजन तक दुर्भिक्ष नहीं रहता था। गगन विहारी जीव निर्मय होकर बिहार करते थे। किसी का कोई उपसर्ग नहीं होता था। भगवान का चतुर्मुखी रूप छाया विहीन था, लोचन निष्पद था, सकल विद्याएं मानो सनाथ हो गईं केशवृद्धि रुक गई। इत्यादि दस अतिशय हुए ससार में उनका तीर्थरथ चला सर्वत्र जीवों में मैत्री जागृत हुई, वृक्ष, पुष्पो और फलों से आच्छादित हो गये, पृथ्वी निर्मल दर्पण के समान निर्दोष दिल्ली, शीतल समीर प्रवाहित होने लगा। गगन मण्डल निर्मल हो गया, आठ मंगल और धर्मचक्र प्रगट हुए। मागधी भाषा में दिव्यध्वनि स्रिरी, देवों ने स्तुति की। इस तरह दिव्य अतिशयो और निधियों से युक्त केवली भगवान चन्द्रप्रभ की आराधना करते हुए देवगण समयक्षरण में यथा स्थान बैठ गये।

( 16 )

देवों ने बड़ी भक्ति और विनम्रता पूर्वक हाथ जोड़कर भगवान से प्रार्थना की कि हे भगवान ! हमारे अगुर्गतियों के गसारभ्रमण को नष्ट कीजिए। हे परमेश्वर ! आप आत्मरूप हो, रत्नत्रय स्वरूप हो, आपने आत्म स्वरूप को प्राप्त कर लिया है

अतः अब पर द्रव्यों से हमारे भावों को मुक्त कीजिए । आपने ज्ञानामृत स्वभाव को पा लिया है, अतः अब ससार में जन्म-मरण कराने वाली कथाओं को छोड़ाइए । आप परमात्मा हैं, आप समस्त पदार्थों के दृष्टा हैं, एक रूप हैं, रूपनिर्मुक्त हैं, शीतल हैं, शिवप्राप्ति में सहायक हैं, कर्ता, कर्म, क्रिया आदि कारकों से आपका वित्त उन्मुक्त है, अब और कौनसा परिग्रह है जो आपको छोड़ा है । जो पर्यायमुक्त द्रव्य समूह है उसे आपने अपने निर्मल आत्मज्ञान से जान लिया है । जो त्रिभुवन के भव्य जीव आपके सपर्क से शुद्ध हुए हैं । आपकी जितनी भी स्तुति की जाये, थोड़ी है । अंगुलि पर गणनीय है । जो मन-वचन से आपकी स्तुति करता है वह केवलज्ञान को प्राप्त कर लेता है । आपको जो थोड़ा भी जान लेता है उसके दुःख दूर हो जाते हैं । इस प्रकार सुरेश्वर द्वारा स्तुति करने के बाद सभी देवगण उपशम भाव से अपने-अपने कोठे में बैठ गये ।

( 17 )

प्रथम कोठे में मुनिराज, दूसरे में कल्पवासिनी देवियाँ, तीसरे में आर्यिकाएँ, चौथे में ज्योतिषी देवियाँ, पाँचवें में व्यतर देवियाँ, छठे में भवनवासिनी देवियाँ, सातवें में भववासी देव, आठवें में व्यतर देव, नौवें में ज्योतिष्क देव, दसवें में कल्पवासी देव, ग्यारहवें में सुशील मनुष्य और बारहवें में अतामस तिर्यञ्च बैठे । अपने चिरकालीन वैराग्य को छोड़कर प्राणी समता भाव को प्राप्त हुए । व्याघ्र शावक गाय का स्तन-पान करने लगा, भूषक मार्जार के बच्चे के साथ खेलने लगा, नेवला सर्प का मुँह चुबन करने लगा । सिंह और हाथी अपना रंग छोड़कर मिलने लगे । उस समय न किसी का जन्म-मरण हुआ, न कोई भूल और तृष्णा से पीड़ित हुआ और न किसी ने क्रूरकर्म किये । किसी को निद्रा, रोग, कदर्यमान, पीडा, भय, दुष्ट भाव आदि भी नहीं हुए ।

इस प्रकार भव्यजन निर्मल मन होकर बारहों कोठों में यथास्थान बैठ गये और बाद में हाथ जोड़कर धर्मोपदेश के लिए प्रार्थना की ।

यह मैंने (अनुवादक ने) विषय का यथावश्यक विस्तार कर दिया है ।

## ग्यारहवीं संधि

( 1 )

इसके बाद अमृतस्वभावी दिव्यध्वनि खिरी । जिसे मागधवाणी कहा गया है । उसे सभी ससारी जीवों ने अपनी-अपनी भाषा में समझ लिया । गणेश्वर ने उसका विस्तार किया । परमेश्वर ने सप्त तत्त्वों का व्याख्यान किया । उन्होंने कहा—प्रत्येक द्रव्य में तीन तत्त्व रहते हैं—उत्पाद, व्यय और धौव्य । तत्त्व सात हैं—जीव, अजीव, आश्रय, बध, सवर, निर्जरा और मोक्ष । इन सप्त तत्त्वों की विषय व्याख्या लोगों के सदेहों को दूर करने वाली होती है । जीव द्रव्य के दो भेद हैं—ससारी और अससारी । ससारी जीव के भी दो भेद हैं—जस और स्यावर । जस जीवों के चार और स्यावर जीवों के पांच भेद होते हैं । पुनः स्यावर के दो भेद हैं—सूक्ष्म और बाह्य । जस-स्यावर के भी दो भेद हैं—पर्याप्तक और अपर्याप्तक ॥१॥

( 2 )

जस जीव चार प्रकार के हैं—द्विइन्द्रिय, त्रिइन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और पचेन्द्रिय । दो इन्द्रिय जीवों के स्पर्शन और रसना इन्द्रिय होती हैं । तीन इन्द्रिय जीवों के स्पर्शन, रसना और घ्राण इन्द्रिया होती हैं । चतुरिन्द्रिय जीवों के स्पर्शन, रसना, घ्राण और चक्षु इन्द्रिया होती हैं तथा पचेन्द्रिय जीवों के स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु और श्रोत्र इन्द्रिया होती हैं । इनमें कुछ सजी भी होते हैं । एकेन्द्रिय जीव की उत्कृष्ट अवगाहना का प्रमाण कुछ अधिक एक हजार योजन है । द्वीन्द्रिय जीव के शरीर की उत्कृष्ट अवगाहना का प्रमाण बारह योजन है । त्रीन्द्रिय जीवों के शरीर की उत्कृष्ट अवगाहना का प्रमाण तीन कोश है और चतुरिन्द्रिय जीव के शरीर की उत्कृष्ट अवगाहना का प्रमाण एक योजन है । पचेन्द्रिय जीवों के शरीर की उत्कृष्ट अवगाहना का प्रमाण एक हजार योजन है । एकेन्द्रिय से लेकर चतुरिन्द्रिय पर्यन्त सभी जीवों का जन्म समूह्य ही हुआ करता है । पशु-पक्षियों और मनुष्यों का जन्म गर्भ से होता



है। देव और नारकियों का जन्म शरीरवादि होता है। देवों और नारकियों के अविस्त योनि होती है। गर्भ जन्म वालों की मिश्र-सचित्ताचित्त योनि होती है और शेष जीवों के तीनों तरह की योनि होती है-सचित्ता, अचित्ता और सचित्ताचित्त। गर्भ जन्म वाले तथा देवगति के जीवों के मिश्र रूप शरीरवादि योनि होती है, तेजस्कायिक जीवों के उष्ण योनि होती है। शेष जीवों के तीनों ही प्रकार की योनि हुषा करती है-शीत, उष्ण और शीतोष्ण। नरक गति तथा एकेन्द्रिय जीवों के और देवों के संवृत योनि ही हुषा करती है। गर्भ जन्म वालों के मिश्र-सुसंवृतविवृत, किन्तु शेष जीवों के तीनों ही-संवृत, विवृत, और संवृत्तविवृत योनि हुषा करती है। पृथिवी कायिकजीवों की उत्कृष्ट आयु बाईस हजार वर्ष, जल कायिक की सात हजार, वायु कायिक की तीन हजार, वनस्पति कायिक की दस हजार और तेजस्कायिक जीवों की उत्कृष्ट आयु केवल तीन दिन की है, द्वीन्द्रिय जीवों की उत्कृष्ट आयु बारह वर्ष की, त्रिन्द्रिय जीवों की उत्कृष्ट आयु एक कम पचास दिन की, चतुरिन्द्रिय जीवों की उत्कृष्ट आयु छह मास की और पचेन्द्रिय जीवों की उत्कृष्ट आयु एक वर्ष की होती है ॥२॥

( 3 )

इन्द्रियों का आकार स्पर्शेन्द्रिय के सिवाय चार का नियत है और स्पर्शेन्द्रिय का अनियत है, श्रोत्रेन्द्रिय का आकार गवताली के सदृश, चक्षुरिन्द्रिय का आकार मसूर अन्न विशेष के समान, घ्राणेन्द्रिय का आकार अतिमुक्त पुष्प विशेष के तुल्य और रसना इन्द्रिय का आकार खुरप (खुरपा) सदृश हुषा करता है। स्पर्शेन्द्रिय का आकार शरीर के अनुसार नाना प्रकार का होता है। सभी के स्पर्शन, रसना, घ्राण का क्षेत्र नौ-नौ योजन, श्रोत्र और चक्षु का सैतालीस हजार दो सौ त्रैलोक्य से कुछ अधिक है। मन के दो भेद हैं-द्रव्यमन और भाव। द्रव्य हृदय में घटनावर्त भूत कमल के समान है और भावमन आत्मा रूप है। इसके बाद संक्षेप में विभुवन का वर्णन किया जायेगा ॥२॥

( 4-5 )

तीन बलयों से वेष्टित रत्नप्रभा आदि सात नरक पृथ्वियां सात राजू प्रमाण नीचे अधिष्ठित हैं। प्रथम रत्नप्रभा पृथ्वी एक लाख अस्सी हजार योजन मोटी है। जिसके तृतीय भाग अर्द्धगुह्य के मध्य भाग में नरक बिल हैं। ये इन्द्रक क्षेपि और पुष्य प्रकीर्णक के रूप में तीन विभागों में विभाजित हैं। इसके 13 नरक प्रस्तार हैं और उनमें सीमान्तक नियत औरक आदि 13 ही इन्द्रक हैं। शर्कराप्रभा में 11 नरक

प्रस्तार और 11 इन्द्रक हैं। बालुकाप्रभा में 9 नरक प्रस्तार और 9 इन्द्रक हैं। पक्कप्रभा में 7 नरक प्रस्तार और 7 इन्द्रक हैं। घूमप्रभा में 5 नरक प्रस्तार और 5 इन्द्रक हैं। तमप्रभा में तीन नरक प्रस्तार और तीन ही इन्द्रक हैं। और महातमप्रभा में एक ही इन्द्रक नरक है। सीमान्तक इन्द्रक नरक की चारो दिशाओ और विदिशाओ में क्रमबद्ध नरक हैं तथा मध्य में प्रकीर्णक दिशाओ की ओर 49-49 नरक हैं, तथा विदिशाओ की ओर 48-48। निरय आदि शेष इन्द्रको में दिशा और विदिशा के ओर 11 बद्ध नरको की संख्या कम से कम होती गई है। सातवें की विदिशाओ में नरक नहीं है। इन सातों पृथ्वियों में कुछ नरक संख्यात योजन विस्तार वाले और कुछ असंख्यात लाख योजन विस्तार वाले हैं। पाचवे भाग तो में संख्यात योजन विस्तार वाले हैं और चार भाग असंख्यात योजन विस्तार वाले हैं। इन्द्रक बिलों की गहराई प्रथम नरक में एक कोश और आगे क्रमशः आधा-आधा कोश बढ़ती हुई सातवें में चार कोश हो जाती है। ओर 11 बद्ध की गहराई अपने इन्द्रक की गहराई से तिहाई और अधिक है। प्रकीर्णको की गहराई, ओर 11 और इन्द्रक दोनों की मिली हुई गहराई के बराबर है।

इन नरको में नारकी जीव तीव्र अशुभ कर्मों के उदय से तथा विमगावधि से पूर्वकृत बंद के कारणों को जानकर निरन्तर एक दूसरे को तीव्र दुःख उत्पन्न करते रहते हैं। आपस में मारना, काटना, छेदना, घानी में पेलना आदि भयकर दुःख कारणों को जुटाते रहते हैं। यहाँ तीव्रतम उष्णवेदना और शीतवेदना रहती है। इन सातों पृथ्वियों में नारकियों की आयु क्रमशः एक, तीन, सात, दस, सत्रह, बाईस, और तेतीस सागर प्रमाण है। प्रथम पृथ्वी में नारकियों की जघन्य आयु दस हजार वर्ष है, दूसरी पृथ्वी में जघन्य आयु वही है जो प्रथम पृथ्वी में उत्कृष्ट आयु है। उसी क्रम से सातवीं पृथ्वी तक के नारकीय की जघन्य आयु समझी जा सकती है। अर्थात् पूर्व पृथ्वी के नारकियों की जो उत्कृष्ट आयु है वही उससे अगली पृथ्वी के नारकियों की जघन्य आयु जाननी चाहिए। पहली पृथ्वी में तीस लाख नरक (नारकीयों के बिल) दूसरी में पच्चीस लाख, तीसरी में पन्द्रह लाख, चौथी में दस लाख, पाचवीं में तीन लाख, छठी में पाच कम एक लाख और सातवीं में केवल पाच ही हैं ॥4-5॥

( 6-7 )

प्रथम नरक में शरीर की ऊँचाई सप्तधनुष तीन हाथ और छ अंगुल है। उनसे आगे की शंकराप्रभा आदिक पृथ्वियों में क्रमशः उसका प्रमाण दुगना होता है। इस तरह सातवें नरक में 5000 धनुष हो जाता है। असली प्रथम पृथ्वी तक,

सरीसृप द्वितीय तक, पक्षी तीसरी तक, सर्प चौथी तक, सिंह पांचवी तक, स्त्रियां छठवी तक और मत्स्य तथा मनुष्य सातवी पृथ्वी तक उत्पन्न होते हैं। नारकी न देवों में उत्पन्न हो सकते हैं और न विकलत्रय में हो सकते हैं। नारक जीव मरने के बाद नरक से निकलकर तिर्यग्योनि धरावा मनुष्य गति में ही जन्म ग्रहण कर सकता है, अन्यत्र नहीं। नरक से निकलकर जो जीव मनुष्य पर्याय को धारण किया करते हैं, उनमें से कोई-कोई जीव तीर्थंकर भी हो सकते हैं। परन्तु आदि की चार भूमियों से निकले हुए जीव मनुष्य होकर मोक्ष को भी जा सकते हैं, पर बन्धदेव, वासुदेव चक्रवर्ती नहीं होते। आदि की पांच भूमियों के जीव मरने के अनन्तर मनुष्य होकर समय को धारण कर सकते हैं। छह भूमियों के निकले हुए जीव मनुष्य होकर समयमासयम-वैश्वत्र को धारण कर सकते हैं, और सातवी भूमि तक निकले हुए जीव सम्यग्दर्शन को धारण कर सकते हैं। प्रथम भूमि में चौबीस मुहूर्त तक नारको की उत्पत्ति नहीं होती, दूसरे में सात दिन तक नहीं होती इसी तरह आगे क्रमशः एक पक्ष, एक माह, दो माह, चार माह और छह माह का विधान है। सभी नारकी नष्ट हो सकते हैं और अत्यन्त पीड़ा पाते हैं। ससार में पाप के कारण यह दुःख होती है। उनके शरीर के लण्ड-लण्ड होते हैं, और उनके कोई सहनन नहीं होता ॥६-७॥

( ४ )

आदि के चार नरकों में उष्णवेदना है। पाचवें के दो लाख बिलों में उष्णवेदना तथा शेष में शीतवेदना है। छठवें और सातवें में शीतवेदना ही है। अर्थात् ४२ लाख नरक उष्ण हैं और दो लाख नरक शीत। उनके शरीर अशुभ नाम कर्म के उदय से हुंकार स्स्थान वाले बीमत्स होते हैं। यद्यपि उनका शरीर वैज्यक है फिर भी उसमें मल, मूत्र, पीव आदि सभी बीमत्स सामग्री रहती है। प्रथम और द्वितीय नरक में कापोत लेश्या, तृतीय नरक में ऊपर कापोत तथा नीचे नील, चौथे में नील, पांचवें में ऊपर नील और नीचे कृष्ण और सातवें में परमकृष्ण द्रव्यलेश्या होती है। भावलेश्या तो खो जाती है और वे अन्तर्मुहूर्त में बदलती रहती हैं। क्षेत्र के कारण वहाँ के स्पर्श, रस, गन्ध, वर्ण और परिणामन अत्यन्त दुःख के कारण होते हैं। मुर्ख (उपलो की प्रगि) के समान अंगारवाली जहाँ की भूमि तपे लोहे के समान स्पर्श-युक्त पाषाणों एवं सूर्य के समान तीव्र वायु से सयुक्त तथा सूर्य के समान मुकीले

नवीन तृणों से व्याप्त है अत्यन्त दुर्गन्धित कीड़ों के समूह से व्याप्त तालाब हैं। सर्वत्र ऋतू प्रारंभी हैं जो परस्पर मारण क्रिया करते रहते हैं। जो खाते हैं वह विष सन्धान हो जाता है। जो सूघते हैं वह नासिका को फोड़ देता है, जो भी स्पर्श करते हैं दुःख का कारण बन जाता है, जो भी देखते हैं, वह चक्षु विनाशक हो जाता है। जो भी होता है, सभी दुःख का कारण बन जाता है। यह संक्षेप में नारकियों के दुःखों का वर्णन है ॥8॥

### (9-10)

इस प्रकार नारकीय जीवों को अवर्णनीय शारीरिक वेदना होती है, घोर, तान, भयानक दास्य दुःख प्राप्त होता है, तरह-तन्ह की व्याधिया होती हैं। शक्ति, तलवार आदि अस्त्रों से शरीर के खण्ड-खण्ड कर दिये जाते हैं, वे पुन पुन पिण्ड बन जाते हैं। एक क्षण के लिए भी उन्हें सुख नहीं मिलता। कुम्भविज्ञान के कारण, स्वभाव से तथा विक्रिया से भी ये यातनाएँ उन्हें प्राप्त होती हैं। मैं राजा, चक्रवर्ती रहा हूँ, मैंने बड़े-बड़े राजाओं को पराजित किया है आदि प्रकार से मानसिक दुःखों से ग्रसित रहते हैं, पूर्वभब के वर के कारण परस्पर संग्राम करते हैं, अग्नि में डाल देते हैं। इस तरह भयकर छेदन-भेदन होने पर भी नारकियों की अकाल मृत्यु नहीं होती। वे एक-दूसरे के शरीर को चूरा-चूरा कर देते हैं, तप्त तेल की बड़ाई में डाल देते हैं, तीव्र क्षार जल के कुण्ड में फेंक देते हैं, तपे हुए लोहे को पिलाते हैं, पर कलत्र से मर्कट करने के फलस्वरूप जलते हुए लोहस्तम्भ से चिपका देते हैं। शीत और उष्ण वेदनाओं से भी वे सतप्त रहते हैं। इस प्रकार नारकी जीव आयु पर्यन्त हर क्षण तीव्रतम दुःख भोगते रहते हैं। इसका विशेष चिन्तनकर धर्म की ओर मन लगाना चाहिए ॥9-10॥

### (11-12)

इन प्रकार संक्षेप में नारकियों का वर्णन किया। अब भवनवासी देवों का चर्चा करते हैं। वे भवनवासी देव दस प्रकार के होते हैं-असुर, नाग, विद्युत्, सुपर्ण, अग्नि, वात, स्तनित, उदधि, द्वीप और दिक्कुमार। ये तालाब, पर्वत और वृक्षों के आश्रित होकर रहते हैं। इन सभी को 'कुमार' सत्ता प्राप्त है इसलिए कि वे कुमारों के समान रूप, सौन्दर्य, परिधान आदि से सपन्न होते हैं। असुर कुमारों की एक सागर, नाग कुमारों की तीन पत्न्य, सुपर्ण कुमारों की ढाई पत्न्य।

द्वीप कुमारो की दो पत्न्य तथा सैव छह कुमारो की डेढ पत्न्य उत्कृष्ट स्थिति है। और दस हजार वर्ष अवन्त्य स्थिति है। उनमे असुर कुमारो की शरीर की ऊचाई पच्चीस धनुष है और शेष नौ के शरीर की ऊचाई दस धनुष। इन देवो के विभिन्न प्रकार की विक्रियाएँ हुआ करती हैं। वे भवप्रत्यय हैं। असुर कुमार वन शरीर के चारक सपूर्ण योगोपागो द्वारा सुन्दर कृष्ण वर्ण महाकाय और रत्नो से उत्कट मुकुट के द्वारा देखीयमान हुआ करते हैं। इनका चिन्ह चूड़ाग्रिणरत्न है। नागकुमार शिर और मुखक भागों मे अत्यधिक श्याम वर्ण वाले और मृदु तथा ललित गति वाले हुआ करते हैं। इनके शिर पर सर्प का चिन्ह हुआ करता है। विद्युत्कुमार स्निग्ध प्रकाशशील उज्ज्वल शुक्लवर्ण के धारण करने वाले होते हैं। इनका चिन्ह वज्र है। सुवर्णकुमार प्रीवा और वक्षस्थल मे अति सुन्दर श्याम किन्तु उज्ज्वल वर्ण के धारक हुआ करते हैं। इनका चिन्ह गरुड है अग्निकुमार और वातकुमार का वर्ण सुड है, स्तनितकुमार और उदधिकुमार का वर्ण कृष्ण श्याम है, द्वीपकुमार उज्ज्वल वर्णी है तथा दिक्कुमार का वर्ण श्याम है। नागकुमारो के 84 लाख भवन हैं। सुवर्णकुमारो के 72 लाख भवन हैं। धिभव धरणेन्द्र के समान हैं। विद्युत्कुमार अग्निकुमार स्तनित कुमार, उदधिकुमार द्वीपकुमार और दिक्कुमार प्रत्येक के 76 लाख भवन हैं। वातकुमारो के 96 लाख भवन हैं। उत्तराधिपति प्रभञ्जन के 96 लाख भवन हैं। इस तरह कुल मिलाकर सात करोड 72 लाख भवन हैं। इन प्रत्येक भवनो मे जिनबिब प्रतिष्ठित है। यह भवन वासी देवो का सज्जित वर्णन है।

( 13 )

व्यतर देवो के आठ भेद हैं—किन्नर, किपुरुष, महोरग, गन्धर्व, यक्ष, राजस, भूत और पिशाच। इनके भी भेद-प्रभेद होते हैं। इस जम्बूद्वीप से तिरछे प्रसरूप द्वीप-समुद्रो के बाद नीचे खर पृथिवी भाग मे दक्षिणाधिपति किन्नरेन्द्र के असख्यात लाख नगर हैं। इसके चार हजार सामानिक, तीन परिषद्, सात अनीक, चार अग्रमहिवी, और सोलह हजार आत्मरक्ष हैं। ये अजनीक द्वीप में रहते हैं। किन्नरेन्द्र किपुरुष का भी इतना ही परिवार है। ये वज्रघातकी द्वीप मे रहते हैं। महोरग सुवर्ण द्वीप मे, गधर्व मनुष्य लोक मे, यक्ष वज्र मे, राजस रजत द्वीप में, भूत हिगुलक मे और पिशाच हरिदाल मे निवास करते हैं। व्यतरो के सामानिक आदि धिभव परिवार एक वर्ण है। भूमितल मे भी व्यन्तर रहते हैं द्वीप, पर्वत, समुद्र, देश, शास, नगर तिगड्डा चौराहा, घर, यसी जलपत्र उद्यान, देवघन्डिर आदि मे सर्वत्र उनकी अवस्थिति है।

ज्योतिष्क देव पाँच प्रकार के हैं—सूर्य, चन्द्र, ग्रह, नक्षत्र, और प्रकीर्णक तारागण। उनमें से जबूद्वीप में दो सूर्य, लवणसमुद्र में चार सूर्य, घातकीखण्ड में बारह सूर्य, कालोदधि समुद्र में ब्यालीस और पुष्कर द्वीप के मनुष्य क्षेत्र सम्बन्धी अर्ध भाग में बहत्तर सूर्य हैं। इस प्रकार मनुष्य लोक में कुल मिलाकर 132 सूर्य होते हैं। चन्द्रमाओ का विधान भी सूर्यविधि के समान ही समझना चाहिए। प्रत्येक चन्द्रमा का परिग्रह इस प्रकार है—28 नक्षत्र, 88 ग्रह और 66975 कोडाकोठी तारे। इनका अस्तित्व सभी द्वीप समुद्रों में है। नक्षत्र विमानों का उत्कृष्ट विस्तार एक कोण है। और तारा विमानों का उत्कृष्ट विस्तार  $\frac{1}{2}$  गम्बूत है। राहु के विमान रजतमय शुक्र हैं एक गम्बूति लम्बे चौड़े हैं। बृहस्पति के विमान सुवर्ण तथा मोती के समान कान्ति वाले और कुछ कम गम्बूति प्रमाण लम्बे चौड़े हैं। बुध के विमान पीले और शनैश्चर के विमान लाल रंग के हैं। मंगल के विमान तप्त स्वर्ण के समान। बुध आदि के विमान आधे गम्बूत लम्बे चौड़े हैं। शुक्र आदि के विमान राहु के विमान बराबर लम्बे चौड़े हैं। ज्योतिषियों की उत्कृष्ट स्थिति कुछ अधिक एक पत्थ है और जघन्य स्थिति पत्थ के आठवें भाग प्रमाण है। चन्द्र की उत्कृष्ट स्थिति एक लाख वर्ष अधिक एक पत्थ, सूर्य की एक-एक हजार वर्ष अधिक एक पत्थ, शुक्र की एक सौ वर्ष अधिक एक पत्थ तथा बृहस्पति की पूर्ण एक पत्थ है। शेष बुध आदि ग्रहों की और नक्षत्रों की आधे पत्थ प्रमाण स्थिति है। तारागण की उत्कृष्ट स्थिति पत्थ का चौथा भाग है। तारा और नक्षत्रों की जघन्य स्थिति पत्थ के आठवें भाग है। सूर्य आदि की जघन्य स्थिति पत्थ के चौथाई भाग प्रमाण है। ये ज्योतिषी देव मनुष्य लोक में मेरु की प्रदक्षिणा करके नित्य भ्रमण करते रहते हैं।

सौधर्म, ऐशान आदि स्वर्ग, नवग्रहेयक, विजय, वैजयन्त, जयन्त, अपराजित और सर्वार्थ सिद्धि में कल्पोपपन्न और कल्पातीत विमानवासियों का निवास है। सौधर्म, ऐशान, सानत्कुमार, माहेन्द्र, ब्रह्मलोक, लातव, महाशुक्र, सहस्रार, ध्रानत, प्राणत, भारण और अच्युत ये बारह कल्प हैं। इन सौधर्म आदि कल्पों के विमानों में वैमानिक देव रहते हैं। अच्युत कल्प के ऊपर नव ग्रहेयक हैं जो कि ऊपर ऊपर अवस्थित हैं। ग्रहेयकों के ऊपर पाँच महाविमान हैं जिनको अनुत्तर कहते हैं। उनके नाम हैं—विजय, वैजयन्त, जयन्त, अपराजित और सर्वार्थ सिद्धि। ग्रहेयकों के ऊपर और सर्वार्थ सिद्धि के नीचे नौ अनुदिश हैं। सौधर्म कल्प से लेकर सर्वार्थसिद्धि पर्यन्त सभी का अवस्थान क्रम से ऊपर ऊपर है। सौधर्म कल्प में विमानों की संख्या 32 लाख है। ऐशान कल्प में 28 लाख, सानत्कुमारकल्प में 12 लाख, माहेन्द्र कल्प में

8 लाख, ब्रह्मलोक में 4 लाख लीतवकल्प में 50 हजार, महेशुक में 40 हजार सहस्रार में 6 हजार, आनत, प्राणत, धारण और अभ्युत कल्प में 700, अश्विदेविक में 111, मध्यम श्रैवेयक में 107 और उपरिम श्रैवेयक में 100 विमान हैं। विजया-दिक अनुत्तर विमान 5 ही हैं। इस तरह उर्ध्वलोक में वैमानिक देवों की समस्त विमानों की संख्या 8497023 है। सोलह स्वर्गों में एक-एक इन्द्र है पर मध्य के आठ स्वर्गों में चार इन्द्र हैं। इसके बाद विमानों की ऊँचाई का कम निर्दिष्ट है। इनकी अवधिज्ञान की भी सीमा निर्दिष्ट है।

श्रैवेयको में से अश्वस्तन श्रैवेयक में असख्यात विस्तार वाले विमान 108 तथा सख्यात विस्तार वाले 3 (=111) हैं, मध्यम श्रैवेयको में 89 विमान असख्यात विस्तार वाले तथा 18 विमान सख्यात विस्तार वाले (= 107) हैं, उपरिम श्रैवेयक में 74 असख्यात विस्तार वाले और 17 सख्यात विस्तार वाले (=91) विमान कहे गये हैं। अनुदिशो में 8 असख्यात विस्तार वाले विमान तथा 1 सख्यात विस्तार वाला (=9) हैं। उसी प्रकार से अनुत्तरो में भी सख्यात विस्तार वाला 1 तथा असख्यात विस्तार वाले 4 (=5) विमान हैं। इस तरह 1699380 विमान सख्यात विस्तार वाले तथा 6797643 विमान असख्यात विस्तारवाले हैं। पूर्व दो कल्पों में स्थित प्रासाद 600 योजन और आगे दो कल्पों में 500 योजन ऊँचे हैं। ये प्रासाद ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर में 450, लान्तव कापिष्ठ में 400, शुक्र-महाशुक्र में 350, शतार-सहस्रार में 300, आनतादि शेष चार में 250, अश्विदेविक में 200, मध्यम श्रैवेयक में 150 और उपरिम श्रैवेयक में 100 योजन ऊँचे हैं। यहाँ अनुदिशो में स्थित ये प्रासाद 50 योजन और अनुत्तरो में 25 योजन मात्र ऊँचे हैं।

( 17-18 )

ऊपर-ऊपर के देवों का अवधिज्ञान अधिकाधिक है। सौधर्म और ईशान कल्प के देव अवधिज्ञान के विषय की अपेक्षा रत्नप्रभा पृथिवी तक को देख सकते हैं। तिर्यक्-पूर्वादि दिशाओं की तरफ असंख्यात लज्ज योजन तक देख सकते हैं। ऊपर ऊर्ध्व दिशा में अपने विमान पर्यन्त ही देख सकते हैं। सनत्कुमार और महेन्द्र स्वर्ग के देव अर्करा पृथ्वी तक देख सकते हैं। विजया ऋद्धि से सप्तम पृथ्वी तक की भी सीमा हो सकती है। ब्रह्मलोक और लान्तव विमान वाले देव बालुका प्रभा पर्यन्तशुक्र सहस्रार वाले पञ्चप्रभा पर्यन्त आनत प्राणत और धारण-अभ्युत वाले घूम प्रभा पर्यन्त, अश्वस्तन श्रैवेयक और मध्यम श्रैवेयक वाले तम प्रभा पर्यन्त और उपरिम श्रैवेयक वाले महातम प्रभा पर्यन्त तथा बाँच अनुत्तर और नौ अनुदिश विमानों के देव समस्त लोक नाड़ी की देख सकते हैं।

अर्थात् प्रथम दो कल्पों के देव धर्मा पृथिवी तक, आगे के दो कल्पों के देव दूसरी पृथिवी तक, आगे के चार कल्पों के देव तीसरी पृथ्वी तक, शुक आदि चार कल्पों के देव चौथी पृथ्वी तक, आनत आदि चार कल्पों के देव पाचवी पृथ्वी तक, ग्रैवेयकवासी देव छठी पृथ्वी तक तथा आगे अनुदिश व अनुत्तरो मे रहने वाले देव सातवी पृथ्वी तक विक्षिप्ता करते हैं। उक्त देवों के दर्शन व अवधिज्ञान का विषय प्रमाण विक्षिप्ता के समान ही माना जाता है। अनुत्तर विमानवासी देव भूतिक कर्मों के अनन्तवे भाग को, कर्मयुक्त जीवों को तथा समस्त लोकनासी को भी देखते हैं। सौधर्म ऐशान कल्प तक 7 दिन, सानत्कुमार और माहेन्द्र एक पक्ष (15 दिन), ब्रह्म से कापिष्ठ तक एक मास, शुक से लेकर सहस्रार तक दो मास, आनत से अच्युत कल्प तक चार मास तथा ग्रैवेयक आदि शेष विमानों में आगों के अनुसार छह मास अन्तर जन्म का और उतना ही मरण का भी अन्तर जानना चाहिए। इसके विषय में मतान्तर भी है जिसे लोकविभाग (10, 298-302) में देखा जा सकता है। प्रथम दो कल्पों के देव सात हाथ ऊंचे आगे के दो कल्पों के देव छह हाथ ऊंचे, ब्रह्मा और लातव कल्पों के देव पांच हाथ ऊंचे, शुक और सहस्रार कल्पों के देव चार हाथ ऊंचे, शेष आनतादि चार कल्पों के देव तीन हाथ ऊंचे, ग्रैवेयकों के दो हाथ ऊंचे, अनुत्तर व अनुदिशों के देव डेढ़ हाथ ऊंचे, तथा सर्वार्थमिद्धि के देव एक हाथ प्रमाण ऊंचे होते हैं।

असुर कुमारों की 1 सागर, नाग कुमारों की 3 पत्य, सुपर्ण कुमारों की 2½ पत्य, द्वीप कुमारों की 2 पत्य तथा शेष छह कुमारों की 1½ पत्य उत्कृष्ट स्थिति है। सौधर्म ऐशान स्वर्ग में कुछ अधिक 2 सागर, सानत्कुमार-माहेन्द्र में 7 सागर, ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर में 10 सागर लातव-कापिष्ठ में 14 सागर, शुक-महाशुक में 16 सागर, शतार-सहस्रार में 18 सागर आनत-प्राणत में 20 सागर, धारण-अच्युत में 22 सागर उत्कृष्ट स्थिति है। अथो ग्रैवेयकों में क्रमशः 23, 24, 25, मध्यम ग्रैवेयकों में क्रमशः 26, 27, 28 और उपरि ग्रैवेयकों में 29, 30 और 31 सागर उत्कृष्ट स्थिति है। अनुदिश विमानों में 32 तथा विजयादि और सर्वार्थ सिद्धि में 33 सागर हैं। सौधर्म और ईशान स्वर्ग की अधन्य स्थिति एक पत्य है। इन दो स्वर्गों तथा आगे के स्वर्गों की जो उत्कृष्ट स्थिति है वही उनके आगे के स्वर्गों की अधन्य स्थिति हो जाती है। ईशान स्वर्ग तक के देव सखिलष्ट कर्म वाले होने से मनुष्यों की तरह कल्पप्रतिचारी (शरीर से मैथुन करने वाले) होते हैं। सानत्कुमार- माहेन्द्र में परस्पर अगस्पर्श करने से, जटुर्थ से आठवें स्वर्ग तक सुदर रूप देखकर, नौ से 12 वे स्वर्ग तक मधुर संगीत श्रवण, मृदु हास्य, भूषणों की भकार आदि के शब्दों को सुनने से तथा तेरहवें से सोलहवें स्वर्ग तक के देव-देविया



मन से प्रविचार करते हैं। कल्पातीत-त्रैलोक्यकादि वासी देव प्रविचार से रहित हैं। उनके कामवेदना होती ही नहीं है।

( 19 )

स्वयंभूरमण पर्यन्त असंख्यात द्वीप समुद्र तिर्यक्, समभूमि पर निरख्य व्यवस्थित हैं। अतः इनको तिर्यक्लोक कहते हैं। अति विशाल महान् जम्बू वृक्ष का आभार होने से यह द्वीप जम्बूद्वीप कहलाता है। वह एक लाख योजन विस्तृत है और सभी द्वीप के बीच स्थित है। इसके बीच नाभि की तरह बोलोकार मुखर पर्वत है। इसके दक्षिण में भरत क्षेत्र और उत्तर में ऐरावत क्षेत्र अवस्थित है। भरत क्षेत्र का विस्तार  $526\frac{1}{8}$  योजन है। इसके बाद विदेह क्षेत्र पर्यन्त के पर्वत और क्षेत्र क्रमशः दूने-दूने विस्तार वाले हैं। अथर्व हिमवान् का विस्तार  $1052\frac{1}{8}$  योजन, हेमवत का  $2005\frac{1}{8}$  योजन, महाहिमवान् का  $4010\frac{1}{8}$  योजन, हरिवर्षका  $8421\frac{1}{8}$  योजन, निषध का  $1684\frac{1}{8}$  योजन और विवेह का  $33684\frac{1}{8}$  योजन है। ऐरावत आदि नील पर्वत पर्यन्त क्षेत्र-पर्वत भरत आदि के समान विस्तार वाले हैं। पूर्व और पश्चिम लवण समुद्र तक लम्बे हिमवन्, महाहिमवन् निषध, नील, और शिखरी ये छः पर्वत हैं। इन पर्वतों के कारण भरत, आदि क्षेत्रों का विभाग होता है अतः ये वर्षधर पर्वत कहे जाते हैं ॥१९॥

( 20 )

हिमगिरि आदि पर्वतों पर पद्म, महापद्म आदि छह सरोवर हैं। प्रथम सरोवर पूर्व-पश्चिम एक हजार योजन लम्बा और उत्तर-दक्षिण पांच सौ योजन चौड़ा है। उसकी गहराई दस योजन है। इसके मध्य में एक योजन का कमल है। इसके पते एक-एक कोस के और कणिका दो-दो कोस विस्तृत है। आगे के सरोवरो और कमलों का विस्तार दूना-दूना है। इनमें श्री, ली, धृति, कीर्ति, बुद्धि और लक्ष्मी नामक देवियां सामानिक और पारिषत्क जाति के देवों के साथ रहती हैं। इनकी आयु एक पत्य की है। हिमवान् हेममय चीन पट्ट वर्ण का है। महाहिमवान् अर्जुनमय शुक्ल वर्ण है, निषध तपनीयमय मध्यान्ह के सूर्य के समान वर्णवाला है। नील वैद्यमयी मोर के कंठ के समान वर्ण का है। रुक्मी रजतमय शुक्ल वर्ण वाला है। शिखरी हेममय चीन पट्ट वर्ण का है। उपर्युक्त क्षेत्रों के मध्य में गंगा, सिन्धु आदि चौदह नदियां हैं। इसके पूर्व विदेह और अपर विदेह में सोलह-सोलह क्षेत्र हैं। भरत क्षेत्र का विस्तार  $526\frac{1}{8}$  योजन है। बातकी क्षण्ड में दो मेरु पर्वत हैं। पुष्कराक्ष में भी दो मेरु हैं। इस तरह मनुष्योत्तर के पहले चौत्तीस क्षेत्र हैं। पांच मेरु हैं ढाई द्वीप हैं। यहाँ सदैव आगभूमि रहा करती है।

जम्बूद्वीप की अपेक्षा सुगना विस्तार वाला लवण समुद्र इस द्वीप को घेर कर चक्र में नेमि के समान स्थित है। उस समुद्र के मध्य भाग में पूर्व दिशाओं के क्रम से चार पाताल, विदिशाओं के क्रम से चार मध्यम पाताल और दोनो के मध्य आठ अन्तर दिशाओं में एक हजार जघन्य पाताल स्थित हैं। म्लेच्छ दो प्रकार के हैं—अन्तरद्वीपज और कर्मभूमिज। लवण समुद्र और कालोदधि समुद्र के मिलाकर 96 अन्तरद्वीप माने हैं। अन्यत्र लवण समुद्र की आठो दिशाओं में आठ और उनके अन्तराल में आठ, हिमवान् और शिखरी तथा दोनो विजयाघों के अन्तराल में आठ, इस तरह चौबीस अन्तरद्वीप हैं। पूर्व दिशा में एक जाघ वाले, पश्चिम में पूँछ वाले उत्तर में गूने, दक्षिण में सींग वाले प्राणी हैं। विदिशाओं में खरगोश के कान सरीखे कान वाले, पुर्वी के समान कान वाले, बहुत चौड़े कान वाले और लम्बकणं मनुष्य हैं। अन्तराल में अश्व, सिंह, कुत्ता, सूअर, व्याघ्र, उल्लू और बन्दर के मुख जैसे मुख वाले प्राणी हैं। ये सब प्राणी अन्तर्द्वीपज म्लेच्छ हैं और पत्योपम प्रायु वाले हैं।

सामान्यतः काल दो प्रकार के है—एक अपसर्पिणी और दूसरा उत्सर्पिणी। इन दोनो को कल्पकाल कहा जाता है। दोनो कालों के छह-छह विभाग हैं। जिनका अलग-अलग प्रमाण है। प्रथम काल के मनुष्यों का वर्ण सूर्य के समान, द्वितीय काल के मनुष्यों का वर्ण चन्द्र के समान तथा तृतीय काल के मनुष्यों का वर्ण त्रियगु पुष्प के समान होता है। इन कालों में मनुष्यों की आयु का प्रमाण यथाक्रम से तीन पत्य, दो पत्य और एक पत्य होता है। अरुत और ऐरावत के सिवाय दूसरे क्षेत्रों में काल की प्रवृत्ति अवस्थित है। यथा—कुरुक्षेत्र में (देवकुरु और उत्तरकुरु में) सदा सुषमा-सुषमा काल ही अवस्थित रहता है। यह उत्तम भोग भूमि है। हरि और रम्यक क्षेत्र में सुषमा काल की परिस्थिति हमेशा रहा करती है। यह मध्यम भोगभूमि है। हैमवत और हैरण्यवत क्षेत्र में सदा सुषम-दुषमा काल की प्रवृत्ति रहती है। यह जघन्य भोगभूमि है। यहा मनुष्य पुष्प के प्रभाव से ही उत्पन्न होते हैं। उक्त तीनों कालों में युगल रूप से ही उत्पन्न होकर कल्पवृक्षों से आजीविका करते हैं अर्थात् उन्हें समस्त भोगोपभोग की सामग्री कल्पवृक्षों से ही प्राप्त होती है। इन तीनों कालों में दश प्रकार के कल्प वृक्ष होते हैं पानाग, सुयौग, भूषणाग, वस्त्राग, भोजनाग, आलयाग, दीपाग, भाजनाग, मालाग और ज्योतिरग। बीरे-बीरे यह भोगभूमि

प्रवस्था समाप्त हुई और कर्मभूमि का प्रारम्भ हुआ। प्रथम तीर्थंकर आदिनाथ ने समुच्चिन व्यवस्था दी। तैसठ बलाका पुत्र कर्मभूमियों में ही उत्पन्न हुए। चतुर्थ काल के प्रारम्भ में शरीर की ऊँचाई पाँच सौ अनुष प्रमाण होती है। प्रजाजन वर्मात्मा और पापिष्ठ दोनों प्रकार के होते हैं। क्रमशः बुद्धि व धातु धादि गुणों के हीयमान होने पर चतुर्थ काल में बाद पचम काल उपस्थित होता है। उसके प्रारम्भ में शरीर की ऊँचाई सात हाथ और धातु 120 वर्ष प्रमाण होती है। लोग प्रायः पापिष्ठ होते हैं। पचम काल के अन्त में तथा छठे काल के आदि में धातु बीस वर्ष से अधिक तथा मनुष्यों के शरीर दो हाथ ऊँचे एवं धूम के समान श्याम वर्ण होकर कुरूप होते हैं। धनधोर मिथ्यात्वी होते हैं। चतुर्थ, पचम और षष्ठ कालों का प्रमाण एक कोड़ा-कोडी सागरोपम है।

( 23 )

स्वावर जीव पांच प्रकार के होते हैं—पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और बनस्पति कायिक। पृथ्वी कायिक जीव सर्वत्र पाये जाते हैं। कृष्ण, पीत, हरित, श्वेत और रक्त ये पांच वर्ण भेद कायिक जीवों के हैं। इनका आकार मसूर के समान होता है और उत्कृष्ट धातु बाईस हजार वर्ष प्रमाण है। पृथ्वी, शर्करा, बालुका, मृत्तिका और उपल आदि के भेद से भी अनेक प्रकार के हैं। जलकायिक जीव दर्माकार के होते हैं। वे हिम, अवश्याय आदि के भेद से अनेक प्रकार के हैं। उनकी उत्कृष्ट धातु सात हजार वर्ष की है। अग्निकायिक जीव सूचिकायाकार होते हैं। वे कुलिश, अग्नि, विद्युत, सूर्य, सूर्यान्तर्मणि, अगार, स्फुलिग पत्ति जैसे प्रमुख भेद वाले होते हैं। उनका तेज विस्फुरायमान होता है। इनकी उत्कृष्ट धातु केवल तीन दिन की होती है। वायुकायिक जीव ध्वजाकार होते हैं। बात बलय के आधार पर वे रहते हैं। धनवात, तनुवात, उत्कलिका, मडलि इत्यादि भेद वायुकायिक जीवों के माने गये हैं। इनके प्रतिघात से शब्द ध्वनित होता है। दिशा भेद से भी ये अनेक प्रकार के होते हैं। इनकी उत्कृष्ट धातु तीन हजार वर्ष की है। बनस्पतिकायिक जीव शैबल, मलक, आद्रक, पणक, वृक्ष, गुच्छ, गुल्म, लता आदि के भेद से अनेक प्रकार के हैं। इनकी उत्कृष्ट धातु दश हजार वर्ष की है। इन्हें चार और पांच (वृक्ष, विटपि, गुल्म, बल्ली और तृण) भागों में भी विभाजित किया जाता है। इनकी उत्कृष्ट धातु दश हजार वर्ष की है। इन एकेन्द्रिय जीवों की उत्कृष्ट अवगाहना का प्रमाण कुछ अधिक हजार योजन है ॥23॥

यह स्थावर जीवों का वर्णन हुआ । अजीव द्रव्य पाँच प्रकार का है—धर्म, अधर्म, आकाश, काल और पुद्गल । धर्म द्रव्य अमूर्तिक नित्य है, अखण्ड है । यह जीवों और पुद्गलों के चलने में सहायक है । यह सारे लोकाकाश में व्याप्त है । असंख्य प्रदेशी है । पुद्गल आदि द्रव्यों की स्थिति में जो कारण है वह अधर्म द्रव्य है । वह सारे लोकाकाश में व्याप्त है । अमूर्तिक है, नित्य है, असंख्यप्रदेशी है । पुद्गल के परिणामन में जो कारण है वह काल है । परिणामन कराना उसका उपकार है जिसके निमित्त में दूसरों के परिणामन कराने में प्रवृत्त होता है । व्यवहारतः वह तीन प्रकार का है । परनिश्चयत वह निश्चल और अभेद्य है । पुद्गल और जीव द्रव्यों को अवगाह देना आकाश का उपकार है । यह अनन्तप्रदेशी है । जिसमें रूप, रस, गंध और स्पर्श हो उसे पुद्गल कहते हैं । वह अणु और स्कन्ध के भेद से दो प्रकार का है । स्थूल और सूक्ष्म आदि भेदों की दृष्टि से वह पुद्गल पृथ्वी आदि के रूप में या छाया आतप आदि के रूप में नाना प्रकार से विभक्त हो जाता है । शरीर इन्द्रिय और वासोच्छ्वास आदि के रूप में यह पुद्गल सभी प्राणियों के उपकार में लगा हुआ है । अणु नेत्रेन्द्रिय को छोड़कर शेष चार इन्द्रियों का विषय है । पुद्गल द्रव्य सत्त्वात्, असत्त्वात् और अनन्त प्रदेश वाला है । परमाणु अप्रदेशी है । उसमें आदि-मध्य भाग नहीं होता है । ये सब पुद्गल अपने गुणों से निश्चल है ।

कर्मों के प्रवेश द्वार को आश्रव कहते हैं । उसके दो भेद पुण्याश्रव और पापाश्रव । मन, वचन, कायकी चञ्चलता ( योग ) से आश्रव होता है । शुभयोग पुण्याश्रव का तथा अशुभ योग पापाश्रव का कारण है । सकृदाय जीवों के सापरायिक और अकृदाय जीवों के ईर्यापय आश्रव होते हैं । इसी तरह के और भी भेद हैं । सकृदाय होने के कारण जीव का कर्म योग्य पुद्गलों से जो सम्बन्ध होता है उसे बन्ध कहते हैं । यह बन्ध चार प्रकार का है—प्रकृतिबन्ध, स्थितिबन्ध, अनुभासबन्ध और प्रदेशबन्ध है । आश्रव के निरोध को संवर कहते हैं । भ्रान्ते वाले कर्मों का जिसके द्वारा निरोध हो उसे संवर कहते हैं । पहले बंधे हुए कर्मों का अशतः क्षरण होना निर्जरा का लक्षण है । सकल कर्मों का क्षय हो जाना मोक्ष है जो परिणामी नित्य भव्य जीव के ही संभव है । ऐसा केवलज्ञानी ने कहा है । सर्वज्ञ चन्द्रप्रभ ने इस

प्रकार भग्न जीवों के प्रतिबोधित किया और उनके भ्रमान्धकार को नष्ट किया । उनकी सभा में तेरहवें वर्षधर थे जिन्होंने त्रिभुवन के सदेहों को दूर किया । दो हजार तीक्ष्ण बुद्धिवाले पूर्वधारी थे । दो लाख चार सौ उपाध्याय और आठ हजार तीक्ष्ण बुद्धिवाले अवधिज्ञानी थे । दस हजार निर्मल आत्मा वाले केवली तथा चौदह हजार विक्रिया ऋद्धि धारी साधु थे आठ हजार तेजस्वी मन पर्ययज्ञानी थे और सात हजार छह सौ वादी थे । एक लाख अस्सी हजार वरुणा आदि आर्थिकाएँ थी तीन लाख सम्यग्दृष्टि और पांच लाख व्रत आदि से पवित्र आर्थिकाएँ थी । असंख्य चारों प्रकार के देवता थे । इस प्रकार चतुर्विध सभ के साथ बिहार करते हुए ससारी जीवों के पाप मलों को धोया और ज्ञान किरणों का विकास किया ।

( 26 )

आयुर्ध्वेद जानकर चन्द्रप्रभ भगवान ने एक मास पर्यन्त बिहार का त्याग किया और और सम्मेदाचल (शिलर जी) के शिलर पर मुनिसभ के साथ प्रतिमायोग धारण किया । फिर भाद्रपद शुक्ला सप्तमी को शुक्लध्यान के द्वारा सशस्त पापों को नष्ट कर सारी बाधाओं से रहित, दश लाख पूर्व प्रमाण आयु के समाप्त होते ही अष्टकर्मों का विध्वंसकर मुक्ति प्राप्त की । उन्होंने तीर्थ की स्थापना कर अपार जन कल्याण किया ।

तीर्थंकर चन्द्रप्रभ एक ही समय में सकल पदार्थों को जानते थे, उनकी द्रव्य-पर्यायों को सूक्ष्मता पूर्वक जानते-देखते थे । देखने, सुनने, स्वाद लेने, स्पर्श करने, सूघने आदि जैसी कियाए नेत्र, श्रोत्र, रसना स्पर्श, घ्राण जैसी इन्द्रियों के बिना ही करते थे । भूख, प्यास, निद्रा पलकक्रिया आदि से मुक्त थे, रति, अरति आदि भावों से दूर थे । दर्शन और ज्ञान-चरित्र से युक्त थे । ज्ञान ही उनका देह था, ज्ञान ही चेतना थी ज्ञान ही ज्ञेय था, ज्ञान ही भोजन था, ज्ञान ही स्वभाव था, ज्ञान ही आत्मा थी, ज्ञान ही सब कुछ था । ज्ञान में ही सकल द्रव्य स्वभावतः भलकते थे । वे दश अतिशय आदि से सुशोभित थे ।

( 28 )

तीर्थंकर चन्द्रप्रभ का भोजन हो जाने पर हर्ष और शोक से युक्त होकर लोगो ने सपरिवार विस्मित रसाक्त होकर उनकी पूजा की । तदनन्तर अगुरुबन्धन, धनसार (कपूर) आदि इकट्ठा किया । जलध कुमार ने प्रणाम किया, सुरति गंधों से आकाश सुगन्धित हो गया, सुरगण नृत्य गायन करते हुए शोकमग्न हो गये । चतुर्विध सभ ने

मिलकर तीर्थंकर के निर्वाण की प्रक्रिया पूरी की जय जयकार किया, अनाथ हो जाने का उन्हें आभास हुआ । परमेश्वर शिव सुख—परमधाम पाकर ससार के बंधन से सदैव के लिए मुक्त हो गये अतः वे परम भगलकारी हैं और बन्धनीय हैं इत्यादि प्रकार से सूरों ने जिनस्तुति की पञ्चम कल्याण (मोक्ष कल्याण) बनाया और अगुरु चन्दन से अंतिम सस्कार कर अपने-अपने स्थान चले गये ।

### ( 29 )

ग्रन्थ शुद्ध अशुद्ध सार असार अनेक प्रकार होते हैं । जिनवाणी उन सभी को स्वीकार कर लेती है । मेरा ग्रन्थ भी ऐसा ही है । इस ग्रन्थ पर मुझे कोई अभिमान नहीं है । परमेश्वर सर्वज्ञ हैं । सारवाली बात तो उन्हीं के साथ जुड़ सकती है । कषाय को छोड़ने वाले ही मुनि और पण्डित होते हैं । गुजरे देश में एक उम्मत्त नामक ग्राम है जहाँ दोण नामक एक जिनधर्मी भव्य बधु रहता है उसका ज्येष्ठ पुत्र बहुदेव, बहुदेव का लघुपुत्र श्रीकुमार श्रीकुमार का पुत्र सिंहपाल था जो जिनपूजा, दानादि गुणों से मण्डित था । उसी सिंहपाल के अनुरोध से इस ग्रन्थ की रचना हुई है । जब तक चन्द्र और सूर्य हैं, सागर, कुलपर्वत और भूवल्लय हैं तब तक यह ग्रन्थ प्रकाशित रहेगा ।

## महत्वपूर्ण शब्द-सूची

### अ-अं

- अकलक, 1, 1  
 अच्छ=निर्मल, 6-8, 3-2  
 अच्छरिय=आश्चर्य, 9-3  
 अज्जखड=आर्यखण्ड, 4-20  
 अजितजउ=अजितजय, 3-10  
 अजियसेण=अजितसेन, 3-11, 4-10  
 अज्जु=आज, 5-14  
 अणिव्व भावना=अनित्य भावना, 9-9  
 अणगु=अनग, 4-10  
 अदधु=आधा, 10-7  
 अमिय=अमृत, 1-11, 3-1  
 अरिजय=देश का नाम, 4-5  
 अलका=नगरी का नाम, 3-10  
 असरणु=अशरण भावना, 9-8  
 असुइ=अशुचिभावना, 9-12  
 अहिणव=अभिनव, 8-11  
 आलसु=आलस्य, 2-8  
 आसव=मद्य 3-10; आश्रय 9-13

- कइरव=कुमुद, 5-7  
 कच्छवि=कोई, 6-1  
 कच्छूरी=कस्तूरी, 9-13  
 कज्जल=काजल, 2-11, 5-11

- आसीविसु=सर्प, 6-16  
 इक्कु=एकत्व भावना, 9-11  
 उअरहु=सर्प, 8-9  
 उग्गिण्ण=उद्गीर्ण, 9-2  
 उत्तरगुण=उत्तरगुण, 9 16  
 उद्धउ=उद्धत नामक दूत, 4-11  
 उप्परि=ऊपर, 1-7  
 उप्पाडि=उखाडकर, 5-15  
 उम्मत्तगाम=उन्मत्तग्राम, 11-29  
 उववण=उपवन, 5-3  
 एरावउ=एरावत, 10-14  
 एरिसु=इस प्रकार, 3-1  
 एयारह=ग्यारह, 10-17  
 अगुट्ठ=अगूठा, 8-23  
 अजणगिरि=पर्वत नाम, 4-2, 5-10  
 अतेउरु=अन्त पुर, 2-1, 2-19, 5-4  
 अवय=आम्र, 2-14

### क

- कहम=कदंम, 1-12  
 कणयकु भ=कनककुभ, 9-4  
 कणयमाल=कनकमाला, 1-10  
 कणयरयण=स्वर्ण रत्न, 5-10

कप्परुक्ख = कल्पवृक्ष, 2-3, 7-5  
 कम्मपासु = कर्मपाश, 2-3, 4-21  
 कम्मगति = कर्मग्रन्थि, 9-15  
 कल्लाण = कल्याण, 7-6  
 कलत्तु = कलत्र, 1-14, 3-2  
 कसाय = कषाय, 4-20  
 कालायरु = कालाग्रह, 1-8, 11-27  
 कालिदी = यमुना, 7-3  
 काह्ल = कोयल, 5-9  
 कहिवि = किसी तरह, 2-12  
 कित्ति = कीर्ति, 3-12  
 किण्हलेस = कुण्डलेण्या, 6-18  
 किवाण = कुपाण, 4-6  
 किसानु = कुश, 6-21

खणि = क्षणभर, 1-13  
 खत्तिधम्म = क्षत्रियधर्म, 3-7  
 खयरोग = क्षयरोग, 2-5  
 खल्ली = टाटि, 3-4  
 खाइय = खाई, 2-8

गब्बभर = गर्भभार, 1-10  
 गह्वइ = गृहपति, 1-5  
 गउण = गगन, 1-8  
 गणहर = गणधर, 1-1, 11-1, 11-25  
 गयणायल = गगनतल, 5-7  
 गल्ल = गला, 2-11  
 गहचक्कु = गृहचक्र, 6-3

घर = गृह, 3-1

कुक्खि = कुक्षि, 2-18  
 कृम्मपुट्टु = कर्मपृष्ठ, 5-10  
 कुवि = कोई भी, 5-4  
 केयारपालि = खेत का रक्षक, 1-5  
 केवलणाण = केवल ज्ञान, 10-7, 11-23  
 कूटलेख = कूटलेख, 2-16  
 कोवीण = कोपीन, 4-10  
 कोसल = कौशल प्रदेश, 3-10  
 कोइल = कोयल, 2-14  
 कोव = कोप, 6-18  
 कचुप्प = कचुक, 1-10  
 कत = काता, 1-10  
 कु दकु द = आचार्यनाम, 1-1

ख

खिज्जइ = खीभृता है, 6-18  
 खीरोवहि = क्षीरोदधि, 7-12, 8-23  
 खुहियउ = क्षुब्ध, 6-13  
 खोणी = पृथ्वी, 6-21  
 खभ = खभा, 1-15

ग

गुज्जरदेश = गुर्जरदेश, 11-29  
 गुत्तकम्म = गुप्तकर्म, 5-13  
 गुत्तभेउ = गुप्तभेद, 5-4  
 गुणषट्ठु = गुणप्रभ, 5-12  
 गुणव्वय = गुणव्रत, 2-17  
 गुणसेठ्ठि = गुणश्रेणी, 3-14; 5-13  
 गघोवव = गघोदक, 8-10; 9-4; 10-4

घ

घाइकम्म = धार्तिकर्म, 4-21



चउगइ=चतुर्गति, 4-20

चउदहरयण=14 रत्न, 4-16

चउरगु सेणु=चतुरगिणी सेना, 4-6

चक्कवट्टि=चक्रवर्ती, 3-16, 11-9

चक्कवाउ=चक्रवात, 8-14

चक्काउह=चक्रायुध, 4-15

चम्मचक्खु=चर्मचक्षु, 1-14

चडिया=चिडिया, 4-7

छेयालीसदोस=46 दोष, 10-2

जइ=यदि,

जयकु जरु=हाथी का नाम, 5-10

जयवम्मा=जयवर्मा, 4-5

जयसिरि=जयश्री, 6-17

जयसिरिकता=जयश्रीकाता, 4-5

जयसेणु=जयसेन, 4-10

जलवुव्व=जलबुद्बुद, 9-8

जसकित्ति=यश कीर्ति, 1-1

जलकेलि=जलक्रीडा, 5-6

जलहि=जलधि, 5-11

जसनिहाणु=यशनिधान, 1-13

जहिं तहिं=जहाँ-तहाँ, 1-14

जारिस=जिस प्रकार, 4-17

जिट्टमास=ज्येष्ठ मास, 4-15

डिभ=बालक, 2-12

ण्हाणु=स्नान, 7-12

णउरि=घनन्तर, 25

णरय भूमि=नरक भूमि, 11-4

णरवइ, ण्हवइ=नरपति, 1-2; 1-12

च

चित्त=चैत्यवृक्ष, 10-12

चोईय=चोई, 5-5

चोरकम्मु=चौर्यकर्म, 2-4

चदउरी=चन्दपुरी नगरी, 7-2

चदकत्ति=चन्द्रकान्ति, 1-6

चदप्पहसामि=चन्द्रप्रभस्वामी, 1-1

चदरोइ=चङ्गरुषि, 1-13

चहु=गँद, 6-2

छ-ज

जिणचरिउ=जिण चरित, 1-13

जिणभत्ति=जिन भक्ति, 1-3

जिणसेणु=जिनसेन आचार्य, 1-1

जीउ=जीव, 4-20, 11-1

जीवरक्ख=जीवरक्षा, 2-4

जीवसमास=जीवसमास, 5-12

जुण्हसरिस=ज्योत्स्ना सदृश, 6-8

जुवराय=शुबराज, 2-19; 3-12, 6-3

जोग पण्णारस=पन्द्रह योग, 4-20

जोयण=योजन, 8-17

जगम=सजीव, 4-15

जभाइ=जबाई, 2-18

जजुणीउ=जजुदीप, 1-4

ह

ण

णवकोडि=नवकोटि, 102

णहपहु=नभपथ, 8-11

णायरजण=नाभरजन, 2-2

णायवेत्ति=नाभवत्ति, 2-7

शिक्कटट = निष्कटक, 6-4

शिज्जरु = निजरा, 9-15

शिञ्चल = निश्चल, 5-3

शिटीवण = शूक, 3-2

शिरु = नितराम, 32

शिरजणु = निरजन, 8-21

तवभूसणु = मुनि नाम, 3-15

तस = तस, 11-2

ताण = शिविका, 9-23

तारादेवी = नाम, 1-1

थक्कु = थकना, 4-5

थण = स्तन, 1-11

दगडय = पत्थर, 6-19

दप्पगठि = दपयथि, 7-7

दालिह = दारिद्र्य, 9-5

दिणायरु = दिनकर, 6-12

दिसिपाल = दिक्पाल, 10-16

दुज्जणु = दुर्जन, 1-3

दुद्धरु = दुर्धर, 3-7

धम्म = धर्म, 1-11, 9-17-18

धम्मचक्क = धर्मचक्र, 10-13-15

धम्मभाण = धर्म ध्यान, 1, 2-3, 2-18

धम्मदेस = धर्मदर्शना, 2-3

पउमनाभ = पद्मनाभ, 1-11, 1-15

पक्कल = प्रक्षाल, 5-5

पक्कक्खुणाण = प्रत्यक्ष ज्ञान, 2-7

पडिचद = प्रतिचन्द, 1-7

पडिबोहणु = प्रतिबोधन, 8-2

परक्कमु = पराक्रम, 3-8, 4-16

णिहाणु = निधान, 2-13

णीलुप्पल = नीलोत्पल, 4-9

णेउर = नूपुर, 8-19

णेसप्पु =, 4-17

णदण = पुत्र, 2-13, वन 8-23

णदीसरि = नन्दीश्वरद्वीप, 2-18

त

तित्थयर = तीर्थकर, 9-18

तिल्लु = लोहा, 6-7

तेरहविहुचरित = तेरह प्रकार का चरित्र,  
3-9

थ

थेरी = वृद्धा, 3-11

थोडह = थोडा, 8-23

द

दुल्लह = दुर्लभ, 8-11

दुह = दुःख, 1-15

देउकुमारसिह = देवकुमारसिंह, 1-1

देवणवि = देवनन्दि आचार्य, 1-1

दोहल, दोहलय = दोहद, 2-18, 8-2

दडाउह = दडामुख, 4-27

दतधवणु = दत्तधावन, 10-1

ध

धम्मलद्धि = धर्मलब्धि, 9-4

धरणीधरउ = धरणीधर, 4-10

धादय = धातु खण्ड द्वीप, 3-10

धीवरि = धीमर, 5-5

प

परमप्पय = परमात्मपद, 8-21

परदारगमणु = परदारगमन, 2-5

परवाइ = परवादी, 1-1

परमिट्ठी, परमेष्ठि = परमेष्ठी, 4-19,  
5-12

परमेसरु = परमेश्वर, 9-6, 11, 9-6

परियणु = परिजन, 3-11  
 परीसह = परीषह, 10-6  
 पिंगलु = पिंगल वर्ण,  
 परुसा = परुषा नामक अटवी, 4-1  
 पल्लक = पलग, 5-14  
 पलयमेहु = प्रलयमेघ, 6-2  
 पविचारड = प्रविचार, 11-18  
 पाइयकव = प्राकृत काव्य, 1-1  
 पाणायाम = प्राणायाम, 11-11  
 पायच्छित्त = प्रायश्चित्त, 5-16  
 परिगहपमाणु = परिग्रह परिमाण, 2-5  
 पियधम्भु = ब्रह्मचारी का नाम, 4-10  
 पिसुणजणु = चुगलखोर, 1-3  
 पिहुरयणु = पीनस्तन, 7-8  
 पुक्खरद्धु = पुष्करार्ध, 2-7  
 पुट्ट = पृष्ठ, 3-1  
 पुक्कमत = पुष्पदत्त, 1-1, 7-10  
 पुखरि = पुष्कर, 2-9

फुडु, फुट्टी = स्फुट, 6-7, 3-4

बारहवय = बारह व्रत, 2-16

भरह = भारतवर्ष,

भल्ल = भाला

मज्जारु = मार्जार, 3-9

मणिभित्ति = मणि दीवाल, 1-7

मणुय = मनुज, 5-11

मणोरह = मनोरथ, 2-19, 3 13, 6-8

मडणवाण = मदनवाण, 5-4

मसिलिपण = स्याही का लेप, 1-6

महासेड = महसेन राजा, 7-4

महुपाण = मधुपान, 2-2

पुव्वदेसु = पूर्वं देश, 7-1

पुव्वभवतर = पूर्वं भवान्तर, 2-7, 6-1

पुव्वविदेह = पूर्वं विदेह, 11-20

पुह्वी = पृथ्वी, 2-13

पुह्वीपालु = पृथ्वीपाल, 6-13

पुद्धि = पूछ, 6-2

पोमराय = पद्मराज, 7-3, 10-9

पोमह = पुष्पनाली, 11-3

पोसहु = प्रोषध, 2-6

पोरगण = पौराण, 3-9

पच्चमहव्वय = पच महाव्रत, 5-12, 5-12,  
10-1

पच्चयठाण = पचम स्थान, 5-12

पच्चाचार = पाचविध, आचार 5-12

पच्चाणुव्वय = पचाणुव्रत, 5-12

पच्चिदियसुह = पचेन्द्रियसुख, 1-11

पडुयवण = पाण्डुकवन, 8-15

फ

फेणु = जल फेन, 9-8

व

वारह भावना, 9 6-12

भ

मुवगु = मुजगु, 6-9

भोयोपभोग = भोगोपभोग, 2-6

म

महिद = महेंद्र, 4-5

मागहवाणि = प्राकृत भाषा, 11-1

माण = मान, 6-19

माणखभ = मानस्तम्भ, 10-10

माया = माया, 6-20

मासूलि = नकुल, 8-5

मिच्छह = मिथ्यात्व, 5-12, 9-14,

8-21

मिसि = बहाना, 5-5  
 मुक्कु = मुक्का, 4-3  
 मुक्खु = मोक्ष, 1-15  
 मुग्गार = मुद्गर, 4-2  
 मुच्छा = मूर्छा, 3-13  
 मुत्ताहलु = मुक्ताफल, 1-2, 6-11  
 मुग्गिदु = मुनीन्द्र, 2-4

रक्खवालु = रक्षपाल, 9-7  
 रज्ज = राज्य, 1-15  
 स्तुप्पलु = रक्तोत्पल, 2-11  
 रयपडलुप्प = रजयटल, 8-15  
 रयण = रत्न, 1-15  
 रवि = सूर्य नामक कृपक, 4-4

लक्खण = लक्षण, 1-11  
 लक्खणादेवी = लक्ष्मणदेवी, 7-7  
 लोचणु = लोचन, 5-10

वड्ढाविच्च = वड्ढावृत्ति, 6-24  
 वग्घ = व्याघ्र, 8-6  
 वणमाला = वनमाला, 5-4  
 वणवालु = वनपाल, 2-1  
 वय = व्रत, 1-5  
 वसड्डु = वृषभ, 8-9  
 वसतमासु = वसतकान, 2-16, 5-3  
 वायलु = सर्प, 4-15  
 विडलुपुरु = विपुलपुर, 4-5  
 विच्छर = विस्तर, 3-1

सग्गु = स्वर्ग, 9-6  
 सज्झाय = स्वाध्याय, 5-12  
 सत्तमरज्जु = सप्तागराज्य, 9-6  
 सत्ततत्त = सप्त तत्त्व, 11-1  
 सत्तमग्नि = सप्तमग्नि, 8-21

मुट्टचद = मुखचद्र, 2-8  
 मुट्टु = शिर, 6-13  
 मूलगुण = मूलगुण, 2-6  
 मेयणि, मेइणि = मेदिनी, 1-16, 4-8  
 मेरु = सुमेरु पर्वत, 8-22  
 मोक्ख मग्गु = मोक्ष मार्ग, 2-3  
 मगलवड्ढ = मगलावती देश, 1-5

र  
 रविपुर = नगर नाम, 4-10  
 रायकण्ण = राजकर्ण, 2-19  
 रिड = रिपु, 1-10  
 रुद्धकोटि = रुद्रकोटि, 1-1  
 रुहिर = रुधिर, 5-10

ल

लोयत्तउ = त्रिलोक, 5-13  
 लोहु = रक्त, 6-21

व

विजयजत्त = विजय यात्रा,  
 विज्जाहर = विद्याधर, 4-12, 8-7  
 विज्जुलरयणु = विद्युत् रत्न, 4-16  
 वित्थरेण = विस्तार से, 8-15  
 वितर = व्यतरदेव, 11-13  
 विम्बिह, विम्हिउ = विस्मित, 4-4  
 विभियरत्त = विस्मयरत्त, 11-28  
 विसुरियउ = विषाद क्रिया, 8-10  
 वेउव्वण = वैक्रियक देव, 7-17  
 वेरग्ग = वैराग्य, 3-1, 1-14

स

सच्छ = स्वच्छ, 5-12  
 सावयवय = श्रावक व्रत, 5-16  
 सिक्खावय = शिक्षा व्रत, 2-17, 2-6  
 सिद्धपाल = राजा का नाम, 1-1  
 सिद्धसेण = आचार्य का नाम, 1-1

सम्मत्त दोस = सम्मक्ख दोष, 2-6

सद्वागम = शब्दागम, 9-1

समचउस्सु सठाण = समचतुस्स सस्थान, 8-3

समवसरणि = समवसरण, 4-18, 10-9-10, 11-26

समिदि = समिति, 10-6

सर = घण्टापद, 8-9

सरपति = बाण पति, 4-13

सरिच्छ = सदृश, 4-19, 4-12

सल्लेहण = सल्लेखना, 2-6

ससि = शशि नामक कृषक, 4-4

ससिरुइ = शशिरुचिदेव, 9-6

ससिपह = शशिप्रभ, 4-5

सहाउ = स्वभाव, 5-13

सज्जणगुण = सज्जनगुण, 1-2

समतभइ = भाषार्थ नाम, 1-1

सरसइ, सरस्सई = सरस्वती, 1-1, 2-1, 1-9

सत्तगुरज्ज = राज्य के सात भग, 1-6

सद्धं सण मेरु = सुदर्शन मेरु, 1-4

सायारुक्खम्म = सागारधर्मे, 2-8, 2-4, 2-18, 2-16

सरिमु = सदृश, 1-7

साधुधम्म = साधुधर्म, 7-15

साणु = श्वान (कुत्ता), 3-4

सामि = स्वामी, 6-4

सीवर = सीकर, 5-6

सूयार = सुधर 4-15

सेसवि = सहस्राक्षि इन्द्र, 8-11

सोमदत्तु = सोमदत्त, 10-4

सोय = धोक,

हउ = मैं, 3-5

हवकमिति = हकाल मात्र से,

सिरिकुविस = श्री कुक्षि, 2-15

सिरिकत = श्रीकात, 2-16, 2-10

सिरिधम्म = श्रीधर्म, 2-19

सिरिदेवी = श्रीदेवी, 7-11

सिरियह = श्रीप्रभ, 3-6

सिरिपुर = श्रीपुर, 4-4

सिरिधम्मराउ = श्रीधर्म, 3-6

सिरिहरु = श्रीधर भुनि, 2-1, 1-16, 6-22

सिरि सिरिपुर = श्री श्रीपुर, 2-8

सिरिसेण = श्रीषेण, 3-1, 2-9

सिसिराणिला = शिशिरानल, 5-8

सिरिफल = श्रीफल, 1-10

सिबपिण्ड = शिव पिण्ड, 1-1

सिवरस = शिवरस, 11-27

सिमाह = श्रु गार, 1-14

सुरवइ = सरस्वती,

सुधधि = सुगन्धि देश, 2-7

सुक्कलैस = शुक्ललेश्या, 6-26

सुक्खु = सुख,

सुधम्म मुणिवा = सुधर्म भुनि,

सुण = श्वान कुत्ता,

सुणदा = सुगधा, 2-15

सुरहियवण = सुरभित, वन 2-1

सुवणणाह = स्वर्णनाभ, 6-22

सुहड = सुमट, 6-15

सुहकिति = शुभकीर्ति, 3-15

सोहम्प = सोभाग्य,

सगर = बुद्ध, 4-5

सजमबारह = सयम बाहर,

सठवियउ = घ्राच्छादित, 8-11

ससार = लोक 1-13-14, 9-10

ह

हिरण्णु = हिरण्य देव, 4-4

हुवडकुल = कुल नाम, 1-1

## प्रस्तावनागत शब्द-सूची

अपभ्रंश विशेषताएँ, 37-48  
अलंकार, 34  
आल्हादपुर, 11  
उम्मत्तगाम, 13  
कथा भाग की तुलना, 28  
कथावस्तु, 14  
कारक रूप, 43-44  
क्रियारूप, 45  
कुदन्त, 45  
ग्रन्थकार परिचय, 12  
चन्द्रप्रभ चरित पर निर्मित साहित्य, 2  
छन्दयोजना, 35  
जैन चरित काव्य परम्परा एवं  
विशेषताएँ, 1  
तद्धित प्रत्यय, 45  
दक्षिणी अपभ्रंश की सामान्य  
विशेषताएँ, 45  
धार्मिक-सामाजिक सदर्भ, 36  
प्रति परिचय, 3

पश्चिमी अपभ्रंश की सामान्य  
विशेषताएँ, 46  
पाठ संपादन पद्धति, 11  
पूर्ववर्ती और समकालीन कवि, 14  
पूर्वी अपभ्रंश की सामान्य विशेषताएँ,  
46  
भाषा और व्याकरण, 36-48  
महाकाव्यत्व, 32  
यश कीर्ति, 12  
रस, 35  
राणा सग्राम, 6  
रामचन्द्र, 6  
विशेषण और अव्यय, 44  
बोहीय, 9  
स्वर-व्यंजन, 32-43  
सर्वनाम, 44  
सिद्धपाल, 5  
सूर्यमल, 9  
सूरीताण, 9  
सप्तभव, 34  
सख्यावाचक शब्द, 44

